श्रीधर्म्मामृत की संक्षिप्त नियमावली।

(१) इस पत्रका मूल्य, नगर और बाहर सर्वत्र डाकव्यय सहित अग्रिम वार्षिक केवल १॥ रु. है. गवर्मेन्ट तथा राजा महाराजाओंसे उनके आदरार्थ ५ रु. है.

(२) पांच श्रीधर्म्मामृत एक साथ खरीदने वालों को एक प्रति मुफ्त अर्थात जो पांच ग्राहक हो कर ७॥ रु. दाम भेज देंगे उनको एक पाकिट में ६ श्रीधर्म्मामृत की पुस्तकें हर मास की पहिली ता० को मिला करेंगी.

(३) पत्रके उत्तर चाहने वाले महाशय, जवाबी कार्ड अथवा टिकट भेजें, अन्यथा पत्रोत्तर न दिया जायगा.

(४) नमूने की प्रथम प्रति पहुंचने पर यदि ग्राहक होना स्वीकार हो, तो मूल्य ता० १ तक भेज देना चाहिये, यदि ग्राहक होने की इच्छा न हो तो कार्ड द्वारा सूचित करना पडेगा, और नमुने की पुस्तक पर आध आनेका टिकट लगा वापिस कर देनी चाहिये. नहीं तो ग्राहक श्रेणी में समझे जा येंगे. (५) विज्ञापनकी छपवाई एक मासके लिये प्रति पंक्ति दो आना तीन मासके लिये एक आना, और छ मास या इससे अधिक समय के लिये आध आना है. और छपे हुये विज्ञापनों की वितरण कराई ५ रु. लिया जायेगा

श्री धर्म्मामृत सम्बन्धी सर्व चिठ्ठी, पत्र, व मनीआर्डर और समाचारपत्र नीचे पतेपर आने चाहिये

भारत भाईयों का शुभचिंतक अन्ना बाबाजी म्यानेजर

सदाशिव बाबाजी प्रिंटिंग प्रेस ठाकुर द्वार पारुवा रोड पोष्ट मार्केट—मुम्बई.

श्रीधर्म्मामृत पुस्तकालय की पुस्तकें

(१)गोरक्षाप्रकाश—गऊ मातके बारेमें विदेशियोंके एक सहस्र प्रश्नोका उत्तर. सर्वगोभक्तों को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये. मूल्य ८ आना (२) अकबर गोरक्षा न्यायनाटक इसमें अकबर बादशाहने किस रीतिसे गोरक्षा कीथी, यह नाटकी चालसे कथन किया गया, है. इसमें बहुत, करुणामय नाना प्रकारके राग भी हैं. मूल्य १२ आना (३) अकबर बीरबल का समागम. इसमें बीरबलकी चतुराई के जोहे भरे हैं. देखने के योग्य पुस्तक है. मूल्य १२ आना. (४) ईसू परीक्षा. इसमें ईसामसीह की परीक्षा की गाते हैं. प्रश्न करते ही ईसाई दांत दबाते भाग जाते हैं मूल्य १ आना. (५) ईसाई मतपरीक्षा. इसमें ईसाई धर्म के ढोलकी पोल खोली गई है. पढकर देखलो मूल्य १ आना. (६) हिंदुओंकाविधर्मातीन धर्म अर्थात् भोलेभाले हिन्दु भाई किस रीतिसे विधर्मियों के फंदे में फंस जाते हैं. मूल्य १ आना (७) गाजीमियांकी पूजा. हिंदु कबर पूजियों को यह क्या सूझा ? पढकर देखलो मूल्य आधा आना (८) गऊकी नालिश. मूल्य आध आना. (९) गोपुकार. मूल्य आध आना (१०) गोपुकारचालीसी मूल्य आध आना. (११) गोविलाप ? मूल्य आध आना. (१२) गोदान व्यवस्था. मूल्य आध आना. (१३) गोगोहार. मू० आध आना. (१४) काउप्रोटेक्सन. अर्थात् एक अंगरेज की गोभक्ति मू० आध आना. (१५) गोरक्षापर बादशाहोके फतवे (व्यवस्था) मू० आध आना. (१६) गोहितकारी भजन. मू० आध आना. (१८) भारत दिग्दर्शन नाटक. एकबार पढोगे तो भारतकी दशा क्या है जान लोगे मूल्य चार आना.

श्रीः।

धर्म्मामृतपत्र।

अमृतं शिशिरे वन्हिर, अमृतं बाल भाषणम्।
अमृतं राज संमानो, धर्म्मोहि परमामृतम्॥

वर्ष २ [मुम्बई चैत्र मास सम्वत १९५५ सन् १८९९ ता० १ एप्रेल] अंक १

ईश्वरप्रार्थना.

मंगलं भगवान विष्णु, मंगलं गरुडध्वजः।
मंगलं पुंडरिकाक्ष, मंगलाय तनोहारिः।

नवीन वर्षकी प्रार्थना.

इस नवीन वर्षमें नया रंग, नया हर्ष, नया उद्यम, नई युक्ति, नई हिम्मत, नई लक्ष्मी, नया भारत प्रभु, हे सर्व शक्तिमान दीनदयालु जगत्कर्ता ईश्वर तू सर्व भारत भाईयोंको निर्विघ्न प्रदान कर. हे निरंजन निराकार परमात्मा प्रभु, सर्व आर्य्य संतानोको उत्तम कार्यों के करने, तथा सनातन धर्म मार्ग पर चलनेकी सद्‌बुद्धि दीजीये.

भजन चाल भुजंगी

महाराज आनंद दाता दयाल।
दया दृष्टि हो आपकी सर्व काल॥
क्षमा नाथ सर्व करो पाप कर्म।
सदा अर्पना नीतिके शुद्ध धर्म॥ १॥
सदा उपकारी तुम्हारा जनाये।
हमे सर्व जीवोंको संतोष आये॥
मनोर्थ हमे मांगियें प्रार्थनामें।
तुमे नाथ जानो कहा योग्यता में॥ २॥
भरोसा तुम्हारा बड़ा है हमारे।
तुम्हारे बिना भक्तको कोन तारे॥
कृपानाथ हो सर्वथा ही समर्थ।
करो पूर्ण स्वामी भले सर्व अर्थ॥ ३॥

पत्र सम्बधी ईश्वर प्रार्थना.

(भजन चाल गजल)

है धन्यवाद ईश्वर तुमको हमारा।
चलाया है निर्विघ्नतू वर्ष सारा॥
न हिम्मत थी हमको चलाने की इसेके।
कृपा तेरीसे पूर्ण हुये अंक बारा॥ १॥
यद्यपि विघन बीच में आ पड़ाथा।
परंतु चला कुछभी उसका न चारा॥
केवल कृपा तेरी से टल गया वह।
जो बेहनेलगी धर्म्मअमृत की धारा॥ २॥
दया दिष्टि देखी सदैव इसपे रखनी।
इसको है केवल सहारा तुम्हारा॥
दोड़ो भारत भाईयो पयो धर्म आमृत।
इससे ही निस्तारा हैगा तुम्हारा॥ ३॥

श्री धर्म्मामृत पत्रका द्वितिय वर्ष पग धरना.

प्रिय पाठकगण! आज हम अत्यंतही कृतज्ञता पूर्वक श्री परम दयालु जगदीश्वरको कोटशः धन्यवाद समर्पण करते हैं, कि जिसकी कृपाकटाक्षसे श्री धर्म्मामृत पत्रका प्रथम वर्ष समाप्त हुआ, और द्वितिय वर्षमें पग धरा.

प्रियवाचक वृन्द! यद्यपि इस पत्रसे इतनी तो अव-

स्यही अवज्ञा हुई कि यह अपने नियमानुसार ठीक समय-पर न पहुंचकर आप सज्जनोकी सेवा न कर सका, तथापि जहां सुधि इस्से बनसका, सेवा बजानेमें कोताई भी नही की, आशा है कि सज्जन जन इसके ऐन समयपर न पहुंचनेका अपराध क्षमा करेंगे, क्यों कि यह अपराध इस्से कुछ जानकर नही हुआ, किन्तु दैवी इच्छासे हुआ था जो आप महानुभावोंको इसके जन्म स्थान मुम्बई पूरीके हाल से विदितही है कि, इसके जन्म समयमें दुष्ट हत्यारी महामारी की कोपाग्नि कैसी प्रज्वलित हो रहीथी, जिसके भयसे नगर निवासीजन सर्वकार्य्य त्याग प्राण ले भाग रहे थे. यहांतक उस समय में बडे २ धुरन्धरभी अपने २ कार्यों को नियमानुसार पालनमें असमर्थ होगये थे. और कईयों का तो अभीतकभी महामारीकी चपेटके कारण नियमानुसार कार्य नही होता है. तो फिर यह विचारा छोटासा बालक अपने नियमानुसार कैसे सेवा बजा सकता था, परन्तु तोभी ईश्वरकी कृपा और आपलोगोंकी दया मयासे उस भयंकर समयमेंभी यह थोड़ा बहुत अपना मुख्यो देश पालन किये बिना नही रहा, अर्थात सनातन धर्म्मका महत्व विदेशी विद्वानोके ग्रंथों से जताना, तथा अपने महानपुरुषोंके कुछ सचित्र जीवन चरित्रामृतका पान कराना, और अन्य धर्मियोंके आक्षेपोंका प्रेमसहन नम्रतासे उत्तर पहुंचाना, वा उनके पंजोंसे कुछ अपनी आर्य संतानको *छुड़ाना, इस प्रान्तमें इसका ही प्रताप है.

भारत भाईयो! एक वर्षमें इस बालकने ऐसे २ कार्य कर दिखलाये हैं, तो फिर आगेको इस्से अधिक आशा क्यों न रक्खी जाये. और प्रथम तो इसका केवल एक सेठ नारायण रामाजी वर्म्मा ही सहायक था और अबतो इसको और नवीन सहायक मिलगये हैं, इस्से तो पिछले वर्षसे इसवर्षमें विशेष आशा पाई जाती है कि यह पत्र अपने उद्देशके विशेष पूर्ण करनेमें श्रम करेगा. हम कोटशः धन्यवाद श्रीयुतसेठ नारायण रामाजी वर्म्माको देते हैं कि जिन्होंने सहस्रों रुपया अपनी गांठका लगाकर श्रीधर्म्मामृतको एक वर्षतक चलाया और आगेकोभी सहायता देनेसे मुख नही फेरा, परमेश्वर इनकी दीर्घायु करे और सदैव धर्मकार्य्योंमें सहायक बनाय रक्खे.

हम सहस्रों धन्यवाद नागपूर निवासी श्रीयुत सेठ धोंकलमल गणपत लालजीकोभी देते हैं कि जिन्होने एक वर्षतक दस रुपैया मासिक श्रीधर्म्मामृतकी सहायताके लिये दान देना स्वीकार किया है और तीन मासके लिये प्रथमही ३०) रु० भेजभी दीया है, परमात्मा सेठजीको सदैव तन, धन और पुत्र परिवारसे आनन्द रक्खे.

हम श्री धर्मामृतके पुराने सहायकोंमें से श्रीयुत स्वामी सच्चदानन्दजी कोभी कोटशः धन्यवाद देते हैं, जिन्होने श्रीधर्म्मामृतकी ग्राहक श्रेणी बढ़ाने, तथा इसके चरजिवत रक्खने के लिये श्रीयुत सेठ धोंकलमल गणपत लालजीको प्रेरणाकर एक वर्षतक दस रुपया मासिक बंधवा दिया है, जगदीश्वर इनको सदैव श्रीधर्म्मामृतका सहायक बनाये रक्खे. और साथही मुरादाबाद निवासी श्रीयुत पंडित बनमाली शंकर शर्म्मा श्रौवैदिक धर्मोपदेशक, तथा श्रीयुत गोस्वामी पंडित हरसुख रामजी मंत्री धर्म्मसभा अमृतसर निवासी, और बिंगलोर निवासी श्रीपंडित हरिप्रसन्न शर्म्मा आचारीजीको, वा श्रीमान परम हंस श्रीस्वामी प्रमानन्दजी वैद्यराज महाराजको, तथा शेठ मावजी लक्ष्मी दास इत्यादिकोंको कोटशः धन्यवाद देते हैं कि जिन्होंने अपने अतिश्रमसे श्रीधर्म्मामृतको तन मन धनसे सहायता दी है, परमात्मा इनको सदैव सहायक बनाये रक्खे.

हम नवीन सहायकोंमेंसे श्रीयुत पांडे राधिका प्रसाद जमादारजी, तथा गोसेवक सेठ बारसी दासजी को भी धन्यवाद देते हैं, जिन्होने एक २ रुपया श्रीधर्म्मामृत को दान, और अपना तथा नवीन ग्राहकोंको बना, उनकाभी आग्रिम निछावर भेज, हमारा उत्साह बढ़ायाहै. परमेश्वर इन

---

*अंध पिता और माता बहीन एक वर्षका क्षत्रिय बालक जो यवनोके हाथोंमें जाता था अपनी गोदमें लिया. (२.) एक दक्षणी ब्राह्मणका बालक, मातापिता बहीन जो ईसाईयोंके पंजेमें फंस गया था छुडाकर एक सतपात्र ब्राह्मणको दिया गया. (३) एक लुवाणा क्षत्री मनुष्य जो यवनोके जालमें फसनेवाला था बचालिया गया (४) एक गुजराती वैश्यका बालक जो यवनोंके हाथोंमें आगया था बड़ी युक्तिसे छुड़ाया गया, और उसको उसके देशमें पहुंचादिया (५) एक गौड़ब्राह्मणकी कन्या तथा एक बालक अर्थात माता पिता बहीन दोनों भाई बहिन को जो कुमार्गियोंके पंजेमें फंस गयेथे, बडे यत्नसे छुडाये गये. अब कन्याके विवाहका यत्न कर रहे हैं. परमेश्वर यहभी कार्य पूर्ण करे (६) कुछ यवनोको उपदेश द्वारा गोमांस, तथा कुछ हिन्दुओंको मांस खाना छुड़ाया गया है. इस वर्ष में यह कार्य्य हुआ है.

नवीन सहायकको को सदैव ऐसाही उत्साही बनाये रक्खे. इम श्रीधर्म्ममूलके ग्राहक महाशयोंकोभी सहस्रों धन्यवाद देते हैं कि जिन्होने इसका निछावर भेजकर सहायतादी. और साथही इसके नादहिन्दोंको कि जो इसका निछावर दवा, इसे हानी पहुंचाकर पापके भागी बने, धिक्कार न देकर निवेदन करते हैं कि ऐसे कामसे कुछभय खाओ.

इम उन सहयोगियोंको! जो इस्से प्रति सप्ताह, तथा प्रतिमास मिलते हैं, धन्यवाद देते हैं, और आगेभी आशा रखते हैं कि ऐसीही प्रिति रक्खेंगे.

भारतौन्नतीका साधन सद्धर्मही है.

(गतांकसे आगे)

(७१) युनानके विख्यात विद्वान **सुकरात** हकीमने "जीवात्माका ज्ञान आर्यावर्तसे प्राप्तकर, युनानमें फैलायाथा" देखो (तारीख वैदिक पुस्तक मिष्टर वाईज़ साहबकी पत्रा ३५ व ९४,)

(७२) सन ईसवीकी छटी शतावदीमें "रुमके बादशाह **नौशेरखांने बुगदादसे बजरोयाको** राजनीति विद्याकी प्राप्तिके लिये **आर्य्यावर्तमें** भेजा था, और इसने यहां आकर राजनीतीके ग्रथोंका अनुवाद फारसीमें किया और अपने संग ले गया जिस्से वह बादशाह आदल (न्यायकारी) प्रसिद्ध हुआ, और बुगदाद दारुलसलतनत (राजधानी) स्थापी, और बुगदादके नाम रक्खनेकाभी यह कारण है. तथा सन ईस्वीकी नौवी शतावदीमें इसका अनुवाद अरबी भाषामें हुआ, जिसका नाम कलेलह दमनह है. और पंदरवीं शतावदीमें इसका अनुवाद इब्रानी भाषामें हुआ है. और अबतक तो इसका अनुवाद लग भग सर्व भाषाओंमें हुआ है.शेख अब्दुल फजलनेभी इसी पुस्तक का पुरा अनुवाद करके इयादुर दानश नाम रक्खाथा. अपने राजनीतीग्रंथोंसे पंडित विष्णु शर्म्माने कुछ निकालकर महाराजा पाटली पुत्रके बालकोंके शिक्षण लिये हितोपदेश नामक पुस्तक बनाई. थी देखो (पुस्तक अनुवार सहेलीकी भूमिका)

(७३) विद्वान मेक्स मूलर साहब अपने लेक्चर (व्याख्यान) में कहते हैं कि "यदिकोई मुझसे पूछे कि किस देशके निवासोयोंने, जीवात्माको पहचाना है तो मैं यह ही कहुंगा कि इण्डिया (भारत निवासीयों) ने, यदि कोई मुझसे पूछा चाहे कि कहांकी विद्यासे यूरोपके विचारोंने पुष्टता प्राप्तकी है और, जीवन पूर्ण करनेके लिये, किन्तु उस सदैवका जीवन पूरा करनेके लिये कौनसा देश है, तो मैं यह ही कहुंगा कि वह भारतवर्ष देश ही है" (देखो लेक्चर सन १८८६ को.)

श्रीमान विक्रमादित्य और शालिवाहन.

(गतांकसे आगे)

प्रिय वाचक वृन्द! गुर्जर तथा मरहठी भाषाओं के ग्रंथावलोकन से यह विषय मिलता है कि, पृथ्वि विख्यात महाप्रतापी राजेन्द्र वीर विक्रमादित्य, उज्जैन नरेश परमार वंशी महाराजा गंधर्वसेनका कनिष्ट पुत्र और इस वंशमें महाप्रतापी संवत-शक प्रवर्तक सर्वोत्कृष्ट राजेन्द्र होगया है, इसका बड़ा भ्राता महान् विद्वान प्रजावत्सल भर्तृहरि था. पिताके परलोक वास होनेसे विक्रमादित्य बड़े भ्राता भर्तृहरि के रक्षा तले बड़ा हुआ, और इसने महान् गुरु परम विद्वान चन्द्राचार्यसे विद्या प्राप्तिकी थीं, यह राजेन्द्र वेद वेदांगादि शास्त्रोंमें अति निपुण, और संस्कृत भाषामें महान् विद्वान और श्रेष्ट वक्ता होगया है. इतनाही नही परन्तु महान शूर बीर प्राक्रमी, तथा नीतिवान, धार्मिक, सत्यासत्यका परीक्षक, सूक्ष्मका ज्ञाता, बुद्धिवान, विवेकी, हिंमतवान, और अति उत्साही भी था, यहां तक कि बाल्यावस्थाहीमें श्रीमान भर्तृहरि नृपको राज काजमें सदैव अपनी रायेसे सहायता दिया करता था. और भर्तृहरिकोभी इसके शुद्ध अंतः करण होनेसे इसपर पूर्ण विश्वास था, इसी कारणसे भर्तृहरीने राजके पुष्कल कार्य्य इसकी देख रेख तले रक्ख छोडे थे, पर यह राजेन्द्र बाल्यावस्था होने परभी अपनी चातुर्य, चालाकीसे लूचों लफंगो, तथा चोर व्यभिचारीयोंको ढूंड २ कर कठिन दंड दे, उन्हे उत्तम शिक्षपाको पहुंचाया करता था. इस्से सर्व दुष्ट भयभीत रहा करते थे, और देशमें किसी प्रकारका पाप नहीं होनेपाता था. यहां तककि नाना प्रकारके उत्तम २ कार्य स्थापनकर प्रजाको मोहितकर लिया था. निदान कुछ काल पर्यन्त तो बड़ेभाई भर्तृहरिकी सेवामें दत्तचित रहा. परन्तु जब दुष्ट खटपटी जनोने अपनी कुटिल नीतिसे भर्तृहरिकी प्यारी पींगला राणी परझूठा बुरा दुषण लगाया, तब दोनो भ्राताओमें फूट पड़ गई, और इसी फूट

कारण विक्रमादित्यको भ्राताकी सेवा, तथा वीरभूमी मालवाकी राज नगरी उज्जैन त्यागनी पड़ी. और पुष्कल काल पर्यन्त विक्रमादित्यको एक साधारण स्थितिमें गुजरात इत्यादि देशोंमें पर्यटन करना पड़ा. सन इस्वीके पूर्व शताब्दिमें जबकि भर्तृहरि अपनी *रानीके जार कर्मसे वैराग प्राप्तकर अर्थात राज पाट त्याग, योगी वेष धारणकरके बनको चलागया, तब कुछ ही काल के उपरान्त देशमें ऐसी अंधाधुंध मची कि; जो राजा गादीपर बैठता उसे वैताल मारदेता, इस्से धनी विनाके राज्यमें प्रजा अत्यन्त दुःखी होने लगी. उस समय विक्रमादित्य प्रवास (मुसाफरी) करता हुआ गुजरातमें आरहा था. जब प्रधानको इसके गुजरातमें निवास करनेका पतालगा तब वह विक्रमादित्यके पास गया और बडे आग्रहसे इसे उज्जैनमें ले आया. और राज गादीपर बैठा दिया. वीर विक्रमादित्य प्रथमही वैतालकी दुष्टता की बात जानता था. इस्से इसने गादीपर बैठतेही अपने रात्री शेनेकी कोठरी नानाप्रकारके भोजनोंसे भरवादी; और स्वयं नंगी तलवार हाथमें लेकर बडी दृढता और धीर्यतासे रातको बैठारहा, जब मध्यरात्री हुई तब वैताल राजाकी कोठरीमें आया. विक्रमादित्यने वैतालको देखतेही कहा ! वैताल प्रथम तू पकवान्न भोजनकर और पीछेसे मुझे खाईयो. वैतालने उत्तरदिया ठीक है, प्रथम मैं पकवान्न खाताहुं पीछेही तुझे खाऊंगा. इतना कहकर पकवान्न खाने लगा. जब नानाप्रकारके पकवान्नखातेरतृप्त होगया तब चुपके से चला गया. इसी प्रकार कईरात्री पर्यंत ऐसीही दशारही;

एक रात्रीको विक्रमादित्यने वैतालसे पूछा तुममें क्या बडी शक्ति है. वैतालने उत्तर दिया कि जो मैं चाहूंसो कर सकताहुं, अर्थात मुझे भूत, भविष्य, वर्तमान, तीनोंकालकी खबर रहती है. विक्रमादित्यने कहा तब तो आप मेरी आयुष्यमेंसे दो वर्ष न्यून वा अधिक कर देनेकीभी समर्थ रखते होगे. वैतालने उत्तर दिया कि यह ईश्वर विना अन्य किसीकी समर्थ नहीं है. उसरातको जब वैताल चला गया, तब दूसरी रात्रीको विक्रमादित्यने कुछभी अन्ननहीं रक्खा, इस्से वैतालको बहुत ही क्रोध उत्पन्न हुआ. तब विक्रमादित्यने निर्भय और दृढतासे कहाकि जब मेरी-

आयुष्यमेंसे दो वर्ष न्यूनाधिक करनेका तुझमें समर्थ नहीं है, तो फिर मैं तुझे व्यर्थ किसलिये खानेको दूं, तेरी इच्छा होय तो मेरे साथ युद्ध करले. विक्रमादित्यके यह बचन सुन वैताल बोला कि अये विक्रम, मैं तेरी वीरता, धैर्यता और दृढताको देखकर अति प्रसन्न हुआ हुं. इसलिये जो तेरी इच्छा होय वह बर मुझसे मांगले. विक्रमादत्यने कहाकी मैं यह ही बर मांगताहुं, कि जब मैं तुझे याद किया करुं तब तू आकर जो मेरा कार्य हो उसे कियाकर. वैतालने कहा तथास्तु. इतना कह जब वैताल चला गया. तब विक्रमादित्यने बडी धूमधामसे राज्याभिषेक करावा और गादीपर विराजमान हुआ. और जिन २ मांडलिक राजाओंने देशमें उपद्रव मचा रक्खा था उन सर्वको पराज्य कर अपनी शरणमें लाया, और पुनः उत्कल, वंग, कच्छ, गुजरात इत्यादि देश, अपनी सत्तानीचे लिये, और फिर शाक जातीके राजा शकादित्यपर चढाईकी, और उसे पराज्यकर उसकी दिल्ली राज्यधानी छीन, उन्हे भारत वर्षसे निकाल दिया. परन्तु दिल्लीको राजधानी स्थापन न कर, अपनी उज्जैन नगरी ही राजधानी ठहराई, और फिर (ई० स० पू० ५६ में) शक चलाया, वह आजसुधी नर्मदाके उत्तर भारतीय प्रदेशोंमें प्रचलित है. यह राजेन्द्र अपने देशको स्वतंत्र बनाने और शक के स्थापन करने वाला संसारमें प्रसिद्ध, होगया. है

श्रीमान् वीर विक्रमादित्यइस कलि कालमें बडा पराक्रमी और प्रतापी राजा हुआ है. इसने पुष्कल परमार्थके ही कार्य्य किये हैं. विद्वानो का तो यह बहुधा आश्रय दाताही हुआ है इसके समयमें विद्याने बहुतही वृद्धि पाईथी, विद्वान सभासदोंके कारण यह महाराज अपना अमर कीर्ति रक्खनेका शक्तिवान हुआ है. इसने ग्रंथकारोंको उत्तेजन दे, सद ग्रंथोंकी वृद्धिकी थी. ज्योतिर्विद्या भरण नामकग्रंथसे पायागयाहै कि इसकी राज सभामें ८०० मांडलिक राजा, तथा १६ वाचाल पंडित, और १० ज्योतिषी, ६ वैद्य, और १६ वेदपाठी रहते थे. इन उर्द्ध लिखित विद्वानोंमें मुख्य **धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, वैतालभट्ट, घटखर्पर, कालिदास, वराहमिहर,** और **वररुचि** यह नवरत्न रूपी पंडित सभामें बैठा करते थे. और ऐसाभी मिलताहै कि इसके पास १८ योजन भूमि रुके, इतनी भारी सेनाथी, इस सेनामें तीन करोड़ पैदल, १० करोड़ घोडे स्वार, २४३०० हाथी, और चार

* तब भर्तृहरि चरित्र पढो

लाख मछवा (नौका) की सैन्यथी. इसी कारण इसने ९५ शक–स्कूथी सरदारोंको पराभव करके *शकारी नाम धारण किया था. इसके राज्यका विस्तार अति भारी था. और इसके पास द्रव्यभी पुष्कल था. यह महाराज, राज्यको न्याय नीति द्वारा उत्तम प्रकारसे चलाया करता था- और वेदोक्तधर्म परस्वयं चलता, तथा प्रजाकोभी इसी धर्मानुसार चलानेको यह अपना अभिष्ट जानता था. कोई अधिकारी किसीपर किसीप्रकारका अन्याय करने नही पाता था. कारण कि यह स्वयं इस बातपर बड़ा ध्यान रक्खा करता था, और सदैव प्रजाहित में प्रवर्त्त परमोत्साहसे लगा रहता था. इस्सेही दया, क्षमा, संतोष, शांति, सत्य और विनय आदि सदगुण प्रजामें फैल रहे थे. यह महाराज स्वयं रात्रीके समय नाना प्रकारके वेश धारण कर, नगर और देशमें फिरा करता था. और लूचों, लफंगों, चोरों और व्यभिचारी आदि दुराचारीओंको ढुंड २ कर कठन दंड दिया करता था. इस उपायसे इसने दुराचारीयोंको देशमेंसे निकंदन किया हुआ था. ऐसे करनेसे देशमें अन्याय अनीति पसार होने नही पातीथी, और लांच (रिशवत) लेनेका तो कोई नामही नही जानता था, सर्वत्र देशमें धर्म नीति फैल रहीथी. और स्वयं प्रत्येक दिवस निर्धन आनाथोंको सोना, मोती रत्न, गाय, हाथी रथ भूमि आदि अनेक प्रकारके दान दिया करता था. और प्रजाके दुःखनिवाणार्थतो तन मन धनसे लगही रहता था, सदेव पुत्रवत प्रजाका लालन पालन किया करता था. इस्सेही इसका नाम पर दुःखभंजन पढ गया था. और प्रजाभी इसकी सर्व प्रकार आज्ञाके पालनमें ही रहती थी. इसी ही कारणसे देश देशांतरोंमें इस महाराजकी कीर्ति फैल रही थी. और आज सुधी फैल रही है. इस कलिकालमें, इसी महाराजाने अपने राज तरीके जीवनको सुफल किया है. ऐसे राजा अर्वाचीनकाल में बहुतही थोडे हुये है. राजाको देशमें अविचल नाम रक्खनेका यतार्थ मार्ग प्रजा प्रीति संपादन करनेकाही है. जिस राजाको अविचल नाम रक्खना होय वह वीर विक्रमादित्यादि पूर्व राजाओंके जीवन चरित्रोंको पढे, सुने, और उनके मार्ग अनुकूल चले. उसका अचल नाम संसारमें रहजायेगा.

महाराजा वीर विक्रमादित्यका प्रताप पृथ्यिके पुष्कल देशोंमें फैला हुआ था. रोम देशका प्रथम राजा अंगस्तस सीज़र, इसका परम मित्रथा. विक्रमादित्यने एक समय ग्रीक भाषामें एक पत्र लिखकर अपना वकील उसके पास भेजा था. उस सदीमें दक्षण भारतके लोग, रोमके बडे २ नगर निवासीयोंके साथ व्यौपार संम्बंध रखते थे. इसपरसे जाना जाताहै कि वीर विक्रमादित्यका योरोपादि देशोके राजाओंके साथ संम्बंध था. कारण कि इसकी विद्या बुद्धिकी प्रसिद्धि पुष्कलता से बाहर फैली हुई थी. यह महाराजा देश विदेश सर्वत्र अपने सदगुणो द्वारा अपनी अमर कीर्ति फैला गया है. धन्य है ऐसे नीतिवान राजेन्द्रको. (शेष आगे).

* ईसा के जन्मसे १२६ वर्ष पहले पामीर देशसे उतर कर एक मनुष्य जाती बैकट्रिया देशपर चढ आई, और सिकन्दरके साथ आये हुये यूनानिओंके वंशजो को यहांसे निकालकर तोखारिस्तान नाम एक राज्य स्थापन किया था, बोखारा, बलख, बोलर और बदखशां इस राज्यके आधीन रहे, इस मनुष्य जातीने सकोई नाम एक मनुष्य जातिकोभी बैकट्रिया देशसे निकाल दियाथा, जो बैकट्रियासे दक्षणकी ओर चली आई थी, इस जातिने अनुमान ९० वर्ष ईसाके जन्मसे पहले पूर्ण बल धारण कर अपने पडोसी पार्थिन लोगोंको जीतकर संपूर्ण अफगानिस्तानको अपने आधीन करके भारतपर चढाई की थी, परन्तु महाराज विक्रमादित्यने इस सकाई जातीको भारतसे मारकर भगादियाथा, इसी कारण इस महाराजको शकारीकी उपाधि मिली थी. (देखो यूलसाहबकी पालीनाम पुस्तक, तथा बील साहबका "चीनीयात्री" नाम ग्रंथ)

धत्त तेरी नई सभ्यता की ऐसी तैसी !

इस समय नई सभ्यता (नैई रोशनी) वाले, स्त्रीयोंको स्वतंत्र बनानेसे ही भारतोन्नती समझ रहे हैं और रात दिन इसी उद्देशमें रहते हैं कि कब भारतीय वनितायें धर्मका ढकोसला त्याग, सनातन सभ्यताका परदा हटा पति तथा श्वशुर की सेवा वा लज्जा को तिलांजली दे, मडमों (मेमों) का पहरावा पेहन, पाओंमें अंग्रेजी जूता, सिर नंगा वा पक्षियोंकेसिर पर परों की सजी टोपी, हाथों में दस्ताने धारण कर एक हाथ में छतरी और दुसरा हाथ नये सभ्यके भुजा में डाल, रप छप करती हुई, बगीचोंकीसेर करें, शराब पियें, मुरगीका सिर मुरोड़ कबाब, वा अंडे तथा बिसकुट मेज-

पर धर कर उड़ायें, संस्कृत वा हिंदी मात्री भाषाके स्थानमें अंग्रेजीका उच्चारण करें; दुसरोंका मुख चूमे चुमवायें यदि पतिके सिवाये अन्यभी हाथ पकड़ कर ले जाये तो इनकार न करें; जो कुछ चाहें खायें कमायें; और पति कोभी लाकर खिलायें, बाईसीकल गाडी, पर सवार हो ठंडी सडकोंकी हवा खायें, चैन उठायें, तब भारतोन्नति हो जायेगी. वाहरे ? तुम्हारी मूंदी समझके बलहारी. भला स्त्रियोंको ऐसी स्वतंत्रता देनेसे जब भारतौन्नती हो जायेगी. तो फिर मनुष्य स्वतंत्रतासे किस विषयकी उन्नति करेंगे. यदि कहोकि दोनोकी स्वतंत्रतासे हमारा तात्पर्य्य भारतोन्नतीका है. तो भाई ! जब स्त्री पुरुष दोनो बराबर स्वतंत्रताके अधिकारको प्राप्त करलेंगे, तो फिर स्त्री पतिके आधीन क्यों रहेगी. और क्यों नव मास गर्वका कष्ट सहेंगी. स्वतंत्रतासे कभी न कभी झट बोल ही उठेंगी. कि अबके नौ मास हमने गर्व कष्ट सहन किया है, और अबके तुम सहन करो. कहो ? तब क्या उत्तर दोगे, अरे भाईयो! स्त्रीयोंको नवीन सभ्यताकी अधिकारनी मत बनाओ; नही तो कोर्टोमें घसीटे जाओगे, और नाना प्रकारके दुःख उठाओगे. हां ! यदि सनातन धर्म्म शिक्षण दोगे तो निसंदेह भारतौन्नति हो जायगी. देखो जब भारत में सनातन धर्मका शिक्षण स्त्रि पुरुषोंको मिलताथा तब भारत कैसी उन्नतीकी शिखरपर चढा हुआ था, सभ्यता, और लक्ष्मी भारतकी दासियां हो रहीथी, स्त्री पुरुष बालक बालिकायें, विद्या, बुद्धि वीरसत्त्वमें, पूर्ण माता पिता; सास स्वसर इत्यादिकों की आज्ञाकारी; क्या यहबातें अपने धर्म ग्रथोंमें नही पाते हो; जो तुम उन्हे नवीन स्वतंत्र बना उनाका सत्त्व नष्ट भ्रष्टकर भारतोन्नति चाहते हो. सत्य पूछो तो जबसे सनातनधर्मकी नीति रिति की शिक्षा जाती रही है, तबसे ही भारतकी कुदशा हो गई है. परन्तु शोक कि तुम उर्द्ध लिखि बातों पर लक्षन देकर; नवीन सभ्यता पर ही झूके जाते हो, यह तुम्हारी बड़ी ही भूल है.

वाचक वृन्द ! आज कलके लड़कों में यह अजब ढंगका रोग उत्पन्न हो गयाहै कि जहां कहीं एक, दो अंग्रेजीके शब्द पढ गये कि; झट अंग्रेजोंकी नकल करने लग गये.

और नकलभी ग्रहणकी तो उपरी, अर्थात कोट, पटलून; पहरना, वा शराब; कबाब, उढाना, और स्त्रियोंको स्वतंत्र बनाना इत्यादि पर झुक पड़ना ही भारतोन्नती समझ रहेहैं. पर उनकी भीतरी नकल, अर्थात् परस्पर प्रीति, और देशहितेषता, और उद्योग इत्यादि परध्यान न दिया. वारे ! तुम्हारी बुद्धि और समझ. क्या इसीसे भारतोन्नती करना चाहेते हो. ! धिक, धिक, धिक,

शिष्य गुरुके प्रश्नोतर

शिष्य—क्यों गुरुजी महाराज ? हर महीने में नया जो चांद दिखाई देता है, तो पुराना क्या होजाता है.

गुरु—उसकी दिया सलायां बनाई जाती हैं.

शिष्य—हरवर्ष जो नया सन् बदल जाताहै, तो पुराना क्या होता है

गुरु—उसका रबड़ बनाया जाताहै, जो साहब लोंगोके जूतेमें लगाया जाता है.

शिष्य—रेलका धूआं किस काममें आता है

गुरु—वह मनुष्योंके अच्छे बुरे कर्मोंके लिखने वाले चित्रगुप्तजी की दवात (खड़िया) में डाला जाता है.

शिष्य—फासी पानेवाले मनुष्यकी बाकी आयुका भाग क्या होता है

गुरु—राज्यकर्म चारियों की आयुमें मिला दिया जाता है

शिष्य—सूर्य्य रातको कहां रहता है

गुरु—कालेपानी चला जाता है

शिष्य—शहरमें जो मैला इकट्ठा होता है, उसका क्या बनाया जाता है.

गुरु—उसका ईतर खेंचा जाता है, और तेल निकाला जाता है

शिष्य—वह ईत्तर; और तेल किस काममें आता है.

गुरु—तेल म्यूनिस्पालके मेम्बरोंके काममें आता है; और ईतर नये रोशनीवालोंके कार्य्यमें जाता है

शिष्य—जिन्न कोन हैं, और परी कोन हैं.

गुरु—साहेब लोग जिन्न हैं. और मेम लोग (मड़म) परी हैं, दलील चाहिये तो सायंसे समझ लो.

भारत पे आरत

(अर्थात् भारतकी पराधीनताका आरंभ)

प्रियवाचक वृन्द ! भारत में होगये; राजाओंका संपूर्ण वृतांत अभीतक किसी विद्वाननें नही खोज निकाला है, पर तो भी अबतक जो प्रसिद्धि में आये हैं, वह सूर्य्य और चन्द्र वंशी ही पाये जाते हैं. और यह भारत देश इन्हीकी सत्ता तले बहुत काल तक रहा विदित होत है. सूर्य्य वंशमेंसे प्रथम मनु भगवानका पुत्र इक्ष्वाकु इस देशका महाराजा पाया जाता है, जिसकी राजधानी श्री अयोध्याजी थीं. इस महाराजाके कुल में बडे २ प्रतापी राजा होगये हैं, परन्तु सर्वके भूपण महाराजा इक्ष्वाकु की सत्तावन पीढीमें श्री राम चन्द्रजी हुये हैं. श्री राम चन्द्रजीके उपरान्त छप्पन राजा इस गादी पर बेठे, और अंतका राजा सुमित, विक्रमादित्यके थोडे दिवस पहले स्वर्ग सिधार गया था. इसी सूर्य्य वंशमेसे उदेपूर, जयपूर, और जोधपूर इत्यादिके महाराजा लोग अपनेको उत्पन्न बतलाते है. अस्तु जोहो ! जयपूर तथा कच्छ वालोंकी गादी प्रथम नरवर गढ में, और उदयपूर वालोंकी वलभीपूर (जो अब भाव नगरके समीप वलीगाम है) में थी. और जोधपूर वालोंकी गादी कन्नोजमें पाई जाती है. और इक्ष्वाकु महाराजके बेनोई बुद्धकी वंशके लोग जो चन्द्र वंशी कहलाये; अर्थात बुधका पुत्र महाराज पुरुरव और इसका पुत्र, ययाती और ययातीके तीन पुत्र, उरु, पुरु और यदु हुये. हैं इनकी राज गादी प्रयागमें थी परन्तु पुरु की सत्ताईसवी पीढीमें हस्ती नामक एक राजा हुआ, इसने अपने नामसे हस्तीपूर (हस्तनापूर) नगर बसाया और अपनी राज गादी स्थापनकी. हस्ती राजाकी तेइस पीढी पीछे महाराजा युधिष्टरने महाभारत का युद्ध जीत, इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) नगर में अपनी गादी स्थापनकी. और यदुके कुल में एक्यावन पीढी पीछे श्री कृष्ण; बलराम महा प्रतापि हुये; इन्होने द्वारका नगरी स्थापनकी, पर राज्य उग्र सेनकेही आधीनमें रहने दिया. जेसल मेरका भट्टी; तथा कच्छका जोडेजा, और चुडा समायो इत्यादि राजा अपनेको श्री कृष्णकी वंशमेंसे उत्पन्न मानते हैं. अस्तु ! महाराजा युधिष्टरके भाई अर्जुनसे तीस-पीढी सुधी इन्हिकी ही कुल में इन्द्रप्रस्थकी गादी रही परन्तु अंतके राजा क्षेमको आलसी और राज काजसे बेसुध पाकर इसके ही प्रधान विसर्वने क्षेमको मार कर गादी छीन ली, विक्रमादित्यके समय में विसर्वसे लेकर अडतीस राजे; तीन घरानेके इन्द्रप्रस्थ की गादी पर बेठे; और जब शकजातीको विक्रमादित्यने भगा राजपालको दिया, राजा राजपालको मार कर कमाऊंका राजा सुखवंत इन्द्रप्रस्थको अपनी सत्तामलेने लगा, तब महाराजा विक्रमादित्यने उस पर चडाईकी और उसको जीत कर इन्द्र प्रथस्को अपने स्वाधीन कर लिया. किन्तु कालांतरके हेर फेरसे इन्द्र प्रस्थ तुंवर क्षत्रिय राजाओंकी राजधानी बना. इन तुंवरोंकी उन्नीसवीं पीढी में अनंगपाल इन्द्र प्रस्थका अंतम राजा हुआ.

प्रिय पाठक गण ! जिस समयके वर्णन करनेका हमने विचार किया है उस समय में विक्रम संवतकी बारमीं शताब्दी चलती थी और उस समय में यह अनंगपाल राजा इन्द्र प्रस्थकी गादी पर विराजमान था और इसीके समय में इन्द्र प्रस्थका नाम दिल्ली पडा है. इन्द्र प्रस्थके दिल्ली नाम पडनेका कारण भारतका प्रसिद्धकवि चन्द्र; अपने ग्रंथ रासामें लिखता है कि " अंनगपाल जब इन्द्र प्रस्थ में एक गढ बनवाने लगा, तब एक ब्राह्मणने शुभ मूहर्त देख कर स्थाई राज्य रहनेके कारण एक लोहे की किल्ली (मेख) उस स्थान में गडवाई, उस समय किसी राज दरबारीने पूछा; देवताजी आपने जो यह किल्ली गडवाई है इसका क्या कारण है. ब्राह्मणने उत्तर दिया इसके गडवानेका हमारा कारण यह है कि "यावचन्द्र दिवा करो" अर्थात जब तक चन्द्र सूर्य्य रहेंगे तब तक यह इन्द्र प्रस्थका राज्य तुंवरोंके हाथ में रहेगा. पुनः उसने पूछा कि यह आपने कैसे जाना कि इस किल्लीके गडवानेसे सदैव इनके ही हाथ में इन्द्र प्रस्थका राज्य बनारहेगा. ब्राह्मणने उत्तर दिया कि यह किल्ली शेष नागके फण पर गाडी गईहै इस्से सदेव अब यहांका राज्य इनके हाथ ही में स्थिर रहेगा. पर उस राज दरबारीको ब्राह्मणके कथन पर विश्वास न आया और ठट्ठेसे बोला, देवताजी शेष नागकी फणी कहीं रखडती फिरती है जो आप उसपर किल्ली गडगई कहते हो. ब्राह्मणने उत्तर दिया भाई ! यदि सत्य झूंठका निश्चय करना होवे, तो किल्लीको उखडवा कर देखलो यदि यह रुधीरसे भरी हुई निकले तो-

मेरी बात सत्य और यदि न निकले तो मेरी बात झूठ जानना. अनंग पालने ब्राह्मणके सत्य झूठ निर्णनेके लिये किल्ली *उखडवाई तो वह सत्यही लहु (खून) से भरी हुई पाई गई; इस्से अनंगपालने पुनः वह किल्ली उसी स्थानमें गड़वा दी. तब ब्राह्मणने कहा महाराज आपने भी मेरी बात पर विश्वास न रक्खकर किल्ली उखड़वा दी यह बहुत ही बुरा किया. यद्यापि यह अब भी शेष नागकी फणी पर ही है. परन्तु अबसे इन्द्र प्रसथका राज्य सदैव डामाडोल ही रहेगा, तात्पर्य्य यह है कि जबसे अनंग पालने वह किल्ली ढीलीकी, तबसे उस गढका नाम लोग ढीली गढ़ कहने लगे, और कुछ समयके उपरांत ढीलीका डीली और डीलीका दिल्ली हो गया.

चंद कवि कहता है

छप्पय-

अनंगपाल गढ रचिय, मत्त जोसीसो उकलिय, हुवो तुंवर मत हीन, करी किल्ली ते ढिलिय; कहे व्यास जुगजोत, अगम आगम हुं जाणुं; तौंवर ते चहुवान, होय पुनि पुनि तुरकाणुं; तुरक अवटी मंडव वरह, एक राय मही भोगवे; नव सत्त अंत अंते वरह, एक छत्र मही च-कवे ॥ १ ॥

इसका भावार्थ यह है कि-अनंग पालने ज्योतिषी कामत लेकर गढ बनवाया. पर तुंवरने मतिहीन हो कर किल्ली ढीलकी. इस लिये जगज्जोति व्यासने कहा कि, मैं अगमागम सची जानता हुं. दिल्लीकी गादि पर तुंवर, इसके पीछे चहुवान; इसके पीछे तुरक बैठेंगे, और तुरकोंके सन्मुख मंडोवर वाले होंगे. परन्तु सोला सौवर्ष पीछे एक राजा चकवा होगा.

इसी प्रकार दिल्ली पर अनंगपाल तुंवर राज्य करता था. और उसी समय अजमेर में सोमेश्वर, मंडोर (जोधपूरकी पुरानी गादी) पर नाहर राय; और चित्तौड़ में महाराजा समर सिंहजी; तथा लद्रवा (जैसल मेरकी पुरानी गादी) पर भोज देव था, और अणाहिल पूर (पाठण) में भोला भीम देव चालक्य; तथा कनोजमें जै चंद राठोडका पिता विजय पाल था. और आबूमें जेत परमार राज्य करता था, अर्थात इसी प्रकार सारे भारत पर आर्य राजाओंका राज्य ही था.

पर शोकतो यह है कि ! ऐसे महानु भावोंकी होनहार संतानोकी परस्पर प्रीतिनके न होनेसे भारत की आर्त दशाके दिवस आगये. इस्से विदित होता है कि इन होनहार असाधारण नरों से सुरक्षित भारत भूमि की दुर्दशाका मूल कारण, परस्परकी कलह, तथा ऐक्यताका अभाव, और लोभ, वा स्वार्थ परायणता है. शोक ! कि जिस स्वार्थ परायणताने आज पर्यन्त अनेक दैवी वा आसूरी कष्ट, सहन कराये, पर तोभी आर्य्योंके हृदयसे ये दुष्टा न निकली. अहो आर्य्य भ्राताओ! तुम नित्य प्रति अपने देशके पराधीन होनेके कारण अश्रुपात वहाते हो. और दैवको दूषित करते हो, यह तुम्हारी बड़ीही भूल है, और यह तुम्हारी भूल तुमे निम्न लिखत वार्ताके पढनसे विदित हो जायेगी, तब तुम स्वयंही कहोगे कि, निसंदेह इसमें दैवका कुछभी दोष नहीहै, किन्तु हमारे ही कृत्योंका दोष है. और जो आप लोग नित्य नये २ तरंगोंमें फंसकर एसी इच्छा करते हो कि, जब तक परवश रहेंगे, तब तक सुखी न होंगे. परन्तु जब तुम्हे, तुम्हारे महान पुरुषा स्वतंत्र बनागये थे, तबभी तो तुम अपना गौरव न बचा सके, तो अब स्वतंत्र होकर क्या तेजस्वी कर्म करोगे.

कारण कि ! जो मनुष्य दुसरेको दुःख देकर स्वयं सुखी होनेकी आशासे अयोग्य कृत्य करता है और स्वजनोंके सुख हर लेनेका जो इच्छुक है और कामांधहो, राज्य लोभके वश अपना आचार त्याग. अन्यके ग्रहण करने लालसासे दुष्ट कर्मोका भोगी होता है; वह मनुष्य परिणाम में कैसी दशा भोगता है, वह निम्न लिखत वार्तासे प्रत्यक्ष होगा.

इस वार्ताका आरंभ संवत् १२२९, शाके १०९४ सन ११७६ से होता है. इस समय भारत खंड में दिल्लीकी गादीपर चक्रवर्ति महाराज **पृथिराज** राज्य करता था और गुजरात में भोला **भीमदेव** था, तथा मेवाड़ में महाराज **समरसिंहवा.** कनोज में **जयचंद** राज्य करता था. और इस समय भारत खंडकी सीमापर अफगानिस्तानि यवन. इस धनाड्य देशके

---

* भुज नगरीके स्थापन विषयमें भी जेराज मेर जी ऐसी ही बात कहता है

लूटने तथा पग तले लथाड़नेके लिये उत्साहित हो उछल कूद रहेथे, अर्थात **ग्यासुद्दीन** का भाई **शहाबुद्दीन-गोरी** समयकी प्रतिक्षा कर रहा था, कि कब दावो लगे कि भारत खंडको स्वाधनि करलूं.

वार्ताका आरंभ।

(प्रकरण १)

एक दिवस संध्या समय, मेवाड़की राज्य नगरी चितौड में बडी धूम धामसे महोत्स हो रहा था,राजासें रंक तक का चित्त यह महोत्सव मोह रहा था. सारे नगर में दीपमाला की ज्योति जगमगा रही थी, कहीं २ आतिशवाजी अपनी बहार दिखा रही थी. घाट बाट चौक चौहाट सर्व स्थलों में मंगल छा रहाथा. स्थान २ पर नाना बाजनत्रोंकी सुस्वरोंका आनन्द आ रहा था. महा भद्र सर्वके द्वार पर केलोंके स्तंभ गडे हुये थे. और मंगल कलश धरे हुये थे. रईस, सरदारों, और राज्य सामतोंके यहां नृत्य हो रहा था, कहीं पर शंख, तुरीके नादका गर्जन हो रहा था. देव मन्दिरों में स्तुति, प्रार्थना, और उपासना हो रही थी, और वेदोंकी ध्वनि भक्त जनोका चित मोह रही थी. ग्रह ग्रह में स्त्रियां मंगल गीत गा रही थीं. और यथा शक्त नाना पकवान्न बना रही थीं. तथा कोई गाती हई राज्य भवन से जाती, और कोई आ रहीथीं. राज्य भवनकी शोभा स्वर्गके समान हो रही थी, नव योवन वारांगणा, वा गवैये, भवैये, भाट, चारण, और वंदीजन "चरजीवो सदा समर कुल भूषण" एसा गर्ज २ कर कह रहे थे, और कोई सिशोदिया वंशकी जै मना रहे थे, नगर नारियां कुंवरकी बलियां ले रहीं थीं, और कोई कुछ भेंट दे रहीं थीं. दीन दुःखी राज भवन से दान ले रहे थे, और कुंवर सदाजीवो ऐसी आसीस दे रहे थे. कोई कह रहा था, आहा! महाराजके यहां पुनः पुत्र जन्मोत्सव हुआ, यह हम लोगोंके भाग्य की बात है.

यद्यपि महाराज समरसिंहको प्रथम महाराणी से तीन पुत्र उत्पन्न हुये थे, परन्तु जैसा इस चौथे पुत्रके जन्म होने से राजा प्रजाको आनन्द प्राप्त हुआ, ऐसा प्रथम कुंवरोंके जन्मोत्सव से नहीं हुआ था. कारण कि प्रथम महाराणीके तीसरे पुत्रोत्पन्नके उपरान्त उसका स्वर्ग वास हो गया, और दूसरे उसके तीनो कुंवरोंके मन्द ग्रह होनेसे सर्व का उत्साह भंग हो गया था. महाराजा समरसिंहको प्रथम महाराणी के स्वर्ग वास होजाने से दूसरा विवाह **लक्ष्मी** देवी से करना पड़ा, पर इस महाराणी के कोई संतान न हुई. तब तीसरा विवाह महाराज ने, महाराजाधिराज पृथ्वि राज चौहान की बहिन कमला देवी से किया था. आज इसी महाराणी के पुत्र जन्मोत्स का दिवस है.

यद्यपि तीन पुत्रों के होते, और एक राणी के जीते महाराजा समर सिंहजी को तीसरा विवाह करना यह! आश्चर्य जनक है. पर कालांतर के उपरांत यही आनन्द दायक होगा.

इस समय महाराजा समर सिंहजी महाराणी कमला देवी के प्रसव कष्ट का समाचार सुन, चिंता ग्रस्त हो, राज्य भवन की आकाशी में जा बैठे, यद्यपि इस चिंतासे महाराज की सुन्दर तथा तेजस्वी ललाट कुछ निस्तेज हो गई, वा प्रकाशित नैत्रों की गंभीर दृष्टि भी कुछ न्यून हो गई. और मुख भी स्थिर न रहा. परन्तु इतने पर भी इनके स्वरूप का सौंदर्य कुछ मलीन नही हुआ. कारण कि इस महाराज की दिव्य-मूर्ति, किसी उत्तम चित्रकार रचित मूर्ति के समान थी. अर्थात् जैसे अपार अतल सागर की शोभा देखने से सर्व का हृदय आह्लादित हो जाता है. ऐसे ही महाराजा समरसिंह के देखने से नाना प्रकार के भाव मन में उत्पन्न हो आते थे. जैसे सागर की विस्तिर्णता तथा महानुता और गांभीर्यता देख कर आनन्द हो आता है, और उस की तरंगो के देखने से हृदय आह्लादित हो जाता है. परन्तु क्षणक में भय की भावना भी उत्पन्न हो आती है. वैसे ही महाराज समर सिंह की मूर्ति देखने से, प्रेम, और भक्ति उत्पन्न हो आती, किन्तु साथ ही इस भव्य मूर्ति की वीरता देख, मारे भय के शरीर कंपायमान भी हो जाता, ऐसी इन की मूर्ति थी. यह महाराजा अहंकार रहित, कोमल हृदय होने पर भी, दृढ प्रतिज्ञा वाले और बचन के सच्चे थे. इस समय इन का आयु लगभग छवीश वर्ष कि थी. परन्तु इन के अंग रचना के देखने से ऐसा विदित होता था, कि कदाचित् यह बड़ी आयुके हों!

उस समय महाराजा एक तकियेके सहारे दाऐं हाथ पर सिर रख, विचार ग्रस्त बैठे हुये थे. इतनेमें एक सेवक ने आकर कहा "महाराजाधिरज का जै २ कार हो, श्री महाराणी जी को सुन्दर, मनहर, भाग्य शाली पुत्र जन्मेयो है" महाराज के मुख का रंग जो

मन्द पड गया था, इस शुभ बधामणी वचन के सुनते ही खिल गया, और तुरन्त हाथ से स्वर्ण कंगन (कड़े) उतार कर उस सेवक को दे विदा किया, और बड़े हर्षसे उठकर पुत्र मुख देखने के लिये महाराणी कमला देवी के महल में गये.

आज पूर्णमा की रात्री, पूर्ण चन्द्रोदयके समय में सिशोदिया कुल भूषण का जन्म होनेसे राजा प्रजा दोनों को बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ, और इस आनन्द में मग्न हो नाना प्रकार के मंगल उत्सव करने लग गये. महाराज कुंवरका चन्द्र समान मुख देख, तुरन्त जन्म योग का समाचार लेने के लिये राज महल के पीछाडी उद्यान (वाड़ी) में गये.

उद्यान के एक भाग में एक व्यो वृद्ध ब्राह्मण, किन्तु अंगसे हृष्ट पुष्ट विशाल कपाल, तथा कपाल पर रक्त चंदन का त्रिपुंड धारण किये, गले में रुद्राक्ष की माला, श्वेत जनेऊ पंहरे, और एक रेश्मी पीत वस्त्र आधा नीचे और आधा उपर ओढे एक कुशासन पर बैठा हुआ था. इसके सन्मुख कोई ज्योतिषका ग्रंथ था, इसके एक हाथ में लेखनी और दूसरे हाथ में कागज़ था. वृद्ध उस ग्रंथमेंसे कुछ देख और फिर गिणना कर कागज पर लिख रहा था. मानो बाल कुंवर के भाग्य नक्षत्र, वा योग के मिलावट की गिन्ती कर रहा था. परंतु लिखते और गिन्ती करते हुये कभी २ आकाशकी और भी दृष्टि करता हुआ देखने में आता था. गगन मंडल भी उस समय स्वच्छ था, बादल का कहीं किंचितमी चिन्ह न था. इससे आकाश में स्थान २ पर तारेगण दिसमान प्रकाशित हो रहे थे, और पूर्ण शशि की निर्मल किरणों के प्रकाशसे उद्यान, सरोवर, वृक्ष, पत्र, तथा महलके पशु पक्षी अलौकिक दिखलाई पड़ते थे. ऐसे सुन्दर प्रकाश के समक्ष नगर में हुई २ दीपमाला निस्तेज दिखलाई पड़ती थी. अभी वह वृद्ध ब्राह्मण अपने कार्य्य में लगा ही हुआ था कि इतने में महाराजा समरसिंह आकर क्या देखते हैं कि गुरुदेव कार्य्यमें तो लगे हुये हैं, परन्तु इनका तेजस्वी मुख कुछ विषादसे अंकित है. गुरुको ऐसा देख, महाराजा समरसिंहके मनका आनन्द सारा एक क्षिन में नाश हो गया, और उदासीनता छा गई. परन्तु तो भी बड़े हर्ष से गुरुदेवको वन्दना कर, सन्मुख बैठ गया, और हाथ जोडकर बोला " गुरुदेव ! बाल कुंवर का भाग्य आपको कैसा विदित होता है. क्या ! भविष्य में यह राजा हो कर चित्तोड़ की गादीको शोभा देगा" ?

गुरु देवने गंभीर स्वरसे उत्तर दिया "वत्स,! होगा तो सही परन्तु" केवल इतना कह कर फिर चुप हो गये. गुरु देवका इतना कथन सुन, समरसिंहको बड़ा संदेह उत्पन्न हुआ, कि गुरुजीने "होगा तो सही परन्तु" इतना कह, फिर मौन्य धारण क्यों कर लिया. इस शंका के निवाणार्थ पुनः गुरु देवसे प्रश्न किया. "गुरु देव ! होगा तो सही परन्तु" इतना कह कर आप पुनः चुप क्यों हो गये. हे गुरु देव ऐसी शंका कैसी, अभी गुरु मंगल देव विशेष बोले ही नहीं थे, कि इतने में समरसिंह फिर झट बोल उठा, हाय ! न जाने मैंने पूर्व में क्या पाप किया है कि जिस्सें मेरी वंशका नाम रक्खने, वा सिंहासनारुढ होनें वाला कोई जन्माताही नही. युवराज कल्याण सिंहका भाग्य देख, आपने कहा था कि कल्याण सिंह जो सिंहासनारुढ होगा तो चितौडका महद भाग्य होगा, कारण कि ऐसा सुपुत्र तुम्हारी वंशमें आज पर्यन्त जन्मया ही नहीं, पर किसी शापके कारण राज्यासनके पात्र होने तक कल्याण ! देह रक्ख सके कि नही यह संदेह है; इस लिये वत्स! तू इसके राज्याधिप होने की आशा छोड दे. इसके उपरान्त गुरुदेव जब मैंने कल्याणके मंगल निमित तीर्थ यात्रा, यज्ञ, हवन करनेकी आपसे विनन्तीकी, पर आपने उत्तर दिया कि इससे भी शांन्ति नहीं होगी, तब मैंने कल्याणके राज्याधिप होनेकी आशाका परित्याग किया. और फिर जब मैंने कल्याणके दोनो छोटे भाईयोंके विषेमें पूछा, तो आपने बताया कि इनके गादी पति होनेसे चितोडका अमंगल है. तब मैंने आपकी आज्ञानुसार दुसरा लग्न लक्ष्मीदेवी के संग किया, पर उस्से एक भी संतान न हुई. फिर मैंने तीसरी बार कमला देवीके संग लग्न किया. और जब यह गर्भवति हुई तब आपने कहा कि, इस समय जो पुत्र जन्मेगा वह तुम्हारे राज्य सिंहासनका स्वामी होयगा. आपका यह वचन सुनकर, हे गुरु देव! मेरा हृदय, अति आनन्दकी लहर में मगन हो गया था, और उस समय मैंने आपका, तथा ईश्वरका कितना उपकार मनाया था सो आप जानतेही हैं, परन्तु आज आप ऐसा कहते हैं कि " होगा तो सही परन्तु " फिर इस शंका में मुझे क्यों डाल दिया, गुरु देव! इस कथन से विदित होता है कि

मेरा भाग्य ही निठुर है, इसमें आप अथवा और कोइ क्या करे ?

सगारसिंह के यह उदासीन वचन सुनकर, गुरूदेवने उत्तर दिया, वत्स!इतना बड़ा निराश मत हो, पर यह जतना अवश्यका है कि विधाता का लिखा लेख मिथ्या कभी होता ही नही, फिर इस में हम क्या करें ? इस कुमार में सर्व तो राज्य लक्षण हैं, और यह राजा भी होगा. पर तीन वर्ष पर्यन्त इसे एक ग्रह दुष्ट की पीडा होगी, इस्से तुम्हे कुमार की बड़ी सावधानीसे तीन वर्ष रक्षा करनी चाहिये. यह तीन वर्ष बीतने के उपरान्त, फिर इसके देहको किसी प्रकार की आंच आने वाली नही.

गुरू देव ! और समर सिंह में अभी बातें हो ही रहीं थीं, कि इतने में उद्यानके एक ओरसे दो तीन स्त्रियोंका कोलाहल सुनाई दिया, कि तुरंत ही इन दोनोकी दृष्टि उन पर पड़ी. तो क्या देखते हैं कि एक स्त्रीके हाथोंमें बालक है और दो स्त्रियां बालक वाली स्त्रीके हाथोंसे बालक छुडानेका यत्न कर रही हैं. और वह बालक लिये हुई स्त्री दांत पीस २ कर उन दोनों स्त्रियोंको धक्के मार रही है, और भागने का प्रयत्न कर रही है. इन तीनोंको झगडते देख समर सिंह उनकी ओर जाने लगा, परन्तु इतने में तो वह तीनो यहीं आगई, और उनमें से झठ एक स्त्री बोली "महाराज" ! यह दिवानी मारने के लिये बालक को लेकर भागी जाती है, और हम छुड़ाती हैं पर यह मोई छोड़ती नही है. कुमारको पीड़ा न होये इस्से हम बलसे छीनती भी नही हैं,इस लिये आप इसके हाथसे कुमार को छुड़ाकर हमे दीजीये.

वह स्त्री बात अभी कह ही रही थी, कि बीचमें ही गुरूजीने पूछा, वत्स ! यह दिवानी कोन है; समरसिंह ने उत्तर दिया क्या आपको बिन्दु नामकी दासीका स्मरण नही ? कि यह दिवानी होगई है ?

गुरू देव ने कहा कि ? "जब से हम तीर्थ यात्रा करके आये हैं तबसे हमको इसके सबंधका कुछ समाचार जानने में नही आया, और दूसरे इसके दिवानी हो जानेसे इसकी आकृति इतनी बड़ी बदल गई है कि हमसे यह पहचानी ही नही गई. परन्तु यह कैसे दिवानी हो गई है" ?

समरसिंह ने उत्तर दिया. आसरे छे मासके उपर हुये हैं कि इस्से एक बालक हुआथा, पर दैव योगसे तीन मासके लगभग हुआ कि यह विधवा होगई और पीछे थोड़े ही दिनपर इसका वह पुत्र भी मृत्यु होगया.इस दुःख से यह दिवानी हो गई है. और उस समयसे इसके मन में यह ऐसी ही बात ठस गई है, कि मैं इसका स्वामी हुं और मेरा पुत्र मरा नही है परन्तु जीता है, पर उसे कोई चुराकर लेगया है. इस्से ही यह दिवानी देखने में आती है परन्तु और सर्व प्रकारसे यह सावधान है.

उस समय दिवानी बिन्दु बड़े प्रेमसे बालकुंबरका लाड करती, मुख चुंमन कर ती वो हाथोंमें झुलाती हुई महाराज समर सिंह की ओर मुख करके बोली "प्राणनाथ ! आज मेरा चुराया हुआ धन फिर मेरे हाथ आगया, आहा हा ! इस मेरे लालको कोई मुआ चुरा ले गया था, क्या आप? जानते थे कि कोन चुराकर ले गया था, फिर समर सिंहके पास आ कानमें धीरेस्वर से बोली रांड ! मेरी पहिली शोकन ! आज इस्से गोद में लेकर सोई हुई थी, वहांसे में बडी झपटसे उठालाई हुं. हा! हा ! कैसा मेरा लाल सुंदर है ! रांड शोकन ने चुराया" तो सही,पर मेंभी केसी कि, उस्से छीनलाई अबतो मै उस्से कवी भी न दूंगी. ऐसी बाते करके बडे जोर से हसने लगी. तब समरसिंहने कहा अरी "बिन्दु यह तेरा पुत्र नही है.यह तो उसीका पुत्र है,जिसके पाससे तू उठालाई है.तेरा पुत्र होता तो वह आज कितने दिवस का हुआ होता, और वह इस्से बहुत बडा होता, तू देखती नही कि यह तो अभी का जन्मा है" ? महाराज की यह बातें सुनकर, दिवानी बिन्दु बडे क्रोधसे बोली, क्यों जी आप भी पहिली रांड सौकन के वशमें होकर, मेरे पुत्रको उसका पुत्र बतलाते हो. हाय ! हाय ! मेरा धनी भी मेरे पर निर्दय होता है. पर याद रक्खो कि मै अपने लालको अब पीछे देने वाली नही हुं. तुम्हारी इच्छा होय तो तुम उस सोकन के यहां रहो, मुझे क्या ? मैं तो अब कभी तुमसे मिलने की भी नही.तुम्हारी इच्छा होय तो तुम उसके धनी बने रहो, पर मैं तो अब अपने लालको ही लेकर रहुंगी. मेरा खोया धन पीछे मिला है. इस्से फिर पीछे खोउं क्या? जाइये! जाइये ! दूर रहिये ! मैं अपना बालक अब कभी फेर कर देने वाली ही नही हुं" इतना कह, फिर दिवानी बालक को महाराज के मुख समीप ले जाकर, कहने लगी देखो ! देखो ! मेरे बालक का मुख तो देखो कैसा

मनोहर है ! देखो जैसे तुम हो वैसे ही यह है ! देखो. देखो ! क्या बालक पर भी प्रेम नही आता है ! मेरे लालका एक चुम्बन तो लो ! रे दैव ! मैं कैसी तुच्छ हुं कि जो दो राणीयों के पति के संग विवाही गई ! यदि पहिली मेरी सोकन को पुत्र होता तो न जाने यह कितना उस्से लाड करते. पर अभागानीके लालसे कोन प्यारकरे. दिवानी के यह वचन सुनकर, समरसिंग ने कहा ला, ला, हम इस का चुम्बन करें"

दिवानी ने कहा "अजी जाओ ! जाओ ! तुम्हारे हाथ में बालक देते, मुझे भय लगता है, क्योंकि तुम तो मेरी सोकन के वश में हो. इस्से तुम मेरे लाल को उसे दे दो, तो मै रांड फिर क्या करूंगी ? पर ना, ना, लो, लो, यह तुम्हारा भी तो पुत्र ही है ना? इसलिये तुम्हारा भी लेने को मन करता होगा, इच्छा यहां लो, पर एक बार मीठे मीठे चुम्बन लेकर फिर मुझे पीछे दे देना हो.

समरसिंहने उस दिवानी के हाथों से राज कुमार को ले कर, तुरन्त ही पास खडी हुई दासीयों में से एक के हाथ में दे दिया, और उसे शीघ्र ही चले जाने के सेनकी, वह सेन के पाते ही झठ बालक को लेकर चली गई. दिवानी यह देख क्षणक बार तो विस्मय युक्त हो खडी रही, और महाराज की ओर ही टक टिकी लगाय देखते रही, पीछे बडे क्रोध में आ, कांपती २, लंबे हाथ कर के बोली, धिक ! विश्वास घातक ! यह ही तुम्हारा कर्तव्य है क्या ? अब मेरा रूप गया, रंग गया, और वृद्ध हुई तबो न तुम्हारा नई २ राणीयों पर प्रेम हुआ है. यह क्या ठीक है ? जाओ ! जाओ ! तनी तो लज्जा-ओ, शरमाखोओ ? हायअब मेरा कोन है जो मेरी सहाय करे ! जब मेरा धनी ही मेरा नही, तो फिर दूसरा कोन हो! राम २ सोकन को मेरा पुत्र दे दो. हायरे! यह क्या अन्याय ! नही मालूम कि वह कैसी रुपवन्त है कि जिसके यह वश हो गया. धिक ! मूर्ख ! यह अनीती क्या नीति है जो मेरे अभागनी के बालक से मुझे वियोग कराया ! परमेश्वर उसकी रक्षा करे" ऐसी बकते हुई महलसे चलीगई.

जब तक दिवानी रही गुरु देव उसकी ओर देखते रहे. उसके चले जाने के उपरांत समर सिंह से बोले "वत्स ! तीन वर्ष पर्यंत इस दिवानी के हाथ में बालक न आने पाये, इस्से संभाल रक्खना. क्योंकि एक तो यह दिवानी है, इस्से इस के हाथ में बालक का आना जोखम कारक है. दूसरे इस के मनका भाव घडी २ बदल जाता है, इस्से किसी समय मातृ चक्षुसे देखके बडा स्नेह करेगी, और किसी समय सोकन का पुत्र है, ऐसा समझ कर इसे मारभी देगी, इस में कुछ आश्चर्य नही. कारण कि यह इस बालक को देख के उत्सुक होती है इस्से हमे भय लगता है कि कदापि इस्से ही बाल कुमार पर कोई संकट आ पडेगा, और इस्से ही यह इस बालक पर मातृ भाव की प्रीति से देखे हो. इस में संदेह नही, इस लिये, तीन वर्ष पर्यन्त इस बालक को इस के हाथ सोपना ही नही. और कुमार के कंठ में बांधने के लिये रक्षा कवच देते हैं इस के बाधने से चाहे कैसा भी भय क्यों न आये उस्से इस का रक्षण होगा" ऐसा कह एक रक्षा कवच समर सिंह के हाथ में दिया. पीछे बोले कि "तीन वर्ष बीत जाने के पीछे कुमार को किसी प्रकारकी पीडा होने की नही है. दूसरी बात यह भी सुन रक्खो. कि लक्ष्मी देवीके कोई संतान नही हुई. इस्से वह सोकन का पुत्र देख मन में जलेगी. इस लिये उस के मन में कभी कोई क्रोध का बुरा विचार न आवे इसका रोकना भी अवश्यक है. इस लिये कमला देवीको सर्व बात समझा कर यह बालक लक्ष्मी देवी के अर्पण कर देना ही ठीक है, अर्थात यह बालक आज ही से उसका दत्तक पुत्र बना, राज्य महल में सर्व को आज्ञा करदो, कि आजसे इस बालक को कोई भी कमला देवी का बालक न कहे, बुलावे, परन्तु लक्ष्मी देवीका बालक कहे. ऐसे करने से लक्ष्मी देवी अपना पुत्र समझ कर संतुष्ट होगी और उस के मन में फिर किसी प्रकार का द्वेष उत्पन्न न होगा और वह इस पुत्र के अनिष्टका संकल्प भी करेगी नही" इतना कह कर गुरु देव उठ खडे हुये और दोनो जने उद्यान मेसे विदा हुये.

गुरु देव ! मंगलाचार्य्यजी ने जिस प्रकार समरसिंहको आज्ञा दी थी, उसी प्रकार समर सिंह ने राज्य भवन में जाकर उस का पालन किया, अर्थात् उस कुमार का नाम कर्ण सिंह रक्खा, लक्ष्मी देवी की गोद में दे दिया, अर्थात् उसका दत्तक पुत्र बना दिया, और लक्ष्मी देवी भी उसी घडी से उस बालक को अपना पुत्र जान, परम आहलादित हो गई, और उत्तम

प्रकार से कुंवर का लालन पालन करने लगी.

समय बीतते कुछ बार नही लगती है अर्थात ज्यों २ समय बीतता गया त्यों २ कुंवार बडा होता गया. और ज्यों २ कुमार बढा होता गया त्यों २ उस का सौंदर्यभी विशेष प्रकाशने लगा. बिन्दु दिवानी राज कुमार पर अति प्रति रक्खती थी. पर राजा की आज्ञा से, कुमार सौ सेवकों की रक्षा तले था, इस्से वह किसी प्रकार से राज कुंवरको ले नही सकती थी.

पर! दास दासीयोंसे कई एक बार गोद में लेकर बालक से प्यार करने के लिये विन्ती पर विंती करती. पर राज्य आज्ञा ऐसीथी कि कभी भूल कर भी कोई इस के हाथ में कुंवर न दे, इस्से कोई दासी दास राज कुमार को उस के पास न जाने देता था. इस्से बिन्दु घडी २ सर्व पर क्रोध करती, लड़ती, रड़ती, गालियां देती थी, परन्तु इस पर कोई एक बारभी कुमर को देकर दया न करता. और उसे कुछ बलभी न था. जो वह बलात्कार से कुंवर को ले सक्ती.

जब कुंमर दो अढाई वर्ष का हुआ तब चलने फिरने सिखा, और तीसरे वर्षके लगते बैठना, बोलना और भागना सीख गया, दास दासीयोंको अच्छी प्रकार खेल कुदके रंग दिखलाता था. इतने समयतक एक बार भी दिवानिके हाथमें कुंवर न आनेसे. उस्से यह निश्चय होगया कि अब बालक पीछे मिलेगा नही. तब वह मनमें में यह कहती कि मेरी सोकन एक दिन भी मेरी गोदमें बालक दे दे तो कैसा अच्छा हो, कि मैं एक दो चुमा लेकर पीछे देदूं. एक दिन ऐसा विचार करके उस दासीके पास गई जिसके हाथमें बालक खेलता था. और विन्ती करके बोली कि एक बार कुंवर का चुमन लेने दे, उस दासी ने उत्तर दिया "अपनी सोकन को जाकर कहो कि मेरे पुत्र के संग मुझे एक बार मिलने दे, तो यह तुझे देदूं. दिवानी ने कहा सो तूही उस्से कहो कि एक बार मुझे प्यारके लिये देवे" वह दासी दिवानी की यह बात सुन, हंसकर बोली" चलरी चल दिवानी! चली जा! कुंवर कोमें कभी भी तुझे दूंगी नही. दिवानी दासी से ऐसे उत्तरकी आशा न रखती थी. कारण कि उस समय वहां और कोई नही था. परन्तु जब उसके ऐसे वचन सुने, तब बडे आश्चर्य से दीर्घ स्वास लेने लगी. और फिर दीन स्वर से पुनः पुनः कुमार का चुंवन लेने की याचना करने लगी. पर दासी ने उसकी विंती पर कुछ भी लक्ष न दिया. इस्से दिवानी बडे क्रोधसें बोली "रांड! मेरा बालक मुझे नहीं देती! अरे! क्या दुर्भाग्य है. सोकन के वश हुये २ स्वामी की आज्ञा से मेरा बालक मुझे न मिले! हाय! हाय! धनी के कहने से तो मैंने यह बालक सोकन को दे दिया. अब मेरी विन्ती पर विन्ती करनेसे भी एक बार भेंट लेने नही देती है! री रांड! एक बार तो मेरा पुत्र मुझे दे! अरी दे! नही तो तुझे मार दूंगी' इतना कह राज कुमार की ओर देख कर रोने लगी. इस पर भी दासी ने कुंवर दिया नही. तब अंतको दिवानी अति क्रोध वश हो बक्ती २ चली गई. परन्तु जाते समय ऐसा कहती गई कि "ठीक है, ठीक है! मेरे बालक को आज नही देती है, तो कुछ अडचण नही. पर एक दिवस चुप चाप ही ले जाऊंगी. तब तुम सौ के सौ देखते २ ही रह जाओगे. अहो! भला भगवान! तुमही मेरा बालक मुझे दिला देते" पर दिवानी का यह बकवाद दासी ने सुनाही नहीं, और हंसती २ महल में चली गई.

इसी दिवस से बिन्दु दिवानी ने राज महल का परित्याग किया, और गई यह! चली गई उस समय वहां कोई नही था, दूसरे यह दिवानी एक साधारण दासी थी. इस्से किसीने इसके चले जाने की कुछ पूछ पाछ भी नही की. शेष आगे.

पति पत्नी प्रेम नाटक।

(गतांकसे आगे)

स्थान नाटक शाला।

नाटक शालामें स्त्रिपुरुष आरहे हैं।

(मानदेवी का प्रवेश)

मिस्स शीरी– (मान देवी को आते देख, झट कुरसी से उठ कर, मान देवी को लेने के लिये जाती है, और मान देवी से हाथ मिला कर, अपनी कुरसी के पास ला, पास वाली कुरसी पर बिठलाती है. मान देवी के कुरसी पर बैठते ही और सहेलियां भी आ २ कर हाथ मिला २ पुनः अपनी २ कुरसी पर बैठ बातें करती हैं.)

मि. आनन्दी– मिस्स मानदेवी तुम्हारे आने में इतनी देरी क्यों हुई

मि. शरत–इनका असर्वेंट आने नही देता होगा,

मि. लीली–(हसकर) शरत तुमने ठीक कहा. इनका असर्वेंट आने नहीं देता होगा, पर यह जबर दस्ती आई है.

मि. शीरीं–मि. लीली. तुम जानती हो कि पूराने मनुष्यों के विचार कैसे भद्दे हैं कि वह स्त्रियों को कुछ भी आज़ादी (स्वतंत्रता) देना नही चाहाते हैं

मि. जॉन–और जाती वाले तो फिर भी कुछ ठीक हैं. पर हिन्दु, मुसल्मान तो स्त्रियों को दासी ही बनाये रखना उत्तम समझाते हैं

मि. मानदेवी–मि. जॉन? मुसल्मानों में तो फिर भी स्त्रियां कुछ स्वतंत्र हैं, याने वह एक पुरुषसे दुःखी होने पर झट उसे तलाक दे, दूसरा पति कर सकती हैं, परन्तु हिन्दुओं में तो जो माता पिताने लंगड़ा लूला, अंधा, मुरख, दुखदाई कैसा भी क्यों न हो जो लडकी के गले बांध दिया, फिर उस बिचारी को मृत्यु तक उस के साथ ही निर्वाह करना पढता है.

मि. आनन्दी–पर बाहिन ! अब तो त्रिचारे सुधारे वालोंने दूसरा पति कर लेने का मार्ग जारी कर दिया है, अगर यह रीति सारे देश में फैल गई तो आशा है कि हिन्दु स्त्रियों का भी अन्य स्त्रियों की भांती दुःख दूर हो जायेगा.

मि. मानदेवी–अरी बहिन औरों की भांती! इन सुधारे वालों के तो प्रथम से ही हिन्दुओं में स्त्रियों को दूसरा पति कर लेने की छूट है, पर यह रीत छोटी जातीमें है. उत्तम जाती के अर्थात ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्यमें नही है, और दूसरी बात यह है कि यदि इन वर्णों की स्त्रियों से स्वतंत्रता व दूसरापति करने की बात भी जाय तो वह कभी तैयार भी न होंगी, क्योंकि हमने कई एक नव युवक विधवा स्त्रियों से पूछा कि यदि तुम्हे दूसरा पति करने की स्वतंत्रता दी जावे तो तुम करोगी वा नहीं, तो वह यह उत्तर देतीहैं कि क्या हम पशु जाती हैं कि जो एक को शरीर अर्पण कर फिर दूसरे को करे यदि ईश्वर को स्वीकार होता तो हमको उस्से ही सुख मिलता. इन बातों से पाया जाता है कि यदि उत्तम वर्ण के कुछ सुधारे वाले यह दिये उठावें, तो भी इनकी स्त्रियां कभी स्वीकार नहीं करेंगी. अभी मान देवी कुछ औरभी कहना चाहती थी कि, इतने में नाटक की तीसरी घंटी बजी और परदा उठ गया, इस्से सबका चित्त उधर चला गया, कोई चश्मा चढा, और कोई दूरबीन लगा कर, नाटक पात्रों तथा परदों को देखने लगी, और सबके बैठ जाने, वा नाटक भवन में शांती फैलजाने से, मिष्टर लोगों की दृष्टि अपनी २ नायकों की खोज में लगी.

मिष्टर एम, एन–अपनी पास वाली कुरसी पर बैठे हुये, मिष्टर एल, एन से अजी ज़रा उस तर्फ तो नज़र करो आजतक ऐसी नाज़नीन तुमने उमर भरमें भी न देखी होगी.

मि. एल, एन–ऐसी कोनसी नाज़नी है फ्रेंड! और वह कहां पर है.

मि. एम. एन–वह देखो मिस्स! शीरीं के बाई तर्फ जो बैठी हुई है.

मि. एल, एन–फ्रेंड अफ सोस कि हम पीछली साईट् में होने से उसका मुख नही देख सकते हैं, कहो तुमने उसका दीदार किया केसे और किया है तो कब किया है.

मि एम. एन–घंटी बजने के पहिले, कि जब यह आई थी.

मि. एल, एन–कहो कैसी है.

मि. एम एन–फ्रेंड ऐसी खूब सूरत औरत तो हमने आज तक देखी नही है.

मि. एल. एन–तो यार यह तो ठीक बात नही कि आप ही आप देखो और हमे न बताया न दीदार कराया.

मि. एम. एन–दोस्त ! घबराओ मत घंटी बजने पर दीदार करा देंगे.

इतने में घंटी बजी और लोग बाहर जाने लगे.

मि. एम, एन–उठो दोस्त देखते हुये बाहर चलें.

मि. एल, एन–चलो आगे वाली साईट से हो कर चलें. इस्से उसका मुख दर्शन हो जायेगा. इतना कह कर आगे २ चलता है और पीछे २ मिष्टर एल. एम. भी जाता है. और दोनो मान देवी के पास जाकर बडे ध्यान से देखते हुये बाहर जाते हैं, और फिर बाहर जा कर बातें करते है.

मि. एल, एम–फ्रेंट यह तो नाटक में आज नई ही आई मालूम पडती है

मि. एम. एन–हां नई ही आई है

मि. एल. एन–पर दोस्त, यह यहां की रहने वाली नही है.

मि. एम, एन–ऐसा तो हमे भी मालूम होता है कि यह यहां की रहने वाली नही है.

(इतने में मि. के. ऐल, का प्रवेश)

मि. के. एल–कहो यार क्या गुप छुप बातें करते हो.

मि. एम. एन–कुछ नही फ्रैंड ! एसे ही खडे हैं.

मि. के. एल–अजी हमसे क्या छिपाते हो हमने तो सुन ली हैं.

मि. एल. एम–आपने क्या सुनी हैं.

मि. के. एल–नये शिकारके ताककी.

मि. एम, एन–कोनसा नया शकार.

मि. के. एल–उत्तर देना चाहता ही था कि घंटी बज गई, और सबके सब अंदर अपनी २ कुरसीयों पर जा बैठे.और जब तक नाटक समाप्त नही हुआ तब तक मान देवी की ही बातें करते रहे.और जब नाटक समाप्त हो गया, और मान देवी सहेलियों से हाथ मिलाकर अपनी गाडी में बैठ कर घरको चली, तो कई एक गाडियां मिष्टर लोगों की इस के बंगले तक गईं, जब मान देवी बंगले मे चलीगई तो मिष्टर लोग भी अपने २ घरको चले गये.

अंक २ परदा ३

स्थान हर्ष चन्द का मकान ।
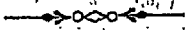
(हर्षचन्द सबेरे निद्रासे उठ कर मानदेवीके पास आ एक कुरसी पर बैठ कर बातें करता है)

हर्ष चंद–कहो ! कोनसा नाटक था और कैसा था.

मानदेवी–लेली मजनू का था (पर बहुत ही उत्तम था, तारीफ करनेलगी.)

हर्षचंद–प्यारी हम नाटक देखनेसे मना नहीं करते हैं पर यदि तुझे नाटक देखने हों तो सत्य हरिश्चंद्र, श्री सेवाजी छत्रपति, सीता, नीलदेवी, इत्यादि नाटक देखो जिनके देखने कुछ उत्तम ज्ञान प्राप्त हो. और दूसरी बात यह है, कि आगे को अकेली कभी नाटक देखने नहीं जाना, क्योंकि यह रीति भले घरों की स्त्रियों की नहीं है.

मानदेवी–क्या! मेरे ही एक अकेली नाटक देखने जानेसे भले घरोंकी रीति बिगढ जाती है, जो और भले घरोंकी अकेली स्त्रियां जातीसें हैं उनसे क्यों नहीं बिगडती.

हर्षचंद–और किस भले घरकी अकेली स्त्री नाटक देखने जाती है.

मानदेवी–मिष्टर रुस्तमजी, मिष्टर कल्याणदास, मिष्टर पंडिया, मिष्टर भवानीशंकर इत्यादि की भी स्त्रियां अकेली ही देखने जाती हैं.

हर्षचंद–प्रथम तो यह सर्व लोग गुजराती हैं इस्से इनकी स्त्रियोंमें अपने देश जैसा न तो परदा है, और न पहरावा है, देखो इस देश की स्त्रियोंका प्रथम तो पहरावा ही खराब है अर्थात् यहां की स्त्रियां केवल एक चोली, और एक धोती पहरती हैं, और यह ही वस्त्र पहरे बाजारों में चली जाती हैं, यदि मार्ग में सिर वा नाभी से कपडा खिसक भी जाता है तो यह कुछ भी परवाह नहीं करती है, दूसरे जिस पुरुष से चाहती हैं बाजार में ही खडी होकर बातें करती हैं, इसकी उनको लज्जा नहीं है, तो फिर वह यादि अकेली नाटकों में जायें तो उनको क्या डर है. तिस पर भी मैं निश्चय से कहता हुं कि भले घरों की स्त्रियां फिर भी अकेली नहीं जाती होंगी.

मानदेवी–निसंदेह पहेरावा तो मैं भी इनका खराब समझती हुं, कहिये मेरा पहरावा कैसा है.

हर्षचन्द–यदि मस्तक पर रोलीका तिलक न हो तो खरी पारसिन ही मालूम पड़े. और यह पारसिन पहरावा कुछ सनातनी, या अच्छा नही है, अपने देशका सनातनी, पहेरावा अभी कुछ दक्षण में पाया जाता है.

मानदेवी–आपने जो यह कहा, कि भले घरोंकी स्त्रियां नाटक देखने अकेली नहीं जाती हैं, तो जिन लोगों के मैने नाम, बतलाये हैं क्या यह भले लोग नहीं हैं.

हर्षचन्द–भले कहने का हमारा तात्पर्य्य हिन्दु धर्म की रित्यानुसार चलने वालोंसे है, और न, के जो लोग हिन्दु नियमको तोड, विदेशी नियम पर चलना चाहते हैं, और इन लोगों ने तो अपनी स्त्रियों-

को अकेली घूमने फिरने की स्वतंत्रता दी ही हुई हैफिर यदि इन की स्त्रियां अकेली नाटक देखने जायें तो कोई अश्चर्य की बात नहीं हैं. परन्तु हम तो ऐसी स्वतन्त्रता तुझे नहीं दे सकते हैं.

मानदेवी—तो क्या ! मैं लिख पढ कर तुम्हारे आधीन रहुंगी.

हुर्खचंद—बेशक तुझे हमारे आधीन रहना पडेगा.

मान देवी—मैं तो पराधीनता में कभी नहीं रहुंगी

गजल

लिख पढ करके भी क्या तुमारे आधीन रहुंगी;
होगा न हर्गिज कभी मुझसे यह दुःख सहुंगी;
विद्यावति हो कर फिर भी जो किसी के आधीन रहे,
सो सो धिक्कार है उसे, मैं तो ग्रही कहुंगी,
मुझको कोई चाहे तो वह बनके मेरा दास रहे,
मैं तो रहुंगी आज़ाद न उसके स्वाधीन रहुंगी,
गर तुमे मंजुर हो तो मानो मेरी यह बात,
करुंगी वो वह काम जो अपने मन में चहुंगी,
रोकना होगा न हर्गिज मुझे किसी भी कामसे,
यह तुमे मंजुर हो तो मैं यहां ही रहुंगी,
बलिहारी नई सभ्यता की जिसने किया आज़ाद,
पाके ऐसी आज़ादी फिर क्यों सुख न लेहुंगी,

हुर्खचन्द—मेरे घरमें तो तुझे किसी प्रकार से नई सभ्यताकी अजादी नही मिलेगी.

मानदेवी—अगर मुझे अजादी नही मिलेगी तो तुम्हारे घर में भी मैं न रहुंगी.

हुर्खचन्द—मानदेवीके यह बचन सुन(बडे क्रोधसे)
(नाटकी चाल, राग तिल्लाना, त्रिताल)
जा चली जा तू बद जात ! जा चली जा बद जात !
नही चलाऊंगा मैं कुरीती, बक बक मत कर तू कुत्तियासी.

बडे बडे घर हुये तबाह, इस्से नहीं है इस की चाह, मन माने है वहां तु जा,
अये औरत कमजात ! जा० जा॰

जिने चलाया नया ये ढंग, वह ही हुये हैं आखर तंग, कहुं क्या बात, जाने नात, करते घात, पति व तात, जिने चलाई ये बात। जा० जा०

हुर्खचन्द—यदि तुझे हमारी दासी बन न रहना हो तो एन चाहे वहां चली जा.

मान देवी—मैं दासी हो कर तो न रहुंगी.
(इतना कह अपना कुछ असवाब बांध गाडी मंगा पिता के घर चली जाती है)

अंक दुसरा परदा ४.

(बंगले में कुछ मिष्टर लोग बैठे बाते कर रहे हैं)

मिष्टर एल. एन—क्यों मिष्टर एम, एन, उसका कुछ पता लगाया या नहीं.

मि. एम. एन—हां ! फ्रैंड पता तो लगाया, पर उसका मिलना बडा कठिन है.

मि. एल. एन—तुमने क्या पता लगाया है; जरा सुनाओ तो सही.

मि. एम. एन—वह, बाबू हुर्खचन्द की स्त्रि है.

मि. एल, एन—कोन बाबू हुर्खचन्द

मि. एम. एन—जो ग्वालियर के हैं.

मि. एल, एन—फ्रैंड वह तो पुरानी चालके हैं. फिर उनकी स्त्रि नवीन चालकी यह एक बडे अश्चर्य की बात है.

मि. एम. एन—कोई अश्चर्य की बात नही है क्यों-कि यह उनकी स्त्रि मुम्बई की पैदा वश है और यही के मिश्नरी स्कूल लिखी पढी है.

मि. एल. एन—तुमने नाम कैसे जाना.

मि. एम. एन—जब तुमने ग्वालियर वाले बाबू हुर्खचन्द का नाम लिया तबी हम समझ गये थे.

मि, एल, एम—कैसे समझ गये थे.

मि. एम. एन—फ्रैंड हमारा पुराना घर, हुर्खचन्द के सुसरालके पास था, इस कारण.

मि. एल. एन—तब तो तुम उसके मा बापका नाम भी जान ते होगे, कहो दोस्त उनका क्या नाम है.

मि. एम, एन—उसकी मांका नाम हर देवी है, और इसके बापका नाम कमला कांत है.

मि, एल, एन—तो यार किसी प्रकार से उस्से प्यार बंध सकता है.

मि. एम. एन—हुर्खचन्द के घर में तो किसी

प्रकार से यह काम नहीं हो सकता है हां। अगर यह आपने पिताके घर में होती तो यह काम हो सकता.

मि. एल, एन–हम ने सुना है कि वह नाटक वाली रात के दूसरे ही दीन आप के घर में चली गई है.

मि. एम, एन–अगर ऐसा है तो हम उससे एक वार तो मिलने का बंदोबस्त जरुर ही करें गे.

मि. एल, एन–जरा हमें भी बतलाओ कैसे मिलने का बंदोबस्त करो गे. शेष आगे

श्रीराम नौमी महोत्सव ॥

अथ रामाष्टकम्।

शिव विरंची गणाधिप पूजितम्,
मनुज देव मुनी यति वन्दितम् ॥
सकल लोक चराचर सेवितम्,
भज न रे मन राम रमा पतिम् ॥
नर शिरोमणि मेह धनुर्धरम्,
प्रकटि [illegible] श्रुवि भारहि भंजनम्।
त्रिविध ताप स पाप विनाशनम्,
भजन रे मन राम रमा पतिम् ॥
पुरुष रुप अनूपम् सुन्दरम्,
सहज हास दिकालित आननम्।
कमल लोचन लावण राघवम्,
भज न रे मन राम रमा पतिम् ॥
मनुज दानव राक्षस घातिनम्,
असुर दुष्ट दर्प विदारनम्।
शिव पिनाक दहाताहि भंजनम्,
भज न रे मन राम रमा पतिम् ॥
त्रिशिर रावन दूषण राक्षसम्,
अपर दुष्ट निमेषहिं मर्दनम्।
सुर मुनी हित मानव रुपिनम्,
भज न रे मन राम रमा पतिम् ॥
दसरथात्मज दायक वत्सलम्,
अवध ईस दया कर भाजनम्।
जनक जा पति दुःख विमोचनम्,
भज न रे मन राम रमा पतिम् ॥
शरणदं सुखदं वरदं प्रभुम्,
दुख दरिद्र हरं करुणा निधिम्।
जगत मंगल कारण सु प्रभम्,
भज न रे मन राम रमा पतिम् ॥
य वसुदेव नरायण निर्मितम्,
पठति राम समो पिदमष्टकम्।
व्रजति सः रघुनायक सन्निधिम्,
भज रे मन राम रमा पतिम् ॥

सोला कला सम्पन्न चांडाल चौकडी.

(गतांकसे आगे)

पर अब क्या करें कैसे मिले, नही मालूम कहां जा रही है, यह यहां किस ढंगसे बुलाई जाये, नौकर को बुलाने के लिये भेजें तो घरमें कह देगा यदि हम उपर से पुकारें तो कोई मुहल्लेका देख सुन लेगा तो क्या कहेगा. और न बुलाया तो वह अपने मार्ग से चली जायेगी, फिर नही मालूम कब दर्सन हो, ऐसे नाना प्रकार के विचार कर अंत यह निश्चय किया कि जब वह निचेसे जाने लगेगी तो धीरेसे आवाज देकर उपर बुला लेना चाहिये. पुनः सोच पढ गया कि यदि बुलाने पर वह ठहर जाये और उपर भी चली आये तो क्या प्रबंध करना चाहिये. नानी साहब कहीं अंदर से देख, सुन पावेंगी तो

क्या कहेंगी. अहो ! बडी कठनता पढी, करें तो क्या करे. इसी सोच में थे कि साहबजान ऐन दिवार के साया तले चलती हुई खिडकी के नीचे से हो कर आगे को बढी, तब सेठ साहबका मन वश में न रहकर जिव्हापर आ बैठा, झट अपनी प्यारी को बुलाये बिना न रहा. अर्थात् थर थराते हुये ? "आप इस समय किधर चली जा रही हो" साहब जानके पतले चौकने कानो में यह शब्द पढते ही आवाज पहचान, उसी दम खडी हो गई. और सिर उठाकर उपर जो देखा तो नव युवक सेठको खिडकी में बैठे देख बडे नखरे से मुस्कराती हुई मनमोहनी स्वरसें बोली " सलाम सेठ जी"

सेठ साहब ने गल्ली के चारों ओर देखकर कहा, सलाम इस समय किधर चली जाओ हो"

साहबजान ने जिधरसे आ रही थी उसी ओर हाथ उठाकर कहा इधर एक काम के लिये गई थी

सेठ साहब ने सोचा कि कोई इस्से यहां बाते करते देख लेगा. इस्से जल्दी २ बोले "आप इधिर उपर क्यों नही चली आती, गल्लीमें शायद को......"

मारे खुशी के और उमग के कंठ रुक गया और आगे शब्द "कोई देख न ले" न निकल सके.

साहब जान जिसको प्रेम पात्र बनाने की डिक्शनरी (कोष) का एक २ शब्द जिव्हा पर था तुरन्त समझ गई कि सेठ साहब मारे प्रेम के एक से अनेक हो रहे रहैं, अपने नोकरको बोली गुलाम नबी तू घर को चल मैं अभी तेरे पीछे २ आती हुं. **गुलाम नबी** झुंझला कर बोला "बस आपका तो बैठक २ में डेरा लग जाता है"

साहब जान ने इस के वाक्य पर मन में क्रोध किया पर इसकी यह बात टालने के लिये बडे प्यार से मुस्कराती हुई उत्तर दिया "नहीं मेरे भाई तू चल तो सही, बस मै तेरे पीछे २ ही आई कि आई"

नबी गुलाम साहब तो घर को रवाना हुये और बीबी साहबजान दिवानखाने में गई,

सेठ साहबने साहबजानके उपर आतेही दिवानखाने का दरवाजा अंदर सें बन्द कर लिया, यहांतक के खिडकियां भी फेर दीं. जौलाई मासके दो पहर की धूपने मारे पसीने के साहब जान का शरीर तर कर दिया था.

पाठकगण ! नहीं मालूम मनुष्योंके नेत्रों में परमेश्वर ने ऐसा क्या तत्त्व भरा हुआ है कि जो सुन्दर पदार्थ को पास लाने और असुन्दर पदार्थ को दूर हटाने के लिये हर समय तैयार रहता है. क्या यह बात अनहोनी है कि यदि आपके आगे दो पदार्थ एक सुन्दर और एक असुन्दर रक्खें जावें तो आप सुन्दर पदार्थ को न चाहें, और असुन्दर को ले लेवें ?

माना कि आप बडे मरजादी हैं, तपस्वी है, नेक हैं, (रिफारमर हितेषी) है, उपदेशक हैं, जो कुछ कहो हैं, पर आपही बतलाईये कि यदि आपके पास दो मनुष्य एक बहही सुन्दर उत्तम वस्त्र भूषण धारी प्रसन्न बदन और दूसरा बुरे वस्त्र पहरे बुरी सुरत का आवे तो आपके नेत्र किसकी ओर विशेष झुकेंगे.

हां ! हम उस मनुष्य को बडा बीर समझेंगें जो युवावस्था में सौंदर्य प्राणियों के संगसे बचा रहे. इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि सुन्दरता एक जादू सरीखा है, यह जादू मार्ग में चलते फिरते मनुष्य को दिवाना बना देता है. धन्य है वह जन, जो इस चंचल सुन्दरता के वशी भूत न हों, मन को अपने वश में रक्खे, इस्से तुछ जानते हैं.

वाचक वृन्द ! बिचारे अपने नव युवक सेठजी को प्रेम (इशक) के बारे में कुछ लम्बे चौडे विशेष मालूम न थे, कारण इसका आज तक जब कभी प्रयोजन पढा तो पुस्तकिय प्रेमनियों से पढा. केवल आजही चैतन्य प्रेमनी के प्रथम २ पास बैठने का समय मिला था. साहबजानने रेशमी बैंगनी रंगका तंग पाजामा पहना हुआ था. शरीरमें केवल एक तारी ढाके की मलमल का कुडता और उसपर सुनेरी किनारेदार बनारसी दुपट्टा था. पाओं में निकाशीदार लाहोरी जूती थीं, और हाथ में एक स्याह रेशमी छाता था.

नाम को तो शरीर पर एक कुडता और दुपट्टा था. पर पसीने से वह तर थे, इस लिये इस के शरीर का गोरा २ रंग कपडों से बाहर हो २ पढता था. आतेही यह खिडकी के साथ तकीये के बल बैठ गई और जल्दि २ स्वास लेती धूपके कष्ट से घबराई हुई बोली " उफ तोबह ! मेरे या अल्ला कैसी गरमी पढती है "

नवयुवक-सेठ साहब मेज परसे एक छोटासा पंखा उठालाये और साहब जानके पास बैठ कर हस्ते २ बोले " ठहर जाओ मैं आपका पसीना अभी सुखा देताहुं.

साहबजान ने उनके हाथसे पंखा छीन लिया, और बोली हाय तोबह ! मैं ऐसी बेअदबी करुं.

नवयुवक-इस में वे अदमी कौनसी है.

साहबजान-खैर: जाने न दो ! ऐसा कह और पंखा हिलाते २ छत की ओर देखकर कहा, आप यहां एक पंखा क्यों नहीं लगवा छोडते "

नवयुवक-ने उत्तर दिया पंखा तो था, पर उसकी झालर परसों जल गई थी इस लिये उसे उतार दिया है कल बनकर आजायेगा.

साहबजान-ने (वेश्या चरित्रसे अपना भोला-पन दिखला कर) वह कैसे जल गई थी.

नवयुवक-(मुस्करा कर) रातको लम्पकी लाट लग गई थी, इस्से वह जल गई थी.

साहबजान-उस समय आप कहां थे.

नवयुवक-मैं उस समय पढता २ सो गया था.

साहबजान-तोबा ! अल्ला ने बडी खैर की, सेठजी ऐसी गफलत नहीं करनी.

नवयुवक-हां ! कभी मनुष्य ऐसा धोखा खा जाता है और फिर हुश्यार होजाता है. भला यह तो बतलाओ कि अब आपके मुकदमे का बिलकुल फैसला होगया कि अभी नही.

साहबजान-जी हां होगया

नवयुवक-शुक्र है किसी प्रकार छुटकारा हुआ.

साहबजान-हजार बार शुक्र उस खुदावन्द और रसूल का है जिसने मुझे साफ बचा दीया नही तो बचना मुश्किल था. यह बातें हो ही रहीं थीं कि एक अवाज आई "भैयाजी अंदर बुलाते हैं,,

साहबजान-यह आवाज सुन (चुंक कर) यह कौन है !

नवयुवक-(मुंह पर उंगली रख मुस्करा कर) चुप-(इतने में फिर आवाज आई) तब नवयुवक बोला क्यों रामा क्या है.

रामा नौकर का नाम है यह घरके अंदर कामकाज किया करता था.

यह दिवान खाना और जनान (स्त्रीयोंका निवास स्थान)खाना एक साथ मिला हुआ था और दोनो का दरवाजा आमो सामने था. केवल जनान खानेके दरवाजे पर एक सुन्दर परदा लटकता रहता औ दिवान खाने का दरवाजा खाली रहता था, कि जिस्से अंदरवालों को दिवान खाने में आते जाते मनुष्य मालुम पढते रहें पर दिवान खाने वाले अंदरके मनुष्यों को देखें. नवयुवक ने साहब जानके आतेही दिवान खाने का दरवाजा यन्दकर लिया था. इस्से रामा जनान खाने से ही खडा होकर पुकार रहा था.

रामा—भैयाजी आपको अंदर बुलाते हैं

नवयुवक—अच्छा मैं आता हुं

यहकह कर नवयुवक उठ खडा हुआ और साहब जानसे कहने लगा मैं एक पांच मिन्टमें आता हुं, आप मेहरबानी करके यहीं बैठी रहो देखना जाना नहीं.

साहबजान-(मुस्करा कर) नहीं अब मुजे इजाजत (आज्ञा)दीजीये.

नवयुवक-नहीं जी आप बैठो, मैं अभी आताहुं.

साहबजाना-नवयुवक के मुंख की ओर घूर कर देखती हुई (अंदर कौने है.आपका कटुम्ब कबील (स्त्री) है क्या.

नवयुवक-(बात को समझ और मुस्करा घुटने के बल बैठ कर) मैं आपको कुटम्ब कबीले वाला मालूम पढता हुं पर मैं तो अभी जो कुछ हुं सो आप ही आप हुं. अंदर मेरी नानी मामी साहब हैं वह ही बुलाती हैं.

साहबजान-(एक धीमें स्वास लेकर) खैर ! जाओ पर जल्दी आई येगा

नवयुवक-ठीक ! अभी आता हुं. इतना कह कर अंदर चला गया, अंदर नवयुवक का नाना वृद्ध एक भद्र पुरुष था इसी नगर में एक भारी सराफ़ीकी दुकान थी. नवयुवक के माता पिता के मृत्यु हो जाने के कारण अपना सर्व कार्य अपने बडे लडके सेठ मथुरा दास को सौंप नवयुवक के लालन पालन के लिये इसी के मकान में आ रहे थे. नवयुवके अंदर आते ही नानी साहबने पूछा. लालजी दिवान खानें में किसके साथ बाते कर रहे थे. रामा कहता है कि किसी स्त्रिकी आवाज मालूम होती है.

नवयुवक-ने अपने धडकते हुये हृदय को थाम, और दले रहो उत्तर दिया "स्त्री नहीं जी मेरे स्कूल का एक लडका है (फिर मुस्कराकर) उस की बोल चाल सब स्त्रीयों की भांति है. प्रिय वाचक वन्द ! यह प्रथम बार ही थीकि नवयुवक ने अपने नानी साहब जिसको यह अपनी माता सेभी बढ कर सन्मान किया करता था आज उनसे झूठ बोला. और मानी साहब कोभी इस पर पूर्ण विश्वास था, इसको यह बातें सुनकर चुप हो गई. पर मानीजी से न रहा गया, वह कह ने लगी लालजी तुम इस कारण बुलाया है कि वह कल वाली स्त्री आज फिर आई थी. (हंसकर) मैं उससे कहुं ? तुम लज्जा क्यों करते हो क्या कुंवारे थोडे ही रहना है. (फिर हंसकर) सम्बंधी भी अच्छे हैं घर वाली जुवान भी है. अपनी साससे सासूजी जोडी तो ठीक है आगे आपकी और लालजी की इच्छा

नवयुवक-ने आंखें नीचे कर के कहा मामीजी मुझे इस बारेमें क्या पूछती हो. नानीजी जाने या तुम जानो

मामी-तो फिर जो हमारी इच्छा पर है तो हम करें न ?

नवयुवक-जैसी इच्छा हो करो.

निदान कुछ देर तक शादी (लगन)के बारेमें बातें होती रहीं. यद्यपि नवयुवक बातें करते तो थे. पर प्रत्यक बातका टुकमें उत्तर दे देते थे, कारणकी उनका मन तो मनमोहिनीने आकर्षण किया हुआ था. इस्से जल्दी पीछा छुडा कर पांच मिन्टके बदले बीस मिन्ट के बाद कमरे में आये.

आहा ! आहा ! आहा ! यहां तो और ही रंग खिला देखा साहब जान तकिये के सहारे बेठी २ सो गई है, और ऐसी सो रही थी कि तन की कुछ भी सुध नथी, दांई करवट अजब ढंग से आधी लम्बी थी. मल मल का सफेद कुडता छाती से उपर चढ गया था जिस्से पेट नगन दिख लाई पडता था जुल फों (लटों) के बाल बिखर रहे थे, आंखें कुछ बंद और कुछ खुली हुईथीं, स्वास शीघ्रता से चल रहे थे, गोरे गोरे पाओं एक दुसरे पर पडे हुये थे. निदान! सोना भी एक ढंग का था, नवयुवक सेठ साहब धीरे धीरे आकर चुप चाप इस के सन्हाने बैठ गये. और कुछ देर तक इस के गुलाबी अंग पर दृष्टी फेर फेर कर देखते रहे, इससमय जो जो विचार इस के हृदय में हो रहे थे, उसका हम क्या कथन कर सकते हैं यह किस नवयुवक प्रेमी जन सेठ से पुछिये, नवयुवक ने ! परमेश्वर जाने ! क्या सोच समझ कर धीरे २ इसके हाथ हाथ को गोरे गाल पर से हटा दिया और पसीने की बूंदें जो मुख पर थी रुमाल से धीरे २ पांच पंखा करने लगा. दो ही मिन्ट पंखा हिला फिर बन्द कर दिया कि शायद जाग न उठे ! जाग उठ ने से तो कुछ डर न था, केवल यह विचार था कि कहीं उठ कर घर को न चल देवे, और अनर्थ हो जावे.

अहो ! संसार में सुन्दर मनुष्य क्यों आये ? अहो ! चित्त सुन्दरता पर क्यों निछावर हो जाता है. शोक ! प्रेम क्या वस्तु है?

यह कौन, मैं कौन, मेरा चित्त इस्से क्यों चाहता है? इसका यहां उपस्थित होना मुझे क्यों भावता है ? इस्से बिछड नेको क्यों नहीं जी चाहता है ? इसका प्रत्येक अंग क्यों प्यारा २ मालूम होता है ? वैश्याका एक श्रेठ मनुष्य के स्थान पर इस प्रकार पर सोयेरहना अच्छा नही, फिर मैं इसको विदा क्यों नही करता हाय ! ऐसा हो नहीं सकता. पर क्यों ! अदालत के कमरे में और लोग तो शायद मुकदमे में दिल बहलाने के लिये जाया करते थे. किन्तु मैं केवल इसके देखने के लिये ही जाया करता था. क्यों ? बाजार की एक वैश्या ही तो है जिसका जी चाहे रुपया खर्च करे और इसे सीने से लगा ले, फिर ऐसी साधारण से प्राप्त होने वाली वस्तुको मैं क्यों अनमोल समझ रहा हुं. पुष्कल सुन्दर स्त्रियां देखने में आई हैं, पर उनमें से किसी पर भी चित्त इस भांती क्यों मोहित नही हुआ, जिस प्रकार इस पर ? क्या मैं दिवाना तो नही हो चला ? नही २ मैं अच्छा भला हुं, फिर यह क्या बात है ? क्या सच मुच यह सुन्दर है या मैं धोखा खारहा हुं ? धोखा नही, देखलो बाल हैं सुन्दर मांथा भवें, आंखें, गाल, होंठ, नाक, मुंह, ठोडी, गारदन, सीनह बाजू, कलाईयां, हाथ, उंगलियां, पेट, पिंडली, पाओं, सर्व अंग ऐसे हैं, जैसे किसी ने बरसों की मेहनत से तैयार कर बनाये हों, कोई कसर नही, फिर मालूम नही इस्से बढ कर संसार में और क्या

आयर्वेदोक्तौपधालय.

सहस्रों रोगी अच्छे होगये.

लीजीये ! लीजीये !! लीजीये !!!

अति गुण दायक काष्ठौषधियां एक बार परीक्षा कर के देखलें,

(१) **दांत का मंजन.** इस मंजन के लगाने से दांतों के सर्व रोग नाश हो जाते हैं और दांतोंकी जड़ पुष्ट कर देता है, अर्थात दांतों का हिलना, दाढ़ का दर्द, मसूड़ों का फूलना, अकस्मात् दांतों का टीसना कीड़ोंको कलबलाहट, और मुंहकी दुर्गंध एकबार के ही लगानेसे दूर करता है. मूल्य एक सीसी का आठ आना है.

(२) **आंखका अंजन.** इस अंजन के लगतेही आंखोंमें गर्म २ दो चार बुंद पानी के निकल जाते हैं और ठंडक पड़ जाती है. सत्य तो यह है कि यह अंजन आंखों की कमजोरी, लाली, पीली धुन्ध, जाला, मोतिया बिन्दु आदि सर्व रोगोंको नाश करता है और आंखों की ज्योति को बढ़ाता है कि फिर ऐनक की कुछ जरूरतनहीं रहने देताहै १ सीसी मूल्य बाराआना

(३) **दाद खुजली की गोलियां.** यह गोलीयां दाद खुजली के लिये रामबाण का सा काम करती हैं अर्थात चाहे कैसी भी दाद खुजली क्यों नही हो तीन बार के लगानेसे जड़ मूलसे नाश होजाती है मूल्य ८ गोलीयोंका आठ आना है.

(४) **ताकतकी गोलियां.** इन गोलियों के आठ दिन सेवन करनेसे वीर्य अपनी स्वाभाविक अवस्था पर आजाता हैऔर स्वपन आदि दोषों को दूर करता है. और वीर्य को गाढ़ा बनाता है और शक्ति (ताकत)को बढ़ाता है. एकबार परीक्षा कर देखीये आपही मालूम पड़ जायेगा मूल्य आठ गोलियों का दो रुपया है

(५) **आतशक नाशक गोलियां.** इन गोलियों के सेवन से चाहे कैसी भी आतशक क्यों नहो सोलो गोलियों के सेवन से जड़ मूलसे जाती रहती है मूल्य १६ का डेढ़ १॥) रु० है.

(६) **सुजाक** नाशक गोलियां. इन १६ गोलियों के सेवन से कैसी भी सुजाक क्यों न हो नाशहो जाती है १६ गोलियों का मूल्य १॥) रु० है.

(७) हैजा (कुलारा) की गोलियां. यह गोलियां प्रत्येक मनुष्य को अपने पास रखनी चाहिये, कारण कि न जाने कौन समय यह चोटकर बैठे. यह गोलियां पास होनेसे चोटका डर नही रहेगा. मूल्य ८ गोलियों का एक रुपया है.

(८) **वात हरण गोलियां** इन गोलियोंके सेवन से चौरासी प्रकारका वायु नाश होजाता है १६ गोलियां का मूल्य १॥ रुपया.

(९) **मन्दाग्नि** गोलियां. इन गोलियों के सेवन से अग्नि अपने स्वाभाविक अवस्थापर आजाती है १६ गोलियों का मूल्य एक रुपया.

(१०) **हाजमे** की गोलियां इन गोलियों के सेवन करनेसे अजीरणका नाश और हाजमा ठीक, और अग्निदिपन होजाती है मूल्य १६ गोलियों का एक रुपया है.

(११) **जखम** (घाओ) केअच्छा करनेकी गोलिया चाहे कैसा भी घाओ क्यों न हो इनके सेवनसे अच्छा होजाता है मूल्य १२ गोलियों का एक रुपया है.

(१२) **खांसी दमाकी** गोलियां. चाहे कैसाभी पुराना दमा खांसी क्योंन हो इन के सेवनसे नाशको प्राप्त होजाता है मूल्य १६ गोलियों का एक रुपया है

(१३) **जुलाब** की गोलियां. इन गोलिया मेंसे एक गोली खाने से ४दस्त होते हैं जो नसोंमें (नाड़ीयां.) में मलको बाहर निकाल शरीरका हलका और निरोग करदेती हैं आठ गोलियोंका मूल्य आठ आना है.

(१४) **मूत्र कृश** वा बहुमूत्र नाशक गोलियां इन गोलियों के सेवनसे मूत्र अपना स्वाभाविक अवस्था पर आजाता है और शरीरमें ताकत देती है एकबार परीक्षा कर देखीये मूल्य आठ गोलियोंका दो रुपया है

१५ **ताकत और बंधेजका माजूम.** इसके सेवनसेशरीरमें ताकत आती है और बंधेज हो आता है त्रिदोषका नाश होताहै और खूनको बढ़ाताहै और खराब खूनका नाश करता है क्या प्रशंसा करें एकवार खाकर देखलें आपहि मालूम पढ़ जायेगा मूल्य एक तोलेका दसरुपया है.

(१६) **मुम्बईके** प्रचलित मरकी रोगका लेप और **अर्क** तथा **गोलियां** इनतीनो के सेवन से मुम्बई के सहस्रों मनुष्य इस रोगसे बचगये हैं ऐसे रोगके लिये यह तीनो औषधियां रामबाण हैं इन तीनो वस्तुओं का पांच बार सेवनसे रोगी अच्छा हो जाता है तीनोंका मूल्य ५ रुपया है (१७) **अर्ककपूर** यह अर्क हैजे और अजीर्ण के लिये बड़ाही उपयोगी है मंगा कर देख लिजीये एक सीसी का मूल्य आठ आना है.

(१८) **जखम** का तेल यह तेल जखमों के लिये बड़ा ही लाभ दायक है एक सीसीका दाम १ रुपया है.

(१९) चूर्ण. इस चूर्ण के सेवनसे दमा खांसी बुखार और तपेदिक नाश होजाता है एक पुड़िया का दाम एक रुपया है.

(२०) **नम्बर** की पुड़िया. इसके लगानेसे नम्बर अच्छा होजाता है एक पुड़ियाका दाम१रुपया है. इनके सिवा और भी कई प्रकारका औषधियां इस औषधालय में मिल सकती है और इन औषधियोंके सेवनका विधि पत्र औषधियों के साथ भेजा जाता है जिन सज्जनों को जिस किसी रोग की औषधी मंगानी हो वह हमें पत्र द्वारा सूचितकरें हम वैल्यूपेबुल द्वारा भेज दे सकते हैं.

सर्व का शुभचिंतक—**परमहंस परमानन्दजी वैद्यराज**

भलेश्वर तालाब के सामने—मुम्बई

श्रीधर्मामृत आडत (एजन्सी)

कि हमने सर्व साधारण के सुभीते के लिये यह एजन्सी खोल रक्खी है कि यदि जिनको जो कुछ मंगना हो वह उस वस्तुका नाम और अपना पूरा पता एक कार्डपर लिखकर नीचेके पतेपर प्रेरित करें तो घरबैठे बिना तरद्दुद मिस्र लिखित देशो और विलायती नयी चुहचुहाती हुई चीजें अर्थात नये डालका टपका माल जो विलायत आदि अन्य २ देशों मे विक्रयार्थ बम्बई में आते हैं उचित मूल्य पर प्राप्त करसक्ते हैं. कुछ वस्तुओंका नाम संक्षेपमे नीचे लिखते हैं कि जो हमारी एजन्सी से मिलसक्ती हैं. ऊनी रेशमी तथा सूती कपडे हररंग और भिन्न २ चौडाई की साडियां खास बम्बई और चीन की बनीहुई जिनके किनारोंपर सुन्दर मनहरण रेशमी वेलबूटे बने हुए हैं. बाजा अंगरेजी और हिंदुस्तानी जैसे हारमोनियम, फोनोग्राफ, इलसेटना, वीना सितार इत्यादि; घडियां हरएक प्रकार की जैसे टाइमपीस, जेबीघडी और क्लाक आदि; हरएक रोगोंकी परीक्षित औषधियां जो अच्छे २ आयुर्वेदज्ञ वैद्योंकी परीक्षामें अच्छी उतरी हैं; हिंदी, गुजराती, मरहठी, संस्कृत तथा अङ्गरेजी भाषाकी पुस्तकें जो अंगरेजी स्कूलों और संस्कृत शालाओं तथा कालिजों में जारी हैं. इञ्जिनियरी, फोटोग्राफी तथा नकशा निगारी की सब सामग्री, एवं कमख्वाब बाफ्त शाल दूशाल सादे और कामदार हर रंग और भिन्न २ प्रकारके गोटे पठ्ठे सलमा सितारा, मोजा बनियाइन सूती और ऊनी टोपियां चौगसिया किश्तीनुमा मखमली ऊनी और कामदार प्रत्येक भांतिकी इसके अतिरिक्त राजा रविवर्म्मा के बनाये हुए अनेक देवी देवताओं के मनोहर चित्र—रम्भा, तिलोत्तमा, मैनका शकुन्तलादि अप्सराओं की मनहरण अद्भुत तसवीरें जिसे देखकर टकटकी बंधजाय; रक्तशुद्ध करनेवाली बलप्रदायनी विद्युतीय मुद्रिकायें अर्थात बिजली की शक्ति डालीहुई अंगुठियां तथा चांदी सोनेके आभूषण जडाऊ और सादे जनाने मर्दाने, हरएक प्रकारके लिखने के कागज, कलम, स्याही, चाकू, कैंची, उस्तरे. और प्रेस सम्बंधी सर्व सामग्री, दर्शनार्थ मंदिरों में जाने के लिये सूती उपानह (जूती) रब्बर स्टाम्प की मोहरें इत्यादि वस्तुयें उचित कमीशन पर पत्र पातेही वेल्युपेबिल से भेजी जाती हैं. दश रुपये से अधिकका सामान मँगानेवालेको उचित है कि आधा मूल्य निम्नलिखित पतेपर प्रथम भेजे.

पता:—

मनेजर—"सदाशिव बाबाजी" प्रिंटिंग प्रेस

ठाकुरद्वार पालवारोड पोष्ट मारकीट बम्बई.

श्री धर्म्मामृत पत्र.
अंक २
सिद्धजगत्
धर्मसार
यह पत्र काशीनिवासी गो. प. जगतना-
रायण शर्म्मा द्वारा बम्बई सदाशिव बावाजी
प्रींटिंग प्रेस में छपकर प्रकाशित हुआ.

श्रीधर्म्मामृत की संक्षेप नियमावली।

(१) इस पत्रका मूल्य, नगर और बाहर सर्वत्र डाकव्यय सहत अग्रिम वार्षिक केवल १॥ रु. है. गर्वमेन्ट तथा राजा महाराजाओंसे उनके आदरार्थ ५ रु. है.
(२) पांच श्रीधर्म्मामृत एक साथ खरीदने वालों को एक प्रति मुफ्त अर्थात जो पांच ग्राहक हो कर ७॥ रु. दाम भेज देंगे उनको एक पाकिट में ६ श्रीधर्म्मामृत की पुस्तकें हर मास की पहिली ता० को मिला करेंगी.
(३) पत्रके उत्तर चाहने वाले महाशय, जबावी कार्ड अथवा टिकट भेंज, अन्येथा पत्रोत्तर न दिया जायगा.
(४) नमूने की प्रथम प्रति पहुंचने पर यदि ग्राहक होना स्वीकार हो, तो मूल्य ता० १ तक भेज देना चाहिये, यदि ग्राहक होने की इच्छा न हो तो कार्ड द्वारा सूचित करना पडेगा,और नमुने की पुस्तक पर आध आनेका टिकट लगा वापसकर देनी चाहिये, नही तो ग्राहक श्रेणी में समझे जा येंगे. (५) विज्ञापनकी छप् वाई एक मासके लिये प्रति पंक्ति दो आना तीन मासके लिये एक आना, और छ मास या इससे अधिक समय के लिये आध आना है. और छपे हुये विज्ञापनों की वितरण कराई ५ रु. लिया जायेगा

श्रीधर्म्मामृत सम्बन्धी सर्व चिट्ठी, पत्र,व मनीआर्डर और समाचारपत्र नीचे पत्तेपर आने चाहियें

भारत भाईयों का शुभचिंतक अन्ना बाबाजी म्यानेजर

सदाशिव बाबाजी प्रिंटिंग प्रेस ठाकुर द्वार पालवा रोड पोष्ट मार्किट—मुम्बई.

श्रीधर्म्मामृत पुस्तकालय की पुस्तकें

(१)गोरक्षाप्रकाश—गऊ मातके बारेमें विदेशियोंके एक सहस्त्र प्रश्नोका उत्तर, सर्वगोभक्तों को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये. मूल्य ८ आना (२) अकबर गोरक्षा न्यायनाटक इसमें अकबर बादशाहने किस रीतिसे गोरक्षा कीथी, यह नाटकी चालसे कथन किया गया, है, इसमें बहुत, करुणामय नाना प्रकारके राग भी हैं. मूल्य १२ आना (३) अकबर बीरबल का समागम. इसमें बीरबलकी चतुराई के दोहे भरे हैं. देखने के योग्य पुस्तक है. मूल्य १२ आना. (४) ईसू परीक्षा. इसमें ईसामसीह की परीक्षा की बातें हैं. प्रश्न करते ही ईसाई दांत दबाते भाग जातें हैं मूल्य १ आना. (५) ईसाई मतपरीक्षा. इसमें ईसाई धर्म के ढोलकी पोल खोली गई है. पढकर देखलो मूल्य १ आना. (६) हिंदुओंकावर्तमानीन धर्म अर्थात् भोलेभाले हिन्दु भाई किस रीतिसे विधर्मियों के फंदे में फंस जाते हैं. मूल्य १ आना (७) गाजीमियांकी पूजा. हिंदु कबर पूजियों को यह क्या सूझा ? पढकर देखलो मूल्य आधा आना (८) गऊकी नालिश. मूल्य आध आना. (९) गोपुकार. मूल्य आध आना (१०) गोपुकारचालीसी मूल्य आध आना. (११) गोविलाप ? मूल्य आध आना. (१२) गोदान व्यवस्था. मूल्य आध आना. (१३) गोगोहार. मू० आध आना. (१४) काऊपोटेक्सन. अर्थात् एक अंगरेज की गोभक्ति मू० आध आना. (१५) गोरक्षापर बादशाहोंके फतवे (व्यवस्था) मू० आध आना. (१६) गोहितकारी भजन. मू० आध आना. (१८) भारत डिमडिमा नाटक. एकबार पढोगे तो भारतकी क्या दशा है जान लोगे मू० चार आना.

श्रीः।

श्री धर्म्मामृत पत्र।

अमृतं शिशिरे वन्हिर, ऽमृतं बाल भाषणम्।
अमृतं राज संमानो, धर्म्मोहि परमामृतम्॥

वर्ष २ [मुम्बई वृम्बेश्के वैशाख मास सम्वत १९५६ सन् १८९९ मे] अंक २ .

भारतोन्नतीका साधन सद्धर्महीहै.

(गतांकसे आगे)

(७४) करनल आलकाट साहब कहते हैं कि "बहुत लोग जो आजकल की विद्या बुद्धि पर फूल रहे हैं, और वह यह प्रश्न किया करते हैं, कि भला, बतलाओ कि ? आर्य्यों ने भी कभी तार रेल के समान कोई यंत्र बनाये थे. मैं इस का उत्तर दे सकता हुं कि उस समय धुंयें के गुणों से लोग अच्छे प्रकार से जान कार थे. छापे की विद्या, तथा कारखाने, चीन देशमें उपस्थित थे. निश्चय है कि आर्य्यों के पास तार था, कि जिस के द्वारा वह बडे २ दूरसे समाचार मंगाते; पहुंचाते थे, किन्तु उस में खम्बे गाड़ने वा तार लगाने, और तूतिया इत्यादि मसाला रखने की अवश्यक्ता नहीं होती थी. और अबभी उन की संतान में वह वह ऋषि उपस्थित हैं, वह क्या है ; "योगविद्या". पुनः करनल साहब कहते हैंकि आर्य्य लोग वह विद्या भी जानते थेकि, जिसके लिये पश्चिमी, युरोप वाले बड़ा यत्न वा खोज कर रहे हैं, और अभीतक पूर्णतासे प्राप्ति नहीं की है, याने बेलून, आर्य्यों को आकाश में वायु द्वारा चलने की सामर्थ्यथी, वह केवल आकाश में चलने की ही सामर्थ्य नहीं रखते थे, परन्तु वह आकाश में युद्ध भी किया करते थे, जिस प्रकार पक्षीगण आकाश में उड़ते हैं. जब वह ! इस प्रकार वायु में उड़ते थे, तो पूर्ण निश्चय है कि, वह अवश्य ही उन सर्व विद्याओंसे जो वायु की लहर, और अंधेरी, तथा गहराई से सम्बंध रखने वाली हैं, पूर्ण जान कार थे. देखो [भारत त्रिकाल दशा का पन्ना ६-७ तक]

फिर करनल साहब कहते हैं कि "उस माया की सभामें कि जिसका महा भारत में वर्णन आता है, कहते हैं कि सूक्ष्म दरशक यंत्र [अर्थात् माईकरस कोप खुर्दबीन] वा और दूर दर्शक यंत्र [अर्थात टलस कोप दूरबीन] धरम घड़ियां, और जेबी घड़ियां, तथा कलों के द्वारा बोलने वाले पशु, पक्षी इत्यादि उपस्थित थे. और आर्य्यों में अस्त्र विद्याको पूर्णतासे जानने वाले ऐसे २ विद्वान थे, कि वह विष. [जेहर] मिश्रत वायु से शत्रुओंकी सेनाओंको लपेटकर, तथा वायु में भ्यानक शब्द उत्पन्न करके उन का नाश कर देते थे, और भ्यानक रूप आकाश में उत्पन्न कर के शत्रुओंको भयभीत, व कम्पायमान भी कर देते थे. इस विद्या का तो नाम तकभी इस समय लोग नही जानते हैं. देखो (भारत त्रिकाल दशा का पन्ना ६-७

(७५) एक देशी विद्वान अपनी पुस्तक में लिखता है कि "कौरव पांडवोंके युद्ध समय में व्यास जीने सञ्जे को एक दूरबीन देकर कहा था तु इस के द्वारा युद्ध का सर्व वृतान्त देख कर महाराजा धृतराष्ट को सुनाया करियो, क्या ? वह दूरबीन आजकलकी भांति कांच के सीशे की बनी हुई थे. नहीं ! नहीं

वह दूरबीन दिव्यचक्षु थे, और वही दिव्य चक्षु श्रीकृष्ण भगवानने अर्जुन को अपने विराट स्वरूप दिखलाने के समय में दिये थे, अर्थात् ज्ञान चक्षु० देखो [महा भारत]   शेष फिर

सांप्रत स्थितिनुसार सुख संकल्प.

प्रियवाचक वृन्द ! सांप्रत स्थिति अनुसार सुख संकल्प अर्थात् अपनी बिगड़ी हुई सांप्रत स्थिति में सुख प्राप्ति के लिये, क्या ? संकल्प होना चाहिये, कि जिस्से शारीरक वा आत्मिक उन्नति कर, परम पदको प्राप्त हों.

आर्य बांधवो ! जब हम इस **विषय** पर ध्यान देते हैं. तो हमको ऐसा कोई भी **साधन** दिखलाई नहीं पड़ता है कि, जिसके द्वारा उक्त लिखत दोनो उन्नतियां प्राप्त कर सकें, कारण कि इस समय हमारे सर्व साधन नष्ट भ्रष्ट हो गये हैं. जिस्से हमारी **स्थिति** केवल **निराधार, निराधन**, शिशु के समान परवश हो रही है, इस लिये अब हमको किसी का आधार नही है, हम इस समय **निर्धन और भिक्षुक** हो रहे हैं.

मित्रो ! यदि हमारी स्थिति ऐसी न होती तो, गत वर्षमें जो दुष्काल पड़ा था, और उस दुष्काल में विदेशीयों ने जो हमे भिक्षा दी थी, अर्थात् हमारे लिये जहाज भर कर जो विदेशसे **अन्न** आया था, क्या ? वह **भिक्षा** का नही था. पर शोक ! कि इस भिक्षासे भी तो हमारा **पुरा** न पड़ा था, और सहस्रों अपने भाई अन्न बिना, फिर भी सूखे मर हो गये. और सहस्रों धर्म **भ्रष्ट**, और सहस्रों देश त्याग विदेशों को भाग गये. क्या ? यह **दरिद्री** और **भिखारियों** के लक्षण नही थे. और क्या ? यह भारत भूमि निवासियों के लिये लज्जाकी बात नहीं थी, कि जो भारत भूमी **स्वर्ण** भूमी कहलाये, जिस भूमी में विदेशी आकर नाना प्रकार के सुख भोग भोगें, और इस भूमी के निवासी भिक्षा से अपना जीवन वतीत करें, और भिक्षा मांगने पर भी पूरी भिक्षा के न मिलने से, **भूखे** मरें, यह कितने शोक ! की बात है.

भारत भाइयो ! अपनी ऐसी दुर्गति क्यों ? जब हम इस विषय पर विचार करते हैं, तो यह ही बात है; कि जगत पिता जगदीश्वर ने इन आर्यों को सर्व संसार के निवासियों में बढ़कर, यह भारत भूमि प्रदान की, जो कि पारसके समान है. और हमारे पूर्व पुरुषाओं ने इस ईश्वरी प्रदान पारस भूमि को उत्तम उपयोग में लाकर नाना प्रकार के सुख भोग भोगे थे. पर शोक, कि हम लोगों ने इस ईश्वरी प्रदान पारस भूमि को उत्तम उपयोगमें लाना त्याग दिया है. यह ही मुख्य कारण हमारी दुर्गति भोगने का हुवा है, और हो रहा है. कारण कि जो भारतीय पारस भूमि हम लोगों को ईश्वर ने दी है, इस को हम लोगोंने परस्पर के विरोध, और कुकर्मों से उपयोग में लाना त्याग दिया; और विदेशी लोगों ने आकर इसको उपयोग में लाना आरम्भ किया, अर्थात् वह इस पारस भूमिमें आकर अपने दरिद्र रूपी लोहे को स्वर्ण बना, नाना प्रकार के सुख भोग भोगने लग गये हैं. क्या तुम प्रत्यक्ष नहीं देख रहे हो कि विदेशी लोग, लोहा, मट्टी, कोला, कांच इत्यादि नाना प्रकार के बनाये हुये पदार्थ लाते हैं, और स्वर्ण लेकर चले जाते हैं. यदि हम लोग भी विदेशीयों की भांती इस पारस भूमि से काम लें तो क्या ? हम स्वर्णमय न हो जावें. पर हमारा इधर लक्ष ही कहां जो ऐसा करें. हम को तो परस्पर के विरोध से भिखारी बने रहना ही स्वीकार है, तो फिर इधर लक्ष ही कैसे हो.

बहुत सी लोग आजकल कलकत्ता मुम्बई इत्यादि नगरों में कुछ धनी देखकर कहते हैं कि, अब भारतोन्नति की दशा में आरहा है. पर हमारी समझ में उनका यह कहना ठीक परतीत नहीं होता है. कारण कि जो कलकत्ता, मुम्बई आदि नगरों में कुछ धनी देखने में आते हैं वह तो विदेशी ही हैं, जो व्योपार के कारण रहते हैं. और यदि कोई कहे कि भारत निवासी भी है, तो हम इसका यह ही उत्तर देते हैं कि यदि कुछ भारत निवासी धनी देखने में आते भी हैं तो वह पूर्व कर्मों के फल से ही देखे जाते हैं. कारण कि इस समय तो उन के ऐसे कर्म देखने में नहीं आते, कि जो, वह इस समय के कर्मों से धन प्राप्त कर, धन का सुख भोगते हों. और फिर यदि तीस करोड़ में से दो सहस्र धनवान हो भी जावें, तो क्या ? इससे देश

धनाढ्य कहा जा सकता है, क्योंकि आप लोगों ने मुम्बई कलकत्ते में यहभी तो देखा होगा कि सहस्रों अपने देशी भाई पैसे के लिये रात दिन मेहनत करते हैं, और मेहनत भी कैसी कि पशुओं की भांति गाड़ियां खेंचते हैं, पर तो भी पेटभर अन्न नही पाते हैं, यह दशा कुछ मुम्बई कलकत्ते कीही नहीं है परन्तु सारे देश की ही हो रही है. और जिनसे कुछ कार्य्य नही हो सकता है, अर्थात् वलहीन, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, वा बालक इत्यादि जो हैं, वह बिचारे पादरीयों के हाले पड़ जाते हैं कि जहांसे जाते ही धर्म भ्रष्ट किये जाते हैं. क्या ! आप लोगों को यह मालूम नही है कि, इस दुष्काळ में पूने की ईसाइ रमा बाई ने साडेतीन सौके लगभग निर्धन निराश्रय आर्य्य वनिताओं को धर्मभ्रष्ट किया है, और पश्चमोत्तर देश के दो सहस्र आर्य्य बालक पादरीयों के हवाले किये गये हैं, क्या ! अब भी कोई कह सकता हैं कि भारत निवासी धन वान है. अस्तु ! माना कि कुछ भारत निवासी धनवान हैं, तो इन से अपने देशको क्या ! लाभ है. हां ! यदि इन के धन से अपने देशको कुछ भी लाभ होता तो हम इन, को धनवान समझ ते. कारण के धनवान होने की तो यह ही शोभा है, कि वह अपने देशको अपने धन से कुछ लाभ पहुंचाये. पर यह देशको तो क्या ! किन्तु अपनी संतानों को भी कुछ लाभ नही पहुंचाते हैं. हमारी इस बात पर पाठकगण यह कहे बिना न रहेंगें कि, भला ऐसा कौन मूर्ख धन वान है, कि जो अपनी संतान का शुभ चिंतक न होगा. परन्तु यदि आप हमारे इस कथन पर कुछ विचार करेंगे, तो आप लोगों को हमारा कथन सत्य विदित होजायेगा, कि इस समय के भारतीय धनवान अपनी संतानो का कुछ भी हित नही करते हैं. क्योंकि इन्होने आजतक अपनी संतानो को कोई भी ऐसा उद्यम नहीं सिख लाया है कि जिस्से वह आगेको अपना पेट भर सकें. यदि कोई यह कहे कि जब वह इन के लिये धन छोड़ जायेंगे तो फिर वह अपना पेट क्यों कर न भर सकेंगे. इसका उत्तर यह है कि, क्या ! हमारे पूर्व पुरुषा हम लोगों के लिये पुष्कल धन नही छोड़ गये थे, कहिये ! फिर हम लोग आज भूखे क्यों मरते हैं.

पाठकगण ! जिस धन के घमंड में इस समय के धनवान फूले नही समाते हैं. याद रक्खें कि यह धन उनकी संतानो के कुछ भी काम नही आवेगा, कारण कि प्रथम तो इन का यह धन युरोप, अमारेका के धनवानो के आगे कुछ भी बिसात नही रक्खता है, क्योंकि वहां का तो एक ही धनी सारे कलकत्ता, मुम्बई के खरीद लेने की समर्थ रखता है, फिर भारत के धनवानों का अपने धन पर घमंड करना व्यर्थ है वा नही. दूसरे यदि यह अपनी संतनो को अपनी जमा पूंजी दे भी गये, तो क्या कोई कह सकता है कि वह इस जमा पूंजी की रक्षा वा वृद्धि कर सकें गे, कारण कि पुरुषा उनको, धन रक्षा, वा वृद्धि का कोई उपाय तो बतला ही नहीं गये, कि जिसके द्वारा वह धन की रक्षा वृद्धि कर अपना निर्वाह कर सकें. इस्से ही हम कहते हैं कि इनका धन इनकी संतानो के कुछ भी काम न आवेगा.

वाचकवृन्द ! हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि अपने यहां सुख प्राप्तिके लिये, जो साधन था, वह साधन अब हम लोगोंके पास नही है. यदि वह साधन होता तो हम लोगों की दरिद्र वा भिक्षुक दशा न होती, और न धर्मभ्रष्ट होते, न विदेशों को भागते, वा न भूखे मरते. अब हमें इस विचार ने आ घेरा कि, हमारे पूर्व पुरुषा किस साधन से धन प्राप्तकर नाना सुख भोगते थे, जिसके अब न रहने से, हम लोग नाना दुःख भोग रहे हैं. इस विचार का खूब मथन करने से यह ही पाया गया कि, वेद धर्मनीति का साधन अब हम लोगोंके पास नही रहा, अर्थात् जब से धर्मकी नीति के साधन को त्याग हम लोग अनीति मान बन गये हैं तबसे ही हम लोग कुदशा को भोग रहे हैं. कारण कि अनीति सर्व उत्तम कर्मों का नाश कर देती है; देखो जिस २ ने अनीति को ग्रहण किया है, उस २ को ही इस ने हीन दशामें पहुंच दिया है. और जिस २ ने इस अनीति को त्यागा है, उस २ ने ही अपनी उन्नति की है. अर्थात जो २ उन्नति को प्राप्त हुये हैं, वह धर्मनीति से ही हुये हैं. मुसल्मानो को ही देखो, कि जबतक यह धर्म नीति द्वारा चलते रहे, तो सारे भारत का राज्य सुख भोगते रहे, अर्थात् इनकी उन्नति रही. जब से अधर्म अनीति पर चलने

लगे, तबसे ही हीन दशा को प्राप्त हो गये, और हो रहे हैं. प्रत्यक्ष ही अंग्रेजो को देखलो कि धर्मनीति अनुसार चलने से, सात समुद्र उलांघकर, भारत का, अजी भारत का ही क्या ? किन्तु सारे संसार का राज्य सुख भोग रहे हैं.

क्या ? आप लोग इस बातको नही जानते हैं, कि अंग्रेज लोग अपने गुरु* पादरियों को सहस्रों मुद्रा दे ! विदेशों में भेज कर, उनसे अपने धर्मनीति का प्रचार करा, उसके द्वारा अपना व्यापार फैला रहे हैं, और उसका फल आनन्द भोग रहे हैं.

आर्य्य भाईयो ! क्या तुम अपने वेद धर्मकीनीति को मुसल्मान, ईसाइयों की धर्मनीति के समान भी नही समझते हो. अहो भाईयो ? तुम्हारे पुर्व पुरुषाओंने जो अमर यश प्राप्त किया था वह इसी वेद धर्मनीति से ही प्राप्त किया था. जो आजतक किसी अन्य धर्मियों में से नही किया है. कारण कि अन्य धर्मियोंकी नीति तो केवल सुजाती उन्नतिका ही शिक्षण देती है. परन्तु तुम्हारी वेद धर्मनीति तो सारे संसार की उन्नति को अपनी उन्नती समझती है, अर्थात प्राणी मात्रको सुख पहुंचाना सिखलाती है. कारण कि वेद धर्म नीति हमे सदैव "आत्मवत सर्व भूतेषु" सिखलाती है, और हमारे पुर्व पुरुषा इसी नीति अनुसार चल, सर्व को सुख पहुंचाया करते थे, और इस्से ही आप भी सुखी रहा करते थे. पर जब से हम लोगों ने इस वेद धर्म नीति का त्याग किया है. तबी से ही नाना दुःखों को भोग रहे हैं. क्यों न भोगें, देखो मनु भगवान कहते हैं कि

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।८-१५

अर्थात् जो धर्म की हानी करता है, धर्म उसकी हानी करता है और जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है.

मित्रो ! मनु भगवान का यह वचन सत्यही है, कारण कि धर्म रक्षा से मनुष्य सुखको प्राप्त होता है, और अधर्मसे ही दुःख को पाता है. यह उर्द्ध लिखित बातों *हमारे गुरु जन तो रुपैया पाकर, विषै भोग, वा गांजा भांग पीने इत्यादि में लगा देते हैं. फिर क्यों न भारत गारत हो !

से आप लोगों को विदित ही हुआ होगा. बस अब सिद्ध हो गया कि अपनी लांआति स्थिति के लिये अति अवश्यक संकल्प यह ही होना चाहिये कि हम लोग भी पुर्वों की भांति धर्म नीति वान बनें. कारण कि जब हम लोग धर्म नीति वान बनेंगे तो, नीति से धन प्राप्त भी करेंगे, और नीति से उपार्जन धन हम लोगों को पुरातन स्थिति में ले आवेगा, और फिर हम लोग उर्द्ध लिखत दो नो सुखों के भोगीभी हो जावेंगे.

शेष आगे.

क्या जगतका अन्त समिप आ गया ?

इंगलैन्ड के प्रसिद्ध विद्वान, लार्ड केलवीन का कईएक तर्कों के आधार से प्रकट किये हुये विचार परसे, एक लेखक ऐसा अनुमान करता है, कि आज से चारसौ वर्ष के उपरान्त जगत का अंत आना ही चाहिये, कारण कि मनुष्यों के श्वास लेने के लिये जो आवश्यकिये "ओक्सिजन (प्राणप्रद वायु) तथा भोजन तैयार करने, वा थंडी से रक्षण के लिये जो अवश्यकिये ताप (गर्मी) है. इन दोनो वस्तुओं का, इस समय, मनुष्य ऐसी आयोग्यता से उपयोग करते हैं. कि जिस्से इन दोनो वस्तुओं का चारसौ वर्ष में नाश हो जावेगा. और इन के नाश होजाने से मनुष्यों का इस जगत में जीना अशक्य हो जावेगा. इस अनुमानके आधारसे लेखक निचे कहे प्रमाणो से दिखता है:-"जगतके सार में लोग ऐसी बातें करते सुनाई देते हैं, कि हम पड़ती (हीन) दशा को प्राप्त होते जाते हैं, परन्तु ऐसा कथन उनका सर्वथा मिथ्या है कारण कि यह समय तो चड़ती (उच्च) दशा में है. और सुधारे की वृद्धि, बड़े जोश से आगे बड़ती ही चली जा रही है, जिसके परिणाम में हम लोगों को ठोकर खाने का सम्भव है. क्योंकि हम लोग पैसेवाले होने, पदवियां प्राप्त करने, कीर्ति स्थाई रखने, और बड़े कुटुम्बी बने के लिये अत्यंत उतावले बनते जाते हैं. इसका कारण यह है, कि इस समय सस्ता शिक्षण सस्ते समाचार पत्र (अखबार), जो सारे संसार के ज्ञान कोश (खजाने) को, तथा संसार भरकी गपयों

को, कंगालसे भी कंगाल तक के सन्मुख खड़े कर देते हैं, कि जिस्से सर्वत्र ही सुधारा के वृद्धि करने की ध्वनी सुनाई देती है. और मनुष्य अब एसा ही समझते हैं कि मानो जगत की आवरदा का कभी अंतही नही है. परन्तु हम ! सर्वत्र इस जागृत समय में, आप लोगों के सन्मुख ऐसी भविष्य वाणी आगे धरते हैं, कि जगत की आवरदा के समाप्त होने को अब केवल चारसौ वर्षही रहे हैं. इस वातके सुनते ही आप लोग कांपे बिना न रहेंगे. कारण कि यह भविष्य वाणी न तो, किसी धर्म जनूनी मनुष्य की, और न किसी संसार से कंटाले हुये, नीहीलीस्ट (विरक्त) की है. अथवा यदि किसी वार्ता लिखने वाले की होती, तो यह जुदाही बात थी, कारण कि तब तो यह शांत प्रहर की गप्प समझी जाती, परन्तु सोभी नही. यह तो एक विख्यात् विद्वान लार्ड केलवीन की है, कि जो उसने कई एक प्रमाणों के आधार से प्रसिद्ध की है. इस्से ही यह भविष्य वाणी विचार करने के योग्य होगई है. यह भविष्य वाणी जगत का अंत, न तो किसी धूमकेतु के संयोग से, वा न किसी नवीन तारे के साथ, पृथ्वि के टक्कर खाकर चुरा २ हो जाने से, अथवा सूर्य्य के नाश हो जाने से बतलाती है, सोभी नही ! परन्तु यह तो एक ऐसी दशा में आजानेसे बतलाती है, कि जिसका अजतक किसी को विचार ही नही हुआ है, अर्थात यह भविष्य वाणी यह भय जतलाती है, कि प्राणी मात्र को श्वास लेने के लिये जो अवश्यकिये ओकसिजन (प्राणप्रद वायु). तथा भोजन बनाने, और थंडी से रक्षा के लिये जो इंधनकी अवश्यक्ता है. इन दोनो वस्तुओं का चारसौ वर्षके उपरान्त न्यून हो जाने से, केवल प्राणी मात्र के नाश हो जाने का भय लगता है, ऐसा बतलाती है.

लार्ड केलवीन अपना कथन इस रीती से प्रकट करते हैं, कि जब पृथ्वि अत्यंत गर्म दशा में से थंडी पड़ी, तब इसके आस पास वाष्प (स्टीम, वराल, बाफ) नाईट्रोजन (हानी कार्क वायु) तथा कारबोनिक एसीड ग्यास का वातावर्ण (पृथ्वि के आस पास की वायु में) फैल गया था. उस समय उस में जुदा ओकसीजन नही था. और इस सिवाय, जगत के आरम्भ समय, पृथ्वि में रचे हुये टिलों के खोदने से उन के भीतर जो खाली जगह है, उनमें से भी कुछ ओकसिजन नही मिलता. इस पर से बराबर दिखलाता है, और निश्चय भी होता है, कि हम लोगोंकी पृथ्वि के वातावरण में जो इस समय ओकसिजन की आवश्यक्ता है, वह सारा ओकसिजन वृक्ष वनस्पति आदि में सूर्य्य के तेजकी सहायता से पानी तथा कारबोनिक एसीडमें से, जुदा करने की जो शक्ति है, उस शक्ति से मिला हुआ ओकसिजन है. जब पृथ्विपर मनुष्य तथा प्राणीमात्र की उत्पाति नही हुई थी, उस समय यह वृक्षादि पुष्कलता से उत्पन्न हो कर, एक ओर से जुदा **ओकसीजन** का भारी जथ्था तैयार करते गये, और दूसरी ओर **कारबोन** का संग्रह कर, लकड़ियां अकिठी करते गये, कि जो लकड़ियां पृथ्वि तले दब २ कर, आज वोही पृथ्वि के खोदने से हम लोगों को जलाने के योग्य **कोयले** और **पेट्रोलियम** (मट्टी) का तेलबनी हुई मिल आती हैं.

जो इस प्रकार की क्रिया के परिणाम में पृथ्वि के आस पास, इस के आरम्भ समय से ही जुदा **ओकसिजन**, भारी जथ्थे में फैला हुआ न होता, तो **ओकसिजन** कब से ही नाश हो गया होता, और पृथ्वि पर के वृक्ष, तथा इन के मृत्यु (सुखके) होने से, इन के बने हुये **कोयले**, जलाने के लिये पूर्ण पड़ सकें इतने **ओकसिजन** के उपरान्त दूसरा **ओकसिजन** रहता ही नही. अब हम लोगोंको यह बात स्मरण रखने की है, कि जो **ओकसिजन** के जुदे जथ्थे को वृक्ष वृद्धि करते हैं, उन्हे हम लोग **ईंधन** बना (आगमें झोंक) जुदे **ओकसिजन** में हानी पहुंचाते जाते हैं. अब देखना चाहिये कि इस समय जगत में जुदा ओकसिजन का कितना जथ्था रहा है ? इस विषयकी खोज करनेसे पाया जाता है कि पृथ्वि के प्रत्येक चोरस (चारों ओर) में फैली हुई **वायु** २२४०० रतल जितनी है; और इस में जुदा ओकसिजन का जथ्था ४४८० रतल जितना है, और पृथ्विके **सपाट** (बरोबर जमीन) का विस्तार १२४००,००,००,००० एकड़ जितना है. और पृथ्विके सपाट के आस पास का **वातावरण** (चारों ओर फैली हुई वायु) में जुदा **ओकसिजन** का जथ्था २२८४८०००,००,००,००,

ईंधन के जलाये बिना ही पवन, पानी के वहन (चलने) के द्वारा बिजली में से निकाल सकें. ऐसे ही फिर सूर्य्य की उष्णता को भी इस कार्य्य के उपयोग में लासकें, ऐसी भी युक्ति कदाचित कोई विद्वान खोज निकालने का शक्तिमान हो सके. वैसे ही फिर तो यह भी बनने के योग है कि ईंधर (तेजाब इत्यादि वस्तुओं) में से जितनी उष्णता चाहिये उतनी प्राप्त करने के भी शक्तिमान हो सकें गे. अस्तु ? मानो की इस सर्व प्रयत्न में यदि निष्फल हुये, और ऑकसिजन, तथा ईंधन का जथ्था नाश हो गया, तब पीछे कैसी बुरी अवस्था होगी ? कारण कि ज्यों २ ईंधन न्यून होता जायगा, त्यों २ यह महगा होता जायेगा, और जैसे २ यह महगा होता जायेगा, वैसे २ ही उद्योग और व्यौपार में भी हीनता आती जायेगी, अर्थात रैल गाडी न्यून चलने लगेगी, और इसके न्यून चलने से भाडा (किराया) भी बढ़ने लगेगा. और किराया बढ़ने से लोगों को प्रवास (मुसाफरी) करने में भी न्यूनता आती जायेगी. फिर ऐसे होने से सब वस्तुऐं भी महगी होती चायेंगी, और इसके परिणाम में निर्धन लोगों को भोजन की तंगी आ पड़ेगी. और भोजन की तंगी आ पड़ने से सर्वत्र लटालूट मच जायेगी, और नगरों में हड़तालें पड़ जायेंगी, और अंतमें दुष्काल पड़ जायेगा. और भोजन की शोधके लिये लोग नगर त्याग कर बनो में जा बसें गे, और बन के पशु, पक्षियों का शिकार कर अपना निर्वाह करने लगें गे, जैसे कि सहस्रों वर्ष अपने जंगली बडोंने किया था. ऐसे करते २ फिर जंगली दशा में आ जायें गे. और अंत में जब पशुपक्षी न रहें गे, तब मनुष्य को मनुष्य के खानेका समय आ जावेगा, और अखाद्य पदार्थों के खाने से महा मारी उत्पन्न हो आवेगी और फिर सभी इसके शिकार बन जावें गे, अर्थात् मनुष्य, पशु पक्षी सर्वका नाश हो जायेगा. परन्तु उजड़ हुई २ पृथ्वि, तथा खाली नगरों, वा जंगाल लगे हुये इंजनों, सड़ती हुये आगबोट और उड़ाऊपन से अपने पग में कुल्हाड़ी मार, अपना आपघात करने वाली पृथ्विपर सूर्य का उगते रहना तो जारी ही रहेगा.

किन्तु क्या पृथ्वि निरंतर के लिये ऐसी ही उजाड़ रहेगी ? नहीं २, सूर्य्य के तेज, वा पानी की सहायता से पृथ्विपर असंख्या वृक्ष बनस्पती उगते रहें गे, और यह सहस्रों वर्ष तक स्वाभाविक दशा में उत्पन्न होने हुये कारबोनिक आसीड़ से ऑकसीजन को जुदा करते रहेंगे, और वातावरण में जुदा ओकसीजन का भारी संग्रह होता रहेगा. ऐसे ही फिर नये २ वृक्ष उगेत जायेंगे, और पुराने पृथ्विके तले दब २ कर ईंधन का संग्रह करते रहें गे. ऐसे ही धीरे २ पीछे पृथ्वि बसनेके योग्य तैयार होती जायेगी, और फिर नवीन पशु, पक्षी प्राणी उत्पन्न होते जायेंगे, पीछे कोई नवीन ढंगके मनुष्य जन्म पायेंगे, अथवा किसी दूसरे ग्रह निवासी मनुष्य इस पृथ्विपर आ बसेंगे. और टेकरों, तथा पृथ्विके उदरमें शोधकर नाश पाये हुई, व खराब दशा में पड़ी हुई हम लोगों की बस्तियां, कि जिनको हम लोग बचा नहीं सकें इनका विचार करेंगे; और परमेश्वर की दिये हुये दान को जिसका हम लोगों ने उड़ाऊपन से उपयोग कर अपना नाश किया, इसपर से वह बोधले विशेष बुद्धिमत्ता, और उचित रीतिसे अपने जीवनके व्यतित करने की सम्भाल रक्खें गे.

प्रियवाचक वृन्द ! लार्ड केलवीन महाशय की भविष्य वाणीका सारांश यह निकला, कि यदि वृक्षोंकी रक्षा वृद्धि न की जायेगी, तो च्यारसो वर्षके उपरान्त पृथ्वि, मनुष्य, पशु, पक्षि प्राणीयोंके बिनाकी होजायगी, अर्थात कोईभी प्राणी जीता न रहेगा. यह भविष्यवाणी लार्ड महाशयने तो अभी कही है परंतु हमारे रिषी मुनि तो लाखों, सहस्रों वर्षों हुये इस विषय को कह गये हैं. कारण कि उन्हे यह बात भली भांति मालूम थी कि पृथ्वि कई मील तक ऊंची वायु से चारु ओर घिरी हुइ है, कोई स्थान पृथ्वी के ऊपर ऐसा नहीं है कि जहां वायु नही. बहुत से मनुष्यों का यह विश्वास है कि वायु एक तत्व है पर ऐसा नहीं, यह कइएक तत्वों में मिल कर बना है कि जिस्के प्राणप्रद वायु (ओकसीजनकैस) जीवान्तक वायु (निठरोजनकैस) अपान वायु. कारबोनिक ऐसीड़कैस मुख्य तत्व हैं ! १०० भाग साधारण वायु में ७८ भाग जीवान्तक वायु और शेष २१ भाग प्राणपद वायु होता है और अपान वायु १०००० भाग में बहुतही कम अनुमान

ईंधन के जलाये बिना ही पवन, पानी के वहन (चलने) के द्वारा बिजली में से निकाल सकें. ऐसे ही फिर सूर्य की उष्णता को भी इस कार्य के उपयोग में लासकें, एसी भी युक्ति कदाचित कोई विद्वान खोज निकालने का शक्तिमान हो सके. वैसे ही फिर तो यह भी बनेन के योग है कि ईंधर (तेजाब इत्यादि वस्तुओं) में से जितनी उष्णता चाहिये उतनी प्राप्त करने के भी शक्तिमान हो सकें गे. अस्तु ! मानो की इस सर्व प्रयत्न में यदि निष्फल हुये, और ऑक्सिजन, तथा ईंधन का अथवा नाश हो गया, तब पीछे कैसी बुरी अवस्था होगी ! कारण कि ज्यों २ ईंधन न्यून होता जायगा, त्यों २ यह महगा होता जायेगा, और जैसे २ यह महगा होता जायेगा, वैसे २ ही उद्योग और व्यौपार में भी हीनता आती जायेगी, अर्थात रेल गाडी न्यून चलने लगेगी, और इसके न्यून चलने से भाडा (किराया) भी बढ़ेने लगेगा. और किराया बढ़ने से लोगों को प्रवास (मुसाफरी) करने में भी न्यूनता आती जायेगी. फिर एसे होने से सब वस्तुयें भी महगी होती चायेंगी, और इसके परिणाम में निर्धन लोगों को भोजन की तंगी आ पडेगी. और भोजन की तंगी आ पड़ने से सर्वत्र लूटालूट मच जायेगी, और नगरों में हड़तालें पड जायेंगी, और अंतमें दुष्काल पड जायेगा. और भोजन की शोधके लिये लोग नगर त्याग कर वनों में जा वसें गे, और वन के पशु, पक्षियों का शिकार कर अपना निर्वाह करने लगें गे, जैसे कि सहस्रों वर्ष अपने जंगली वडोंने किया था. एसे करते २ फिर जंगली दशा में आ जायें गे. और अंत में जब पशुपक्षी न रहें गे, तब मनुष्य को मनुष्य के खानेका समय आ जावेगा, और अखाद्य पदार्थों के खाने से महा मारी उत्पन्न हो आवेगी और फिर सबी इसके शिकार बन जावें गे, अर्थात् मनुष्य, पशु पक्षी सर्वका नाश हो जायेगा. परन्तु उजड़ हुई २ पृथ्वि, तथा खाली नगरों, वा जंगाल लगे हुये इंजनों, सड़ती हुये आगबोट और उड़ाऊपन से अपने पग में कुलहाड़ी मार, अपना अपघात करने वाली पृथ्विपर सूर्य का उगते रहना तो जारी ही रहेगा.

किन्तु क्या पृथ्वि निरंतर के लिये ऐसी ही उजाड़ी रहेगी ? नहीं २, सूर्य्य के तेज, वा पानी की सहायता से पृथ्विपर असंख्या वृक्ष वनस्पती उगते रहें गे, और यह सहस्रों वर्ष तक स्वाभाविक दशा में उत्पन्न होते हुये कारबोनिक आसीड़ से ऑक्सीजन को जुदा करते रहेंगे, और वातावरण में जुदा ओक्सीजन का भारी संग्रह होता रहेगा. एसे ही फिर नये २ वृक्ष उगेत जायेंगे, और पुराने पृथ्विके तले दब २ कर ईंधन का संग्रह करते रहें गे. ऐसे ही धीरे २ पीछे पृथ्वि बसनेके योग्य तैयार होती जायेंगी, और फिर नवीन पशु, पक्षी प्राणी उत्पन्न होते जायेंगे, पीछे कोई नवीन ढंगके मनुष्य जन्म पायेंगे, अथवा किसी दूसरे ग्रह निवासी मनुष्य इस पृथ्विपर आ रहेंगे. और टेकरों, तथा पृथ्विके उदरमें शोधकर नाश पाये हुई, व खराब दशा में पड़ी हुई हम लोगों की वस्तियों, कि जिनको हम लोग बचा नहीं सकें इनका विचार करेंगे; और परमेश्वर की दिये हुये दान को जिसका हम लोगों ने उड़ाऊपन से उपयोग कर अपना नाश किया, इसपर से यह बोधले विशेष बुद्धिमत्ता, और उचित रीतिसे अपने जीवनके व्यतित करने की सम्भाल रक्खें गे.

प्रियवाचक वृन्द ! लार्ड केलवीन महाशय की भविष्य वाणीका साराश यह निकला, कि यदि वृक्षोंकी रक्षा वृद्धि न की जावेगी, तो चारसो वर्षके उपरान्त पृथ्वि, मनुष्य, पशु, पक्षि प्राणीयोंके बिना होजायगी, अर्थात कोईभी प्राणी जीता न रहेगा. यह भविष्यवाणी लार्ड महाशयने तो अभी कही है परंतु हमारे रिषी मुनि तो लाखों, सहस्रों वर्षों हुये इस विषय को कह गये हैं. कारण कि उन्हे यह बात भली भांति मालूम थी कि पृथ्वि कई मील तक ऊंची वायु से चारों ओर घिरी हुइ है, कोई स्थान पृथ्वी के ऊपर ऐसा नहीं है कि जहां वायु नहीं. बहुत से मनुष्यों का यह विश्वास है कि वायु एक तत्व है पर ऐसा नहीं, यह कइएक तत्वों मे मिल कर बना है कि जिस्मे प्राणप्रद वायु (ओक्सीजनगैस) जीवान्तक वायु (निट्रोजनगैस) अपान वायु. कारबोनिक डिओक्साइड मुख्य तत्व है ! १०० भाग साधारण वायु में ७८ भाग जीवान्तक वायु और शेष २१ भाग प्राणप्रद वायु होता है और अपान वायु १०००० भाग में अनुमान [illegible]

४ वा ५ भाग होता है। जब मनुष्य स्वास खींचता है तो प्राणप्रद वायु रक्त के साथ मिलकर शरीर को बड़ा लाभ दायक होता है (इसी से इसका नाम भी गुणनुसार प्राणप्रद वायु है) और जब फेकता है तो अपान वायु को जो शरीर का बड़ा हान कारक है बाहर निकाल कर छोड़ देता है कि वह साधारण वायु में मिल जाता है। प्रकृति के इस नियम से ऐसा जान पड़ता है कि वायु में प्राणप्रद वायु का भाग सदा कम और अपान वायु का अधिक होता जाता है पर ऐसा नहीं होता क्योंकि यदि ऐसा होता तो वायु के विषमय हो जाने के कारण आज एक भी जीवधारी इस पृथ्वि पर दीख नहीं पड़ता। यह बड़ा भारी उपकार जीवधारीयों को वृक्षही के द्वारा होता है।

हरे हरे वृक्षों के डाढ़ औ पत्ते अपान वायु को साधारण वायु में से खींच कर पी लेते हैं और यही कारण है कि यह अपान वायु बढ़ने नही पाता, इतनाही नही पर एक और भी महा उपकार इन वृक्षों के द्वारा होता है, वह यह है कि जब वृक्षों पर सूर्य्य के किर्णे पड़ते हैं तब वे उक्त रीति से ग्रहण किए हुए अपान वायु को विलग कर अपान वायु को अपने पुष्टतार्थ रख लेते है और प्राणप्रद वायु को जीवधारीयों के जीवनार्थ पुनः वायु में छोड़ देते हैं। अब यह भलां भांति सिद्ध होगया कि वृक्षही जीवधारीयों के जीवन मूल है। यही कारण है कि अंगरेज लोग अपने बंगल के बरांदों में छोटे २ हरे २ झांचे वा पुष्प के वृक्ष गमलों में लगा-कर रखते हैं। यद्यापि उनके रंगीन पुष्प वायु को बिगाड़ते हैं क्यों कि जो वृक्ष वा पुष्प हरे रंग से जितनेही पृथक् होते हैं वे उतनेहीं वायु को विगाड़ते हैं तथापि गुण दायक होते हैं क्यों कि वृक्ष और पत्ते के सामने पुष्प इतने थोड़े होते हैं कि वे कुछ हानि नहीं कर सकते अर्थात् वायु के विगाड़ने की शक्ती बहुत कम और सुधारन की बहुत अधिक होती है। इस कारण कोइ जीवधारी जितनाही वृक्षों के समीप रहेगा उतनाही ताजा प्राणप्रद वायुको प्राप्त होगा पर इसके साथही यह बातभी जानना बहुत उचित है कि वृक्ष भी जो रोग असित होगये हों वा ऐसे स्थान में कि जहां सूर्य्य की किर्णे नहीं पहुंच सके जीवधारीयों की नांइ प्राणप्रद वायु को पीते हैं और अपान वायु को फेकते हैं और यही स्वभाव वृक्षों का अंधेरे में भी होता है इसी कारण गोधुली के बाद वृक्षों के नीचे वा उनके निकट नहीं रहना चाहिये। और हम समझते हैं कि इसी कारण से पद्मपुराण में भी रात्रि को वृक्ष के नीचे रहना निषेध किया है यद्यपि उसको अन्य प्रकार से लिखा है यथा

कीन्नरोरगदैत्याश्च, यक्षगन्धर्व सीद्धकाः।
वृक्ष मूले समायान्ति नीशिवासं न शोभनम्॥

अब हमारे पाठकगण यह कहेंगे कि जब वृक्ष दिन को प्राणप्रद वायु फेकते हैं जो जीवधारियों को गुण दायक है और रात्रि को अपान वायु फेकते हैं जो विष के तुल्य है तब उपकार क्या हुआ? इसका उत्तर यह है कि दिन को जो प्राणप्रद वायु वृक्ष से निकलता है वह सूर्य्य की गरमी से साधारण वायु में मिल सर्वत्र फ़ैल जाता है फिर स्वास द्वारा हमलोगों के फेफड़े में पहुंच रक्त को स्याह पियाजी रंग से अरुण कर देता है कि जिस्से शरीर को बड़ा गुण होता है और अपान वायु अंजोरी रात्रि को वृक्षों से नहीं निकलता किन्तु केवल अंधेरी रात्रि में। एक गुने लाभ का कारण तो यही है और अंधेरी रात्रि में जो अपन वायु वृक्षों से निकलता है वह वायु में तुरन्त नहीं मिल जाता क्यों की सूर्य्य के नही रहने से दिन की अपेक्षा रात्रि ठंडी होती है और अपान वायु साधारण वायु से डेढ़ा भारी होने के कारण ऊपर नहीं जासक्ता और न वायु में फ़ैल सक्ता है परन्तु वहीं पृथ्वी पर गिर पड़ता है इसी कारण जो वृक्ष के नीचे वा निकट रहता है उसी को हानि होती है दूसरे को नहीं और फिर दूसरे दिन प्रभात होतेही उस अपान वायु को जो वृक्षों ने रात्रि को फेका है पीना आरम्भ करदेते हैं और सूर्य्य के उदय होतेही जीवधारियों के हितार्थ प्राणप्रद वायु देने लगते हैं॥

परमेश्वर ने मनुष्यों के लाभके लिये नाना प्रकार के वृक्ष वनस्पती रचेहैं, परन्तु इन में से तीन प्रकार के तो अतिही लाभ दायक हैं, अर्थात् एक खानेके कार्य्य में आते हैं, और दूसरे अंक रक्षाके काम में आते हैं, और तीसरे आरोग्यता का कार्य्य देतेहैं.

इसीभांती भोजनके कार्य्य में आनेवाले भी तीन

प्रकारके हैं अर्थात् एक नाना प्रकारके अन्न देनेवाले जैसे जौ गेहुं, चना, बाजरा, जुवार, चावल इत्यादि. दुसरे नाना प्रकारके फल जैसे सेव, नाशपाती, अंजीर, रंगतरा, अखरोट, केला, खजूर, बादाम, आम इत्यादि. तीसरे जडें जैसे शलगम, मूली, गाजर, आलू, अरवी, इत्यादि. और इनके सिवाये गन्ना, चाह, लौंग, ईलाची, जायफल केसर इत्यादि मसाला. और बहुत से, आरोग्य पदार्थ वस्तुओंके उत्पन्न करनेवाले भी होते हैं, जैसे चरायता, कोनेन, बनफशा इत्यादि, और बहुतसे सुगंधी पदार्थों को उत्पन्न करनेवाले होते हैं जैसेकि इतर, गुलाब, मोतिया, केवड़ा इत्यादि, और बहुतसे ऐसे हैं जिनसे वस्त्र बनते हैं जैसे रुई, सन *शहतूत इत्यादि, और बहुतसी रंग देनेवाले होते हैं जैसेकि नील, कसुंबा इत्यादि. और बहुतसी एसेभी वृक्ष होते हैं कि जो फल फूल तो कुछ नहीं देते, परन्तु उनकी छाल बहुत कार्य्यों में आती है जैसे बबूर इत्यादि. और बहुतसे परमेश्वरने ऐसे रचे हैं कि वह केवल गास (दुर्गंध) का ही आकर्पण कर प्राणियों को बड़ा भारी लाभ पहुंचानेवाले होते हैं जैसे बड़, पीपल, तुलसी इत्यादि. हमारे पूर्वमहान फलास्फरों नें उर्द्ध लिखत विषयको अति लक्ष में लाकर इन पीपलादि वृक्षोंको धर्म संबन्धी कार्य्यों में मिला इनकी रक्षा कर ना लिख गये हैं यादि वह ऐसा लिख न जाते तो मूर्खजन इनका नाम निशान भी न छोड़ते. जैसेके आज कल विदेशी इन का महत्व न जानकर इनको काट डालते हैं. हमारे पूर्व विद्वान बडेही तत्त्व वेत्ताथे इसे वह वृक्षोंके लगाने तथा रक्षाण करने से क्या लाभ होता अच्छी प्रकार से समझते थे, इसी लिये व्यर्थ वृक्ष काटनेवालों के लिये कठन दण्ड देना लिख गये हैं. देखो धर्मशास्त्रों में लिखा है.

प्ररोही शाखिना शाखास्कंध सर्वविदारणे।
अपजीव्य द्रुमाणाच विंशतीर्द्विगुणोदमः ॥

या० स्मृ० श्लो २२७०

इसका भावार्थ यह है कि जिनकी शाखा लगाने से दूसरा वृक्ष हो जाये, और जिनसे जीबका हो एसे वृक्षों की शाखा, और सर्व वृक्षोंके छेदनें (नाश) में बीस, चालीस, अस्सी भी दंड क्रमसे जानना.

चैत्य श्मशान सीमासु पुण्य स्थाने सुरालये।
जातद्रुमाणांद्वि गुणोदमो वृक्षेषु विश्रुते ॥ श्लो २२८

अर्थात् चैत्य (चबुतरा) मश्शान, सीमा, पुण्य (पवित्र) इनमें उत्पन्न हुये, स्थान देवमंदिर, और पीपल, पलाशादि प्रसिद्ध वृक्ष, इनकी शाखादिके छेदने में पुर्वोक्त दंड से दूना दंड जानना.

गुल्म गुच्छ क्षुप लता प्रतानौषध वीरुधाम।
पूर्वस्मृता दर्द्ध दंडःस्थानेषुक्तेषु कर्तने ॥ २२९०

इसका **भावार्थ** यह है कि, गुल्म, गुच्छ, क्षुप, लता, प्रतान औषधि विरुध, इनकी शाखा आदिके छेदन करने में पुर्वोक्त दंडसे आधा दंड जानना.

वृक्ष गुल्म लता वीरुच्छेदने जप्यमृक् शतम्।
स्या दोषधि वृथाच्छेदे क्षीराशी गोदिनम् ॥

अर्थात फल देनेवाले आम्र पनस आदि वृक्ष, और गुल्म अदि इनका यज्ञादि अदष्ट अर्थकेबिना छेदन करके, गायत्री आदि सौ ऋचाओंका जप करे, और ग्राम, और बनकी औषधियों को प्रयोजन के बिना वृथा छेदन करे तो दिनभर गोओंका अनुगमन करके दूध पीवे, अन्न कुछ भोजन न करे, पंच यज्ञके लिये दोष नही है. यह प्राश्चित उन में जानना जो वृक्ष, फल, आदिके उपयोगी हैं. क्यों कि **मनु** (अ० ११ श्लो० १४२) की *स्मृति है, कि फल देनेवाले वृक्षों के छेदन में सौ ऋचाओंको जपें, और गुल्म लता, वल्ली, और पुष्प, वाले, वीरुध इनके छेदने में भी पूर्वोक्त जपकरें, दृष्टार्थ (लोक मे प्रयोजन) में भी कृषि के अंग हलादिके अर्थदोष नहीं, क्योंकि **वसिष्ठ** की *स्मृति है कि फल पुष्पवाले वृक्षों की हिंसा न करें, कर्षण (खेती) आदिके लिये तो हिंसा करें, और जहां स्थानकी विशेषता से दंडकी अधिकता है वहां प्राश्चित्त की भी अधिकता कल्पना करने को कहा है, कि चैत्य* (चबुतरा) श्मशान, सीमा, पवित्रस्थाने, देवाले, इनमें उत्पन्न, और प्रसिद्ध वृक्षोंके छेदन में दूना दंड होता है.

पाठक गण आप लोगोको अपने महान् **फलास्फरों** के इन बचनों से विदित हो गया होगा कि वह वृक्षोंकी **रक्षा** चाहते थे. हम सत्य कहते हैं कि जबसे

*यह रेशमके कीड़ाको पालता है इस कारण यह वस्त्र देनेवाले वृक्षों में गिना गया है.

इन वचनोंका उलघन हुआ है, तबीसे ही भारत वर्ष में नाना प्रकारके रोगोंका जन्म हो गया है. कारण कि इस समय लोग थोडेसे लोभके कारण बाग, बगीचे और नाना प्रकारकी हरियाली वस्तुओंका, तथा वन उपवन काटने लग गये हैं. और इनके हीकटने से हमारी कारबौनिक ऐसिड़गास (जीवांतक वायु) जो श्वाससे निकलती हैं, जिसे वृक्ष चूसते हैं. और इसके पलटे में जो आक्सिजन (प्राणप्रद) वायु, जिसको प्राणी श्वास में लेते हैं. वृक्षोंके कटने से न्यून हो गई है. जिस्से प्राणियोंके आरोग्यता में फर्क पड़ने लग गया है. और महामारीदि रोग भी उत्पन्न होने लग गये है. अये भारतके हि। चाहनेवालो वृक्षोंकी रक्षाका शीघ्र यत्न करो नही तो लार्ड केल्वीन का कथन निश्चे सत्य हो जावेगा: स. ध.

श्री विक्रमादित्य और शालिवाहन

(गतांकसे आगे)

वाचकवृन्द ! यह श्रीमान् नरेंद्र ईस्वी सनके पहिले ... में, गोदावरी नदीके तटपर बसी हुई प्रतिष्ठानपुर-पैठण नामक राजनगरी में उत्पन्न हुआ था. यह राजेंद्र महा प्रतापी, शूर वीर, हिंमतवाला, बुद्धिमान, धार्मिक, नीतिवान, न्याई, उदार, विद्वान, और कलाकौशल्य में अतिनिपुण था. इसकी राज सभा में पुष्कल विद्वान तथा कविजन निवास करते थे, विद्या वृद्धि वा परोपकारी कार्य्यों में यह महाराज अपने द्रव्यको सु उपयोग करता था, और प्रजाको यथा न्याय देने में तो यह बहुत ही वखाना गया है. यह नरेश प्रजाकी सुख समृद्धिकी वृद्धि करने में निरंतर बड़ी कालजी रखता था; और धर्मनीति से राज्य कार्य्य किया करता था; इससे यह अति प्रजा प्रिय हो रहा था. महाराजा वीर विक्रमादित्य के पीछे यह ही महाप्रतापी राजा हो गया है. इसकी कीर्ति की कीर्णो आज प्रयन्त भारत वर्ष में ही नही, परन्तु सारे संसार में फैल रही हैं. इस महाराजाधिराज की उत्पत्तिका वर्णन ऐसा मिलता है कि-प्रतिष्ठानपुर पैठण नगरी प्राचीन काल में वेदादि विद्या में बहु प्रसिद्ध थी. जब इस नगरी में सोमकांत नामक राजा राज करता था. उस राजाके समय में सुलोचन नामक एक महान् विद्वान ब्राह्मण प्रतिष्ठानपुर में रहता था. इस ब्राह्मण की एक विदूषी सुमित्रा नामक कन्याथी जो शेषनागक राज मंत्रीसे विवाही गई थी. यह शेषराज मंत्री राजा प्रजाका अतिप्रिय था परंतु दुष्टस्वार्थी सदैव इसके नाश करनेके घात में लगे रहथे, कान के कच्चे राजाके कानभर २ कर, शेष के प्राण लिये विना न रहे, किन्तु इनने परभी इन्हे संतोष न आया, विचारी गर्वती शेषकी विधवा सुमित्रा को इसके वृद्ध पिता सुलोचन सहत नगर से निकलवा दिया. इस्से यह दोनो पिता पुत्री नगरसे बाहर कुंभारवाड़ा में आ रहे. इस कुम्भारवाडे में ही अपने महाप्रतापी शालिवाहन का जन्म हुआ. जब यह नरेन्द्र पांचवर्ष का हुआ और कुम्भारों के बालकों संग खेलने को जाता, तो जैसे उनको मट्टीसे खेलते देखता वैसे ही यहभी मट्टीसे खेलता, विशेषता कुम्भारों के छोकरों से इस में इतनी ही थी कि, कुंभार के छोकरे मट्टीके छोटे २ प्याले इत्यादि वर्तन बनाया करते थे, और यह मट्टीके हाथी, घोडे, रथ, सिपाई बनाया करता था. जब कुछ और बड़ा हुआ तब इस खेलको त्याग राजदरबारी खेल खेलने लगा, अर्थात नगरके छोकरों को अकिट्ठाकर, किसीको चोर, किसीको सिपाई, कोतवाल, और किसीको प्रजा, किसीको दिवान इत्यादि बना, आप राजाबन न्याय करता; यहांतक कि ऐसे ही खेल खेलते २ लोगों के लड़ाई झगड़ों में भी पंच बनके टंटे मिठाने लगा, इस्से इसकी कीर्ति सारे नगर में फैल गई, और नगर निवासीजन इससे अतिप्रीति करने लग गये. इस्से राजा सोमकांत कोभी लाचार हो कर शालिवाहनको इसके पिताकी पदवी देनी पड़ी. जब राजा सोमकांत मृत्यु होयगा, और उसका कोई पुत्र न था,

(१) फल दानां तु वृक्षणां छेदने जप्य मृक्शतम्। गुल्मवल्ली लतानांतु पुष्पितानाञ्च वीरुधां ॥

(२) फल पुष्पोपगान्पादपान्न हिंस्यात्कर्षण करणार्थ चोप हन्यात्।

(३) चैत्य श्मशान सीमासु पुण्य स्थाने सुरालय। जात द्रुमाणां द्विगुणोदमो वृक्षेथ विश्रुते ॥

इससे ही प्रजाने शालिवाहनको उसकी गादीपर बिठला दिया: गादी पर बेठकर यह महाराजा ऐसा न्याय चुकाने लगा कि देशदेशांतरों में इसकी कीर्ति फैल गई. इसकी कीर्ति सुनकर महाराजाधिराज विक्रमादित्य ने कई प्रकार से शालिवाहन की परीक्षाकी, और इसकी बुद्धि, चातुर्य और पराक्रम देख बडा आश्चर्य हो गया. इतने में किसी ज्योतिषी ने ऐसा भविष्य प्रकट किया कि, शालिवाहन बड़े २ राजे महाराजाओं को जीतकर महाराजाधिराज की पदवी धारण करेगा. महाराज विक्रमादित्य यह भविष्य सुन, तथा शालिवाहन की अलौकिक बुद्धि व चरित्र देख इसे मित्र की भांति देखने लगा. एक समय इसकी परिक्षाके लिये अपनी सेना लेकर इस पर चढ़ आया, तब शालिवाहन को विक्रमादित्य के चढ़ आने की खबर लगी, तो यहभी झटपट अपनी सेना लेकर सन्मुख गया, और ऐसी वीरतासे लड़ा कि विक्रमादित्य को भेलकर नर्मदा नदी के उसपार की सरहद्द बांध उज्जैन को लोट जाना पड़ा. जब विक्रमादित्य का परलोक वास हो गया, और शाक लोग पुनः भारत पर चढ़ आये. तब शालिवाहन ने बडी वीरतासे उन्हे पराजेकर भारत का संरक्षण किया था. इन्ही कारण से इसको भी लोगोने शाक की पदवी दीथी, अर्थात् इसका भी शाक मानने लगे. इस महाराजका शाक सन ७८ ई. से प्रचलित हुआ है. महाराजा विक्रमादित्य के शाक और शालिवाहन के शाक में १३५ वर्ष का अंतर है. भारत में नर्मदा नदीके उत्तर देशमें विक्रम संवत, और नर्मदा नदी के दक्षण देशमें शालिवाहन शाक, अबतक प्रचलित है. मिष्टर विल्सन साहब, सात वाहन इस शालिवाहन को ही कहते हैं. परन्तु डाक्टर रोस्ट लिखता है कि, सन्दहार वंशके श्रीपलीमान राजा प्रतिष्ठान पुर में हो गये है. उसकी वंशमें शालिवाहन हुआ है. इस परसे सिद्ध होता है कि सात वाहन यह शालिवाहन नही है, जोहो :–इस समय में शालिवाहन महाराज का शाक १८२१ चल रहा है, भारत में इस महाराजकी कीर्ति की कोर्णे आज पर्यन्त फैल रही हैं. धन्य है इस महाराज को, परोपकार सदैव शालिवाहन जैसे महाराजा भारत भूमिमें प्रदान करें.

प्रियवाचक वृन्द ! जहां तक बन सका ! हमने श्री महाराजा **विक्रमादित्य** और महाराजा **शालिवाहन** जीका वर्ण किया है, जिन **महाशयों** को इससे विशेष इन दोनो महाराजाओं का हाल विदित होवे तो वह कृपा करके हमारे पास भेजदें. हम बड़ी खुशी से **श्रीधर्मामृतमें प्रकाशित** कर देंगे सम्पादकमे है.

कविजन दानके पात्र क्यों हैं.

१२।१८

(गतांक से आगे).

एक समयकी बात है कि अकबर बादशाह रात्री को अपने राज्य भवन में बैठा हुआ था, अकस्मात् उस समय बेगम साहबा सामने आ खडी हुई, जब बादशाह की दृष्टि बेगम साहबा पर पड़ी तो क्या देखता है, कि उसके सिरकेबालों की एक लट स्तन पर पड़ी हुई है. इस लटका रंग तो काला था. परन्तु बेगम साहिबाके गौर वर्ण स्तन पर पड़ने से एक निरालेही ढंग की शोभायेमान हो गईथी. इस लटकी शोभा देख, अकबर के मुखसे बड़े आनन्द के तरंग में.

"शंभुके पूजन नागण आई."

यह वचन निकल आये. इस वाक्या में शिव लिंगके स्थान पर बेगमके स्तन है. और नागण के स्थान पर बेगमके सिरकेबालों की लट है अर्थात् बेगमकी लट मानो शिवलिंगको पूजनके लिये आई है.

रात्री समाप्त होनेके उपरान्त सबेरेही बादशाहने अपनी कविमंडी को बुला, रात्रि वाला वाक्य सुना, बीरबल की ओर देखा. बीरबलके सन्मुख कवि गंग बैठा हुआ था, बीरबल ने कवि गंगको बादशाह की समस्या पूर्ति केलिये सेनकी. कवि गंगने सेनके पातेही खड़े हो कर निम्न लिखत वचन बादशाह को समस्या के उत्तर में कहा.

श्रीपतके मन रंजन कारन राधिका ने शृंगार बनायो।
डमर भूखन अंबर कानन कंठ बिखें मुक्ताफल छायो॥
शीसछुटी लट आनपरी अरुवांही लगी कुचसों लपटाई।

कहेनर गंग सुन शाह अकव्वर शंभूके पुजन नागन आई॥

अर्थात्–कृष्णचन्द्र का मन संतुष्ट रक्खने के लिये राधिका ने शृंगार किया था. अर्थात् जब कान तथा कंठ आदि में सोना तथा मोतियों का अलंकार पहन रही थी, उस समय शिरकेवालों की लट छोटकु स्तनसे लपट गई थी, उस समय उस लटकी शोभा एसी थी कि, मानो नागण शिव पूजन के लिये आई हो. एसी विदित होती थी.

कवि गंगने बादशाह को राधिका के वर्णन द्वारा उत्तर तो दिया. और बादशाह भी कवि गंगके उत्तर से समझ गया. परन्तु कवि गंगने इस में हमारी कुछ उपमा नही की, इस कारण से चिढकर कवि गंगको किले में कैदकर देनेका हुकम देदिया.

कवि गंग बादशाह को ऐसी आज्ञा देते सुन, बडे आश्चर्य में आ. मनही मन में कहने लगाकि यह आज्ञा कैसी, मेने तो कोई बादशाहाका अपराध नही किया, फिर विना अपराध केही मुझे कैदकी आज्ञा क्यों दी है. कदाचित कोई मुझसे भूल हो गई होगी, इस लिये उस भूलका बादशाह से क्षमांगलेनी उचित है, एसा विचार कर निम्न लिख कवित बोला ? जहांपनाह.

सहत संताप आप पर को मिटावे ताप।
करुणा कोमद्रु शुभ छाया सुख कारी है॥
शूर वीर क्षमावान कोट पांत मान नहि।
ज्ञानको निधान मान गंभिर गुणधारी है॥
दोषदिल नही लेवे शरण आवे सुखदेवे।
परमार्थ वृत्ति जिनकुं सदा प्राण प्यारी है॥
कहत है कवि गंग सुनो मेरे दिल्ही पति।
विश्वमे विरल सो सजन की बिलहारी है॥

जब बादशाह ने गंगको इस कथन से नही छोडा तब तो इसे बडा रोस आया, और बोला. पृथ्विपते में इस बातको खूब जानता हुं कि.

बालसे ख्याल, बडों से विरोध।
अगोच्चर नार से न हसिये॥
अन्न से लाज संगत से जोर।
अजाने नीर में नाथसिये॥
बैल कुं नाथ घोडे कुं लगाम।
हस्ति कुं अंकुश से कसिये॥
कविगंग कहे सुनशाह अकव्वर।
क्रूर से दूर सदा वासिये॥

निसंदेह आप बडे हैं पर आपके बडे पनको, जो कुछ आप में क्रूरता है यह नाश करनेवाली है, कारण यह क्रूरता आपका जाती पन दरसा रही है अर्थात् आप यद्यपि विद्वान हैं पर अंतको तो यवनही है न. यह यवन स्वभाव कहां से जाये, वडे जन कह गयेहैं कि

लसन की गांठ कुं कपरके रसमे।
वार पचासके धोई संगाई॥
केसरके पुट दे दे के अरु।
चंदन बृच्छकी छांय सुकाई॥
बट मोगरे मांहि लपेट धरी।
ओहि बास कुबासहि आईज आई॥
ऐसेहि नीचकुं नीचकी संगत।
कोट उपाव कटके न जाई॥

जहां पनाह इसलिये हमारे ऋषि मुनि कह गये हैं कि

प्रित करो नित जान सुजानसे'
ओर हवानसे प्रीत केसी।
खट मास सुड सेमल तरु सेयो'
देश तजी परदेस बसी।
फल नीचे पड्यो पक्षिराज उड्यो(जब)
चांच मारी तो कपास जैसी।
कवि गंग कह सुनशाह अकव्वर'
छाछ मीठो क्या दूध जैसी।

बादशाह सलामत हमभाट लोग क्षत्रिय राजाओंके समान समझकर आप यवन बादशाहों के पास चले जाते हैं परन्तु कहां दुध और कहां छाछ. मेरे एसे कहने का तात्पर्य्य यह है कि आपलोग हमारा गुण नही जानते हो, कारण के.

जट्ट क्या जाने सहको भेद,
कुम्मार क्या जाने भेद जगाको।
मूढ क्या जाने गहकी बातमें,
भील क्या जाने पाप लगाको।
प्रीतकी रीत अतीत क्या जाने,
भैंस क्या जाने खेत लगाको।
कवि गंग कहे सुनशाह अकव्वर,
गद्धा का जाने नीर गंगाको।

वस ऐसे ही आप यवन बादशाह हम भाटोंका गुण नही जानते हो कि हम लोगोंने अपने सिरपर कितना जोखम का काम लया हुआ है.

कीवत

पवनको तोल करे गगनको मोल करे ।
रविसें बांधे हिंडोल एसे नर भाट है ॥
पथ्थरसौं कांते सुत बांझनको बढावे पूत ।
मसानमें बसते भुततोको घरभाट है ।
विजलीको कर लेवा दवनी सु राखे देवा ।
राहुको खवावे मेवा ऐसे सिद्ध भाट है ॥
मेघनकु राखे ठेरा तख्तका लुटावे डेरा ।
मनकी संभारे फेरा ऐसो नर भाट है ॥
धन देवे धाम देवे बातकों विश्राम देवे ।
राजको लगाम देवे ऐसो प्रिय पेख्यो है ॥
समय अनुकूल रे वे भूल थाय नहिं देवे ।
निष्कपट न्यायी कुड-कपट जेने छे क्यो है ॥
बात गुप्त राखे दाखे बोल ना कदि उथापे ।
प्रकृति पिछानी जानी लायक मन लेख्यो है ॥
कहत है कवि गंग सुनो मेरे दिल्हीपती ।
समय पे सीस देवे ऐसो कोई देख्यो है ॥

अकबरबादशाहने उत्तर दिया यह तुमारे कथन ठीक हैं, पर तुम भाट लोग बोलनेमें बडे छोटे किसीका कुछ भय नही रख्खते हो, इस्से तुम्हारी जात बहुत खराब है.

गंगने उत्तर दिया. जहां पनाह हम भाट लोगो सिवाय इसके

अकारण क्लेश करे इरषामें अंगजरे ।
रंग देखी रीझे नही दृष्टि दोष खडा है ॥
आपको ना करे काज परको करे अकाज ।
लोगनकी छाडी लाज असूयामें अड्यो है ॥
मन वाणी काया क्रूर ओरकू सतावे शूर ।
काम क्रोध हो हजूर विधिने क्यो घडयो है ॥
कहत है कवि गंग शाहनके शाह शूरा ।
दानियामें दुःख एक दुर्जनको बडो है ॥

शेषफिर.

भारत पे आरत.

प्रकरण २ रा.

(गतांकसे आगे)

यद्यपि भारतीय **राजाओं** की **नवलाई** के दिन महाभारत के समय से ही चले आए है थे, परन्तु विदेशियों के मुख **मर्दन** का कुसंप गुजरात के राजा **भीमदेव** से ही चला है. और ये ही कुसंप **भारत पे आरत** के दिवस लाया है. कारण कि जब **अजमर** के चोहाण वंश विख्यात महाराजा **विसलदेव** ने यवनों के हाथ से भारत भूमि; जो उन्होने लूट घसूट कर कुछ दवाली थी, उसे छडाने के लिये सर्व राजाओंको **पत्र** भेजे, तो सबने इस बातको स्वीकार किया, और महाराजा **विसलदेव** को मुखीया बना, यवनो से युद्ध कर, पुनः अपनी मातृ भूमिको यवन से छडा लिया. इस युद्ध में केवल एक गुजरातका राजा **भीमदेव** ही सहायक नही हुआ था, इस लिये महाराज **विसलदेव** ने इसको शासन देनेके लिये, इसपर चढाई की, और जब इसे पराजे किया. तब भीमदेव के **प्रधान** ने महाराजा **विसलदेव** को कुछ धन, और युद्धस्थान पर इनके नामका विसल **ग्राम** बसानेका बचन दे, परस्पर मिलाप कर विसलदेव को विदा गया था, परभीमदेव के हृदयेने मिलाप नही किया. बस यहांसे ही भारतीय राजाओंके घरों में कुसपका बीज आरोण हुआ. और यह कुसप महाराजा विसलदेव की सातवीं पीढी में पूर्ण युवावस्था को प्राप्त हो, **भारत पे आरत** के दिवस ले आया. अर्थात् महाराजा **विसलदेव** का पुत्र **सारंगदेव** हुआ. और इसका पुत्र **आनो**जी हुआ, और आनोजी का पुत्र **जयसिंग**, और इसका पुत्र **आनन्ददेव**, और आनन्ददेव का पुत्र महाराजा **सोमेश्वरदेव**, और इस सोमेश्वरदेव का पुत्र अपनी **वार्ता** का **नायक** महाराज **पृथ्विराज** है. महाराजा **पृथ्विराज** का जन्म **संम्वत**१२१५**सन**११५८**ई.**५५४हि.में हुआ था. जब **महमूद** गजनवी भारत से गया, और **मुहम्मद** गोरीने भारत भूमिमें पग धरा, इस समयके बीचमें जो अंतर पडा, इस समय, तथा इसके उपरान्त, इन दोनो समयोंके बीचका जो इतिहास है, वह सर्व **ईर्षा और**

क्रुंसप के युद्धसे ही मरा हुआ है. नीतिबल बिना का शरीर बल कैसा हानी कारक है, यह इस वार्ता से स्पष्टही विदि हो जायगा. अर्थात् जब गजनी के असली बादशाह सबकतगीन का बेटा महमूद गजनवी सन् १०३० ई० १०८७ वि, में मर गया, और गजनवी सत्ता में बुढापा आ गया, तब सन ५४६ ही, सन् ११५०ई को शहाबुद्दीन का बडा भाई ग्यासुद्दीन, गजनीकी गादीपर बेठा, और शहाबुद्दीन सेनापती बन, बडे भाई की सेवामें लगा. शहाबुद्दीन सदैव महमूद की भांती भारत के लूटने की तौर्क में लगा रहता, और समय की अपेक्षा के लिये अपने गुप्तचरों (जासूसों) को भारतीय राजाओं की दरबारों में समाचारों के लिये भेजा करता, और कभी २ स्वयम भी भेष बदलकर भारतीय राजाओंकी दरबारों में आया जाया करता था. एक समयकी बात है कि महाराजा पृथ्विराज सर्व सामन्तों सहत अपनी दरबार में बैठा हुआ था, उस समय यह बात निकली कि चन्द्रमा की कला सदैव क्षय और वृद्धिको पाती रहती है, इससे कितनेक समय तक रात्रीको भारी अंधेरा छाया रहता है, कोई एसी युक्ति निकालनी चाहिये कि जिस्से रात्रीके समय अपनी राज्य नगरी में अंधेरा न रहने पावे. इस विषये पर जिसको जो युक्ति सूझी, सो उसने कही, परन्तु महाराज के मन में किसीकी युक्ति न बैठी, तब एक वृद्ध सामंत ने निवेदन कियाकि, महाराजाधिराज मेरी अल्पबुद्धि यह कहती है, कि यदि अपने तारागढ किले पर रात्रीके समय भारी २ मसालें जलाई जायें, तो अपनी राज्य नगरी में सर्वत्र उजियाला रहे. वृद्धि सामन्तकी यह बात सबको ठीक जंची. और उसी रात्रीको महाराज पृथ्विराज ने तारागढ किले पर मसालें जलानी आरम्भ कीं. वास्तव में मसालें जलने से सारी नगरीमें उज्याला हो गया, और इनकी शोभा नगरसे दूर तक दिखलाई पढ़ने लगी, अकस्मात इसी रात्रीको शहाबुद्दीन भेस बदलकर अजमेर के समीप एक ग्राम में उतरा हुआ था. रात्रीको मशालों के प्रकाश की शोभा देख, बड़ा आश्चर्य हुआ, कि यह क्या ? माजरा है जो आज एसी रोशनी तारागढ पर हो रही है; इस विषयके मालूम करने के लिये तुरंत अपने एक गुप्तचर रोशनअली नामक को अजमेर में रवाना किया. इस बारे में भारत का प्रसिद्ध कविचन्द्र अपने रासा नामक ग्रंथमें निम्न दोहा लिखता है.—

*सात कोसको दुर्ग है, तापर जरत मशाल ।
सो देखी *मीरां तहां, सर उर उठी झाल ॥

रोशनअली आज्ञाके पाते ही अजमेर में गया और मशालोंके जलनेका सर्व समाचार पा, जब पिछे फिरने लगा, तो नही मालूम उसके मन में यह क्या आया, कि जब रात्रीको नगरके दरवाजे बन्द हो गये, तब अन्नासागर वाले दरवाजे के पन आगे एक भारी धूनी लगा, एक नर्म आसन बिछा बैठ गया, और बायें हाथमें तसबी (माला) ले, मुखसे बडे ज़ोर से "लायला इल्ला मुहम्मद रसुला" यह कलमा (मंत्र) पढ २ कर, उलटी माला फेरने लगा. जब प्रातःकाल हुआ, और नगर निवासी स्नान ध्यान के लिये अन्नासागर पर जानेके लिये घरोंसे निकल; नगर दरवाज़े पर आये, और दरबान ने उनके आनेपर फाठक खोला, तो क्या देखते हैं कि फाठक के आगे भारी धूनी सुलगाये एक फकीर बैठा हुआ है. यह माजरा देख बडे चकित हुये, और आपसमें कहने लगे कि बाहर कैसे जायें. कारण कि उस धूनीके तेजसे किसीकी हिम्मत न पडीथी कि दरवाजेके बाहर निकल सके. सूर्य्यके निकलनेके प्रथमरही सहस्रों मनुष्य दरवाजेके अंधर भागमें आकर अकीठे होगये. और बडे जोरसे पुकार २ कर रोशनको दरवाजेके आगेसे धूनी उठालेनेके लिये साधू समककर विन्तीपर विन्ती करने लगे. पर रोशन किसीकी विन्तीपर लक्ष न दे, औरभी बडे जोर, शोरसे कलमा पढने लगा. इस्से नगरमें हा ! हा ! कार मच गया. अकस्मात् इतनेमें अंदरके लोगोंने कुछ दूरसे अन्नासागरकी

* अर्थात्—जब मशालोंका प्रकाश मीरां अर्थात् यवन सरदार शहाबुद्दीनने देखा, तो तुरत ही इनके जलनेका कारण मालूम करने केलिये अपने दूतको अजमेरमें भेजा.

यह मीरां शब्द मीर शब्द का अपभ्रंसहै, मीर शब्द अरबी भाषाका है अर्थ इसके सदार सरदारके *

ओरसे दो मनुष्योंको नगरकी ओर आते देखा. उन दोनों मनुष्योंमेंसे एक मनुष्य तो एक नागपूर धोती ओढे और एक धोती कमर में पहरे हुयेथा, और इसके सिरपर एक उत्तम पगडी भी थी तथा मस्तकपर इसके रक्तचन्दका टीका लगा हुवाथा. और कोषमें यह एक तलवार दबाये,और एक हाथमें भगवत गीताकी पुस्तक, और दूसेरे हाथमें पानीका लोटा लिये हुये. मुखसे भगवत्का नाम उच्चारण करता हुआ आ रहाथा. और दुसरा मनुष्य साधारण वस्त्र पहरे, एक हाथमें गिलीधोतिया, और दूसरे हाथमें पूजाकी सामग्री लिये हुए प्रथम मनुष्यके पीछे २ आ रहाथा. जब यह दोनो मनुष्य कुछ और समीप आगये, तो नगर निवासीयोंको महाराज पृथ्वीराजका कोईसामन्त आते जान पडा. परंतु जब वह रोशनके पास आगये,तो सर्वको महाराजका छोटा साला चामंडराय विदित हुआ. इस्से सर्व लोग एकदम चुप होगये. चामुंडराय कुछ अन्य लोगोंकी भांती फकीरी तेज वा फकीरकी धूनी के तपसे कुछ डरे, एसा नहीथा, यदि यह चाहता तो धूनीको उलांघ कर नगरमें चला जाता. परन्तु इसे तो रोशनको यहांसे उठा, नगर निवासीयोंका कष्ट दूर करनाथा, इसकारण इसने आतेही रोशनसे कहा "अरे म्लेच्छ तू कौन है, और कहांसे तू यहां आया है, और मार्ग किस लिये तू रोक कर बैठा है. हमारे इन प्रश्नोका शीघ्र उत्तर दे" रोशनने चामुंडरायके यह बचन सुनकर उत्तर दिया "ऐसे सयाल (प्रश्न) पूछनेवाला तू कौन है, अगर तुझको शहरके अंदर जानेकी हिम्मत हो तो जा तू चले जा, नही तो दूसरे दरवाजेसे अंदर चला जा.

चामुंडराय—अरे सांई ! तुझे अपनी सिद्धिपर इतना बडा घमंड है,कि जो तू मुझेभी दूसरे दरवाजेसे, अंदर जानेको कहता है, क्या तुझे मालूम नही है कि मैं कोन हुं.

रोशन—यह जाननेकी मुझे कुछ जरुर्त नहीं है. चुप रहो ; मेरी बंदगी (भजन) में खलल (भंग) मतकर.

चामुंडराय—मेरी बंदगीमें खलल पडने से तू मुझे सराप न दे देवें, इससे डर करमै दूसरे दरवाजे से चला जाऊं, और सहस्रों मनुष्योंका कष्ट न मिटाऊं, मुझे राजपूत होनेसे क्या ! यह कलंक नही लगेगा.

रोशन—अरे काफर ! तू मेरे साथ लम्बी चौडी तकरार मतकर.

चामुंडरायने "काफर" का बचन सुनतेही मारे क्रोधके हाथका लोटा रोशनके मस्तकपर एसा मारा किमस्तकसे फव्वारेकी भांति लहु (खून) बेहने लगा. परन्तु रोशन इतनी चोटके लगने पर भी न उठा. तब तो चामुंडरायको औरभी क्रोध चढा, इस्से झट म्यानसे तलवार निकालकर, रोशनका सिर, तनसे उठाना ही चाहता था, कि इतनेमें अंदरसे कुछ* लोग पुकार उठे. "क्षमा चामुंडरायजी, क्षमा चामुंडराय जी" आज *एकादशीका दिन है, और यह एक फकीर है आप इसके दुर्वचनोपर कुछ ध्यान न देकर, इसको आज जीवदान दी जिये, इस हमारी प्रार्थना पर आप ध्यान दीजीये, और हमे निराश न कीजये. चामुंडरायने एक तो इकादशीका दिन, दूसरे प्रजा का निवेदन,तीसरे रोशनको एक फकीर जानकर इसका बध करना छोड दिया. किन्तु रोशनका हाथ पकडकर वहांसे उठा दिया. और दरवानोको पुकार कर धूनीको पानीसे बुझा देनेकी आज्ञा दी. दरवानोने आज्ञाके पातेही पानीके घडोंसे धूनीकी आगको बुझा रास्ता खोल दिया. जब लोग अंदर बाहर आने जाने लगे. तब रोशन बडबडाता हुआ जंगलकी ओर चला गया और चामुंडराय पुनः अनासागर पर राजा, अन्नानकर अपने भवनको गया.

रोशन—इतनी दशा होनेपरभी शहाबुद्दीनके पास नही गया, परन्तु पुनः दूसरे दिन प्रातःकाल ही नगरके चौकमें आ धूनि लगाई, परन्तु लोगोंने दिवान और फकीर समम कर कुछ नही कहा, और न कोई पास गया. पहर दिन चढ़के लगभग सौ, दो सौ गुजरीयां सिरपर दहींकी मटकियां धरे हुई, राजभवनको जारहीं थीं, रोशनने गुजरीयोंको जाते देख, एक गुजरीसे पूछा, मिटकियों में क्या है ? गुजरीने उत्तर दिया, सांई, इसमें दही है.

रोशन—इतना दहीं तुम कहां को लिये जाती हो.

गुजरी—राजभवनमें.

*इकादशीको किसी जीवकी हिंसा नहीं होताथी. चाहे कोई फार्सावालाभी क्यों नहो.

*ब्राह्मण, वनीये जैनी.

रोशन—इतना दहीं राजभवन में किस काम आता है.

गुजरी—इससे महाराज आरोगते (खाते) हैं.

रोशन—क्या ! तुम्हारा राजा इतना अकेला डीखा जायगा.

गुजरी—नही २ ! आकेले ही इतना नही खाते हैं.

रोशन—तो क्या ? राणी, राजा मिलके खा जाते है.

गुजरी—नहीं २.

रोशन—तो और कोन ! खाते हैं.

गुजरी—महाराज, और महाराजके सामन्त सब मिलकर खाते हैं.

रोशन—पीछे तुमको कुछ मिलेगा.

गुजरी—हां ! हम, सबको, एकर मोहर मिलेगी.

रोशन—अगर मैं तुमको दो मोहर दूं, तो तुम मुझे एक मटकी दो, या नही ?

गुजरी—(मनहा मनमें इसके पास दो मोहरे कहा से होगी एसा समझ, हंसती हुई बोली) यदि तुम दो मोहरे दोगे, तो फिर मटकीमें क्यों न दूंगी.

रोशन—देखियो ? कही फिर तो न जायेगी.

गुजरी—(हसते २ बोली) साई हम हिन्दस्त्रियां हैं, कभी वचनसे फिरनेवाली नही हैं, तुम मोहरे तो दिखलाओ.

रोशन—गुजरीका यह वचन सुन, झट धूनी में से दो मोहरें निकाल, दिखलाकर, बोला देख मोहरे हैं, या नहीं एसा कहकर फिर दोनो मोहरें गुजरो के आगे फैंक दीं.

गुजरी—ने मोहरें उठाकर देखीं, और वचन में बंध गई जान, उसने एक मटकी रोशन के आगे धरदी. रोशन ने झट मटकी में ऊंगली डालकर थोडासा दहीं निकाल अपनी जिव्हापर रक्खा. और फिर तुरत ही थूककर थु,थू कर बोला क्या ? तुम्हारा राजा और सामन्त एसाही खराब दहीं खाते हैं, मुझे यह पसन्द नही, जा लेजा अपनी मटकी, और दोनो मोहरें भी.

गुजरी—रोशन के इन वचनो से फीकी तो पड गई, परन्तु लोभके दबाने से मोहरें और मटकी लेकर राजभवनकोओ चल पड़ी. इस गुजरीकी यह चाल अन्य गुजरीयों को अच्छी न लगी, कारण कि उनके मन में एक तो यह बात आई, कि जब इसका दहीं खराब था तो फिर इसने मटकी फकीर को क्यों दी, दूसरे ! ... दी भी थी, तो फिर विना मोहरें दीये, वापस क्यों ... ला, तीसरे ! फिर यह एक मुसलमानकी छूई हुई, तिसपर भी जूठी की हुई, मटकी लेकर राजभवन को क्यों चल पड़ी, इससे वह उससे झगड़ने लगा. और इस झगडे का यह परिणाम निकला कि सर्व की मटकियों का दहीं चौक में दधिकांदे की भांती फैल गया.

जब राजभवन में नित्यकी भांती समयपर दहीं नहीं पहुंचा, तो रामराय गुजर, और धीरपुण्डरी नामके दो सामन्त इस बातकी तपास करने के लिये राजभवन से निकले, इनको मार्ग ही में रोशनका सर्व समाचार मिला गया. इसमें इन्होंने चौक में आकर रोशन की मुश्के बांधलीं, और राज दरबार की ओर लेकर चल पडे, परंतु मार्ग में चामुण्डराय का बडा भाई, जो महाराज पृथ्वीराज का मुख्य प्रधान मंत्री था मिल गया, इन दोनो समन्तो ने रोशनका सर्व समाचार उससे निवेदन किया. मंत्रीने उन्हें आज्ञादी कि जो ऊंगली इसने मटकी में डालकर दहींको भ्रष्ट किया है, वह ऊंगली इसकी छेदन कर, फिर इसे अपनी सरहदसे बाहर निकालदो. रोशन प्रधानकी इस आज्ञा के सुनते ही बोला.

"काटंत मेरी ऊंगली, तूटंत तेरी चोटुली"

"करेगा खुदा और खुदा कारसूल तो इसको सच जानना." रोशन एसा चिल्लात ही रहा, पर इसके कथनपर किसने कुछभी ध्यान न दिया और ऊंगली का छेदन करके अपनी हद्दसे बाहर निकाल ही दिया.

रोशन—ऊंगली कटवाये हुये शहाबुद्दीन के पास पहुंचा, और प्रथम अजमेरका सर्व समाचार दे फिर ऊंगली दिखला कर बोला "अय जहां पनाह" अगर आप मेरी ऊंगलीका बदला काफिरोंसे न लोगे, तो आपको काफिर हसेंगे, क्योंकि मैं पृथिराजके वजीर आजम (बडेमन्त्री)से "काटंत मेरी ऊंगली, तुटंत तेरी चोटुली" अब मेरे इसकलाम (वचन) को पुरा कर दिखलाना आपका काम, है नही तो इसलामी, और काफरोंको सलतनतों में आपका नाम बदनाम होगा शहाबुद्दीनने रोशनको धीर्य्य देकर शांत किया, और ग्रामसे अपना मुकाम उठा गजनीको कोच किया और गजनीमें पहुंचकर अपने बडे भाईको भारतका सर्व समाचार विदित करके फिर रोशनको सन्मुख खडा कर, उसकी कटी ऊंगली दिखला बोला अय भाई जान राजपूत अपने ब्राह्मण साधु, और भाटका अपमान होना, अपना हुआ समते है, केवल राजपूतही नहीं परन्तु सारे भारतकी प्रजाभी एसाही ख्याल रखती है. और एसाही मुसलमानभी अपने फकीरोंके बारे में समझते हैं. ग्यासुद्दीन, शहाबुद्दीनके यह वचन सुन बडे जोशमें आकर गया "बेशक काफिरोंसे रोशनको उंगली का बदला लेनाही चाहिये" शेषफीर

धत्त तेरी नई सभ्यता की ऐसी तेसी।

भस्मनिहोमकरणता षंडेकन्याप्रदा नतः।
कलधर्मप-रित्यागान्नरकेनियतंवसेता ॥

अर्थात् राख में होम करने तथा नामर्द को लडकी देने तथा अपनेकुल का धर्म छोडने से मनुष्य निश्चय नरक में वास करता है ॥

आज कल नई सभ्यता वाले जन्म पत्रीको न मान कर समाचार पत्रोंद्वारा, अथवा फोटो (चित्र) द्वारा अपना वा अपनी संतानो का विवाह करने लग गये हैं, और जन्म पत्रीको कर्म पत्री कहकर इसका तिरस्कार करते हैं, परन्तु इनको मालूम नही कि यथर्थमें जन्म पत्री कर्म पत्री ही है, इनको यदि यह मालूम होता तो कदापि इसका तिरस्कार न करते.

नवीन सभ्य गण—हमारे ऋषि मुनियों ने इस जन्म पत्री को कर्म पत्री ही ठराया है, यदि यह कर्म पत्री न होती तो भारतीय वनितायें पति वा सास स्वश्वरका अपमान कर विदेशीयोंकी रीति भांती पर चलने लग जाती. पर इ.. कर्म पत्रीके द्वार विवाह होनेसे वह पती वा सास स्वश्रसे कैसी प्रीति रखतीहैं,वा आज्ञा को मानती हैं यह अब भी प्रतक्ष देखनेमें आरही है.भला कोई नवीन सभ्यता वाला एसी अपनी स्त्रि बतला सगता है कि जो आयु प्रयंत पति व सास स्वश्रका मान प्रतिष्ठा करती हो. वा पतिसें पूर्ण प्रीति वा पतिकी मृत्युके उपरांत जगतमें अपना सत्य दरसाती हों. नही तो हम प्राचीन समय से आजतक सहस्रों वनितायें जन्म पत्री द्वारा विवाहि हुई दिखला सकते हैं कि वह कैसी पति वा कटुम्बियोंसे उत्तम बरताओ रखती थीं वा रखती हैं.

वाचकवृन्द—लो हम तुम्हे नई सभ्यता के विवाह का वर्णन सुनाते हैं कि नई सभ्यता वालोके विवाह सम्बधी कैसे २ विचार होते है. देखना कहीं हंस न पढना.

नवीन सभ्यताके एक सभासदका बिवाह विचार व निवेदन पत्र.

हमारा बहुत दिनोसे विवाह करनेका ईरादा है, लेकिन मन के योग्य नायका खोजने पर भी नही पाता. नव, दश, ग्यारा, वर्ष की तो बहुत हैं परन्तु ये ठीक नही हैं. कारण कि विवाह का प्रकृत अभाव पूर्ण नही होता साढे सत्तरहसे साढे बीस बरस की एक सुश्री अव वाहिना, दिव्य ज्ञान सम्पन्न योवना, विकार प्रसा, रुपवती प्रणय पात्रका कन्याका हमे अति शीघ्र प्रयोजन हैं कन्या आर्य्य (हिन्दु) ग्रहस्थ की, और स्वाभावकी सती हो. यदि लोगोंकी आंख बचाकर एकाधा पाप कर्म भी किया हो, वा टोला मुहल्ला के अन जान एकाधा बार भ्रौण हत्या भी कर चुकी हो तो कुछ परवाह नही वह धतव्य दोष नही है, क्योंकि (Private Crt.) आन्हरिक चरित्र किसीका नही देखा जाता. यह मिलमे काले और बकलस सें अंगरेजी कवियों ने साफ कहा है, और भारतके नये शिक्षित (नवीन सभ्य) और अगड़धत्त रिफारमरों (देश हितेषियों) की भी यह मरजी है. कि बाहरी सती होना ही ठीक है. हिन्दीके कवि शिरोमणी भारतेन्दु श्री बाबू हरिश्चन्द्र ने कहा था कि **"भीतर स्वाहा बाहर सादे"**. कन्या ब्राह्मण की नही तो सुनार, कुम्भार, कहार, कलवार के घरकी ही सही. सद चर्मकार (उच्च चमार वंश) की होने से भी बहुत हरज की बात न होगी. कारण कि जात कुछ जन्मसे नही परन्तु कर्मसे प्राचीन समय से मानी गई हैं. यदि वह अति सुन्दरी और हसते मुहंसे मुक्ता बरसाने वाली हो. तो गुण कर्म स्वभाव उत्तम होने से वह नीच जात की नही हो सकती, और छोटी जात होने पर भी संस्कार कराके काम चला लिया जायगा. सच तो योंकि ब्राह्मण, क्षत्रीयकी कन्याको तरजीह (विशेष ध्यान) दी जायगी. भारत देश बडा जल भुहा देश है. यहां तो नायिका जन्मही नही लेती, क्योंकि यहां बाल विवाह जारी है. मैं बारह वरस से खोजता हुं, और अपनी छतसे सदा दूरबीन लगाय देखताहुं. लेकिन आजतक उपयुक्त नायिका नही मिलती. इस्से मेरी अभिलाषा विधवाह से भी पूर्ण हो सक्ती है, परन्तु यदि उपर्द लिखत गुण सम्पन्न होय तो, इस लिये वारम्वार प्रार्थना मेरी उनके एजेण्ट महाशयों से है कि वह मेरे पास आवें अथवा पत्रोंद्वारा अपनी इच्छा प्रगट करें या समाचार पत्रद्वारा उसका बर्णन छपवादें, और या उसका मेरे पास फोटो भेज दें क्योंकि जन्मपत्रीके अनुसार हम गुण कर्म स्वभाव नही मानतहैं

एजेण्टों का दर्शनाभिलाषी
श्री तान कोडो किशोर महामोपाध्याय साकिन इल कोत वाडी. जिला खंडहरपूर. ईलाका गायब, प्रांत

सिरकटा मुर्दा.

जासूस! जासूस! जासूस!!!

"बाबू! बाबू!! ओ बाबूजी! बाबूजी!!!" कहकर एक सिपाही ने एक दो महले मकान के सामने खड़ा होकर पुकारा सिपाहीकी लगातार पुकार पर मकान के छतसे एक आदमी जूता खट-खटाता नीचे उतरा किवाड़ खोलकर बाहर आया तो देखता क्या है एक आदमी वर्दी लगाये हाथमें चिठ्ठी लिये खड़ा है! सिपाहीने झट हथेलीकी सलामी दागकर कोठेसे उतरे हुए बाबूको चिठ्ठी दी।

आंख मलते और जूती संभालते हुए बाबूने हाथमें चिठ्ठी ली और खोलकर पढना चाहा लेकिन अभी पौ फटता या सूरजकी अगवानी जान रातके छिटके तारे अपना मुंह छिपाकर अस्त हो गयेथे। बचे खुचे एकद्य कोने किनारे जुगनू की तरह चमकते थे. रातभर चांदनी छिड़क कर थका मांदा पूरा चांद आकाशसे नीचे उतर गयाथा.

बाबूचिठ्ठी पढनेमें असमर्थ होकर भीतर गये और पलंगके पास पहुंचकर एक जेबीलम्पकी कीलदवायी लम्पर खटके के साथ जल उठा, छतका छत लाम्प के जलतेही भकसे रोशन होगया--.

जादुगरीके इसलम्पकी रोशनी में बाबू ने चिठ्ठीपढी उसमें यह लिखाथा.

"आज सबेरे साढे चार बजे गोपालबोस लाइन के १२नंबर वाले घरमें एक वे सिरकी लाश पायी गयी है। जान पडता है, यह लाश उस मकानके मडोतिम के नौकर गोविन्द चन्द्रकी है। चिठ्ठी पढते ही तुम वहां पहुंचो और खूनीके पता लगानेकी तदवीर करो मैं भी वहां जाताहूं।।"

चिठ्ठी पढकर बाबू जल्दीमें पड़े और लोटा उठाकर नित्यकर्मको गये. जाते समय बाहरके खडे सिपाही-को-"अच्छा, जाव, चिठ्ठी पढलिया" कहकर विदा किया और वहांसे लौटकर जल्दी २ आपने मोजा बूट चढाया और धोती सरियाकर कमीज पहना-दुपट्टा गलेमें डालकर नंगे सिर हाथमें छोटीसी छड़ी लिये बाहर हुए--

सामनेसे आती हुई एक गाड़ीको ठहराकर उसीपर सवार हुए और सीधे गोपालबोस लाइनको चलनेका हुक्म दिया--

दूसरी आंच!

आज गोपालबोसलाइन के तेरह नम्बरवाले मकानमें कलकत्ता रहनेवालोंके लिये सवेरे के सूरज मानो सिरपर सनीचर लिये निकले हैं। मकान दो महला है। नीचेके दालानमें एक वेसिरकी लाश ढकी पडी है जमीन खूनसे भरी है। एक कोनेसे ऊपर जानेको सीढी लगी है। मकानमे भीतर बाहर आस पास खचाखच आदमी भरे हैं। लोगोंकी पीठ परपीठ छिलती है। लाश देखनेकी लालसा वालोंका तांता नहीं टूटता लोग एकपर एक लदे धक्का खाते चले आते हैं!

देखते २ एक सिर नंगा बंगाली हाथमें छोटीसी छड़ी फटकारता लाशके पास पहुंचा। सिरहानें पैतानें पुलीसकी वर्दी लगाये दो सिपाही खड़े थे उनमेंस एक को लाशके उपरका कपड़ा उठानेके लिये कहा। सिपाहीने कपड़ा उठा दिया.

नये आये हुए बंगाली बाबूने लाशको पांवसे देखना शुरू किया और कन्धेतक देखडाला। सिवाय सिर कटनेके और कहीं भी चोटका निशान नपाया लेकिन लाश अभी पेटके बल पडी थी फिर उलटी गयी तो पेट में एक सख्त चोटका निशान देखा गया और अतड़ियां भी बाहर हो पड़ी थीं। यह दशा देखकर पास के खडे एक बाबू साहेबने कहा- "गोविन्द चन्द्रका रंग जैसा जीतेमें था मरनेपर उससेभी काला हो गया है।"

देख भाल करते हुए बंगाली बाबूने उस आदमीसे पूछा "आप इसको जीतेपर जानते थे?"

बंगाली बाबू-"जी हां यह तो मेरा ही नौकर था जाननेकी क्या बात है.!"

बंगाली बाबू-"तो ठीक है आपही इस मकानमें रहते हैं?"

"जी हां मैं इसी मकानमें रहता हूं"

"तो आप का नाम क्या है?"

"मेरा नाम नवीन चन्द्रसेन है।"

आपका मकान?"

"मेरा मकान सिवड़ी जिलेके नलहट्टी गांवमें है।

"जबसे मेरा मुकद्दमा हाईकोर्टमें पेश हुआ करीब दो महिने बीत चुके."

"तो मुकद्दमा आपका हो चुका?"

"जीहां अभी कल्हीं तो फैसला हुआ है.

सब अदालतोंमें हारनेपर भी परमेश्वर ने इस हाई-कोर्टमें दूधका दूध और पानी का पानी कर दिया। भगवान हाईकोर्ट के जजोंकी उमर दराज करे, जिन्हों ने मुर्दा डुबते कुफको अपने इन्साफसे बचाया, लेकिन नजाने किस साइतमें डिगरी हुई कि उसके बाद आम-पर आफत ही आफत है। कल हाईकोर्टसे लोटकर गोविन्द चन्द्रने हमसे सलाह कीथी कि आज काली घाट चलकर कालीजी की पूजा करेंगे। सो सवेरा होते ही मैने कोठेसे उतरकर उसकी लाश पायी भगवानको नजाने क्या करना है!"

इतना कहते २ नवीन बाबूकी आंखें डबडबा गयीं आगे कुछ कह न सके। बाबू ने कहा आप घबराइये नहीं। धीरज धरिये। इसमें शक नहीं कि अगर आपका नौकर गोविन्दचन्द्र मारा ही गया तो वह लौट नहीं सकता लेकिन उसके मारनेवाले की जांच बखूबी की जायगी और सरकार अंगरेजी गवर्मेंट के राज्यमें इसका बदला उसे दिया जायगा"

बाबूके सम्बोधनसे नवीन बाबू बहुत संभले और आंसू पोंछकर उन्होंने कहा—

"साहब आप जानिये कि गोविन्द्रचन्द्र सा आदमी मिलना मुश्किलहै। सच पूछिये तो इसीकी करनीसे हम को अपना हक मिला है, नहीं मैं अपने जिलेकी अदा-लतसे हारनेपर कमर थामके बैठ गया था, लेकिन इसी गोविन्दचन्द्रने इस मुकद्दमे को वहांसे आगे बढाया था, और कई अदालतोंमें हारने पर भी लडनेसे मुंह नहीं फेरा और अन्तमें यहांतककी नौबत पहुंची, जिससे नसीब जगा तो यह आफत आयी कि सब कुछ मिहनत करनेपर जब फल की बारी आयी तो परमेश्वर को न देखा गया उसकी यह गति हुई!"

इतना कहते २ नवीन बाबू फिर कातर हुए। आ-वाज भारी हो आयी बंगाली बाबूने बहुत समझाया और धीरज देकर उन्हें ऊपर चलनेको कहा आप भी चारों ओर देख भाल करने लगे एक दीवार में पीछे की तरफ गली की ओर एक जंगला था, उसकी तीन लकड़ी टूटी हुई देखीं मालूम हुआ कि टूट जाने पर भी फिर सूराखमें एक ढंगसे लगा दी है। इधर उधर खो-जने पर भी सिरका पता नहीं लगा लेकिन खूनसे तर एक छूरी मिली जिसे लेकर बंगाली बाबू ऊपर गये नीचे के पुलीस सिपाहीयों से ऊपर जाते वक्त बंगाली ने कहा कि "सब लोगोंको बाहिर निकालो और कहो अपना २ रास्तालें. अब यहां तमाशा नहीं है!"

सब लोग बाहर किये गये। बंगालीने ऊपर जाकर नवीन बाबू को छुरी दिखाई-उन्होंने देखकर कहा—"यह छूरी तो हमारी ही है। हमेशा हमारे पास रहती थी। न मालूम नीचे कब और कैसे गयी और इसमें खून कैसे लगा! आपने इसे कहां पाया?"

बंगाली बाबूने कहा "मैंने नीचे के मकानमें इसे पड़ा पाया है, लेकिन आपको यह खबर नहीं कि नीचे क्यों गयी? यह बड़े आश्चर्य की बात है। अच्छा अब आप यह देख लिजिये, कि आपकी और भी कोई चीज नीचे तो नहीं गयी है—"

तीसरी जांच।

जिस घरमें लाश पड़ी थी उसको अच्छी तरह बंगाली बाबू ने देख लिया था। अब ऊपर आकर नवीन बाबू की चीज सहेजने के बहाने यहां की भी तलाशी लेने लगे। सब देख लेने पर जाना गया कि इस घर की सब चीजे ज्योंकि त्यों हैं उस छूरी के सिवाय कोई चीज इधर उधर नहीं हुई है। गरज कि सब नीचे ऊपर मिलके कोई चीज नवीन बाबू की नहीं गयी केवल गोविन्दचन्द्रके कपडे नहीं मिले जिन्हें पहन कर वह कचहरी जाया करता था।

बाबू ने नवीन चन्द्रसे पूछा कि "आप जिन से मुकद्दमा लड़ते थे वह कहां हैं? उनका क्या नाम है? उन्होंने आपका यह डेरा देखा है या नहीं?

नवीन बाबू ने कहा—"वह तो हमारे भाई ही हैं केवल जमीन के हकका झगड़ा था. वह हमको हक से बाहर किये देते थे और कर ही चुके थे अदालतों को भी उन्होंने रुपये के जोरसे अन्धा कर दिया था लेकिन नसीबे के जोर और गोविन्दचन्द्र की कायनी से हम अपन हकको पहुंचे थे। वह यहीं कहीं हरे मे ठहरे हैं मैं ने उनका मकान नहीं देखा गोविन्दचन्द्रको उनका डेरा मालूम था. भाई प्रवीण चन्द्र अलबत्ते यहां एकबार आये थे। लेकिन पहले आप अपना पता बतलाइये मैंने अबतक आपको नही पहचाना। आपने जिस वक्त लोगोंको बाहर करने के लिये सिपाहीयों को हुक्म दिया था उसी वक्त हमने आपको समझा था कि आप पुलीस के आदमी हैं लेकिन ठीक मैं नही जानता आप कौन हैं क्योंकि आपको देखते मैं एक मामुली पोशाक मैं देखता हूं कोई वर्दी आपके बदन पर नहीं है.

बंगाली बाबू ने नवीन चन्द्रको अपना कमीज उठा कर कमरसे एक चीज दिखलायी जिस से वह चौंक पड़े उन्होंने बाबू के कमर मैं एक चांदी का तमगा देखा जिस पर डिटेक्टिव पुलिस (गुप्त पुलीस) लिखा हुआ था. नवीन बाबू ने सावधान हो कर कहा. अगर बिना जाने बूझे अबतक मुझसे कुछ कुसूर हुआ हो तो मुआफ करना—"

फिर नवीन बाबू ने उनका नाम पूछा उन्होंने अपना नाम वामा चरन बनर्जी बतलाया और कहा इस लाश के खूनीका पता लगाने को मैं मुकर्रर हूं घबराना मत आपको किसी तरह की तकलीफ न होगी.

पाठक! यहां जरा मामिला पेचदार है। समझके चक्कर से काम लेना पड़ेगा आप लोग मुकद्दमे का ओर छोर तो पाही गये हैं इतना पढ़ कर आप तो समझते हैं कि सिपड़ी जिलेके रहने वाले दो भाई आपस में जमीन की तकरार का फैसला कराने हाईकोर्ट कलकत्ते को आये हैं. मुकदमा भी फैसल हो चुका उसके दूसरे ही दिन जिस भाई की जीत हुई उसीके घरमें यह बे सिर की लाश मिली है। उसके मुख्य कारिन्दा गोविन्दचन्द्र का पता नहीं, लाश उसीकी अब तक कही जाती है—लेकिन खून करने वाला कौन है इसका पता अबतक नहीं लगा है, कहो खून करने वाला वही घरमें था नवीन बाबू हैं या कोई दुसरा?

बहुतसे पढ़ने वाले हम को यहां कोसेंगे और कहेंगे लाश मौजूद है लाशका पहचानने वाला मौजूद है, बदमाश और खूनीयों से भी भरा कलकत्ता शहर मौजूद है—मरने वाले की खोज करने वाली पुलीस मौजूद है तुम्हें बीचमें बेजरह सकने का क्या काम है किस्सा कहते चलो। हम कान खोले बैठे हैं ये फजूल बीचमें बखेड़ा खड़ा करनेसे क्या मतलब, खूनी कौन है यह हमसे पूछने का क्या काम है?

लेकिन प्यारे पाठको! ऐसा नहीं पता लगाने को तो पुलीस है. ही डिटेक्टिव पुलीस के मशहूर दारोगा वामा चरन बनर्जी सिर खोले छड़ी फटकारते पहुंच ही गये है खूनसे भी गी हुरी उनको हाथ लग चुकी है। अब तो जैसा वह करेंगे करेंगे और हम अपना किस्सा आपको कहते ही चलेंगे-लेकिन सोचिये तो आइये हम आपमें भी दो दो बातें हो लें हरज क्या है?

चौथी जांच।
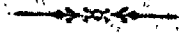
सोचिये तो सही इस खूनसे नवीन बाबू का कैसा कुछ लगाव हैं। इसमें नवीन बाबु खूनी है या नहीं यह हम पहले नहीं बतलाना चाहते इसका पता लगाने को हमारे मशहूर डिटेक्टिव इन्स्पेक्टर बाबू बामाचरन बनर्जी तैयार हैं, वह आप लोगोंको आगे पता बतलावेंगे लेकिन नवीन बाबू की दशा तो देखिये इस तेरह नम्बर के मकानमें लाश पड़ी है इसके रहने वाले केवल दो आदमी नवीन चन्द्र और गोविन्दचन्द्र तीसरे किसीका वहां गुजारा नहीं है। दोनो ही भीतर सोते थे शाम को भीतर से किवाड़ बन्द करके ऊपर सोना नवीन बाबू ने बयान किया-भीतर किसी तीसरे के आने का कोई सुबुत नहीं है.

और उसी नवीन बाबू की छुरी से यह खून हुआ है साफ मालूम होता है—ऐसी हालतमें भी अगर आप किसी ना समझे तब इन्स्पेक्टर की तरह नवीन बाबूको

श्रीधर्मामृत आडत (एजन्सी)

कि हमने सर्व साधारण के सुभीते के लिये यह एजन्सी खोल रक्खी है कि यदि जिस्को जो वस्तु मंगना हो वह उस वस्तुका नाम और अपना पूरा पता एक कार्डपर लिखकर नीचेके पतेपर प्रेरित करें तो घरबैठे विना तरद्दुद निम्न लिखित देशी और विलायती नयी चुहचुहाती हुई चीजें अर्थात नये डालका टपका माल जो विलायत आदि अन्य २ देशों से विक्रयार्थ बम्बई में आते हैं उचित मूल्य पर प्राप्त करसक्ते हैं. कुछ वस्तुओंका नाम संक्षेपसे नीचे लिखते हैं कि जो हमारी एजन्सी से मिलसक्ती हैं. ऊनी रेशमी तथा सूती कपडे हररंग और भिन्न २ चौडाई की साडियां खास बम्बई और चीन की बनीहुई जिनके किनारोंपर सुन्दर मनहरण रेशमी वेलबूटे बने हुए हैं. बाजा अंगरेजी और हिंदुस्तानी जैसे हारमोनियम, फोनोग्राफ, डलसेटना, बीना सितार इत्यादि; घडियां हरएक प्रकार की जैसे टायमपीस, जेबघडी और क्लाक आदि; हरएक रोगोंकी परीक्षित औषधियां जो अच्छे २ आयर्वेदज्ञ वैद्योंकी परीक्षामें अच्छी उतरी हैं; हिंदी, गुजराती, मरहठी, संस्कृत तथा अङ्गरेजी भाषाकी पुस्तकें जो अंगरेजी स्कूलों और संस्कृत शालाओं तथा कालिजों में जारी हैं. इञ्जिनियरी, फोटोग्राफी तथा नकशा निगारी की सब सामग्री, एवं कमख्वाब बाफ्त शाल दूशाल सादे और कामदार हर रंग और भिन्न २ प्रकारके गोटे पट्ठे सलमा सितारा, मोजा बनियाइन सूती और ऊनी टोपियां चौगसिया किश्तीनुमा मखमली ऊनी और कामदार प्रत्येक भांतिकी इसके अतिरिक्त राजा रविवर्म्मा के बनाये हुए अनेक देवी देवताओं के मनोहर चित्र—रम्भा, तिलोत्तमा, मैनका,शकुन्तलादि अप्सराओं की मनहरण अद्भुत तसवीरें जिसे देखकर टकटकी बंधजाय; रक्तशुद्ध करनेवाली बलप्रदायनी; विद्युतीय मुद्रिकायें अर्थात विजली की शक्ति डालीहुई अंगुठियां तथा चांदी सोनेके आभूषण जडाऊ और सादे जनाने मर्दाने, हरएक प्रकारके लिखने के कागज, कलम, स्याही, चाकू, कैंची, उस्तरे. और प्रेस सम्बंधी सर्व सामग्री, दर्शनार्थ मंदिरों में जाने के लिये सूती उपानह (जूती) रब्बर स्टाम्प की मोहरें इत्यादि वस्तुयें उचित कमीशन पर पत्र पातेही वेल्युपेबिल से भेजी जाती हैं. दश रुपये से अधिकका सामान मँगानेवालेको उचित है कि आधा मूल्य निम्नलिखित पतेपर प्रथम भेजे.

पता:—

मयानेजर—"सदाशीव बाबाजी" प्रिंटींग प्रेस

ठाकुद्वार पालवारोड पोष्ट मारकीट बम्बई.

श्री धर्मामृत
धर्म सार

श्रीधम्मीमृत की संक्षेप नियमावली।

(१) इस पत्रका मूल्य, नगर और बाहर सर्वत्र डाकव्यय सहत अग्रिम वार्षिक केवल १॥ रु. है. गर्वमेन्ट तथा राजा महाराजाओंसे उनके आदरार्थ ५ रु. है.
(२) पांच श्रीधम्मीमृत एक साथ खरीदने वालों को एक प्राति मुफ्त अर्थात जो पांच ग्राहक हो कर ७॥ रु. दाम भेज देंगे उनको एक पाकिट में ६ श्रीधम्मीमृत की पुस्तकें हर मास की पाहिली ता० को मिला करेंगी.
(३) पत्रके उत्तर चाहने वाले महाशय, जवाबी कार्ड अथवा टिकट भेज, अन्येथा पत्रोत्तर न दिया जायगा.
(४) नमूने की प्रथम प्राति पहुंचने पर यदि ग्राहक होना स्वीकार हो, तो मूल्य ता० १ तक भेज देना चाहिये, यदि ग्राहक होने की इच्छा न हो तो कार्ड द्वारा सूचित करना पडेगा, और नमुने की पुस्तक पर आध आनेका टिकट लगा वापसकर देनी चाहिये, नहीं तो ग्राहक श्रेणी में समझे जा येंगे. (५) विज्ञापनकी छप वाई एक मासके लिये प्राति पंक्ति दो आना तीन मासके लिये एक आना, और छ मास या इस्से अधिक समय के लिये आध आना है. और छपे हुये विज्ञापनों की वितरण कराई ५ रु. लिया जायेगा

श्रीधम्मीमृत सम्बन्धी सर्व चिट्ठी, पत्र, व मनीआर्डर और समाचारपत्र नीचे पत्तेपर आने चाहिये

भारत भाईयों का शुभचिंतक — अन्ना बाबाजी म्यानेजर
गो. पं. जगत नारायण शर्म्मा — चंदा वाडी पोष्ट गिरगाम—मुम्बई.

श्रीधम्मीमृत पुस्तकालय की पुस्तकें

(१) गोरक्षाप्रकाश—गऊ मातके बारेमें विदेशियोंके एक सहस्त्र प्रश्नोका उत्तर, सर्वगोभक्तों को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये. मूल्य ८ आना (२) अकबर गोरक्षा न्यायनाटक इसमें अकबर बादशाहने किस रीतिसे गोरक्षा कीथी, यह नाटकी चालसे कथन किया गया, है, इसमें बहुत, करुणामय नाना प्रकारके राग भी हैं. मूल्य १२ आना (३) अकबर बीरबल का समागम. इसमें बीरबलकी चतुराई के दोहे भरे हैं. देखने के योग्य पुस्तक है. मूल्य १२ आना. (४) ईसू परीक्षा. इसमें ईसामसीह की परीक्षा की बाते हैं. प्रश्न करते ही ईसाई दांत दबाते भाग जातें हैं मूल्य १ आना. (५) ईसाई मतपरीक्षा. इसमें ईसाई धर्म के ढोलकी पोल खोली गई है. पढकर देखलो मूल्य १ आना. (६) हिंदुओंकावर्तमानीन धर्म अर्थात् भोलेभाले हिन्दु भाई किस रीतिसे विधर्मियों के फंदे में फंस जाते हैं. मूल्य १ आना (७) गाजीमियांकी पूजा. हिंदु कबर पूजियों को यह क्या सूझा ? पढकर देखलो मूल्य आधा आना (८) गउकी नालिश. मूल्य आध आना. (९) गोपुकार. मूल्य आध आना (१०) गोपुकारचालीसी मूल्य आध आना. (११) गोविलाप ? मूल्य आध आना. (१२) गोदान व्यवस्था. मूल्य आध आना. (१३) गोगोहार. मू० आध आना. (१४) काऊपोटेक्सन. अर्थात् एक अंगरेज की गोभक्ति मू० आध आना. (१५) गोरक्षापर बादशाहाके फतवे (व्यवस्था) मू० आध आना. (१६) गोहितकारी भजन. मू० आधा आना. (१८) भारत डिमडिमा नाटक. एकबार पढोगे तो भारतकी क्या दशा है जान लोगे मू. चार आन.

श्री धर्म्मामृत पत्र ।

अमृतं शिशिरे वन्हिर, अमृतं बाल भाषणम् ।
अमृतं राज संमानो, धर्म्मोहि परमामृतम् ॥

वर्ष २ [मुम्बई मिथुनेके ज्येष्ठ मास सम्वत् १९५६ सन् १८९९ जून] अंक ३ .

भारतोन्नतीका साधन सद्धर्मही है.

(गतांकसे आगे)

आर्य्योंकी सभ्यता.

कितने शोककी बात है, कि आजकलके नव शिक्षक विदेशी विद्या पढकर विदेशीयोंकी सभ्यताकी ओर झुकते चले जाते हैं, पर यादि यह अपने बडोंकी सभ्यताकी ओर ध्यान देते तो इन को कुछ विदित होता कि, हमारे पुर्व पुरुषा ? कैसे सभ्य थे. देखो विदेशी इस बारेमें क्या लिखते हैं.

(७६)संस्कृत तथा अंग्रेजी विद्याके पूर्ण विद्वान निरणे करते हैं कि " निश्चय यूरोप वालोंको आर्योंसे ही सभ्यता प्राप्त हुई है. इस सिवा **विवलोनिया मिसर, युनान रुम** इत्यादिकी फिलासफी और धार्भिक पुस्तकोंके पढ़नेसे पाया जाता हैं कि आर्योंका धर्म धीमी २ लहरोंकी भांती पश्चिम की ओर बेह कर आया है. यदि आप **पीथोगौरस** और **सुकरात, हुमर** और **जर्नोयु, हसीओड़, फलातूं, अरस्तू, स्त्रिवला** और **वरोस्सर** और **वरजल** इत्यादियोंके वचनों, और ग्रंथों, तथा धर्मके विषेको जिज्ञासु होकर देखोगे, और **व्यास, कंपल, गौतम, पातंजली, जैमनी, नारद, पाणिनी, मरीची** इत्यादि आर्य्य फलासफरोंके शास्त्रोंके मतको मिलाओगे, तो सर्वका भीतरी मिलाप पाकर आप लोगोंको बड़ा आश्चर्य विदित होगा; और दृढ़ निश्चय होजायेगा कि आर्य्योंके पुरातन फिलासफरों (तत्ववेत्ताओं) का मत धीरे २ पश्चम वालोंमें फैल गया है. बिना इसके और कोई बात हमारी समझमें नही आती, कि प्राचीन आर्य लोग भारतसे आनकर मिसरमें बसे, और उनसे सब प्राचीन फिलासफरों अर्थात् **मूसासे** लेकर पलेटू तक ने बुद्धि और ज्ञान प्राप्त किया है, देखो (भारत त्रिकाल दशा का पना ७)

(७७)**हिनरी वोरज** साहबने अपने इतिहासमें लिखा है कि पूर्व समयमें आर्य्योंकी सभ्यता सारी पृथ्वीपर किसी जातीसे, न्यून नथी. सर्व से शरोमणी संस्कृत भाषाके विद्वान फिलास्फर, न्याय गणित भूगोल खगोल इत्यादि जुदी २ विद्याओंमें अपने समान अन्य नही रखतेथे. यह देश अपनी विद्या, तथा कला कौशल वा वनज व्यौपारमें पृथ्वीकी सर्व जातियों मेंसे प्रथम नम्बर परथे. इस देशकी सभ्यताको कोई देश नही पहुंचता था. युनानने इसी देशके विद्वानोसे विद्याका पाठ प्राप्त कियाथा. **अरस्तू**, अफलातूं इसी खलियानके बालथे. प्रत्येक देश और जाती इसी देशकी भाषा और विद्यासे सभ्य हुये. देखो (बरेली दवदवा केसरी का पत्रा ५ पुस्तक ११ नम्बर ८ सन् १८८८ ई)

सर्व विद्याओंका भांडार भारत.

(७८)सर्व इतिहास लिखने वालों की इस विषयमें सम्मति है, कि सर्व विद्यायें प्रथम भारतवर्षमेंही थीं और यहींसे

युनान, वा मिसर वालोंने, और इनसे यूरोपने प्राप्तकी, इसके सिवा ऐसाभी पाया जाता है कि भारतसे कुछ विद्वान सिकंदर बादशाह लेगया था.. सर्व विद्याओंके तोफा (सौगात) और भांती २ के पेशे वा कारीगरीयां पुराणों तथा ब्राह्मण ग्रंथों, और वेदोंमें भरी पडी हैं. परन्तु उनकी संस्कृत भाषा कठिन वा बारीक है, इसके सिवा बहुतसे खजाने विद्याओंके नाश भी होगये हैं, और रहे सहे जो कुछ हैं, वह बिगड़े मिलते हैं उनका समझना कठन है. देखो (तारीख नादरुल असर पन्ना २ से ४ तक स १८६३ ई)

(७९)एसीभी वार्ता है कि (देश) सता में जो मनुष्योंका एक झुंड आनकर रहाथा, वह भारतीय जनोकी शकल धारण करके रहनेके लिये गयाथा. देखो(तारीख चीन स १८५२ ई कलकत्ता पन्ना १० भाग दूसरा)

(८०)पादरी वार्ड साहब कहते हैं कि "कोई विद्वान मनुष्य इस बातको अस्वीकार नही करेगा कि, पुरातन आर्योंकी विद्या, सभ्यता माननीय और उपमाके योग नही है. उनकी भांत २ की, जुदी २ विद्याओंके बारेमें लेख प्रकट करनेसे विदित होता है कि, भांत २ की विद्याओं, तथा कला कौशलका, इनमें प्रचारथा. जिस ढंगसे उन्होने उन जुदा २ विषयोंको लिखा है उस्से विदित होता है कि, पुरातन समय यह किसी भांती वा देशसे किसीबातमें न्यून नथे. जितना ही विशेष ध्यानसे उनकी फिलासफी वा रीति और बिवस्थाओंका विचार किया जाये, उतना ही विशेष खोज करने वालेको निश्चय होगा कि, उनके लिखने वालोंकी बुद्धि पुष्कल ही तीक्षण और उत्तमथी, देखो (पादरी वार्ड साहबकी पुस्तक और त्रिकाल दशा अंग्रेजी स १८८२ ई. को)

(८१)विदित होकि प्रथम इसी देशके मनुष्योंने विद्या प्राप्तकीथी, और इसकी वृद्धि और सुधारमें बहुत यत्न कियाथा. इसके उपरान्त यहांसे इरान वालोंनें प्राप्तकी और ईरानसे रुम वालोंने, और उनसे इंग्लैंड वालोंने प्राप्तकी. यहांके निवासी भूगोल, वा खगोल, तथा व्याकरण, गणित, फलित, न्याय विशेषक, नाद तथा युद्ध इत्यादि विद्याओं में बडे योग्य थे. और यहां की स्त्रियांभी बड़ी ही विद्वान होती थीं. इमारत बनानेमेंभी यह प्रथम श्रेणीके थे. कारण कि पुरातन स्थानोंके देखनेसे, जैसे कि दौलताबादका गढ़, और आबू, वा दक्षण देशके मंदिरोंके अवलोकन करनेसे, यह उनकी कारीगिरीके साक्षी हो रहे हैं. और व्योपार वनजभी उस समयके अनुसार उपमाके योग्यथा. ऋग्वेद के प्रथम सकतसे ही सिद्ध होता है, कि प्रथम समयमें यहांके व्यौपारी, जहाज मेंभी सवार होतेथे. पर शोकाकि अब भारतीय जनो की बुद्धि वृद्धिका सूर्य अस्त हुआ. और अविद्या वा निरधनताकी अंधियारेने इनको ग्रसलिया. और यहां के व्यौपार कला कौशलने यूरोप का जा मार्ग लिया, तथा संस्कृत जो इनकी पुरातन विद्याथी, उसको जरमन वालोंने अपने भागमे लेलिया. देखो (रसाला हिन्दु बांधव, पन्ना ६–२१ मार्च स १८८६ भाग दूसरा नम्बर तीसरा)

(८२)जो लोग आर्य्योंसे ऐसे इतिहासकी इच्छा रखते हैं, जैसे कि युनान वा रुमसे, वह बड़ी भारी भूल करते हैं. क्योंकि आर्योंकी टेव, और लोगोंसे जुदा है, उनकी फिलासफी, उनकी कलाकौशल विद्या, सबसे प्रथम उत्पन्न हुई २ है, उसके अवभी (जनीलेटी) चिन्ह पाय जाते हैं, वस यह ही वर्तमान समयमें इनके इतिहास हो सकते हैं. देखो (इतिहास राजस्थान प्रथम भाग पन्ना ९ स १८२९ ई)

(८३) पादरी फोरमन साहब लिखते हैं. कि " दो सहस्र वर्षका समय हुआ है कि, इंग्लिस्थानके निवासी मूर्तियोंको पूजतेथे, और उनकी प्रसन्नताके लिये, अपने शत्रुओंकी खोपड़ियोंमें मद (शराब) पीतेथे. परन्तु उन दिनोंमें भारतके निवासी विद्या बुद्धिकी उच्च श्रेणीको प्राप्त हुये हुयेथे. और शारीरक, वा आत्मिक, तथा जीव ईश्वरके बारेमें उत्तमतासे चर्चा किया करतेथे. देखो (तेग व सपर ईस्वी तीसरा भाग पन्ना ११५ स १८७५ ईका)

(८४)मिष्टर विलियम जोंनस साहब कहते हैं कि, आर्य्यावर्तके निवासी सर्व विद्याओंमें निपुणथे और प्रत्येक स्थानोंसे वीरथे, देखो (रसाला मफादुल हयात पन्ना)

(८५) मिष्टर वाइज साहब कहते हैं कि, युनानका एक बडा विद्वान साक्षी (गवाही) देता है कि, संसारमें सर्व विद्यायें, आर्य्यवर्तसे फैली हैं. देखो (तारीख वैदक पन्ना ४ से ६ तक)

(८६) मिष्टर टामसन ऐम वाईज साहब कहते हैं कि, यूरोपको अंधकारसे निकलकर, प्रकाशमें आनेका कारण आर्य्यवर्तकी विद्या है. देखो (तारीख वैदक पन्ना ३३)

(८७) एक पादरी महाशय कहते हैं कि, ईरान, अरब और सर्व सृष्टिके देशोंमें भ्रमण करते, हुये ! जुदा २ देशोंके निवासी, अपने २ जन्म भूमिको चाहे भूल जावें. तथा उनके शरीरका रंग काला वा गोरा होजाये, और चाहे बहुत बडी २ राज्यधानी , जो इन लोगोंने स्थापन की थीं नाश होजावें, चाहे पुराने नगरोंके स्थानोपर नैय नगर बन जावें. तिसपरभी जन्म भूमीके सर्व चिन्होका नाश होना कठन है. देखो (वाई वल इनदी ऐन्डिया छापा नेंयो यारक)

(८८) प्रसिद्ध इतिहासक बरगस साहब, जो मिसरके इतिहास लिखनेमें सबसे विशेष विश्वासी और बहुत पुराने समाचार जानने वाले हैं, वह कहते हैं कि "प्राचीन मिसरी लोगोंने अर्थात् पुरातन मिसरीयोंकी प्रथम उत्पत्ति आर्यवर्त देश है. देखो (भारत निकाल दंशा, पन्ना ४ स १८८२ ई मदरास)

(८९) मिष्टर पीयोकाक साइब कहते हैं कि, पुरातन यूनान क्या है, केवल पुरातन आर्यवर्तही है. देखो (पुस्तक ऐंडिया इन गरीस)

(९०) मोलवी अलताफ हुसेन साहब कहते हैं कि मिसरकी वृद्धि, आर्यवर्त और ईरानके सिवा, सर्व संसारसे पुरानी मानी गई है. जैसे कि युनान मिसरकी किरणसे प्रकाश वालां हुआथा. देखो (हांशीयां मदो जुजर इसलाम)

(९१) चार्लस फनक साहब बहादुरकहते हैं कि, जिस समय फीसा गोरस पुरातन विद्वानने विद्यारुपी धन मिसर, तथा भारत ईरानसे प्राप्त किया, और अफलातुन विद्वान दूसरेने, मिसरकी यात्रा ग्रहणकी. उस समयमें पुस्तकों का अकिठा करना मुख्य कर्तव्य था. और उस समय जिसके पास दसपांच पुस्तकेंभी अकिठी होतीथी, वह उनको योग्यतामें पहुंचाने वाला धन समझताथा, तिसपरभी इनको बड़ा घमंड है, कि पुरातन लोग विद्याके पूरे विद्वान थे. देखो (तालिमुल नफस भाग दूसरा पन्ना ४-५ स ५९ ई छपा अलहाबादका)

(९२) ईरान देशके बारेमें जुगराफिया आलममें लिखा है कि यहांके मन्दिरोंके ऐसे चिन्ह पाये जाते है कि जिनसे विदित होता है कि पुरातन समयमें यहांके लोगोका धर्म आर्योंके धर्मकी भांताथा. देखो (जुगराफिया आलम पन्ना १५ स १८६४)

(९३) प्रोफेसर मेक्स मूलर साहब कहते हैं कि " पारसी लोगभी आर्य्यवर्तसे उठकर ईरानमें आकर बसेथे. देखो (साईंस आफदी लेंगविज पन्ना २८८

(९४) बादशाह दारा कहताथा कि मैं आर्य हुं, और आर्य्यों कि वंशसे हुं, कारणके मेरे परदादेका नाम डेरियारमीना था. देखो (सायंस आफदी लेंगविज पन्ना २८)

(९५) एक मुसलमान भाई लिखता है कि "यूरोपीयन विद्वान बोप साहब, वा बरनुफ साहब, तथा शाली गली साहबकी पुस्तकोंसे ईरान (फारस) के समाचारोंसे विदित होता है. कि उन्होने संस्कृत और ज़न्द भाषाके हेल मेल होनेसे सिद्ध किया है कि, आर्यों और ईरानी, दोनोके पुरातन राजा एक ही वंशके थे. देखो (तारीख मुतकदमीन पन्ना ४८ स १८७९ ई लाहोर)

(९६) फिर वह ही मुसलमान भाई कहता है कि बुद्धिसे जाना जाता है कि, सभ्यताका ढंग मिसरीयोंने, आर्योंसे प्राप्त किया हो, कारण कि आर्यों, और मिसरीयोंकी बहुदा रीति नीती मिलती है. देखो (तवारीख मुत्तकदमीन पन्ना ५ भाग दूसरा स १८७९ ई. लाहोर)

(९७) मिष्टर हिरन साहब कहते हैं कि, मिसर वालोंमें तो अबभी बहुतसे ढंग आर्योंके विदित होते हैं. क्योंकि इन दोनो जातियोंमें बहुत रीति नीती मिलती हैं. देखो (ऐशियाके कोमोंकी तारीख पुस्तक ३ पन्ना ४११)

आर्योंका बनज, व्यौपार

(९८)डाक्टर **परीड योक्स** साहब कहते हैं कि, यह बात प्रसिद्ध है कि आर्यवर्तका ही व्यौपार, उन लोगोंको जो मिसर देशमें आकर व्यौपार करतेथे, मालामाल करताथा. और भारत वर्षही उनके बडे खजानोका सोता (चश्मा) है. जिसको हजर्त सुलेमानने अकीदा कियाथा. और उसकी उनुग्रहसे ही **बेतल-मुक्दस** बनायाथा ” देखो (मिसरकी तारीख प्रमथखंड पर्व तीसरा पन्ना३३से ३४ तक स १८७०ई)

(९९)पूर्व समयमें भारत और मडीटरींन समुदरके बंदर गाहों केबीच व्यौपार होताथा. यद्यपि टीन और भारतके अन्य व्यौपारकी वस्तुओंके संस्कृत नामसे, **हमर** जानकारथा, और भारतकी उत्पन्न का वर्णन तौरेतमें आया है, कि जिसकी एक बडी फहारिस्त (टीप) बनाई गईथी. देखो (तारीख मिसर पन्ना १२४)

(१००) **बलतूस** निवासी **जीका त्यूस**, यूनानी इतिहास का लेखिक, जो ईसा से ५४९ वर्ष प्रथम हुआ है वह अपनी पुस्तकमें, भारत वर्षका स्पष्ट २ वर्णन करता है. और विद्वान **तैयास** नामी जो ईसा से ४०१ वर्ष प्रथम इस ओर आकर ईरानमें रहाथा. वह भारतकी व्यौपारी वस्तुओंका अर्थात् रंगो वा कपड़ों, और वानरों तथा सुग्गों (तोतों) आदि की खबर देता है. देखो (तारीख मिसर पन्ना १२४)

(१०१)डाक्टर **लटेनज** साहब ने जो लेक्चर (व्याख्यान) मुम्बई में दियाथा उसमें उन्होने कहा था कि जितनी विद्यायें आर्यावर्त, यूरोपको सिखला सकता है उतनी विद्यायें यूरोप, आर्यवर्त को नही सिखला सकता. इस समय आर्यावर्त केवल यूरोपसे वे मजेकी वस्तुयें वा स्थूल पदार्थ अर्थात् **फेजीकल सायंस** (पदार्थ विद्या) जो सीखाता है. इसका कारण यह है कि यद्यपि पुरानी संस्कृतकी पुस्तकों में यह विद्या बहुत पूर्णतासे लिखी हुई हैं. परन्तु उनके पढने पढाने वाले, आजकल बहुत न्यून हैं. तडत विद्या आर्थत् इलेक्ट्री सीटी. और आकर्षण (लोह चमक) विद्या अर्थात् मिगनास्टमी. शब्द विद्या(अयुकोस्टकस) वायु विद्या (मिटाराजोजी) जल विद्या (हड स्टाटिस्क) रसायन विद्या (कमिस्टरी) इत्यादि विद्याये संस्कृत ग्रथोंमें उत्तमतासे लिखा हुई हैं. दूसरे अबतक यूरोप रसायन शास्त्र केवल ६७ तक के तत्त्व जानता है. परन्तु संस्कृतकी पुस्तकों मे २०० सौ पर्यन्त तत्त्व लिखे हैं.३ यूरोप में अबतक धर्म फिलासफी सम्बंधी, और पदार्थ कारण, वा वर्णन, में बहुत ही न्यून वृद्धि हुई है. इस लिय हम आशा करते हैं कि, जैसी संस्कृत में वृद्धि होती जायेगी, वैसीही आगे आने वाले समयमें, यूरोप वाले उर्द्ध लिखत फिलासफी को आर्यवर्तसे सीखनेका यत्न करेंगे. हमारी समझमें यूरोपियन लोगों के यत्नसे ही संस्कृत की बड़ी वृद्धि होगी क्यों कि जब तक संस्कृतकी वृद्धि न होगी, तबतक उर्द्ध लिखत विद्यायें, हम संस्कृत पुस्तकोंसे किस प्रकार सिख सकते हैं. देखो (भारत सुदशा प्रवर्तक स १८८७ ई. फर्रुखाबाद)

ब्राह्मणोंकी बडाई

(१०२)पादरी **डबे** साहब कहते हैं कि, पूर्व समयके ब्राह्मणोमें, न्याय, मनुष्यात्त्व, सत्यता, दया, निस्पृह, गम्भीरता, यह सर्वोपमायें उनमें पाई जाती थी. और वह अपनी विद्याओं द्वारा औरों को भी अपने सरीखा गुणवान बनालेतेथे. इस कारणसे आर्योमें न्यूनसे न्यून उनके कथन में वोही प्रितिके नियम पाये जाते हैं. जो यूरोपियन में हैं. और भारतकी स्वर्ण मई भूमिसेही सर्व प्राणी मात्रकी उत्पत्ति हुई है, इसी कारणसे पश्चिम के बहुत दुर तक के देश निवासीयोंमें आर्योंके उत्तम नियम वा विद्या और धर्मका असर बाकी है ” देखो (बाईबल इन ऐण्डिया अंग्रेजी)

(१०३)**देयो** नामक एक यूनानी लेखिक (जिसने सिकंदरका इतिहास यूनानी में लिखा है) कहता है कि, उस समय आर्य्यों में एक मनुष्यभी झूठ बोलने वाला देखने में नही आया. यद्यपि यह लेख अचम्भेका लगेगा परन्तु चीन देश निवासी **लोईनथान नामी** जिसको लगभग १२०० वर्ष के हुये हैं. वह विहार प्रांतमें तीर्थ यात्राको आयाथा, यह बड़ा बुद्धिमान था. इसने पंदरा

वर्ष इस देशमें रहकर संस्कृतको पढा था, तथा कुछ २ वेदोंकोभी सिखा था, और इसने अपने धर्मकी पुस्तकें भी लिखा है, यहभी उर्द्ध लिखत वाक्यकी साक्षी देता है. इनके सिवा एक फरासीसी लेखिकभी इस कथन की साक्षी देता है कि " आर्यावर्त के पुरातन लोग बडे सत्यवक्ता, बुद्धिमान, बीर, और परमेश्वरके खोजी थे, और विद्या वृद्धि में ये एकही थे.

(१०४) कुछ ही समय बीता है कि, भारत निवासी विद्या, वृद्धि तथा मिलन सारी वा मान, करने वाले, तथा बीर, और धनवान, तथा पून्यनिय, उस समयके यह ऐकही थे. और छोटे बडे राज्य सत्ताके प्रवंधकी सुगंध महकती थी. न्याय में यह मित्र शत्रु, और अपने पराय, तथा धनवान वा निर्धन को एकही दृष्टिसे देखते थे, व्योपार और कलाकौशलके कार्योंमें अंतःकरण से यत्न किया करते थे. इनकी दरबारोंमें सिवाय विद्वान बुद्धिमानोंके मूर्खों और झूठी प्रशंसा करने वाले कदापि पैठने नही पातेथे. सर्व कार्योंकी वृद्धि और प्रचार में, विद्या बुद्धिको मुख्य समझतेथे, यहांतक के उस समयमें इनके तेजका प्रकाश चहुं ओर दीपमान हो रहाथा. कि जिस्से अन्य देशिय राजों महाराजोंओंकी आंखें झपक जातीथीं, जैसेकि **स्लोकस** बादशाहने अपनी कन्याका विवाह महाराजा चन्दर गुप्तके साथ, और नौशेरवाने अपनी कन्याका विवाह महाराणा उदय पूरके संग कर दिया था.

आर्य्यवर्तकी महमा

—०-०-०—

(१०५) यह वही आर्य्यावर्त है कि जिसके देखनेके लिये सर्व विदेदेशीय लोग ललचाचाया करते थे, यह वह ही भारत खंड है, कि जिसके वैद्य कभी खलीफा **हारोंरशीद** की चकित्सा किया करतेथे, यह वोही रत्नोत्पन्न भूमी है, कि जिसके एक रत्नको सिकन्दर बादशाह बड़े सन्मान के साथ अपने देशको लेगया था. यह वोही कलाकौशल देश है कि जहांका शतरंज खेल बजुरजमेहरने ले जाकर नौशेरवांको भेंट किया था. यह वही देश है कि जिसमेंसे ९६ हजार मन सोना और अनगणित रत्न जवार, हिरे आदि अलाओदीन लेगया था. और अबभी यह वही देश है कि जो अपनी नित्यकी अवश्यकीय वस्तुओंके लिये दूसरोंका भिक्षुक बन रहा है. इस देशके निवासी आज ऐसी घोर निद्रामें पड़े हैं, किसको भी यह सुध नही है कि, हमारे बड़ोंका संचे किया हुआ धन कहां गिया, और कहां जा रहा है, देखो (हिन्दु बांधव पत्रा ६४ मार्च स १८८६ई)

(१०६) मस्टरटी ब्राईज ऐम. डी. साहब कहते हैं कि भारतीय धन, तथा बल, और चतुराईने सिकन्दर बादशाह के हृदय पर छाप लगादी थी, कि अर्थात् सिकन्दरको अपनी सेनासे यह कहना पड़ा था, कि अब हम उस प्रसिद्ध देश (गोल्ड ऐन्डिया) को कि, जहां अनगणित धन है चलते हैं. और जो कुछ कि हमने **ईरान** देश में देखा है, यह उसके सन्मुख कुछभी नही है. देखो (हिस्टरी आफ मिडन्स पत्रा ६)

(१०७) मथुराके धन और आनन्द विहारका वर्णन जो महमूद गजनीने लिखा है, वह उस समयके इतिहासकी आरोग्यताके लिये लाभ दायक है. लूट में पांच सोने की मूर्तियां आई, जिनकी आंखें लालकीथीं. एक और मूर्तिमें एक बहु मुल्य याकुत था. इसके सिवा एकसौ मूर्ति चांदीकी लूट में आईथीं जो एकसौ ऊंटोंपर लादी गई थें देखो (तारीख हिन्द पत्रा ११२ स १८५२ कलकत्ता.)

(१०८) महमूद २६ दिन तक मथुरामें रहकर, सारे नगरको नष्ट भ्रष्ट करता रहा, और फिर कन्नौज की ओर गया वहां इसने एक ऐसा नगर देखा, कि जो मुसल्मान लेखिक के कथनानुसार वहांमें आकाशमें सुलतान था. यह नगर दो सहस्र वर्षसेभी विशेषसे आर्य्योंके धर्मका ठीक एकस्थान था, और इस की बस्ती लोग मिलकी लम्बाई चौडाई में थी, जो उस नगरकी उपमाका वर्णन किया है वह कहनतासे इस समयके लोगोंके निश्चय में आसक्ता है, हां ! इस नगरकी बड़ाईका निश्चय इस वर्णनपर विचार करनेसे प्रत्येक के हृदयमें कुछ आ सकेगा. अर्थात् इसमें तीस सहस्र हाट (दुकान) केवल तम्बोलियोंकी थीं. गवैयोंके साठ सहस्र घरों. देखो (तारीख हिन्द पत्रा ११२ स १८५२ कलकत्ता)

आर्योंका वीरत्व

(१०९) यूनानी लेखिक मेगेथन नामकने यहभी लिखा है कि, यद्यपि सिकन्दर बादशाहकी सेना बहुत ही वीर, और भारीथी. यहांतक कि पुष्कल देशोंकी सेनाओंको यह पराजेकर चुकीथी. परन्तु आर्यावर्त में एकही युद्ध करनेसे दूसरे युद्ध करनेकी उसकी हिम्मत न पड़ी.

(११०)एक लेखिक कहता है कि, "इसके उपरान्त सिकन्दर सतलुज नदीके, तटपर आया. परन्तु सेना उसकी बहुत थक गई थी. और वर्षा रितुके आनेके कारण सिपाईयोंने आगे बढनेसे भी इनकार किया इस लिय सिकन्दरको लाचार होकर वंहीसे उलटा फिरना पड़ा, दूसरे मगध देशके महाराजा महानन्द जो नागवंशी क्षत्रियों में सेथा, उसके पास छे लाख पैदल, और बीस सहस्र घोड सवार, और नौ सहस्र हाथीओंकी सेना थी. न जाने उसके भयसे सिकन्दरको मुख फेरना पडा हो. देखो(आईनह तारीख भाग पहला पन्ना ५ स १८७०ई)

भारतकी तलवार

(१११) अरबके एक लेखिक जो **सबआ मुअलकह**के नामसे प्रसिद्ध है यह भारतकी वीरताको स्वीकार करता है, जैसा कि लिखाता है"व जुलम ज़वी उलकर्बे अशद गज़ाफ़तन, अली उलमरुमन वकैउलहसामुल हिन्द- अर्थात् अपने लोगोंका अन्याय विशेय कठन है. पर उस घाओसे, जो लगता है हिन्दकी तलवारसे "

(११२)तफ़सीर अज़ीज़ी में यही भी लिखा है" तेग़ हिन्दी व खंजरे रुमी, न कनद आंके इन्तज़ार कनद."

(११३) विद्वान **मेक्स मुलर** साहब कहते हैं कि यदि कोई मुझसे पूछे कि कोन देश धन, बल, और सुन्दरता से प्रसिद्ध है, तो मैं येही कहुंगा कि ऐंडिया (भारत) यदि कोई पूछे कि, किस देशके निवासीयोने जीवात्माके प्रश्नको सहल कर दिया है, तो मैं यह ही कहुंगा कि ऐंडिया. यदि के कोई मुझसे पुछे कि, कहांकी विद्यासे यूरोपके विचारोंका पालन हुआ हैं, अर्थात् जीवनके पूर्ण करने के लिये, किन्तु उस सदैवके जीवनके पूर्ण करनेके लिये कोनसा देश है, तो मैं यह ही कहुंगा कि ऐंडिया देखो [स १८८६ ई का लेकचर]

आर्य वीर बालायें

(११४)**मिगा स्थानीज** यूनानी लेखिक जोईसासे ३०६ वर्ष पहिले आर्यवर्तमें गुप्त चंद्र महाराजाकी दरबारमें दूतकी भांति नियत था. वह लिखता है कि भारत में दासात्व [गुलामी] का नाम तकभी कोई नही जानताथा. मनुष्य बड़े वीर, धार्मिक, सत्यवादी निष्पापी, और उद्यमी, कृषि, और हाथके कलाकौशलमें, निपुणथे. और कार्यके निश्चय करने के लिये राज्यदरबारमें आनेको उन्हे न्यून अवश्यक्ता पड़तीथी. और यहां की स्त्रियां तो बहुतही पवित्रथी. और प्रजा अपने सरदारोंकी सत्तामें निर्भय रहतीथी. और राज्यकी विवस्था मनुस्मृतिके अनुसार होतीथी. और बैश्य आर्थात् कृषि करने वाले, युद्ध वा अन्य राज्यकिय सेवासे अलग रहतेथे. देखो [तारीख हिन्द हेन्टर साहबकी]

(११५)मुसलमानी समयके प्रथम आर्य लोग स्त्रियोंको किसी प्रकारके परदे में नही रक्खते थे. परदेकी रिति यहां पर मुसमानोकी ही निकाली हुई है. आज कल जो कहीं बड़े २ घरोंमें परदा देखा जाता है. इसका कारण, मुसलमानोके भयसे ही है, क्योंकि स्त्रियां निर्भय उस समय नही चल फिर सकतीथीं इसी लिये आर्योंनेभी लाचार होकर इसको ग्रहण कर लिया, नही तो इनके किसी धर्म ग्रंथों वा देशी इतिहासों में, इसका कहीं पता भी नही मिलता है. परन्तु यहां उलटा देखा जाता है, कि स्त्रियोंकी स्वतंत्रता *(आजादी) के जीवनका पक्का पता मिलता है. कारण कि यहांकी स्त्रियां, विद्यावती तथा राज्यकिय कार्योंको पूर्णतासे जानने वाली होतीथी. तथा रण क्षेत्रमें जातीथीं, किन्तु यहांकी स्त्रियोंकी हिन दिशा तो केवल मुसलमानोके ही समयसे आरंम्भ हुई है. क्योंन हो ? उन्होने स्त्रियोंकी कोई, निकम्भी उत्पत्ति; लौंडी, गुलाम, घास, बातके समान समझ हुई है. जैसे कि उनके धर्म ग्रंथ [कुरान, सुरतुलनसा] में भी लिखा है कि " औरतें तुम्हारी खेती हैं. देखो [अखबार नूर अफशां पन्ना ३ ता० २६ जनवरी स. १८८८ ई कालम १.)

*नवीन सभ्यताकी स्वतंत्रता नहीं थी.

(गतांकसे आगे)

कारण कि महा भारत के उद्यो० प० अ० ७२ श्लो० २३ में लिखा है कि

धन माहुः परं धर्मं धने सर्वं प्रतिष्ठतम् ।
जीवन्ति धनिनो लोके मृताये त्वधना नराः॥

अर्थात्—धन ही परम धर्म है, और धन से ही सर्व पदार्थ विद्यमान हैं जिसके पास धन नही है. वह जीत ही मरा हुआ है.

बहुतसे लोग इस श्लोक को देख सुनकर यह प्रश्न कर बैठेंगे कि जब "परम धर्म धन ही है, और धनसे ही सर्व प्रकार का सुख प्राप्त होता है, तो फिर जिस प्रकार बने चोरी, चाकरी इत्यादि अनीति से धन उपार्जन कर लेना चाहिये. पर मित्रो ! एसा विचार करना ठीक नहीं है, कारण कि इस श्लोक में जो परम धर्म धन को कहा है, इसका तात्पर्य्य यह है; कि धन से धर्म प्राप्त हो सकता है, न कि धन ही परम धर्म है. यदि कोई यह कहे कि अनीतिसे धन प्राप्त करके, फिर उसमेंसे थोडा बहुत धन धर्म में लगा देंगे, तो हमे अवश्य ही धर्मका फल प्राप्त होगा. कहीं ! एसा कभी विचार हीं नही करना. कारण कि पाप, अनीति का धन अनीतिकी ओर ही झुकता है. देखो महा भारत में लिखा है, कि महाराजा युधिष्ठर जीने महान नीतिमान महात्मा विदुरजी से, अनीति धन के बारेमें पूछा था, कि अनीति धन का क्या प्रभाव होता है, तब विदुरजीने निम्न लिखत वचन कहाथा कि,

प्राचांध्वंस राज दंडे, वेश्या नृत्ये च भारत ।
मद्य द्यूत परस्त्री पु धनं गच्छति पापि नाम् ॥

अर्थात्—अनीति से प्राप्त किया हुआ धन, राजाके दंड में, या नात जातके दंड में, अथवा वैश्यादि योंके नाच रंगमें, या मद्य, जूआ में, या पर स्त्री गमन, इत्यादि अधर्म कार्य्यों में ही चला जाता है.

देखो इस श्लोक से सिद्ध हो गया, कि अनीति धन कदापि भी धर्म की ओर नही जाता है. इसी से मनु भगवान भी अनीति धन को बुरा कहते हैं कि,

परित्यजेदर्थ कामौ यौ स्यातां धर्म वर्जितौ ।
धर्मञ्चाप्य सुखोदर्कं लोकं विक्रुष्ट मेवच्च ॥

अर्थात्—धर्म से रहित (अर्थ) धन, और (काम] निन्दित विषय वासना का परित्याग करो. तथा जिस धर्म का परिणाम सुख न होवे, और संसार को हानी कारक होवे, तो ऐसे धर्म का भी परित्याग कर देना उचित है.

अस्तु ! माना कि अनीति से धन उपार्जन नही करना. भला यदि कोई एसा यत्न करें कि जिसमें श्रम भी न पडे और धन भी मिल जाये, अर्थात् किमिया गिरी से मिला लेने में क्या डर है. कारण मेहनत और पुरुषार्थ से तो हम से धन प्राप्त हो ही नही सकता है.

परंतु स्मरण रहे ! कि इन बातोंसे कदापि धन प्राप्त नही हो सकता है, और न धन भीख मागने से ही मिल सकता है, और न नोकरी चाकरी से ही प्राप्त हो सकता है. कारण कि नौकर मनुष्य चाहे हजार रुपय तक का भी क्यों न हो, परन्तु वह धनवान नही कहलाता है. प्रत्यक्ष देखलो कि बडे २ राज्य कर्मचारी जिन को सहस्रों रुपया मासिक मिलता है उनकी मृत्यु, अथवा नौकरी छूट जानेपर साहुकार उनकी कुरसी, और चारपाई तक निलाम करा कर अपना पान रुपया प्राप्त किया करते हैं, इस्से सिद्ध होता है कि नोकरी से भी धनवान नही कहला सकते हैं. अब यह संदेह उठा कि फिर कैसे धन का उपार्जन हो सकता है, तो इसके बारेमें अथर्व वेद के० कां.१० अनु० ६वा ३५ में लिखा है कि.

यो विभर्ति दाक्षायणं हिरण्यं सजीवेषु कृणुते दीर्घमायुः ।

इसका भावार्थ यह है कि जो चातुर्य से सुवर्णादि धन का उपार्जन करता है, वोही जीवों में अपनी अयु को बढा सकता हैं. अर्थात वोही सर्व सुखों को प्राप्त हो सकता हैं.

यहां चातुर्य शब्द से कोई सोना टोली [नोसरयों] का तात्पर्य्य न जान लें. परन्तु यहां चातुर्य्य शब्द का तात्पर्य्य खेती ब्योपार से है, जैसे कि हमारे पूर्व पुरुषा खेती, ब्योपार से धनको प्राप्त करते थे. देखो

इसी वेद के कां० १८ अनु० ४ वा० २५ में लिखा है कि,

इदं हिरण्यं बिभृहि यत्ते पिता विभः पुरा ॥

अर्थात्—जैसे तेरे पिता आदि भद्र बुद्धिमान पुरुषो सर्वण का उपार्जन करते आये हैं वैसे ही तू भी कर, यह परमात्मा की आज्ञा है. अतः इस आज्ञा का उल्लेख तैत्तिरियोपनिषत में स्पष्ट किया है जैसे:—

भूत्यै न प्रमादि तव्यम् ॥ १ ॥ तै० अनु० ११ वल्ली० १

अर्थात्—धनोपार्जन करने में प्रमाद कभी नही करना चाहिये.

अब यदि कोई यह कहे कि पूर्व कालमें हमारे यहां के लोग किस जीविका से धनवान होतेथे. तो हम मुक्त कंठसे यह उत्तर देते हैं कि खेती और व्योपार से होतेथे हां! निर्वाह के लिये यद्यपि आठ दस जीविकायें अपने ऋषि मुनि लिख गये हैं जैसे कि मनु भगवान ने मुनुस्मृति में १० जीविकायें लिखी हैं

विद्याशिल्पं भृतिःसेवा गोरक्ष्यं विपणिःकृषिः।
धृतिर्भैक्ष्यं कुसीदञ्च दश जीवन हेतवः ॥

अर्थात्—विद्या [विद्या] ये बहुत प्रकार की होती हैं, अर्थात् एक लोकिक और दूसरी परलोकिक, इनको सिखलापढा कर. दूसरी [शिल्प] कारीगिरी.३ [भृतिः] ओहदेदारी आदि. ४ [सेवा] टहल, सेवकाई. ५ [गोरक्षा] गवादि पशु पालन. ६ [विपणीः] व्योपार. ७ [कृषें] खेती. ८ [धृतिः] धारणा, धरोहर. ९ [भैक्ष्यं] भिक्षा वृत्ति, १० [कुसीदञ्च] व्याज [सूद] यह दस जीविकायें हैं.

और शुक्र नीति के अ० ३ में आठ जीविकायें लिखी हैं, इन जीविकाओं के विषय में प्राचीन, वा अर्वाचीन सब्री ग्रंथ कारोंने यथामति लिखा है. और उन लोगों ने स्व. २ बुद्धिनुसार जीविकाओंको मध्यमाधामों त्तम भी वर्णन किया है, परन्तु व्यक्ति भेद के कारण से जीविकाओंके मध्यमोत्तमता का निर्धार इथभूत अद्यापि यथावत् नही हुआ, क्योंकि एक जीविका ऐसी है कि उसके करने वाले को श्रम अधिक होता है. और उसमें लाभ न्यून है. परन्तु उससे संसार का कुछ लाभ है, जैसे सेवा टहलादि, दूसरी जीविका एसी है कि, जिस में श्रम यत्किञ्चित् और लाभ बहुत हैं, परन्तु उस से संसारका कुछ भी लाभ नही, प्रत्युत हानि होतीहै, जैसे धरोहर रख कर अधिक कुसीद लेकर किसी को दिवालिया बनाने की नियत से वित्तका देना आदि. तीसरी एसी जीविका है, कि जिस में कुछ श्रम है और लाभ भी अच्छा है, परन्तु उस से संसार का विशिष्ट दशा में कुछ विशेष उपकार नहीं, जैसे [प्राड् विवा कत्व] वकालत आदि. चौथी ऐसी जीविका है कि जिस में श्रम बहुत अधिक नही वा अन्याय करने पर अधिक लाभ का असम्भ तथा अवस्था विशेष में जिससे संसारकी हानी भी नहीं जैसे [भृति] उहदेदारी. ५ वीं एसी जीविका है कि जिस में श्रम समान्य, और सम्मति शास्त्रानुकुल कार्य करने पर लाभाधिक्य, और जिससे विशेष दशा में संसारका उपकार भी सम्भव है, जैसे **रुज्यापार** [व्योपार] ६ वीं एसी जीविका है कि. जिस में श्रम बाहुल्य अवस्था विशेष में न्यूनाधिक लाभ का भी संभव, जिस से संसार का सर्वथा परोपकार, जैसे [कृषि] खेति. ७वीं ऐसी जीविका है कि, जिसमें श्रम की न्यूनाधिकता से लाभ की न्यूनाधिकता है, और जिस से संसारका उपकार, जैसे तक्षक अयस्कारादि [खाती लुहार आदि] की **कारीगरी.** ८ वीं वह जीविका है कि जिस में श्रम थोडा लाभाधिक्य, और जिस से संसार का भी लाभ, जैसे कलाकौशली.९ वीं यह जीविका है जिसमें श्रमाधिक्य लाभ की न्युनाधिकता और संसार का जिस से सर्वथा कल्याण, जैसे नवीन २ सदविद्याओंका प्रकाश करना. १० वीं वह जीविका है कि जिस में श्रम न्यूल लाभ यथोद्यम, जिस से संसार को लाभ, जैसे गवादि पशुओंका पालन. ११ वीं वह जीविका है, जिस में विशेष श्रम नही, लाभ यथासम्भव और संसार का जिस से सर्वथा अकल्याण, जैसे भिक्षा [भीख] है. इन सर्व जीविकाओं का वर्णन वेदादि सत् शास्त्रों में भी यथावश्यक किया है. पर विस्तार भय से इन सबों का वर्ण नही करते हैं. परन्तु स्थाली पुलाक न्याय से यहां पर यत्किञ्चित् व्योपार खेतीका वर्णन करते हैं तद्यथा:—

सर्वं पणेः समविन्दन्त ॥ ४ ॥ अ० कां०२० अनु० ३ व० २५

अर्थात्–व्योपार ऐसा उत्तम पदार्थ है कि जिस से सर्व पदार्थ मनुष्यों को मिल सक्ते हैं, एवंः—

अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित् कृषस्व वित्ते-रमस्व बहु मन्य मानः । तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः ॥ १३ ॥ ऋ० अ० ७ अ० ८ व० ५

अर्थात्–अय मनुष्य ! द्यूत [जुआ] मत खेल, किन्तु कृषि [खेती] को कर, और अपने उद्योग द्वारा उस कृषि से उत्पन्न हुये धन को ही बहुत मान कर सन्तुष्ट हो, क्योंकि कृषि में गो आदि पशु, और सन्तती की वृद्धि होती है. और जुआ खेलने से शरीर के वस्त्रों को भी हार बैठना है. इस बात का उपदेश सर्वोत्पादक परमेश्वर ने हम मनुष्यों को किया है. इन उर्द्ध लिखत परमाणोंसे यह तो सिद्ध हो गया कि सर्व जीविकाओं से खेती और व्योपार जीविकायें उत्तम हैं. पर शोक ! कि आजकल इन दोनो उत्तम जीविकाओं पर हम भारत निवासीयोंका लक्षही नही रहा, इस से ही इस समय हमारी सर्व जीविकायें, झूठ और प्रपंच की प्रचलित हो रही हैं. और यह ही हम अपनी संतानों को सिखला रहे हैं. कहिये ! फिर हम उर्द्ध लिखत दोनो सुखों को कैसे प्राप्त हो सकते हैं.

वाचक वृन्द ! प्राचीन समय में हमारे पुरुषा सर्वोत्तम खेती और व्योपार से ही धनोपार्जन कर, अपना जीवन व्यतीत किया करते थे; और उन दोनो सुखों को प्राप्त होते थे. इसलिये हम लोगों को भी **खेती और व्योपार** द्वारा धन उपार्जन करने का उद्योग करना सर्वोत्तम हैं. कारण कि खेती वजन के साथ सम्बंधन रक्खती है, अर्थात् जो खेती करेगा वह अवश्य ही व्योपारी भी बनेगा, और जो व्योपारी बनेगा तो वह धनवान भी अवश्यही हो जायेगा. क्योंकि खेती करके अन्न की अवश्यही विक्रय करनी पडेगी. और इस विक्रय के लिये देशाटन भी अवश्यही करना कराना पडेगा, तो कहिये फिर क्यों न धनवान बनेगें. अवश्यही बनेगे? इस्से ही हम कहते हैं कि खेती और व्योपार ही धन प्राप्ति का साधन हैं, इन साधनो के ही नष्ट हो जाने से हम धर्म भ्रष्ट हो गये हैं, कि जिस से इस समय हम भारत बासी नाना दुःखों को भोग रहे हैं.

प्रिय वाचक वृन्द ! हमारे कथन का सारांश यह है कि प्रथम अपनी संतानोंको नीति का शिक्षण देओ, और फिर उन्हे खेती और व्योपार की ओर झुकाओ, इस से अपनी, वा अपने देशकी अवश्यही उन्नती हो जायेगी. लो ! हम आप लोगों को व्योपार के प्रत्यक्ष फलका उदाहरण देते हैं. देखो कि " जब अंग्रेज लोगोंने समुद्रीय नाव (जहाज़) से उतर कर भारत भूमि में पग धरा, तो केवल व्योपारी ही बनकर चरण रक्खा था. अर्थात् व्योपारी बनकर अये थे, और व्योपार के अर्थ इस देशमें इन्होने कोठी डाली. और ये यहां का माल विलायत को भेजने लगे, और वलायतका माल यहां देने लगे' एसे करते २ इन लोगोंने जब यह बात देखी, कि यहां की प्रजा और राजे महाराजाओंका परस्पर सम्प नही है, अर्थात् यह आपस में लड मर रहे हैं. किसी का भी आपस में किसी प्रकार का किंचित् सम्प नही है, इन सर्व में उपरी भीतरी पोलम पोल ही है. एसा जानकर यह छट बीच में कूद पडे, और आज वोही व्योपारी सारे भारत पर प्रभुता कर रहे हैं. यद्यपि इन का मुख्योदेश यहां पर व्योपार बढाने का था.

पर उस व्योपारने इन्हे इस देश का राजा बना दिया. किन्तु राजा बनकर इन्होने कुछ यवनो की भांती भारत वासियों पर अन्याय नही किया. परन्तु उलटा हर प्रकार से भारत वासियोंको सुखी बनने के यन्त (साधन) अर्थात् व्योपारमें झुकाया. पर भारत वासी इस योग्य ही कहां? इन्होने तो अपनी कुटल नीती से दुःखी बने रहना ही स्वीकारा हुआ है, कारण कि जब प्रथम २ अंग्रेज लोगोंने हमारे देशी व्योपारीयोंको विलायती माल भेजना आरंभ किया, तब यह लोग हमारी क्रेडित (आढित) पर तीन महीने की हुंडी लिखा करते थे. और उस समय हुंडी का भाव १ पौंड का १० रुपया था. पर जब हमारे कितनेक नीति भ्रष्ट

व्योपारियोंने हुंडीका रुपया रवाना आरंभ किया, और बलायत वालों को इस बात का बड़ा संताप होने लगा तब उन लोगोंने भारतीय अनीतिवान व्योपारियों की अनीति का वर्णन अपनी व्योपारी मंडालियोंमें आरंभ किया, इस का फल यह हुआ कि उन में से कितनेक साहसी जनोंने यह राय निश्चय करके कहा कि जब इन्डिया (भारत) के व्योपारी निति भ्रष्ट हैं, और वह हम लोगों को धोपा देते हैं तो हम लोग स्वयम भारत में जाकर, कंपनी स्थापन करते हैं. और तुम लोगोंको पुरे २ पौंड भेजा करेंगे, और उन लोगों के पास से हम लोग अपनी कमिश्न लिया करेंगे. एसा निश्चय करके उन्होने भारतमें आकर बेंक निकाले,

इन बेंक वालो ने अपने लाभ के लिये प्रथम जो १ पौंड की कीमत १० रुपेया थी उसी का आज हमसे १५ रुपये तक लेते हैं और विलायत के व्योपारीयों को वह केवल १० रुपया ही देते हैं, इस में जो टोटा होता है वह हम लोगो को ही होता है. अब देखीये कि इस्से अपने देशके व्योपारीयोंको कितनी वडी हानी उठाने पढती है. यदि हमारे व्योपारी निति भ्रष्ट न होते तो आज इन को इतना भारी नुकसान न उठाना पडता.

(शेषफिर)

गंगा की नींद.

(श्रीयुत लाला मलेक राजभल्लाकृत)

गंगा उठाके नींदमें सदियां गुजर गई ।
देखो के सोते सोते ही बरसें किधर गई ॥
औरोंको जो जगाके खबरदार कर गई ।
अनगिन्त सायतें वह यहां बे खबर गई ॥
आंखें तो खोल देखो ज़रा हाल है ये क्या ।
रफ़्तार पहले कैसी थी अब चालहै ये क्या ॥१॥
इस नींदने ज़माने पै ज़ेरो ज़बर किया ।
गेती का एक दमसे सफ्हः ही पलट दिया ॥
फाड़ा किसी का सीना किसी का जिगर सिया ।
पटकाया एक दूसरा सरप उठा लिया ॥
इस नींद ही में सैंकड़ों जंगो जिदल हुये ।
इस नींद ही में सैंकडों रद्दा बदल हुये ॥ २ ॥
इस नींद में बहुतेरी हुई इन्कलाबयां ।
तवदिल होयया है हरेक तौर से जहां ॥
इस नींदमें बहुतेरे मिटे नाम और निशां ।
भारत की आज बाकी हैं मुशकिल से हड्डियां ॥
नगरीके पांड्वोंकी बयानात रह गये ।
मिथिला अयोध्याके निशानात रह गये ॥ ३ ॥
इस नींद ही में शहर बियाबान होगये ।
आबाद देश उजड़ के विरान होगये ॥
ज़र खेज़ थो कृता थे वो सुनसान हो गये ।
राहत जहांथी रंजके समान हो गये ॥
तलवार ग़ज़नवी की इसी नींदमें चली ।
तातारियों की आग यहां मुद्दतों जली ॥ ४ ॥
इस नींद ही मे राज घराने तवाह हुये ।
राजे मेरे गुलामें गुलमान शाह हुये ॥
निर्बल बने बलीन कवी बे पनाह हुये ।
उजले कंवल से जो थे वो जलकर सियाह हुये ॥
जो खान दान तख्त के वाली सदासेथे ।
इस नींद ही में आज वह मिट्टी में मिल गये ॥५॥
इस नींद ही में क्षत्री मुसल्मान बन गये ।
आधी सदीमें हिन्दु से अफग़ान बन गये ॥
तुर्कीन जादो नस्लें खुरासान बन गये ।
बाकी रहे कुछ अहल सफाहान बन गये ॥
धक्कर जरासी बदलके अबके गुहर बने ।
गर और कुछ न शेख तो सब वेखतर बने॥६॥
इस नींद ही में भाई से भाई जुदा हुआ ।
बेटेका बैरी बाप हुआ खूब हमेला ॥
चले गुरु का जोड़ फ़कत गर्ज़का हुआ ।
राहत का साथ बाकी न था रंजका रहा ॥
हर एक खुदी में अपनी ही मख़मूर हो गया ।
हर एक इसी नशमें पडा चूर हो गया ॥ ७ ॥
इस नींद ही में धर्म्म पै चोटें हुई हज़ार ।
तुर्कों की फौज छाती पै उस के हुई सवार ॥
साधु ब्राह्मण उसने किये तंग और ख्वार ।
मन्दिर जो बे मिसलथे गिराये वह बेशुमार ॥
सेवक न तेगे कहरसे छुटे न देवता ।
पापी बचे न ज़ुल्म से उसके न पारसा ॥ ८ ॥
इस नींद ही में हिन्द में नीवें नई पड़ीं ।

ईंटें यहां की मक्के मदीने को जा लगीं ।।
कबरें मज़ारें ईदगाहें बहुत बन गईं ।
रस्में अरब की जो थीं यहां पर वह आ जमीं ।।
काशी में मन्दिरोंकी जगह मजिदें बनीं ।
तुर्कों की धर्ती बन गई प्रयागकी ज़मीं ।। ९ ।।
इस नींद ही में होगया हिन्दोस्तान शिकार ।
एक एक करके कट गये शाह और शहरेयार ।।
चारों दिशा में मचगई घर घरमें लूटमार ।
ज़ोरो सितम से होती रही हर जगह पुकार ।।
गुंजे सदायें खल्क से यह गुम्बदे फ़लक ।
पहुंचा न तेरे कान में पर शोर आज तक ।।१०।।
इस नींद ही में टटोला गया आर्य्यों का घर ।
खोदे गये क़हरसे बड़े मन्दिरों के दर ।।
सखती हज़ार करके अमीरों गरीब पर ।
अम्बारों से उठाय गये सीम और ज़र ।।
इस नींद ही में लूट हुई नगर कोटकी ।
इस नींद ही में जाता रहा सोमनाथ भी ।।११।।
इस नींद ही में ज़रका यहां खातमा हुआ ।
चांदीका रेज़ा देखने तक को नहीं रहा ।।
सोने का इस जहां से निशान तक चला गया ।
इल्मास और अकीक़ अब कुछ नहीं पता ।।
फैलाया घोर पाप यहां मुसल्मीन ने ।
वारिस फ़लक ने रोकली दौलत जमीन ने ।।१२।।
इस नींद ने बिगाड़ के नस्लें हजार हा ।
तोड़ी भरी उमंग से आसें हज़ार हा ।।
की मुनकता इसी ने उमैदें हज़ार हा ।
बेसूद करके समझ की चालें हज़ार हा ।।
इस नींद ही में राय पिथोरा क़तल हुये ।
संगासे शूर वीर जैदा जेहद में मुये ।। १३ ।।
इस नींद ही में दर्द से या सीने फट चुके ।
अफ़सोस बन्दगान खुदा कितने कट चुके ।।
या कैद हो गुलाम बने और बट चुके ।
दुनियामें सबसे बड़के भी हम कितने घट चुके ।।
पद्मावतीकी राखभी अब सर्द होचुकी ।
प्रताप जैसे मर्दभी सारे तो खो चुकी ।।१४।।
इस नींद्र ही में कोमोंकी इज्जत तबाह हुई ।
और राजपूत कितने की हुर्मत तबाह हुई ।।
लाखों पतिव्रताओंकी अज़मत तबाह हुई ।
लाखों की अपने जीने से रगबत तबाह हुई ।।
बे वतन कोई मर मिटीं बगदादमें पड़ीं ।
कितनी ही जलती आगके शोलों में जा पड़ीं ।।१५।।
इस नींद ही में गज़ब रहा इस दयार पर ।
मज़लूम कितने होगये कुर्बां कटार पर ।।
कितनो ने सीने रख दिये खंजर की धारपर ।।
कितनों ने काटे अपने गले पहली हार पर ।
कितने यहां पै यासमें हीरेचबा गये ।
कितने गरीब चुपके से बस ज़हर खा गये ।।१६।।
इस नींद ही में तलख हुई जिन्द गानियां ।
माओंकी गोदसे छिने बच्चे बहुत यहां ।।
रोतीं अलदे की गई पतिओं से बीबियां ।
बेहनें पुकारती रहीं भाई कये कहां ।।
आंखें यहां पै कितनी मुदीं आंसुओं तर ।
दमरुक गये सराय थे जिस दम ज़बान पर ।।१७।।
इस नींद ही में जाने गईं यां खड़े खड़े ।
कितनी ही औरतें मरी पानीमें कूदके ।।
कितनी कटीं पिता पती भाईके हाथसे ।
तुर्कोंके सख्त पंजे से बचने के वास्ते ।।
इस नींद ही में कितनी पड़ीं वहशियों के हाथ ।
गज़नी में कितनी उम्रें काटीं सख्त दुःखके साथ ।।१८।।
इस नींद ही ने ऐसी मचाई है खलबली ।
कल वालोंको भी सुन इसे होती है बे कली ।।
बच्चे बना यतीम रुलाये गली गली ।
दर दर फिराई खल्क में विधवायें दिल जली ।।
बुढे सफेद रीश हज़ारों फिदा हुये ।
मासूम सरभी तनसे हज़ारों जुदा हुये ।। १९ ।।
इस नींद ही में मारे गय वीर दिल चले ।
भारतके हाले जार पै जिन जिनके दिल जले ।।
कितने ही मुंह में मौतके बे डर बढ़े चले ।
जा जा जमाई गर्दनें फोलाद के तले ।।
सारा शरीर अपना लहुसे भिगो दिया ।
पर बुंज दिलोंके दागसे माथा बचा लिया ।।२०।।
इस नींद ही में गमसे भरी कुल ये सर ज़मीं ।
मातिम में झोपड़ी से महल तक है क्या नहीं ।।
आखें जहां उठाते हैं मिलता है दुःख तहां ।

मुकिन नही कि सुख से मिले एक घर कहीं ॥
आंसू बहा रहीं हैं हिमालय की चोटियां ।
दिल से निकल रहा है समुन्दरका भी धुआं॥२१॥
इस नीद ही में हमने बुलाया तुझे बहुत ।
आहोंसे बे कसोंने जगया तुझे बहुत ॥
नालोंसे गम जदोने हिलाया तुझे बहुत ।
नारों से दिल जलोंने उठया तुझे बहुत ॥
अब तो उठा कि नींद में सदियां गुजर गई ।
देखो कि सोते सोते ही वर्षे किधर गई ॥२२॥

पति पत्नी प्रेम नाटक.

—:०:—

(गताकसे आगे).

लक्ष्मण (काफी भजन)

कैसी है बनकी बहार, भावजजी कैसी है बन वहार ॥
हैं गे यह पर्वत कैसे सुहावन बहावत नीरकीधार ।
इन पै वृक्ष कैसे रचे हैं जगदीश्वरने अपार ॥ भा० ॥
कोऊ फल देत कोऊ पुष्प देत हैं कोऊ न रचा विकार॥,
चमेली गेंदा मोतिया वेला जूही गुलाब कचनार ॥भा०॥
चमपा केवडा केतकी कैसा देत सुगंध अपार ॥
कैसे बोलत मोर चकोर हंस शुक कोकिला प्यार ॥भा॥
अम्र जामुन केला नारंगी कैसे हैं गे फल दार ॥
देखो चहुं दिश शोभा है कैसी मानो है स्वर्ग द्वार॥भा॥

लक्ष्मग—मातेश्वरी देखो यद्यापि यह स्थान कोई नगर नहीं है तथापि बन होने पर भी इस की शोभा कैसी बिचित्र है ! ये बनैले घास, पात, फल, फूल, बृक्ष वेल इन नेत्रों को कैसा आनन्द देते हैं ! यद्यपि अभी हम लोग मध्य बन में प्रविष्ट नहीं हुये हैं तथापि अभी से बन यात्रा का आनन्द अपूर्व्व बूझ पड़ता है. अहा ! परमात्मा ने कैसी अच्छी २ वस्तुओं की सृष्टि इस संसार में की है !

सीता (देस भजन)

नाथ बिना शोभा यह फीकी लगत है। जो पर्वत तोहे लग सोहावन, सो मोहे दुःख दाई लगत है ॥ वृक्ष लता चम्पा केवड़ा, इन सबसे भी मोहे ड़र उपजत है ॥ मोर चकोर कोकिला बोलसे, देवरजी मेरा जिया धरकत है ॥

सीता—देवरजी तुम्हारा कथन सत्य है. परन्तु मुझे तो यह सर्व बन बस्तुयें रघुनाथजी के बिना फीकी और भद्दी लगती हैं

लक्ष्मण—हां ! प्रभु बिना आनन्दाई नही हैं. पर यदि आज्ञा हो तो नदी से जल पान कर आऊं.

सीता—अवश्य ॥

लक्ष्मण—(जल पान कर लौट आने पर) माता-तुल्य ! भ्राता बर सा नीति प्रिय अब कोई राजा कदापि काल न होगा ॥

सीता—सो क्या ?

लक्ष्मण—(ल० का कण्ठ रुंधा सा हो जाता है और केवल महान व्यथित मनुष्य सा रुदन करते हैं)

(देस भजन)

भाई तुम बडी कीनी कृपणाई ॥ भा०
नीच बचन के कारण से तुम ग्रह में आग लगाई ॥
नही विचार किया लिया कुछ यह नही कीनी चतुराई ।
कुछ तो विचार बड़ों का लेनाथा क्या राय देते आई ॥
हा ! हा ! भ्रात यह किया अनर्थ तुम नही कीनी है भलाई।
गर्ववती बनवास पठाई कीनी यह है लडकाई ॥
हैं संतान कोऊ न हमरे न कोई भ्रातके जाई ॥
राज पाट को वारस होगा को पितरन पिंड भराई॥
तिस पर भी कोई वनिता न दूजी जो संता उप जाई ॥
शिव शिव यह क्या अनर्थ उपजाआ, कैसे दूर होजाई॥
अवला तिसपै गर्ववती को छोड जाया नही जाई ।
सेवक को यह चिंता व्यापी प्रभुजी होवो सहाई ॥

सीता (होली भजन)

आये हो बनकी बहार दिखाने ॥ आये०
क्यों मुख पीत होत जात है क्यों जाते मुरझाने०
नही कछु समझ पडत है मोको, क्यों लगे आसुं वहाने,
बुरे क्यों यह चिन्ह सुझाने० आये
तुमरे रुदन से हमरा देवरजी, लगा जीया धडकाने०
कारण इस शीघ्र का बतावो- बतानेंसे क्यों हो लजाने,
बनो न तुम कुछ दिवाने० आये०

(गजल भजन)

भला हमको ये बन शोभा देखाने के लिये आये ।
खुशी के बीच में आंसू क्यों नैनो में भर लाये ॥
बता दो रोनेका कारण हमे देवर जी तुम जल्दी ।
व्यापा कष्ट क्या तुम पर कि जिस्से नैन भर आये॥

बोलो बोलो देवर जी तुम नहीं यह, दुःख सहा जाता।
मैं अबला विन्ती करती हुं जता दो आंसू क्यों आये॥

सीता–स्वामी शुभ चिन्तक! भला तुम तो हमें बन की शोभा परिदर्शन कराने आये हो, और तुम ही इस भांति व्यथित होकर रोदन करने लगे. तुम न तो अपने रोदन का कारण बतलाते हो, और बहुत पूछ पांछ करने पर भी नहीं बोलते हो, फिर मैं अबला तुम्हारे मन की क्या जानूं. तात् कुछ भी तो अपने रोदन का कारण कहो॥

लक्ष्मण (देश **भजन**)

धिक धिक मात यह मेरा शरीर।
बन आने से प्रथम ही जो यह डूबत सरयु नीर॥
डूबत जो यह समय न आता कहने को दुःखके गिर॥

लक्ष्मण–(रोदन रोक कर) मातृवत्! इस बात के प्रगट करने से प्रथम ही मेरा यह शरीर सरयूमें परित्याग होजाता तो उत्तम था, अथवा उस रसाना का कटकर गिर जाना ही उत्तम है जिस से कर्कस बातें कथीं जावें॥

सीता (नाटकी **भजन**)

बोलो बोलो देवर जी सुख दुख का जो होवे हाल।
नही शर्म्मावो नही घबरावो जल्दि बतावो लाल॥
छिपाने से ठीक नही है देवर जी पहुचत है रंज कमाल।
स्वीकार के विन्ती तुम अबला की बता दो अपना मलाल॥

सीता–नहीं, नहीं. सत्य बात यदि कर्कस हो, मीठा हो वा, अप्रिय हो, अथवा प्रिय हो, किन्तु उस का कथन करना सदैव उत्तम है. कहो तो बात क्या है?

लक्ष्मण–मातातुल्य! आप से सारी बातें निवेदन करता हूं. आप ध्यान देकर सुनें. आप को यह बात नहीं ज्ञात होगी कि, भइया ने अपनी प्रजा की सात्विक दशा, तथा उन की राज भक्ति की जांच करने के अभि प्राय से हनुमानजी को गुप्त चर नियुक्त कर रक्खा है॥

सीता–हां! मैं तो नहीं जानती थी फिर?॥

लक्ष्मण–एक दिन हनुमान जी भ्रातृवर के समीप आकर निवेदन करने लगे कि "महाराज! आज एक रजक अपनी स्त्री से झगड़ा करते समय कह रहा था कि, अरी दुष्टा! क्या तू ने मुझ को भी रामचन्द्र समझ लिया है कि जो उस की स्त्री रावण से हरी गई और इस पर भी उस ने उस को ग्रहण कर लिया, महाराणी! जब महाराज ने उस के निवेदन को सुन लिया तो वह प्रथमतः बहुत ही उदास हुये, मैं भी उसी समय उन के निकट जा पहुंचा [रुक जाता है]॥

सीता–(पूर्व्व की अपेक्षा तनिक उदास बदन हो कर [हां- हां. फिर क्या हुआ?॥

लक्ष्मण– [आप ही आप] हा! हा!! कोई २ जीव ऐसे होते हैं कि अपनी प्रजा को संतुष्ट करने के लिये अपने अमूल्य, अप्राप्त और असाधारण रत्न को तुच्छ समझते और उस का अपमान करते हैं, क्यों न हो. नीतिज्ञ राजा, महाराजाओं का तो यही धर्म्म ही है. [प्रगट सीता से] महाराज ने मुझ को बैठने की आज्ञा देकर मुझ से हनुमान जी की बातें कहीं और साथ ही मुझ से यह भी कहा कि "सीता जी को बन में–„ [नाट्य विकलता प्रगट करता है और कंठ अवरोधित हो जाता है]

सीता–[रोदन करती हुई] तो क्या प्राणेश्वर ने मुझ को परित्यागन करने के अभिप्राय से बन गमन कराया है? हाय! "[हाय„! "हाय„! कह कर मूर्च्छित होती हैं]॥

लक्ष्मण–प्रभू रत्न! स्वामी–प्रिया!! दया निधया!!! दास तथा पुत्र को यहां पर असहाय जान अब कृपा कर सचेत हूजिये. मैं बेर २ निवेदन करता हूं आप सचेत हूजिये. [लक्ष्मण पट से इस प्रकार पर पवन करते हैं कि जिस में सीता का मुख उन्हें दीख नहीं पड़ता है] ॥

सीता– [सचेत होकर] तो क्या प्राणकन्त ने मुझ को भ्रष्टा समझा?॥

लक्ष्मण–हरे! हरे!! यह वाक्य आप अपने मातृ मुख से क्यों निकालती हैं॥

सीता–भला प्राणेश्वर की आज्ञा मैं भी तो सुन लूं. कहो! उन्होंने क्या आज्ञा दी है॥

लक्ष्मण–केवल इतना ही कि मैं नदी पार कर आप को बन में छोड़ उन के चरणाबिन्दों की सेवार्थ फिर लोट जाऊं. [आप ही आप) हाय! माता को

बन में अकेली छोड़, क्योंकर लौटूंगा. मेरी दशा इस समय तो सर्प और छुछूंदरकी सी होरही है. न तो मुझ से माता को अकेली इस सूनसान वन में छोड़ते बनता है, और न स्वामी की आज्ञा का उल्लंघन करना उचित जान पड़ता है. अच्छा अब तो माता की आज्ञा का प्रतिपालन करूंगा ॥

सीता–प्राणेश्वर की जब यहही आज्ञा है तो फिर इसे न तो मुझ हतभागिनी ही को उस आज्ञा के विरुद्ध कार्य्य करना चाहिये, और न तुम को ही. अच्छा ! अब तो तुम यहां से लौट जाव, मुझ को इस वन में जिस प्रकार का कष्ट भोगना कर्मांकित होगा भोगूंगी. किन्तु इतना चहृदयवासी प्राणेश्वर से भी कह देना कि प्रभू जो कुछ किया बहुत अच्छा किया ॥

लक्ष्मण–(नेत्रों से आंसू टपकता है और बार२ ठण्ढी स्वासे लेते हैं) माता की आज्ञा शिरोधार्य्य है ॥

सीता–अच्छा अब तुम जाव. मैं भी इस में इधर उधर विचर कर जीवन व्यातीत करूंगी ॥

[एक ओर से लक्ष्मण बेर २ रोदन कर करुण स्वर से प्रणाम करते हुये, प्रस्थान करते हैं, और दूसरी ओर से सीता भी आगें बन यात्रा की इच्छासे प्रस्थान करती हैं]

पद्याक्षेप.

भारत पै आरत.

—:o<>o:—

(गतांकसे आगे)

सरदारोंको बुलाकर आज्ञा दी कि जैसे **शहाबुद्दीन** कहे उसकी आज्ञा का तुम सब पालन करो. **सरदारों** ने हाथ जोड़ कर उत्तर दिया हम लोग दिलोजान से आपकी और आपके बिरादर (भाई) जातकी आज्ञाके मानने केलिये तैयार हैं.

यद्यपि उस समय **शहाबुद्दीन** की शादी के दिन निकट आगये थे, और शादी में शरीक होने के लिये मामा आदि सम्बंधी लोगभी कुछ आये हुयेथे. परन्तु शहाबुद्दीनने शादीकी कुछभी परवाह नहीं की, यहां तककि उस समय उसने अपने खुवाजा नामक मामासे कहा **क्यों मामा जान आप इस दुनिया की खुशी** में शामिल होने के लिये तशरीफ लाये हैं, या दीनकी खुशी के लिये," खुवाजा ने उत्तर दिया "दोनोके लिये." शहाबुद्दीन ने कहा मामाजान अभी तो मैं **दुनिया** की खुशी का दुर रक्ख, **दीनकी** खुशीके लिये कमर बांध, हिन्द को जाताहूं, अगर अल्ला व रसूल की महर बानीसे **काफरों** पर फते पाकर आया, तो फिर दुनियाकी खुशी मनाऊंगा, और जो वहीं लडाई में मारागया, तो बहिश्त (स्वर्ग) का मजा उड़ाऊंगा. खुवाजाने उत्तर दिया " **इन्शाह अल्लाह तआला तुम जरूर ही काफरों पर फते पाकार आओगे, और दोनो जहांनकी खुशीयां कमाओगे. निदान !** ग्यासुद्दीन ने शहाबुद्दीनकी सहायता के लिये एक लाख अस्सी हजार सेना दी, जब शहाबुद्दीन इस सेनाको लेकर भारत पर चढ़ाई करने की तैयारी करने लगा और सर्व सेना तैयारी होकर मैदान में आ अकीठी हुई. तब **ग्यासुद्दीन** ने सर्व सेनाके बीचमें खडे होकर कहा "अय इसलामके रौशन करने वाले जवांमर्दो? आज तुम दीन के लिये लड़ाई करने को हिन्द में जाते हो. अये बहादुरो ! अगर काफरों पर फते मेल कर आये तो दीन दुनिया दोनोकी खुशियां मनाओं गे. अये दलेरो ! जो अगर वहां तुम मरभी गये तो बहिश्तका मजा उढाओगे. अय अल्ला व रसूल के प्यारो, सुनो सुनो कहीं इसलामके दुश्मनोको पीट न दिखलाना, याद रक्खो अगर भूल करमीं जो उन्हे पीठ दिखलाओगे, तो एक भी उनके हाथों से बच कर यहां न आने पायेगा, और जो आगें बढ़कर लडोगे, तो खुदा व रसुल के फ़जलो इक बालसे हिन्दकी **ज़र, जोरु, जमीन,** पाकर मजा ऊडाओगे " ऐसे २ नाना प्रकार से, लालच की बातें सुनाकर अफगानों जंगलीयों को मरने मारने के लिये तैयार कर, फिर ग्रीन **मुल्ला** खड़ाकर सर्व को निमाज पढवाई, और इसलाम का जकारा तीन बार बड़े जोर शोर से बुलवा कर, फोज को चलने की आज्ञा दी. सेना आज्ञाके पाते ही हिन्द को रवाना हुई, परन्तु यह सेना अन्य मुसलमानी बादशाही सेना की भांती भारत पर नहीं चढ़ आई थी. किन्तु यह सेना चार दलसे भारतमें आईथी, अर्थात **शहाबुद्दीने** स्वयं, तथा सर्व सेना

को, घोडों का सौदागर बना कर, इसे चार भाग से भारत में लाया था. कारणाकि शहाबुद्दीन इस बातको भली भांती जानता थाकि, यदि मै युद्ध के लिये अजमेरको जाऊंगा, तो मार्गमें श्यात अन्य राजा मुझे रोकलें और पृथ्वि राज को मेरे आने की खबर कर दें, और वह उलटा मुझ परही चढ आवे. तो मैं उससे मुकाबले की ताब न लासकूंगा, इस्से उसने घोडों का सौदागर बन कर जानेमें कुछ भय न सकझा. क्यों कि वह जानताथा कि इस रितिसे जानेमें हमे कोई भी न रोकेगा, कारणाकि कार्तिकीका मेला बहुत समीप आरहा है. इसलिये सर्व राजा हमे सौदागर समझ कर विशेष रोक टोक न करें गे. दुसरी इसने यह चालाकी की थी, कि अपनी सेनाको चार भागों में करके उसके तीन भागोंको जुदा २ मार्गों से भारत में रवाना कियाथा, और एक भाग को अपने संग लेकर कंधार, सख्खर भावलपूर, बीकानेर के मार्ग से होता हुआ ऐन कार्तिकी स्नान के आरम्भ होते ही पुष्कर में आगया. इसके ऐसे अने में किसीको भी इसपर कुछ संदेह उत्पन्न न हुआ. पुष्कर जी में कार्तिक स्नान आरम्भ होगया, लोग दूर २ से स्नान के लिये आने लगें, और सौदागर लोग भी अपना २ माल बेचनेके लेयें, अपनी २ हाट, दुकानें सजाने लगे. शहाबुद्दीन ने भी आकर अपनेको घोडों का सौदागर प्रसिद्ध कर अपने तम्बू खडे कर दियें, और कुछ सेना को घोडों की सेवा के लिये रक्खे, बाकी को ढोंग इत्यादि बेचने के बहाने अजमेर तथा इसके आस पास ग्रामों में गुप्त चर बना, भेज दियें. और भीतर ही भीतर युद्धका सामान तैयार करने लगा. महाराजा पृथ्वि राज इस्से सौदागर जान कर धोखा खाने लगा. अर्थात महाराज पृथ्विराज को विश्वास हो गया, कि शहाबुद्दीन घोडों का सौदागर है, और यह प्रथम २ ही इस मेले में आया है. किसने यह भी खबर दी कि इसके पास अरबी घोडें भी हैं, इस्से महाराज पृथ्विराज को अरबी घोडे खरीदने की इच्छा हुई, और तुरन्त अपने प्रधान मंत्री क्यामाप को बुलाकर, कुछ घोडे खरीद लेनेकी आज्ञादी, मंत्री आज्ञाके पाते ही शहाबुद्दीन की छावनीमें गया. शहाबुद्दीन का मंत्री पृथ्विराज के मंत्री को बडे मानसे, शहाबुदीन के पास ले गया. राजमंत्री सौदागर का ठाठ बाठ देख कर बडा चकृत हुआ, और मनही मनमें कहने लगा, कि यह सौदागर है या कोई बादशाह है. कारण कि जिस तम्बूमें सौदागर साहब बैठ हुये थे, उसतंबू के स्वर्ण चडित खम्बे थे, और बीचमें एक रत्न जड़ित सिंहासन रखा हुआथा जिसपर कि सौदागर साहब बैठा हुआ था. सौदागर अपने मंत्री की सेनके पाते ही झट सिंहासन से उत्तर कर राज मंत्री को बडे प्रेम से मिला, और कुछ देरतक इधर उधर की गपछप मारकर, राजमंत्री को घोडे दिखलाने के लिये तम्बू से बाहर निकला, और एक २ तंम्बू में जाकर, घोडे दिखलाने लगा. राज मंत्री जिस घोडे को देखने जाता उसे मखमल के तम्बू में ही पाता, तथा उसके शरीर पर केशर का लेप लगा हुआ और उसके सन्मुख पानी पीनेका बासन चांदी का धरा, तथा एक मनुष्य हाथ में चमर लिये मखि, मछर उड़ता हुआ ही दिखाता. यह लीला देख कर राज मंत्र दंगसा हो जाता, और मन ही मन में, कहने लगता कि, यदि अपने महाराजके पास ऐसे २ एक सहस्र घोडे हों तो भारत खंड में चक्रवर्ती बन जायें. किन्तु जब सौदागर से एक ही घोडे की किंमत पूछी तो चकृत हो गया. कारण कि सौदागर साहब ने एक भी घोडे का निछावर, एक सहस्र मुद्रा से न्यून नही कहा. परन्तु इतने पर भी राज मंत्रीका साहस कुछ नाश नही हुआ. यह निछावर सुनकर राज मंत्र कुछ कहना ही चाहता था, कि इतने में सौदागर के तम्बू पास एक तम्बू से घोडे के हण, हिणने, का शब्द कान में पडा कि, तुरन्त उसके देखने के लिये सौदागर से कहा. सौदागर ने उत्तर दिया यह घोड़ा तो खास मेरी असवारी का है, इस्से आपको इसके दिखका ने की कुछ अवश्यक्ता नही है. राज मंत्री! सौदागर के यह वचन सुन कर बोला. क्या, सौदागर लोग अपनी अस्वारी का घोडा नही बेचते हैं. सौदागर ने उतर दिया क्यों नही बेचते हैं, पर मुझे इसका ठीक २ दाम नही मिलता है, इस लिये मैंने उस घोड़ेको, अपनी असवारी में रख छोड़ा है. राज मंत्री! ने कहा,

भला दिखलाओ तो सही, हम भी देख लें, आपकी असवारीका वह कैसा घोडा है, जिस का दाम आपको ठीक नही मिलता है. **सौदागर** ने उत्तर दिया दिखलाने में हमारा कुछ हर्ज नही है, चालिये देख लीजी ये. एसा कह कर राजमंत्री को उस घोडे के तम्बू में ले गया. **राज मंत्री** उस घोडेके तम्बू में जाकर क्या देखता है कि उस घोडे के अंग पर केसर का लेप हुआ २ है और कमखाब कि झूल उसके उपर पडी हुई है. तथा सोने की साकलोसे वह बंधा हुआ है और उस के पैरों में रत्न जडीत झांझरें पडी हुई हैं वा पानी पीने के लिये उसके आगे एक सोनेका बासन धरा हुआ है, तथा पिशाबके लिये एक चांदीका वासना नीचे रक्खा हुआ है. यदि इस घोडे को लेटने की इच्छा होवे और अंगोंमें कुछ गड़े नही, इस लिये इस के नीचे एक मखमल का गदेला वीछा हुआ था. और दो मनुष्य हाथों में चमर लिये माखिया उड़ाने को पास खडे हैं. यह अडम्बर देख कर **राज मंत्री** स्तब्ध हो गया. परन्तु फिरभी मंत्री ने शाल होत्रिके नियमानुसार इस घोडे की परीक्षा की, और इस का मन लोभायमान हो गया. और सौदागर से मुंह मांगा दाम मांग लेनेको कहा. जब सौदागर ने देखा कि यह मेरे जालमें फंस गया है, इस समय एक बार तो प्रथम राजको धन हीन कर देनेका, ये उत्तम ढंग मिला है, अब जैसा समय फिर हाथ नही आवे गा. इस्से प्रथम पृथ्विराज को धन से हीन करके, फिर युद्ध करना चाहिये.

एसा मन में निश्चय कर के बोला, दिवान साहब यद्यपि इस का दाम तो चालीस लाख रुपया है, परन्तु आपको एक तो मित्र, और दूसरे आपके राज्य आश्रय हम लोग लाखों रुपये कमा ले जाते हैं, इस्से हमे कुछ गम खाना वाजिब है, इस सबब आप से छत्तीस लाख रुपया इस घोडे का ले लेंगे.

राजमंत्री! इतनी बडी कीमत के सुनते ही एकबार तो कांप उठा. कारण कि उसे ऐसा विश्वास न था, कि सौदागर साहब एकदम इतनी बडी कीमत कहदेंगे. पर अब तो बचन में बन्धगये, करें तो क्या करें, लाचार, शोकातुर हो महाराज पृथ्विराज के पास गया और अपना सर्व समाचार कह सुनाया. **महाराज पृथ्विराज** ने धैर्य देकर कहा "प्रधानजी कुछ चिंता मत करो, राज्य की हार जीत, हानी, लाभ यह सर्व मंत्रियों के हाथोंमें है, भला जब राज्य? मंत्रियों द्वारा लाभ प्राप्त करता है, तो कभी उनसे हानी भी होजावे, तो उसको भी सहन करना राज्यको उचित्त है, इसलिये आप चिन्ता त्याग, राज्य कोप (खजाने) से जितनी रोकड निकले, उतनी रोकड, और वाकी जो दाम में न्यूनता रहे, उतनेका चांदी सोना लेकर सौदागर को द आओ, और उस्से घोडा ले आओ." **राजमंत्री** क्या माझने महाराज पृथ्विराजकी आज्ञानुसार कोपमें जाकर, जैसे तैसे द्रव्यको पूर्णकियां, और सौदागर को देकर, घोडा खरीद लिया. पर धोका कि इस घोडे ने महाराज पृथ्विराज के छत्तीस लाख पर पानी फेर दिया, अर्थात् जब मंत्रीने घोडा खरीदकर, उसे राज्य अवश्व शालामें बंधवा दिया, तो घोडा वहां पर एक पहर भी जीता न रहा. नही मालूम? सौदागरने उसे अवश्व शालमें ले जाते समय क्या? विष खिला दीया, कि वह वहां पर जाते ही मृत्यु को प्राप्त हो गया.

जब इसके मृत्यु होजाने की खब दरबारमें पहुंची, तो दरबारमें हा! हा! कार मचगया. परन्तु अंतमें सर्व ईश्वर इच्छा प्रकट करके चुप होगये. किन्तु किसी ने भी सौदागर के कपट पर कुछ विचार न किया. कारण कि सर्वको यह ही विश्वास हो गया, कि ईश्वरी कोप के सिवा एसा बनाओ कदापि बनता ही नही है. एसा विचार मनमें आनेसें सर्वने शांति धारण की. परन्तु सौदागर को शांति कहां? अर्थात जब **सौदागर** साहब ने देखा कि, मेरी सेनाके सर्व मनुष्य अब अकीठे होगये हैं, और अब युद्धकरनेमें कुछभी भय नही है, तुरन्त उसने महाराज **पृथ्विराज** के पास अपने दूत द्वारा युद्ध के लिये पत्र भेजा. यह दूत कोई अन्य मुसलमान दूत न था, परन्तु हजर्त **रोशन अली** साहब थे, प्रथम तो दरबा में जाकर इसने पत्र माहाराज के हाथ में दिया, और फिर अपनी कटी हुई ऊंगली दिखला२ कर, दरबारियों से कहने लगा "मेरी ऊंगली काटने का अब फल चाखो, देखो क्या मजा मिलाता है", **रोशन** के यह वचन सुनकर सर्व के गात्र सिथिल तो होगये

परन्तु तिस पर क्या राजपुतों का **लहु** कुछ शोक करने को बैठ रहे एसा तो कभी हो ही नही सकता है, **रोशन** का कथन, और सौदागर का पत्र सुनते ही, सर्व **सामन्तो** के लहु में एक बार ही एसा जोश आगया कि, सर्व की **तलवारें** मियान् से निकल पडीं. परन्तु चतुर प्रधान मंत्री **श्यामाष** ने सर्व को शांत करके कहा, अय वीर राजपूतो अपने लोग युद्ध करने से तो कुछ डरते नही हैं, किन्तु धर्म और राज नीति के बंधन से बंधे हैं, इस लिय प्रथम सौदागर को समझाना चाहिये कि, श्यात वह इस कार्य से हट कर अपने घर को चला जावे, और व्यर्थ ईश्वरी प्राणियों का लहु न बेहे, हां यदि वह न माने, तो फिर उसकी इच्छा. इसमें राज्य नीति और धर्म विरुद्ध फिर हमें कुछ दोष आरोपण नहीं हो सकेगा." **प्रधान मंत्री** की यह बात सर्व को ठीक जंची, और प्रधान मंत्रीनें प्रथम सौदागर को चुपके, राज्यसे चले जानेका पत्र लिखकर रोशन को दिया, और रोशन पत्र लेकर **शहाबुदीनके** पास गया.

रोशनके चले जाने के उपरान्त, राजमंत्री ने युद्धका सामान तैयार करना आरम्भ किया कि, श्यात: सौदागर कहीं दगा (धोषा) देकर नगर में न घुस आवे. एसा विचार करके सर्व राज सेनाको तैयार कर लिया. उधर **रोशन** ने राज्यका पत्र शहाबुदीन को जा दिया. भला! कपटी सौदागर साहब कागजके लेखसे थोडेही मानने वालेथे. राज्य पत्रको पढ़कर, पुन: युद्धकी यान्चनाका पत्र, **महाराज** पृथ्विराजको भेजा. इस पत्रके पातेही महाराज पृथ्विराजने अपने सर्व सामन्तोंको युद्ध करने केलिये आज्ञा देदी, और उन्होने महाराज की आज्ञा के पाते ही. सौदागर की छावनीपर जा धावा किया. और उधर से यवन सेना ने भी इनका सामन किया, परन्तु यवन सेनाका पाओं राज पूतोंके सन्मुख न टिक सका. अर्थात् सायंकालके होते २ **शहाबुदीन** की चतुर्थांश सेनाका नाश होगया. यह दशादेख, **शहाबुदीन** स्तबध होगया, अर्थात् इसको जो अपनी सेनाके बल पर बडा भारी विश्वास था, कि इसके आगे **तारागढ** का तोड़ना एक तिनके के समान है, इस प्रथम ही युद्धमें चतुर्थांश सेनाका एक पहरमें नाश होजानेसें यह उनमत्ताई जातीरही. और उसके नेत्र खुले, अब तो इसको यह काम बड़ाही विकट लगनें लगा. इस कारण इसने अपने सर्व मंत्री सरदारों को बुला कर पृथ्विराजको अन्य छलसे जीतनेकी बात छेडी और सर्व सरदारों ने अपनी २ राय पैशकी. अंतको यह कपट की राये निश्चय हुई, कि पृथ्विराज को यह लिखा जाये कि हमारी तर्फ से भी एक योद्धा, और आपकी ओर से भी एकही योद्ध, रण (मेदान) में निकले, और उन्ही दोनोका परस्पर युद्धा हो, जिसका योद्धा हार जाये वह ही पराजे समझा जाये, अर्थात् यदि हमारा योद्धा हार जाये तो हम अपना सर्व सामान आपको देकर, अपने देशको चले जावें गे, और जो आपका योद्धा हार जावे, तो आप हमको **तारागढ** स्वाधीन करदें. यह राय निश्चय करके, महाराज **पृथ्विराज** को इस विषय का एक पत्र लिख भेजा.

महाराज **पृथ्विराज** ने इस पत्र के पातें ही अपने सर्व सामन्तों को पास बुलाकर यह पत्र पढा सुनवाया और इस युद्ध का बीडा दरबारमें रखवा दिया; कि जिसकी इच्छा अकेले युद्ध करने की होवे, वह इस बीडे को उठा लेवे.

सर्व **सामन्तों** को शहाबुद्दीन की यह बात तो पसिन्द आई, परन्तु **बीडा** उठाने का साहस किसी को न हुआ, कारण कि सर्व के मन में यह **शंका** उत्पन्न हो आई कि नहीं मालूम शहाबुदीन का योद्धा कैसा है. वास्तवमें यह शंका **सामन्तों** की ठीक भी थी. क्यों कि वह योद्धा विदेशी था. जिसके यह लोग रंग, ढंग, बल छल कल से सर्वदा अंजानथे, इस्से इनके मन में इस शंका ने घर कर लिया, कि बिना उस के कुछ हाल चाल जाने बिड़ा उठा लेना यह काम कोई तमाशे का नहीं है. कारण कि इस युद्ध से कीर्ति मिलानी, कुछ सहल नही है. भला! यदि हमने बिड़ा उठा लिया, और उसे हम जीत न सके, तो हमारे एक के कारण प्रथम तो राजा का राज जाता रहेगा, और दूसरे हमारे नाम को; कीर्ति के बदले अपकीर्ति का बट्टा लग जायेगा. और तीसरे प्राण जुदे व्यर्थ जायेंगे. इस्से बीड़ा उठाने सें न उठाना ही ठीक है. एसा सर्व, आपने २ मन में बिचार करके, एक दूसरे का मुख ताकने लगे. जबबहुत

देरतक महाराजा पृथ्विराज ने देखा कि कोईभी बीड़ा नही उठता है. तब बड़े क्रोध से बोले, क्या तुम सर्व में ही आज क्षत्रिय वीर्य्य नष्ट हो गया. क्या. तुम्हारा आज आर्य्याभिमान सर्वथा लुप्त हो गया. क्या ? आज सभी तुम शंढ बन गये हो. क्या ? आज तुम शूर राजपूतों ने अपना क्षत्रिय धर्म त्याग दिया है. क्या ? आज तुम में कोई भी सती क्षत्ररानी की कोषका जन्मा हुआ नही रहा है. धिक्कार अनंत धिक्कार है जो तुम ! आज क्षत्रिय नामको कलंक लगाये बैठे हो. इतना कह ! झट सिंहासन से उतर पड़े, और आप ही बीड़ा उठाने लगे. ज्यों ही बीड़ा उठाने के लिये हाथ बढ़ाना चाहते थे कि, त्यों ही कवी चन्द ने पृथिराजका हाथ पकड लिया, और बडी नम्रता से बोला महाराजाधिराज ! तनी धैर्यधर कर प्रथम मेरी विन्ती को सुन लिजीये और फिर बीड़ा उठाईये. पृथ्विराज ने उत्तर दिया ? कविराज कहो ? तुम क्या कहते हो. चन्द ने कहा ! पृथ्विनाथ ? बीड़ा उठाने से तो आपका कोई सामन्त डरता नही है. प्रभु केवल इन लोगोंके मन में यह बात समा गई है कि सौदागर के योद्धाका बिना कुछ हाल जाने, बीड़ा उठा लेना यह ठीक बात नही है. कारण कि कहीं हमारी हार हो गई, तो प्रथम एक की हार के कारण आप बिना राज्य गादीके हो जायेंगे, और दूसरे यवन राज्य होजाने से प्रजा दुःख पायेगी, और तीसरे एक तो व्यर्थ हमारा प्राण जायगा, और दूसरे जगत में बद नाम होंगे. महाराजा धिराज ! केवल इनको यह ही भय, बीड़ा उठाने का है. हे कृपानाथ ! आप शीघ्रता न करें, मैं अभी ही सौदागर की छावनी में जाकर, सौदागर के योद्धा का सर्व समाचार लाकर इन लोगों को विदित कर देताहुं कि, जिस्से इनके मन का भय जाता रहे. इतना कह पृथ्विराज को आसीस दे, यवन फकीर का वेष धारण कर, सौदागर की छावनी में गया, और सौदागर के पहलवान (योद्धा) का सर्व मर्म जान कर ,महाराज पृथ्विराज के पास आकर निम्न लिखता कवित्त से सौदागर के पहलवाना का वर्णन किया.

(शेषफिर)

सिरकटा मुर्दा.

(गतांकसे आगे)

हथकड़ी चढ़ा कर हवालात में बन्द करने की राय दें तो हम आप को भी झट ना समझा कह बैठेंगे।

आपको भगवान ने बुद्धि दी है सोचिये तो; वह अपने नौकर को क्यों मार डालेगा ? जिसके भरोसे से जिसकी मिहनत और पैरवी से नवीन चन्द्र ने मुकदमा जीता है, भला फिर उसी स्वामि भक्त नौकर को नवीन बाबू क्यों मार डालेंगे ? फिर उसके पहनने के कपड़े क्या हुए ? उसका सिर उसने कहां छिपा रक्खा है. अगर उसीने मारा तो जंगले की लकड़ी क्यों टूटी पड़ी है ?

अच्छा साहब अगर आप इस बारे में कुछ सोच विचार नही करना चाहते, तो हमें भी इस से बहस नहीं है आगे जो हाल हुआ वह सुनिये—

पहले इस देश की पुलीस के नियमानुसार नवीन बाबू पकड़े गये. उनपर मारे सन्देह के पुलिस की ओर से बहुत कुछ कड़ा कड़ी की गयी. साम, दाम, दण्ड भेद सब से काम लिया गया. लेकिन एक से भी कामयाबी नहीं हुई, तब पुलिसने नवीन बाबू को छोड़ दिया. अब उन का सन्देह नमीन बाबूके भाई प्रवीण चन्द्रपर पहुचा, दोनों में जैसा कुछ भाव था वह मुकदमे से ही जाहिर था, दूसरे कई अदालतों से जीत जानेपर भी प्रवीण चन्द्र इस अन्तकी बड़ी अदालत में हार गये हैं. तीसरे इस मुकदमे को स्याह सफेद करने वाला वही मुख्य नौकर गोबिन्द चन्द्रही था जिसकी पैरवी से कई अदालतों की जमी जमाई करी करायी डिग्री मिट्टा हुई. उसपर प्रवीण बाबू का कैसा कुछ कोप होगा, वह बिना बताये हमारे पाठक समझ सकते हैं. पुलीस को अब प्रवीण चन्द्र के खोजने की पड़ी, लेकिन खोजना उनको सहज नही था। नवीन बाबू को उनका पता मालूम नहीं—

गोबिन्द चन्द्र मानो दुनियाही में नहीं है. अब पुलिस वाले चकराये और अन्त में प्रवीण चन्द्र के पता लगाने का दूसरा काम भी डिटेक्टिव सबइन्स्पेक्टर

बामाचरन बनर्जीके सिरपर मढ़ा गया-खूनी के पता लगाने का एक बड़ा काम अभी बामाचरन बाबू के सिरपर था ही और इधर सब को प्रवीण बाबूके खूनी होने का शक हुआ, इसी से डिटेक्टिव पुलीस के साहब ने इसके पता लगाने का काम भी उन्हीं को सौंपा—

बामा चरन बाबू को प्रवीण बाबू के पकड़ने की इच्छा नहीं थी, लेकिन अपने साहब का हुका वह टाल नहीं सकते थे, टालें कैसे जिस काम के लिये वह नौकर थे, उस में इनकार कैसे करें. गरज कि पहले बामा चरन बाबू ने प्रवीण का पता लगाने के लिये—मुकदम उठाया, और गोपाल बोस लाइन के तेरह नम्बर मकान से नाता तोड़ कर आप आगे बढ़े—

पांचवी जांच।

बाबू बामाचरन बनर्जी ने प्रवीण चन्द्र को पता लगाने को कदम तो बढ़ाया, लेकिन सोचने का अवसर नहीं मिला. अब आगे बढ़कर आप अवाक हो गये. मर्द ! नवीन बाबू को छोड़ कर हम चले आये अब प्रवीण चन्द्र का कैसे पता लगे गा ! लेकिन नवीन बाबू से होता ही क्या ? वह तो प्रवीण का डेरा जानते ही नहीं, जानने वाला गोविन्द चन्द्र तो मर ही गया है. अब पता लगे तो कैसे लगे ?

इसी सोच विचार में थे कि चपल बुद्धि बाबू बामा चरण बनर्जी को एक बात सझ पड़ी, और झट गाड़ी पर चढ़ कर गोपाल बोस लाइन को रवांना हुए. रास्ते में सोच लिया बस प्रवीण बाबू के वकील से उनके डेरेका पता लग जाय गा.

नवीन बाबू के पास जाकर डिटेक्टिव सब इन्स्पेक्टरने प्रवीण बाबू के वकील का नाम पूछा, तो मालूम हुआ कि वह चित पुर रोड में रहते हैं. झट गाड़ी से उतर ट्रामवे पर बैठा और थोड़ी ही देरमें चितपुर पहुंच गये. वहां वकील साहब के मकान पर गये तो बाहर के बैठे दरबान से मालूम हुआ कि वकील साहब मुवक्किल लोगों से बातें करने का काम पूरा कर के भीतर गये हैं. अब नहा, खा, कर एकदम कचेहरीके लिये ही तैयार निकलेंगे"

दरबान की बात सुनकर बामा चरण बाबू छड़ी लपलपाते घंटों खड़े रहे. दरबान अपने छोटे से स्टूलपर चुप चाप बैठा रहा, लेकिन वकील साहब अभी नहीं आये—बामा चरन बाबू घबारा चले थे कि एक गाड़ी सामने लाकर खड़ी की गयी. कई मिनट बाद डासन कम्पनी के बूट की आहट मिली, और वकील साहब खटाखट बाहर आये. चाहतेथे कि अपनी गाड़ी में बैठें. लेकिन बामा चरण बाबू ने आगे बढ़कर टोका और अपनी गरज कह सुनायी. वकील साहब ने समझा कि बाबू को बिना कुछ फीस के बहुत सी बातें बतलाने की हैं. आपने झट उनको कचहरीमें आने का टल्ला बता, कोचवान को गाड़ी हांकने का हुकम दिया. सूरजके रथसे भी मानो तेज चलने वाले घोड़े जो टाप उठाकर दौड़े तो बस हवा से बातें करने लगे—कहां हमारे बामा चरन पैदल और कहां जर्रार बुद्धि वकील साहब की जोडी भला कैसे पार पासकते थे.

पीछे २ कुछ दूर चलने पर बामा चरन बाबू ने भी गाड़ी की, और उसी पर चढ़कर रवाना हुए. बाहर बजे के बाद वकील साहब के आफिस में पहुंचे, यहां वकील साहब को बामा चरण की दशा देख कुछ दयासी आयी, और अपने मुहर्रिर को प्रवीण बाबू का ठिकाना बतलाने की अज्ञा देकर बड़ी कृपा की, उनके मुहर्रिरने पहले पता बतलाकर कुछ नजराना चाहा, लेकिन जब समझा कि बाबू बामा चरण कौन हैं, और किस लिये प्रवीण को खोजते हैं, तब नजराने की उम्मेद तो छप्पर तर रही, मुहर्रिर साहब अपनी जान बचाने को सरके कि कहीं बाबू के साथ प्रवीण के घर तक न जाना पड़े. और वहां उसका पता न मिलने पर उलटे लेने के देने पड़े.

छठी जांच।

बामा चरण बाबू वकील के मुहर्रिर से प्रवीण बाबू का पता पूछ कर उनके मकान पर पहुंचे, और पुकारे ने पर मालूम हुआ कि इस वक्त तक अभी रातकी नींद से उठे नहीं हैं. उनके खिदमतगार ने कहा कि प्रवीण बाबू कल आधीरात के गये, आज पांच बजे आकर ऊपर सोये हैं. वह अबतक नहीं उठे. बामा चरण को

समझ चक्कर खाने लगी कि, बात क्या है! क्या प्रवीण चन्द्रही खूनी है. क्या जाने इस ने उसीको अपना पूरा बैरी जानकर मार डाला हो क्या अजब है!

फिर प्रवीण को जगया, और उन से कहा "आपके वकील साहब का मैं एक सन्देसा लेकर आया हूं. उन्होंने कहा है कि कल जिस मुकद्दमें का फैसला हुआ था, उस में आज एक तरकीब और बहुत ही बढ़िया ढंग. सूझ है मैं हाईकोर्ट में फिर बहस करूंगा और पूरा भरोसा है कि आप की जीत होगी, और जज्ज साहब मातहत अदालतों का फैसला ही बहाल रखने पर जरुर आज राज़ी होकर अपना फैसला मन सूख करेंगे. वकील साहब के पास कोई आदमी नही था, और वह मर्हीरर भी जो आपके यहां आया करता था आज बीमर हो गया, इस से मुझे भेजा है. लेकिन उन्होंने बहुत जल्दी बुलाया और कहा कि अपने साथ गाड़ी पर लाना. मुझे आपका मकान पूछते २ बहुत देर हो गयी है, आप अगर अपना भला चाहते हैं तो अभी हमारे साथ गाड़ी पर बैठेये नहीं फिर यह मौका हाथ न आयेगा."

प्रवीण चन्द्र बामा चरण की पट्टी में आगये और अपने रसोइया सतीश्चन्द्र को सोते छोड़ खिदमगार को लिये हुए बामा चरनके साथ रवाना हुए.

बामा चरण बाबू प्रवीण को गाड़ी पर बिठा कर सीधे लाल बाज़ार के पुलीस स्टेसन में पहुंचे, जहां पुलीस के साहब और अन्य पुलीस दूत प्रवीण की बाट देखते और पत्ता पाने की चिन्ता में बैठे थे, गाड़ी से उतर कर बामा चरण ने अपने साहब से कहा— साहब यह लीजिये आपका प्रवीण और उसका खिदमतगार हाज़िर है.

अब तो और पुलीस दूतों की बन आई और सब प्रवीण बाबू पर चील्ह की तरह झपट पड़े.

प्रवीण चन्द्र बेचारा, एक जमीन्दार का सीधा सादा लड़का, कलकत्ते में नया नया आया था। शहर में कोई बड़ी जान पहचान का साथी संगी नहीं, सो वह एकदम पट्टी में आकर पुलीस के चक्कर में पड़ा. अभी थोडी देर पहले वह रात भर का जागा थका मांदा पलंग पर पड़ा था. और कहा यहां आकर अपने चारों ओर खाकी बर्दी वाले पुलीस सिपाहियों को देखने लगा.

प्रवीण चन्द्र बहुत डर गया अब उससे जो बातें पूछी जाती थी, उसका उलटा जवाब देने लगा, इस्से उन लोग को! उस से सवाल करने पर प्रवीण के उटपटांग जवाब से, और तरह तरह के सन्देह होने लगे. एकने पूछा—

आप कहते हैं कि इस खून के बार में मैं कुछ नहीं जानता, तो कल रातको आप कहां थे, इस का सुबूत दे सकते हैं?"

जवाब "हां, क्यों नहीं! इस बात को मैं साबित कर सकता हूं कि रातभर मैं मकान में था"

सवाल—"घर में और कौन था?"

जवाब—"हमारा खिदमतगार और रसोइया यह दोनो थे।"

सवाल—"वह दोनो क्या उसी घर में सोते थे जिसमें आप थे?"

जवाब—"जी नहीं मेरा रसोइया मेरे साथ उसी मकान में सोता था, लेकिन खिदमतगार नीचे के मकान में था. तो भी दोनों कह सकते हैं कि मैं रातभर अपने मकान में था."

प्रवीण की बात सुनकर बामा चरण का सन्देह बढ़ चला, खिदमतगार जो साथ में था. उस से सुन चुके थे कि प्रवीण बाबू रात बारह बजे के गये सवेरे आये थे इस की जांच रसोइया से करने की बाकी थी. पुलीस के और लोग जो इस काम में नियत थे, उन को लेकर बामा चरण बाबू अपने साहब के साथ प्रवीण बाबू के घर रवाना हुए. वहां पुहुंचते हीसब को अलग ठहरा कर बामा चरन बाबू ने प्रवीण के रसोइया से पूछा कि "कल रात को तुम्हारे मालिक कहां थे?"

रसोइया ने कहा—"हमारे मालिक तो रात को घर ही में सोते थे कहीं बाहर नहीं गये?"

"तुम उन के साथ सोता था?"

"जीहां मैं उन के साथ ही सदा सोता हूं"

"और खिदमतगार कहां सोता था?"

(शेषफिर)

देशहितैषी काऱ्यालय मुम्बई का

ताम्बूल रञ्जन.

जो महाशय इस ताम्बूल रंजन मसाले को पान में रखकर खांय गे. वे इस की प्रशंसा अवश्य ही करेंगे. इस को नित्य पान के साथ खाने से मुहंकी बदबू को नष्ट कर पान को स्वादिष्ट बना देता है. और पान के खाये बाद भी बहुत देर तक मुख सुगंधित रहता है. विशेषता यह है कि इस को पान में रख देने से चूना कत्था डालनेकी भी आवश्यकता नही है क्योंकि जिस परिमाण से पान के साथ कत्था व चूना खाया जाता है, उतना इसी मसाले में मिला दिया गया है. मूल्य १ डिबियाका ।) चार आने डांकव्यय ।) में ४ डिबिया जा सक्ती हैं.

देशहितैषी काऱ्यालय मुंबई के जगत्प्रसिद्ध सुरमे.

" नयनामृत " अर्क

हमारे काऱ्यालय के आठ प्रकार के सुरमों में से नं० ८ का तरल सुरमा बहुत ही लाभ दायक समझा गया है. इस को नित्य लगाने से नेत्रोंकी ज्योति बढने के सिवाय रतोंधा, नन-नला, ध्वन्द सबलवाय, खुजली बारबार आखों का दुखनी आना आदि अनेक रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं. एक बार मगाकर परीक्षा करेंगे तो हकीकत में इसको नयनामृत समझ कर फिरभी मगावेंगे. मूल्य १ सीसी का ॥) आठ आने डांकव्यय ।) में ४ शीशियें जा सक्ती हैं.

काला सुरमा नं. १—यह सुरमा हमेशह नेत्रोंमें डालने से सर्व प्रकार के नेत्र रोग और आंखोंकी गर्मी नष्ट करकैं ज्योतिको वढ़ाता है मूल्य आधे तोलेकी शीशीका ॥). आने.

सफेद सुरमा नं. २—यह सुरमा वृद्ध पुरुषोंको बहुत ही लाभदायक है. आंखोंके धुंध-लेपन व कीचड़ वगैरहको बहुत जल्दी दूर करता है. रातको सोते समय दो तीन सलाई लगाकर ५ मिनट के बाद नं. ३ के सुरमें की एक या दो सलाई लगाने से बहुत ही फायदा होता है. मूल्य आधे तोलेकी शीशी का ॥) आने.

काला सुरमा नं. ३—इस ठंडे सुरमें को सोते समय लगानेसे नेत्रोंके समस्त रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं. और नेत्रोंकी गर्मी दूर कर ठण्डक पहुचाता है. मूल्य आधे तोलेकी शीशी १)रु.

सफेद सुरमा नं. ४—इसको प्रतिदिन रातको सोते समय तीन चार सलाई लगाने से आंखमें मांस बढ़ना, पाणी गिरना, पलकें मोटी हो जाना, आदि अनेक रोग नष्ट हो जाते हैं, रोग रहित जनोंको, दूसरे तीसरे दिन इसको लगानें से किसी प्रकार के रोग होने का भय नही रहता, मूल्य आधे तोलेकी शीशी का १।]

मिलनका पत्ता—पन्नालाल जैन,

मैनेजर—देशहितैषी प्रधानकाऱ्यालय,

RECISTERED No B 247.

श्रीधर्म्मामृत की संक्षेप नियमावली।

(१) इस पत्रका मूल्य, नगर और बाहर सर्वत्र डाकव्यय सहत अग्रिम वार्षिक केवल १॥ रु. है. गर्वमेन्ट तथा राजा महाराजाओंसे उनके आदरार्थ ५ रु. है.
(२) पांच श्रीधर्म्मामृत एक साथ खरीदने वालों को एक प्रति मुफ्त अर्थात जो पांच ग्राहक हो कर ७॥ रु. दाम भेज देंगे उनको एक पाकिट में ६ श्रीधर्म्मामृत की पुस्तकें हर मास की पहिली ता० को मिला करेंगी.
(३) पत्रके उत्तर चाहने वाले महाशय, जवाबी कार्ड अथवा टिकट भेंज, अन्येथा पत्रोत्तर न दिया जायगा.
(४) नमूने की प्रथम प्रति पहुंचने पर यदि ग्राहक होना स्वीकार हो, तो मूल्य ता० १ तक भेज देना चाहिये, यदि ग्राहक होने की इच्छा न हो तो कार्ड द्वारा सूचित करना पडेगा,और नमुने की पुस्तक पर आध आनेका टिकट लगा वापसकर देनी चाहिये, नही तो ग्राहक श्रेणी में समझे जा येंगे. (५) विज्ञापनकी छप् वाई एक मासके लिये प्रति पंक्ति दो आना तीन मासके लिये एक आना, और छ मास या इस्से अधिक समय के लिये आध आना है. और छपे हुये विज्ञापनों की वितरण कराई ५ रु. लिया जायेगा.

श्रीधर्म्मामृत सम्बन्धी सर्व चिठ्ठी, पत्र,व मनीआर्डर और समाचारपत्र नीचे पत्तेपर आने चाहिये

भारत भाईयों का शुभचिंतक गो. पं. जगत नारायण शर्म्मा
चंदा वाडी पोष्ट गिरगाम-मुम्बई.

श्रीधर्म्मामृत पुस्तकालय की पुस्तकें

(१) गोरक्षाप्रकाश—गऊ मातके बारेमें विदेशियोंके एक सहस्र प्रश्नोका उत्तर, सर्वगोभक्तों को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये. मूल्य ८ आना (२) अकबर गोरक्षा न्यायनाटक इसमें अकबर बादशाहने किस रीतिसे गोरक्षा कीथी, यह नाटकी चालसे कथन किया गया, है, इसमें बहुत, करुणामय नाना प्रकारके राग भी हैं. मूल्य १२ आना (३) अकबर बीरबल का समागम. इसमें बीरबलकी चतुराई के दोहे भरे हैं. देखने के योग्य पुस्तक है. मूल्य १२ आना. (४) ईसू परीक्षा. इसमें ईसामसीह की परीक्षा की बाते हैं. प्रश्न करते ही ईसाई दांत दबाते भाग जातें हैं मूल्य १ आना. (५) ईसाई मतपरीक्षा. इसमें ईसाई धर्म के ढोलकी पोल खोली गई हैं. पढकर देखलो मूल्य १ आना. (६) हिंदुओंकावर्तमानीन धर्म अर्थात् भोलेभाले हिन्दु भाई किस रीतिसे विधर्मियों के फंदे में फंस जाते हैं. मूल्य १ आना (७) गाजीमियांकी पूजा. हिंदु कबर पूजियों को यह क्या सूझा ? पढकर देखलो मूल्य आधा आना (८) गउकी [illegible]लिश. मूल्य आध आना. (९) गोपुकार. मूल्य आध आना (१०) गोपुकारचालीसी मूल्य [illegible] आना. (११) गोविलाप ! मूल्य आध आना. (१२) गोदान व्यवस्था. मूल्य [illegible] आना. (१३) गोगोहार. मू० आध आना. (१४) काऊपोटेक्सन. अर्थात् एक अंगरेज की गोभक्ति मू० आध आना. (१५) गोरक्षापर बादशाहाके फतवे (व्यवस्था) मू० आध आना. (१६) गोहितकारी भजन. मू० आधा आना. (१८) भारत डिमडिमा नाटक. एकबार पढोगे तो भारतकी क्या दशा है जान लोगे मूल्य चार आन.

धर्म्मामृत पत्र.

अमृतं शिशिरे वन्हिरऽमृतं बाल भाषणम्।
अमृतं राजसंमानो, धर्म्मोहि परमामृतम्॥

वर्ष २.] बम्बई कर्कऽर्कः आषाढ मास सम्वत् १९५६ स० १८९९ जोलाई. [अंक ४.

निवेदन

प्रिय पाठक गण! मेरे शरीरके आरोग्य न रहने, तथा कोई उत्तम प्रबन्धकर्ता के न मिलनेसे श्रीधर्म्मामृत आप लोगोंकी सेवामें नही पहुंच सका. अब ईश्वरकी कृपा, तथा आप सज्जनोंकी अनुग्रह और वैद्यराज परमहंस श्री स्वामी परमानन्दजी महाराजकी दया दृष्टीसे औषधी देने पर, शरीर स्वस्थ हुआ है. इससे पुनः आप मित्रोंकी सेवा के लिय प्रस्तुत हुआ हुं. आशा है कि मेरा पूर्व अपराध क्षमा करेंगे.

गो० जगत नारायण शर्म्मा.

सूचना

सर्व भाईयोंको सूचना दी जाती है कि, आजसे श्री धर्म्मामृत सम्बंधी सर्व चिठी, पत्र तथा मनी-आर्डर निचे लिखे मेरे पतेसे आने चाहिये.

सर्व भाईयोंका शुभचिंतक
गो० पं० जगत नारायण शर्म्मा
श्री धर्म्मामृत कार्य्यालये
चंदाबाडी गिरगाम
बम्बई

उपहार

श्री धर्म्मामृत के ग्राहक महाशयोंको विदित किया जाता है कि जो ग्राहक श्री धर्म्मामृतका निछावर अक्टोबर मासकी ३१ ता० तक भेज देंगे, उनकी सेवामें एक अतिउत्तम मनहर्षित पुस्तक उपहारमें भेजी जावेगी. पर श्री धर्मामृत के निछावर साथ पुस्तकका महसूल एक आना विशेष भेजना चाहिये.

गो० पं० जगत नारायण शर्म्मा
श्री धर्म्मामृत कार्य्यालये
चंदाबाडी गिरगाम, बम्बई.

भारतोन्नती का साधन सद्धर्मही है.

(गतांकसे आगे)

(अर्य्य धर्म तथा वेदोंकी उपमा)

(७८) ब्रह्मो समाजका समाचार पत्र लिखता है कि जगतका इतिहास साक्षी देता है कि कभी यह भारत वर्ष अपने उत्तम जीवनकी वृद्धि के कारण शिखरपर पहुंचा हुआ था. इसके निवासी आर्य्य निश्चय धर्ममें प्रीति रक्खनेवाले और सभ्यता तथा योग्यता में जगतकी सर्व जातीयों में सर्वोत्तम वा सर्व शरोमणी समझे जाते थे. परन्तु यहां यह शंका उत्पन्न होती है कि भला ! वह कोनसा समय था कि जिसमें इस देशने उत्तम पदको प्राप्त किया था. इसके उत्तरमें यद्यपि ठीक २ अनुमान करना बहुत कठन है, तथपि. इतना कहना अयोग्य विदित नही होता कि वह समय इस्से कहीं पहले था, जव के प्रथम २ मुसल्मानोंने आकर इस देशको अपने हस्तगत गया" देखो (रसाला हिन्दुबांधव अक्टोबर सन १८७६ पन्ना २२९)

(७९) प्रफेसर जेकोलेट साहब लिखते हैं कि आर्य्यवर्त विद्याका हिंडोला है इसीकारणसे आरंभ में उन सबकी असली मां ने अपनी सन्तानको दूर पश्चिमि की ओर रवाना करनेसे पहले विना किसी साक्षी के द्वार उनके अंतःकरण में अनोखे ढंगसे भाष वा रीती नीती और उपासना तथा धार्मीक नियम डाल दिये, मैं वह विचार नही करता कि समयोंके बीतने और मनुष्योंकी उन्नती ने इस हद, और बखान करने में कोई वृद्धि नही की. मेरे हृदय में विना कहे पक्षपात के इन पवित्र पुस्तकोंके महत्व ने घर किया हुआ है जिनको वेद कहते हैं. वह ईश्वरका एसा याद दलाते हैं, जो सर्व उन मतोमें जिस्से अन्य अपनी ईश्वरी पुस्तक बताते हैं; स्वच्छ और पवित्र करता है. वेद ईश्वरकी ओरसे दावा करता हैकि धीरे और थोडी जगतकी उत्पति हुई. केवल वह ही एक संसार के सर्व उत्तरे हुओंसे ईश्वरीवाणी हैं जिसके विषय, उत्तम रीतिसे वर्तमान समय के सायंस विद्या के से तौर रखते हैं. देखो (पुस्तक ४ नं १५ स्टीस्टमीन कलकता स्पताहक १४ अपरेल सन १८८८ ई कालम ८ पत्र १)

(८०) एक विद्वान लिखता है कि ' हिन्दु धर्म के यथार्थ विषय के खोज करने के लिये प्रथम २ हमारी दृष्टि ऋग्वेद पर ही पडती है क्योंकि सारे संसार में इस्सेपरे और कोई पुरानी पुस्तक देखनेमें नही आती, मानो विद्याका भरपूर खजाना है, आरम्भ प्रकाश में आनेवाले समय का यह एक पुराना ग्रंथ है. देखो (हिन्दु धर्मकी फजीलत, ता० १फरवरी सन १८७६ ई पन्ना २२)

(८१) अलफन्सटन साहब इतिहास लेखिक अपने बनाय भारतीय इतिहासकी प्रथम पुस्तक के पांचवें खंड, अध्याय छे में वडी दृढता के साथ लिखते हैं कि कोई कारण एसा विदित नही होता है कि आर्य्य भारतवर्ष में अन्य देशसे आकर बसे हों—

(८२) पादरी समिथ साहब दीन हककी तहकीक (सलमत निरुपण) में लिखते हैं कि वेदमें परमेश्वरकी महमा इस प्रकार से की है कि वह विन हाथ पाओं के पकडता, चलता, और विन आंखके देखता, और वह सब कुछ जानता, पर उसे कोई नही जानता. देखो उक्त पुस्तके पन्ना २८२ सन १८७१ ई छपी अमरीकन मिशन प्रेस लुधिहाना की)

(८३) फिर वह पादरी साहब लिखते हैकि ऋग्वेद परमेश्वर के विषयमें यूं कहता है कि वह सर्वशक्तिमान और अद्वितीय और सबसे प्रथम और सर्व व्यापक, और काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद से रेहत और तीन काल और तीन अवस्था से परे है. देखो उसी पुस्तक का पन्ना ७ को)

आर्य्य जीवन चरित्र दर्पण.

(गतांकसे आगे.)

बाल व्ययमें प्रयत्न करके उत्कृष्ट पद प्राप्त करनेवाला भक्तिमान श्री ध्रुव.

यह किस स्त्रीपुरुष का चित्र है ? आहा ! आहा ! यह चित्र तो अपने आदि पुरुष श्री **स्वायंभू** मनु भगवान के पौत्र, और श्री महाराजा **उत्तान पाद** के पुत्र श्री **ध्रुव** जी तथा उनकी पत्नी का है.

बालक वृन्द ! महाराजा उत्तानपाद चक्रवर्ती राजा हुआ है. इस महाराज की सुनीती और सुरुचि नामक दो महाराणिया थीं. सुरुचि नामक महारा णीके गर्भसे महाराज उत्तानपाद को उत्तम नामक पुत्र प्राप्त हुआ और सुनीती नामकी महाराणीसे भक्तिमान श्री ध्रुवजीका जन्म हुआ था.

महाराजा उत्तानपाद की सुरुचि महाराणी पर अतिप्रीति होनेसे श्री ध्रुवजीकी माता सुनीती पर कृपादृष्टि जाती रही. इस कारण सुनीती महाराणी एक साधारण स्थितीको प्राप्त हो गईथीं, परन्तु पुत्र उत्पन्न होनेसे यह महाराणी साधारण स्थितीमें भी प्रसिन्न रहती थी, कारण कि ध्रुवजीमें बाल्यावस्थासे ही शुभ लक्षण उसे दृष्टिगोचर होने लग गये थे. और ध्रुवजी ज्यों २ बडे होते जातेथे. त्यों २ इनमें क्षात्रिय पन्न के शुभ लक्षण अर्थात महातेजस्वीपन, शूरातन, दया, क्षमा, शांति इत्यादि सदगुण जो क्षत्रियोंमें होते हैं यह सर्व इनमें विदित होते जाते थे. किंतु महाराजा उत्तानपादको सुरुचिके वशी भूत होनेसे ध्रुवजीके उत्तम लक्षण न सूझ पडते थे, परन्तु उलटे वह सुनीति महाराणी की भांत ध्रुवजी को भी समझने लगे.

एक दिवस महाराज सर्व सभाजनों के संग दरबारमें विराज मान हुये२, सुरुचि के पुत्र उत्तम को अपनी गोद में लिये प्यार कर रहे थे, इतने में ध्रुवजी भी वहां आगये, और बडी उमंग से पिता की गोद में बेठने के लिये निकट गये, पर महाराज ने इन्हे अभिनन्दन नही दिया. यह दशा देख पास बैठ हुई सुरुचि नें अति गर्व से ध्रुवजी को कहा ? "हे वत्स" यद्यपि तू राजकुमार है, परन्तु अभागनी के गर्व से अवतरा है, इस्से तू नृपति के आसन पर बैठने के योग नही है. यदि तुझे यह सुख भोगने की इच्छा हो तो तू मेरी कोष में से अवतार ले वत्स ! तू बालक है ? तुझे यह ज्ञान नही है. इस्से ही तुझे यह अदुर्लभ मनोर्थ हुआ है. हां ! यदि तुझे पिता की गोद में बैठने की इच्छा होय, तो तू तप कर इस अपने देह को त्याग करके, मेरे उदर में अवतार ले, तब तुझे यह राजसुख मिलेगा.

ध्रुवजीका हृदय सुरुचि के इन बचनों से बिंधा गया, और मुख का रंग मुरझा गया. मान भंग से निश्वास ले ते और रोते २ अपनी जननी के पास गये. सुनीती ने पुत्र को रोते हुये आते देख, दोड कर छाती से लगा लिया, और बडे प्यार से रोने का कारण पूछने लगी. वत्स ! क्या अंतःपूर में कीसीनें तुझे कुछ कहा है, यदि कहा है तो वत्स ! क्या कहा है. ध्रुवजीने अपना सर्व वृत्तान्त माता को कह सुनाया. सुनीती पुत्र के मुख से सौकन के कुवचन सुन कर, विलाप करती हुई बोली. हे तात ! मनमें दुखित मत हो उसने पूर्व जन्म में कोई भारि पुण्य किया होगा, तब ना वह पूर्ण सुख भोग रही है. वत्स ! हमे सुख कहां से हो. कारण कि हम ने पूर्व जन्म में कुछ नियम नही किया होगा, अथवा गो ब्राह्मण महात्माओं को संतोष, दान नहीं दिया होगा,

भला! जब दान पुण्य किया नहीं है, तो फिर अपना न्यून कर्म, राज्य का मान कैसे प्राप्त कर सकता है. अपने दत्त बिना कहां से पाईये. **वत्स!** जो वचन पर माता ने कहें हैं, वह कुछ असत्य नहीं हैं. **पुत्र!** यदि तुझे राज्य की अभिलाषा होय, तो तू वन में जा कर तप कर, तप करने से ब्रह्माजीनें पद्मासन पाया, तप करने से नारदजीका भाग्योदय हुआ है. इस लिय तू भी तप करके **ईश्वर** को प्रसन्न कर. कारण कि ईश्वर की प्रसन्नता से तेरा अभाग्य मिट जायगा. ध्रुवजी मातेश्वरी के यह वचन सुनकर बडी नम्रता से बोले, मातेश्वरी मैं आपका पुत्र हुं ईश्वर पाससे अवश्य ही आपका अभाग्य मिटाऊंगा, मैं सुख को नहीं संभारता. मैं अभी वन में जाता हुं, कारण कि ईश्वर ने जो यह देह दिया है, इस्से सुकृत करना मेरा कर्तव्य है. सुखको संभार ते दुःख होता है, माता जब प्रभु मुझे दर्शन देंगे, और दुःख को काटेंगे. तभी ही पीछे आकर आप के दर्शन करूं, नहीं तो वन में ही तप करते २ अपने प्राण त्याग दुंगा.

"**प्राण त्याग दुंगा**" यह वचन सुन कर माता ने शोकातुर हो कर कहा. **कुमार!** एक तो मुझे राजा ने त्यागा ही है, तो क्या? तू भी मुझे तज कर चला जायगा. **वत्स!** झुंड त्याग से जैसे मृगी नहीं रह सकती. वैसे ही मैं भी तुझ बिना अकेली नही रह सकती हुं. हे **पुत्र!** जैसे जल बिना मच्छली तडफरे कर मर जाती है, वैसे ही तुझ बिना मेरी भी दशा होगी. इस लिय हे तात! तू घर में ही रह कर तप कर, वन में जाने की कोई अवश्यक्ता नहीं है. ध्रुवजी माता के यह वचन सुनकर बोले, मां! अब दुःख का अंत आया समझ, घर बैठे तप नही हो सकता है. कारण कि मनमें मोह उत्पन्न हो आता है, इस्से प्रभु की प्राप्ति, काया दमन कर तप करने से हो सकती है, इसलिये मुझे आप आशीस दीजीये, कि मैं वन में जाऊं और तप से प्रभु को प्राप्त न करके शीघ्र घरमें लोट आऊं.

मातेश्वरी? प्रभु बडे करुणा करनेवाले हैं, वह दया करके शीघ्र ही मेरी आशा पूर्ण करेंगे इत्यादि वचन सुना माता को प्रसन्न कर, आशीस ले, मानभंग सहन न करने का जो क्षत्रियों का तेज, उसकी महमा बढाते हुये, ध्रुवजीने पांच वर्षकी बाल बुद्धिसे निश्चय कर अभ्युदय पिता की पुरी से बाहर निकल, घोर वन में गमन किया, अकस्मात मार्ग में नारद जीसें भेंट होगई, नारद जीने ध्रुवजी से अकेले घोर वनमें विचरने का कारण पूछा ध्रुवजीने बडी नम्रता से अपना सर्व समाचार वनमें आने का कह सुनाया. नारद जी ध्रुव जी का सर्व मर्म जानकर बोले, **हे राजकुमार!** तुझे मान अपमान मानना उचित नहीं है, कारण कि इस संसार में निज कर्मो से ही मान, अपमान, सुख, दुःख होता है. और तू जो इच्छा रख्कता वह तेरी इच्छा पूर्ण होनी बहुत ही कठिन है. इस्से तू यह हठ छोड दे.

हे वत्स! " सुख दुख में--सुखमें पुण्य का क्षय होता है, और दुःख होय तो पाप का नाश होता है, एसा मान कर आत्मा को सन्तोष दे, शरीर धारी मनुष्य अज्ञान का पार पाते हैं. इत्यादि वचन सुना, ध्रुवजी को घर में लौट जाने को कहा. पर ध्रुवजी ऐसे वैसे न थे किंतु दृढ प्रतिज्ञा वाले थे, इस्से इन्होने घर जाने की बात को पीछे हटा, नारदजी से कहा

हे महा मुनी! सुख दुःख में फंसेहुय मनुष्य हितार्थ जो आपने कृपा कर के शांति का मार्ग दिखलाया है, वह मेरे जैस को उत्तम दृष्टि में न आवे एसा है. मुझे तो जो पद त्रिभुवन में भी उत्कृष्ट है, और जो पद मेरे पिता अथवा अन्य कोई ने भी नही पाया, उस पद के जीतने की इच्छा हुई है. इस लिये हे महामुनी? कोई ऐसा उत्तम मार्ग बतलाओ कि जिस्से मेरी इच्छा पुर्ण हो.

ध्रुवजी के यह वचन सुन, महामुनी नारदजी बडी प्रसन्नतासे बोले. **हे वत्स!** यदि तेरी ऐसी ही अभिलाषा है, तो तू मधु वन में जा, वहां जाकर यमुनाजी में स्नान करके ईश्वर स्वरूपका ध्यान धर, और हम तुझे एक मंत्र देते हैं इस मंत्र का अनुष्ठान कर, और शरीर रक्षा के निमित उस वन के कंद, मूल

फल आहार करना. इतना कह फिर ध्रुवजी को एक मंत्र का उपदेश दिया,अर्थात् ध्रुवजी को इच्छित मार्ग दिखला विदा किया. ध्रुवजी नारदजी के कथनानुसार, मधु बन में गये, और वहां जाकर उत्कृष्ट पद की इच्छा से सर्व इन्द्रियों को दमन कर एकाग्र चित्त से तप करने लगे, अर्थात् पांच प्राण रोक कर एक पग से खडे हो कर कितनेक समय पर्यन्त तप करते रहे. ध्रुवजी के इस घोर तप को देख कर बडे तपी, जपी भी चकित हो गये. तथा भक्त वत्सल भगवान को प्रत्यक्ष दर्शन देना पडा. और यहां तक कि मन इच्छित वरदान मांग लेने को,भगवान ने कहा. ध्रुवजीने संसार सुख को त्याग केवल सदैव भगवत चरण में ही रहने का वर मांगा,इस्से भगवान और भी प्रसन्न हुये,और अविचल पद प्रदान किया.अर्थात् भगवान ने बडी प्रसन्नतासे कहा हे वत्स! तुझे अविचल पद मिलेगा, और तेरी सर्व मनोकामना पूर्ण होंगी, एसा कह ध्रुवजी को घर में जाने की आज्ञा दी. कारण कि इनकी मातेश्वरी इनका बाट देखती थी, कि कब मेरा लाल आता मुझे शांति देता है. इस्से घर जानेकी आज्ञा दी. ध्रुवजी ने भगवान की आज्ञा से, घरमें प्रवेश किया. पुत्रको घर में आये देख सुनीती महारानी के आनन्द का पार नहीं रहा. कारण कि नारदजी की कृपा से ध्रुवजी को वेदादि सर्व शास्त्रों की प्राप्ती से तत्वज्ञान हो गया था, और इस तत्वज्ञान से ही ईश्वर का मिलाप हो गया था.इसलिये प्रथम से विशेष शारीरिक वा आत्मिक वल भी ध्रुवमें हो गया था ध्रुवजी के घरमें आने पर नारदजीने महाराज उत्तानपादको ध्रुवजीके विषयका आकर बोध किया, और महाराजा उत्तानपादने नारदजीके बोधसे, ध्रुवजीको राज्य भिषेक देदिया, और आप तप करने के लिये अरण्यका मार्ग लिया.

ध्रुवजीने राज्य पाटका भार लेकर धर्म नीतीसे प्रजा को एसा तो प्रसन्न किया कि, चारों और लोग इनका गुण गाने लग गये.

ध्रुवजीकी पांच राणियां थीं अर्थात एक अहल्या-नामक, दुसरी इन्द्रकी पुत्री, तीसरी शिशुमार प्रजापतिकी कन्या भ्रमी, चौथी वायुकी कन्या, और पांचमी धन्या नामक स्त्री थीं, इन पांचों महाराणियोंसे ध्रुवजी को चार पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई थी.

ध्रुवजी की अपर माताके पुत्र अर्थात-ध्रुवजीके भाई उत्तम का विवाह होने को था कि इतनेमें, वह हिमवान पर्वत पर मृगया करनेके लिये गया. और वहांपर यक्षों के हाथसे मारा गया.

यद्यपि ध्रुवजी सुरुचिका मान अपनी माताके समान किया करते थे. परंतु तिसपर भी सुरुचि, अपने पुत्रके घरमें न आनेसे, ध्रुवजीको यह समाचार जताविना ही स्वयम पुत्रकी शोध के लिये बनको चली-गई, और वहां यहभी मृत्युको प्राप्त होगई. जब इनका सर्व समाचार ध्रुवजीको विदित हुआ तो ध्रुवजी बडे क्रोधमान होकर, यक्षोंसे भाई माईका बदला लेनेके लिये भारी सेना लेकर युद्ध करने को गये. और उनसे घोर युद्ध किया, इस युद्धमें सहस्त्रों यक्ष मारे गये. यह दशा देख, कुबेर स्वयम युद्ध करनेको आया, और ध्रुवजीने इसके साथभी घोर संग्राम ठाना. किन्तु अंतको स्वयंभू मनुजीने बीचमें पडकर ध्रुवजीको उपदेश दिया, और युद्ध बन्द करवाया. और दोनो महाबलीयो को निज २ धाममें विदा किया. इसके पीछे ध्रुवजीने सहस्त्रों यज्ञ किये, और प्रजाका उत्तम प्रकारसे पालन लालन और रंजन करते २ पुष्कल वर्ष पर्यंत राज्यकर, फिर अंतको अपने ज्येष्ठ पुत्रको राज्याभिषेक करके पुन; बनमें तप करनेके लिये चले गये. और तप करते २ ही विष्णु पदको प्राप्त होगये. अर्थात जो अच्युत पद केवल शांत समदर्शी, शुद्ध और सर्व भूतका रंजन करनेवाला महात्माओं को मिलता है. वह ही अचलपद ध्रुवजी को मिला. इस रीतीसे यह स्वपराक्रम करके जगत में अमर कीर्ति छोड गये हैं.

अय! महत्व; की इच्छा रखने वालो, आप लोगोंको यह ध्रुव चरित्र स्मर्ण रखने के योग्य है. इस चरित्र परसे यह शिक्षण लेने का है कि, राज कुमार ध्रुव पांच वर्ष की व्यवका ठीक बालक था. पर इसमें पौरुष था, तो ही इनमें से केवल दुर्वच रुप घर्षण (घसारा) लगनेसे प्रकाश निकल आया, जैसे सूर्य्य कान्तमणि

अचेतन है, परंतु सूर्यकी किर्णों के स्पर्श होते ही तप कर अग्नि को उत्पन्न कर देती है. तो फिर तेजस्वी पुरुष दूसरों के किये विकार कैसे सहन करसक्ते हैं, कदापि नही सहन कर सकते. इस कोमल राजकुमार को भारी विपत्ति आपडी, परन्तु इसने उस विपत्तिको ही महत्ता प्राप्त करने का साधन करलिया था, अर्थात ध्रुवजी तिरस्कार पाने पर, कुछ निराश होकर, केवल माताके पास रोकर ही बैठे न रहे, किन्तु तुरन्त अपनी उन्नतिके उपायमें लग गये. और उनको यह उपाय कुछ सहल न था, परंतु यह दुःख और भय दायक था, तिसपरभी ध्रुवजीने ये जान लियाथा कि मेरी दशा बहुत हलकी है. और इसके सर्वोत्तम करनेकी जो इच्छा है, तो प्रयासभी वैसा ही करना चाहिये. एसा दृढ निश्चय करके, तप अर्थात इच्छित पद सिद्ध करनेके योग्य, कर्म करने केलिये घरसे निकले. और इस में एसा तो महान प्रयन्त किया कि, ईश्वर कृपासे राज वैभव का पुष्कळ सुख ले, फिर अंतको उत्कृष्ट पदभी प्राप्त किया. इसपरसे यह समझमें आता है कि-महान पुरुषा दुख को भी सुखका साधन कर लेते हैं, इतनाही नही परंतु वह दुःख को एसा वश कर लेते हैं कि जो दुख सामान्य मनुष्यें को अपना दास बनालेता है. पर वह ही दुःख महात्माओं को यथेच्छ साधन हो जाता है. महात्मा जन सुख दुःखमें समान रहते हैं, वैसे ही मनुष्यों को भी सुख दुःखमें समान रहना चाहिये. दुःख देखके न गभरायें, परन्तु धर्यतासे सुख प्राप्ती उपायक शोधन का यत्न करें, तो ईश्वर अवश्य ही सहाय होगा. इसके लिये ध्रुवजीका यह चारित्र अवलोकन करना उचित है. कारण कि ध्रुवजी ने उपायके शोधन कियेसे ही उत्कृष्ट पद प्राप्त किया था, कि जिसके कारण इस पृथिपर अद्यापि सुधी अचल ध्रुव ग्रह (तारा) के साथ नाम अचल रहा है. और जिसका प्रताप आज प्रयन्त आर्यवतमें गाया जा रहा है. धन्य है ध्रुवजी. और धन्य है इनकी मामेश्वरीको कि जिसने अपने पुत्रको सन्मार्गमें लगा, अचल नाम प्राप्तक कराया ! ! ! अहो? माता हों तो सुनीति जैसी हों. भारतका ऐसी ही माताओं से कल्यान था. हे ईश्वर हमे पुनः एसी मातायें प्रदान कर.

योगी और जिज्ञासु.

प्रिय वाचकवृन्द ! प्राचीन समय में भारत वासी जैसे शारिरिक, आत्मिक, परमात्मा प्रेरक मूल सत्य धर्म और प्रत्येक वस्तु सम्बंधी विषयों की परिक्षा का प्रयत्न कर, सत्य ज्ञान प्राप्त करते थे, वह प्रयत्न अबके भारतीयजन नही करते हैं, अब तो केवल संसारिक क्षण भंगुर, अर्थ विषयोंमें ही लुब्ध रहते हैं, इससे ईश्वर सम्बंधी ज्ञान में बालकों की भांति अज्ञान अवस्था को प्राप्त हो गये, और हो रहे हैं. क्यों न हो जब के इस समय के गुरुजन ही ज्ञाना अंध हो रहे हैं, तो फिर शिष्यवर्ग क्यों न हों, बडे शोक की बात है कि जिनके पुरुषाओं ने आत्मा, परमात्मा क्या है एसी अपनी विद्या बुद्धि दिखला कर उज्वल उत्तम यश ऐसा सिखरपर चढाया था, जिस की तुलना अभी तक कोई अन्य देशी महान् विद्वान भी नही कर सका है, वह विद्या इस समय के आर्य्य सन्तानो में, देखने में नही आती है. कहिये ? यह लज्जा और शोक की बात नहीं है.

आहो ! आर्य्य भाईयो आज तुम किन विषयों पर झुके फुले नही समाते हो. अरे ! यह विद्या जिस पर आज तुम झुके जा रहे हो, यह तो तुम्हारे पूर्वजों के आगे कुछ भी वस्तु नही थी. देखो आज विदेशी लोग ही स्वयं इसकी ओर से मन हटा कर तुम्हारे पूर्व पित्रों की विद्या की ओर आरहे हैं. और तुम अपनी विद्या तज कर उधर जा रहे हो. यह कैसा आश्चर्य का विषय है, कि आपने घर में रत्नो के भरपूर कोष की ओर दृष्टि न दे कर, दूसरों से कांच पाने की अभिलाष कर के उधर जारहो. किन्तु स्मरण रक्खो ! कि उस कांच की प्राप्तिसे तुम्हारा कदापि कल्याण होने वाला नही है, तुम्हारा कल्याण होगा तो तुम्हारे ही कोष के रत्नो से होग. हमारे एसे कहने का सारांश आप लोगों को निम्न लिखत वार्ता के पठन से स्वयम ही विदित हो जायगा.

वार्ता का प्रथम प्रकरण.

एक समय की बात है कि, पश्चिमी विद्या के महान् विद्वान एक आर्य्य सन्तान को, सत्य धर्म और आत्म ज्ञान के जानने की अभिलाषा हुई, और वह सत्त गुरू की खोज के लिये घर से निकला, और कई एक देशों में भ्रमण करता हुआ दण्डकारण्य में जा पहुंचा.

इस आरण्य में सृष्टि कृत जड़ पदार्थ और वनस्पति इत्यादि जो कुछ उसे दृष्टि गोचर होते थे, वह उन से अति आनन्द पाता हुआ, बडे उल्हास से आगे बढ़ता हुआ चला जा रहा था कि, अकस्मात उसे उत्तर तथा दक्षण के दोनो ओर थोडे ही अंतर; पूर्व पश्चिम में, एक बड़ा भारी पर्वत दिखलाई पढ़ा. इस पर्वत के चारों ओर, छोडे २ पर्वतों की एक सरखी कतार लगी हुइ थी, मानो उस बडे पर्वत के गले में यह हार (माला) की भांती पड़ी हुये थे. इन पर्वतों पर छोडे बडे वृक्ष उगें हुयें, हरियाली की बहार दे रहे थे. और इन वृक्षों में नाना प्रकार के सुवासिक, तथा रंग बिरंग के पुष्प लटक रहे थे. इन पुष्पों में से बहुतसी पुष्पोंकी पांखडियों मे गुलाबी, श्वेत वा नीला रंग समा रहा था, तथा कितनेक तो केवल श्वेत, लाल, नीले पील इत्यादि अनेक भांत के दिखलाई देते थे. और इन वृक्षों में से कितनो के तो पत्त भी हरे, नीले पीले, लाल, और श्वेत देखनेमें आते थे. तथा इन वृक्षोंमें से बहुतसी वृक्षोंपर नाना प्रकारके स्वगंधित, और स्वादिष्ट फल भी लगे हुये थे. इन सर्व पर्वतों पर कई एक जगह में निर्मल दूध सारीखे जलके झरने भी बेह रहे थे. इस भांति नाना प्रकारके सृष्टि पदार्थ अवलोकन करने से उस विचार वंत दीर्घ दृष्टा, धर्म्म जिज्ञासु के मनमें चमत्कारिक तरंग उत्पन्न हुये, बिना न रहे. अर्थात् उसे किसी प्रकार के, भारी विषय सुख से भी, इस दीर्घ विचार में अति परमानन्द हुये बिना नही रहा. अर्थात् वह इसी प्रकारके प्रौढ विचार में उर्द्ध लिखत बडे पर्वत की ऊंची टेकरी के पास जा पहुंचा. वहां पर उस टेकरी में खुदी हुई एक विशाल गुफाको देखकर उसकी ओर गया. और उस गुफामें प्रवेश करने के प्रथम उसे एक दर्शनिय सुशोभित कमानकी भांति बिना किवाडके एक दरवाजा दिष्टि गोचर हुआ, यह दरवाजा उपर की टेकरी में से खोदकर निकाला हुआ था. और उस पर सुन्दर २ नाना प्रकार के चित्र निकाले हुये थे. यह चित्र उस टेकरी के पत्थर पर से ही निकासे हुये थे. और उस दरवाजे के दोनो बाजू में एक२ चबूतराभी उस टेकरी के पत्थर में से ही खोद कर बनाया हुआ था. उस गुफाके अंदर जाने से जिज्ञासु को महा विशाल अलौकिक एक सभा मंडप, और चमत्कारिक एक दिवानखाना देखने में आया. उस सभा मंडप के ठीक मध्य में उस पर्वतसे खोदकर बनाया हुआ एक सिंहासन था. उस सिंहासन पर किस अलौकिक लकडीका बनाया हुआ एक छत्तर था, जो आज सहस्त्रों वर्ष बीत जानेपर भी वैसेका वैसेही था, इस छत्तरमें किसी प्रकार का न कोई छिद्र था, और न उसमें किसी कीटका प्रवेश हुआ २ था. यह छत्र एक प्रकारकी लकडीका तो था, परन्तु यह लकडी कहांसे मिली, इसका ज्ञान आजतक किसी महा विद्वान शिल्पीको भी नही लगा है—इस सिंहासन के आस पास कितनेक स्थम्भ उसी पर्वतमें सेही खोदकर निकाले हुये थे, और इन स्थम्भों पर असवार सहत बडे २ हाथी, घोडे, तथा स्त्रि, पुरुषों के भव्य और शोभाय मान चित्र निकासे हुये थे. और उस सभा मंडपके एक ओर, एकांत निवास करने के लिये एक भारी स्थान था. स्यात ! वहां ऋषि मुनि ध्यान करने को बैठते होंगे. और दुसरी ओर उसके कितनी एक कोठरियां बनी हुई थीं. इन कोठरियों के आजु बाजु में अन्य कई प्रकार के खोदे हुये स्थम्भ थे. इन स्थम्भोंपर चारों ओर झरोखे बने हुये थे. और इन झरोखोंके अंतर वाले एन मध्य के स्थम्भों के शिर पर चौखूंटी सरखी प्रथम एक आकाशी होगी एसा विदित होता था. और यह आकाशी पर्वत की अति ऊंची शिखर परथी. इस आकाशी तथा झरोखों में जाने के लिये पोडियां (सीडियां) बनी हुई थीं. जो अब अनेक जगह टूटी फूटीसी हो रहीं थीं. और इस पर्वतके आस पास भी सर्व ठोर नाना भांतके पुष्कल चित्र बने

हुये थे, पर यह सर्व चित्र टाकनीसे खोदकर, पर्वतके पत्थरसेही निकाले हुये परतीत होते थे.और यह पर्वत शुद्ध काले पाषाणका था. पर इस पर्वत की वह गुफा कालके फेर से, इस समय उसके कई एक भाग नाश हो गये हैं, परन्तु तो भी बड़ी सुहावनी है. इस गुफामें बहुत सी जगह पर कुछ लेख भी खुदे हुये हैं, और इन लेखोंके बांचने के लिये पश्चिमी भोमके आग्रही विद्वान पुरुषों की ओर से बडा भारी प्रयत्न चला गया, किन्तु आज सुधी यह कार्य्य सिद्ध हुआ हो, एसा प्रतित नही होता है. यह उर्द्ध अलौकिक लेख का कार्य्य कब, किस राजा के समय में बना होगा. इसका कुछभी यथार्थ निर्णे आज तक किसी से नही होसका है—"प्राचीन कालकी एसी चमत्कारिक शिल्प विद्याका प्रत्यक्ष प्रमाण देखकर, हरएक पश्चिमी भोमके निष्पक्षपाती विद्वान आश्चर्य पा, गर्व त्याग, यह कहे बिना न रहेंगे कि "इसमें कोई भी शंका नही है कि आर्य्य देश प्राचीन कालमें कला कौशल्य में अति चमत्कारि था." और जो सांप्रत काल में यूरोपखंड, कला कौशल्य इत्यादि विषयों में अति शिखर पर चढा हुआ, एसा मान रहे हैं, यदि वह आर्य्योंकी शिल्प विद्याका यह प्रत्यक्ष प्रमाण देखलें, तो वह एसा कहे बिना न रहेंगे कि निस्संदेह आर्य्य देशकी बराबरी करने में अभी यूरोप बहुत ही पीछे है.

ऐसे एकान्त स्थान में पूर्व कालमें आर्य्य, कोई राज्य विषयका विचार, अथवा धर्म सभा करते होंगे. किंवा यहांपर सुज्ञ जिज्ञासुओं को पवित्र बोध कर, नाना प्रकार की उपयुक्ति विद्यायें सिखलाते होंगे, कारण कि इस गुफाके अवलोकन करने से एसा ही अनुमान होता है कि, इस गुफा में जो सिंहासन रखा हुआ है, उसपर अवश्य ही कोई राजा महाराजा, किंवा कोई महान विद्वान, ऋषि, मुनि, बैठ कर अपने राज्य कारबारियों के सहत कोई विचार करता होगा. अथवा कोई ऋषि, मुनि अपने शिष्य वर्गों को बोधके लिये भाषण करते होंगे, और उस सिंहासन के आगे के मंडप में श्रोता जन बैठ कर, एकाग्र चितसे भाषण श्रवण करते होंगे. और उस ऊंची आकाशी में नलका यंत्र द्वारा, अथवा कोई अन्य विद्याके द्वारा भूगोल तथा खगोल पदार्थोंका अवलोकन करके, उनके चमत्कारी नियमों को निकाल कर, शुभ विद्याकी वृद्धि करते होंगे.

उर्द्ध लिखत इस प्रकारका शांत और निर्विकार स्थान देखकर. जिज्ञासुके आनन्दका पार नही रहा. उसने इस स्थान में निवास करने, का मन में निश्चय किया. और एक शिला पर जा बैठा. जब कुछ देर तक बैठ कर शरीर स्वस्थ हुआ, तब उठकर एक शुद्ध निर्मल झरने के उदक में स्नान किया. और फिर उस पर्वत की अति ऊंची शिखर पर चढ कर सृष्टि की रचना का अवलोकन करने लगा. पर्वत के ऊंची शिखर पर चढ कर क्या देखता है कि, पर्वत के थोडे अंतर पर निर्मल पानी की एक नेहर कुछ दूर से निकल कर वेह रही है. और इस नेहर के मार्ग में जो कहीं २ पर गुहा (खंदक) नाले और मार्ग (रस्ते) आगये हैं, उन सर्व पर पुख्ता पुल बंधे हुये हैं, और उन पुलों के उपर से नेहर अपने पानी के वेग से वेहती हुई जा रही है. तथा उन, पुलों के निचे से मनुष्य पशु अपना २ मार्ग तह करते हुये जा रहे हैं. और जहां पर इस नेहर के निकट छोटे २ नाले आगये हैं, वहां पर लम्बी चौडी एक भींत बांधी हुई है, ताके वृष्टि का पानी अन्य कहीं न जाकर उन नालों के द्वार नेहर ही में प्रवेश करता रहे. और जहां कहीं नेहर के समीप राज मार्ग (बडी सडक) आगया है. वहां पर सुरंग के ढंग के पुल बांधकर राज्य मार्ग के नीचे से पानी निकलने को रस्ता बना दिया है, उस पुल पर से मनुष्य पशु चले जा रहे हैं. फिर इस नेहर का अति उत्तम उपयोग एसा देखने में आया कि, इस का पानी ठिकाने २ खेतों में जारहा है, कि जिसे खेत नाना प्रकार के धान्य, फल फूल आदि से हरे भरे हो रहे हैं.

फिर दुसरी ओर उसे थोडे ही अंतर पर एक भारी राज मार्ग देखने में आया, उस मार्ग पर से

नाना भांत के मनुष्य पशु प्राणी आ, जा रहे हैं. इन मनुष्यों में से कितनेक तो निर्धन वर्ग के, उदर पोषण के लिये घास का भार सिर पर धरे, बेचने के लिये बड़ी झपट से, नगर तथा ग्रामों की ओर जा रहे हैं, और कितनेक पाओं से चल रहे हैं, तथा कितनेक धनाढ्य गाडी, घोडे, रथ इत्यादि वाहनो पर बैठ हुये, अनुचरों सहत संसारिक कार्यों के हेतु आ जारहे हैं. और कितनेक गाय भैंस इत्यादि पशु वन से चर२कर, अपने २ स्वामी के घर को लोट रहे हैं. इस के उपरांत उसे पर्वतों, तथा कंदरों में नाना प्रकार के वन पशु, बाघ, सिंह, रीछ, मृग, वानर इत्यादि अनेक वर्ण के भांतेत, और विचरते देखने में आये. इन पशुओं में से बलवान पशु, निर्बलों को मार २ कर. उनका नाश कर रहे हैं. इस प्रकार की सृष्टि रचना का अवलोकन करते२, जब सूर्य की कला क्षीण हुई, और सूर्य अस्त होने का समय समीप आ गया. तब धर्म जिज्ञासु को नीचे जाने का विचार हुआ. और ज्यों ही नीचे उतरने की तैयारी करने लगा कि, त्यों ही अकस्मात उसकी दृष्टि एक भव्य पुरुष पर पडी. यह पुरुष गौर वर्ण, वृद्ध कोमल अंग, सिर पर जटा सोभे, गले में रुद्राक्ष की माला, श्वेत यज्ञोपवित धारण किये हुये, और एक कपीन लगाय, तथा मस्तक पर श्वेत भभूत रमाय, एक हाथ में अंगोछा और दुसरे हाथ में कमंडल लटकाये, मुखसे किसी स्तोत्र का पाठ करता हुआ नीचे से पर्वत उपर आ रहा था. इस पुरुष को उपर आते देखकर, जिज्ञासु वहीं खडा हो कर, इसकी ओर ताकने लगा; कि देखूं यह कहां को जाता है. जब वृद्ध पुरुष उपर किसी गुफा के अंदर जाने लगा, तब तो जिज्ञासु बडी शीघ्रतासे उतर कर उसके पीछे२ उस गुफा की ओर चला, परन्तु इस के गुफा तक पहुंचने के प्रथम ही, वह वृद्ध पुरुष उस गुफा में से बाहर निकल कर पत्थर की एक शिला पर आकर बैठ गया. इतने में जिज्ञासु भी उसके पास जा पहुंचा. और पास आते ही उस वृद्ध पुरुष को चरण वन्दना कर, फिर सन्मुख एक सिलापर जा बैठा. वृद्ध पुरुष जब स्तोत्र समाप्त कर चुका, तब उसने इसे अतिथी जान कर, बडे प्रेम से आगत स्वागत कर के पूछा. वत्स! तुम सदगृहस्थ का एसे बिकट स्थान में कैसे आगमन हुआ. जिज्ञासु ने उत्तर दिया महाराज केवल आप जैसे महात्माओं के दर्शनार्थ ही दास का यहां आना हुआ है. कारण कि आप महान् पुरुषों के दर्शन, और समागम से मनुष्यों का कल्यान हो जाता है, एसा शास्त्रों में लिखा है. हे प्रभो! मेरे मनोविकारों, तथा शंकाओं का आप यथार्थ निवारण कर, मेरे आत्मा को शांति प्रदान करें गे, ऐसी मैं आशा रखकर आपके चरणों में आया हुं. क्योंकि मैं अपने मनोविकारों की ज्वाला से दग्ध हुआ २ सर्व ठोर फिरा, पर कहींभी शांति प्राप्त नहीं हुई. मुनिवर! मेरी एसी दशा देख कर श्वेत द्विपी एक विद्वान ने कहा कि यदि तू दंडकारण्य में जायें, और वहां तुझे हरदत्त* नामक योगी मिलें तो, निश्चय वह तेरे मनोविकार की ज्वाला को शांत कर दें गे, अन्य कहीं भी होनेवाली नहीं है. महाराज! उसके कथनानुसार मैं यहां पर आया हुं. और उस योगीराज की खोज यहां पर कर रहा था कि, अकस्मात आपका दर्श होगया. महाराज! आपके दर्शन करने से हित करुणा यह ही कहती है कि जिनकी तू खोजमें था वह यह ही हैं—

योगीराज! धर्म जिज्ञासु के यह वचन सुन कर बोले हे वत्स! जिस की खोज करते हुये, तुम यहां पर आये हो वह हम ही हैं. पर तुम अभी अति श्रम सहन करके यहां पर आये हो, इस लिये प्रथम तुम हस्त, मुख, पाद इत्यादि धो कर स्वस्थ होवो, और फिर भोजन से निश्चित हो कर अपनी शंकाओं को प्रकट करना. हमसे जहांतक बनेगा, उनका निवारण करें गे. जिज्ञासु! योगी का स्नेह युक्त आमंत्रण जान, उसका मान्य रखकर, बडी नम्रतासे आज्ञा ले कर उठा. और सायं शौचआदि कियाओंसे स्वच्छ हो; फिर योगी राज के पास आया. इतने में भोजन की तैयारी होगई, और दोनो पाक गृह में गये. पाक गृह में इनके आनेसे

---

*श्यात? पंजाब देश निवासी हरदासजी ही यह योगी हों, क्यों कि वर्तमान समय में वेहही बड़े प्रसिद्ध हुये हैं.

प्रथम ही दो आसन बिछे हुये थे, जिनके आगे केले के पत्रकी एक२पत्तल परोस कर रखी हुई थीं. इन पतलों के परोसे हुये पदार्थों में इतना ही भेद था कि, जिज्ञासू की पत्तल पर गेहुं, जौ के आटे की सुन्दर नरम २ पतली रोटियां, तथा अन्य कितनेक प्रकार के दूध से बनाये हुये पदार्थ, और कितनेक कंद मूल फल के पदार्थ घृत तेल से बनाये हुये रखे थे. यद्यपि योगी राज की पत्तले पर भी येही सर्व पदार्थ रखे हुये थे. परंतु इतना भेद था कि उन में तेल, मरची, निमक, इमली अथवा अन्य किसी जात के तीक्षण पदार्थ मिश्रत न थे. केवल किसी २ पदार्थ में यत्किंचत अदरक (आदु) था. भोजन करने के उपरान्त जब दोनो एक स्थान पर बैठ, तब मुख शुद्धि के लिये सौंफ का वास ले, फिर जिज्ञासो को पान सुपारी दी. **जिज्ञासु** पान सुपारी खाकर बडी नम्रतासे बोला. योगीरज! भोजन करते समय मुझे एक शंका उत्पन्न हुईथी. यदि आज्ञा हो तो वह शंका निवेदन करूं. योगीराजने उत्तर दिया. हां! कहो क्या शंका उत्पन्न हुईथी. जिज्ञासुने कहा. महाराज ! मुझे यह शंका हुई कि, मुझे जो आपने निमक, मसाले आदि मिश्रित पदार्थ भोजन को दिये, और आपने बिना स्वादके भीके और सादे पादार्थ जो भोजन किये हैं, इसका क्या कारण है. इस मेरी शंकाका कृपाकरके निवारण कीजिये. **योगीराजने** उत्तर दिया. वत्स ! तुम्हारी इस शंका के निवारण करने का यह अवसर नही है, आगे प्रसंग आने पर इसका स्वाभाविक रीतसे आप ही निवारण हो जायेगा. इस समय प्रथम तुम अपना नाम विधान, तथा वर्णाश्रम और अपने पूर्वजोका संक्षेपसे इतिहास, वा अपने आने का मुख्य हेतु क्याहै. वर्णन करोगे तो अति उत्तम होगा। **जिज्ञासुने**! योगीराजके यह बचन सुन कर कहा, महाराज! मेरा नाम उमादत्त चटोपाध्या है. और मेरा जन्म कान्यकुब्ज बंगाली ब्राह्मणके घरका है, वर्तमान समयमें हुगली जिलेके अंतरगत एक ग्राममें निवास करताहुं. मेरे पुर्व पुरुषा बंगदेशी एक राजाके यहां मंत्री पद परथे, पर विपरीत कालके होनेसे, अविद्वान, आर्य्य द्रोही, निर्दय, विषयी, स्वधर्माभिमानी म्लेच्छोंका स्वसम्प से इस देशमें संचार हुआ, और आर्य्य राजों महाराजाओं, तथा उनकी प्रजाका दुर्भाग्यवश जो अनहित हुआ, उसके कथन करने में कुछ पार आवे एसा नही है. किन्तु तो भी इस प्रसंगको आपके सन्मुख संक्षेपसे कहता हुं. गुरुदेव! अर्वाचीन समय में आर्य्य राजाओंके कुसंप, और विषय लंपट होने से, वह प्रजा के अप्रीति पात्र होगये. इन्ही मुख्य कारणो से उन्हे म्लेंच्छ राजाओं के अति नीच तिरस्कार सहन करने के उपरान्त दासत्व भी करने का प्रसंग आ पडा. भला ? फिर हमारे जैसों की दुर्दशा हो जाय तो यह कुछ आश्चर्य की बात नही है. परन्तु उद्धे लिखत म्लेच्छ लोग भी अतुल्य लक्ष्मी, और सत्ता के प्राप्त होने से, दिन २ अज्ञानी होते गये. इससे वह अनीति और अयोग्य आचरण पर चलने लगे. इसका फल उन्हे यह मिला कि, शीघ्रही उनका यहां से राज्य नष्ट हो गया. अब उनके स्थान पर इस समय इस देश में सर्व ठौर, सुज्ञ, विद्वान् और बुद्धि वाले पश्चिम भूम निवासी श्वेत लोगों का राज्य स्थापन होगया है. प्रभु ! इन लोगों ने आते ही इस देश में सत्य. नीति और उपयुक्त विद्या का प्रचार करना आरम्भ कर दिया. इस कारण इन्हों ने प्रजा की अति प्रीति भी उत्तमता से सम्पादन करली है. और इनके सम्बंध से, यहां के निवासियों ने भी थोडी बहुत इनकी भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लिया है. **गुरुदेव**! मैंने भी इनकी भाषा का ज्ञान सम्पादन किया है. परन्तु मुझे इस भाषा में सिवाय संसार सुखके, पार लौकिक सुख जो सर्व धर्म्मावलम्बी कथन करते हैं. वह कुछ भी जानने में नही आया. और न मुझे अपनाही कुछ ज्ञान हुआ कि मैं क्या हुं. और न सृष्टि के पदार्थों काही बोध हुआ कि यह क्या हैं, और यह कैसे बने हैं, और इनका बनाने वाला कोई है वा नही, यदि है तो उसका क्या स्वरुप है, और उसने इन सर्वको कहांसे, कैसे बनाया है. इस विषय के जानने लिये मैं सर्व धर्म्मावलम्बीयों, तथा वर्तमान तत्त्व ज्ञानियोंके पास

गया.किन्तु मुझे किसी ने भी सन्तोष नही किया. ऐसी दशामें मुझे देख, उपरके कहे श्वेत विद्वानने इस शांति स्थानमें भेजादि. मुझको यहां आने, और आपके दर्शन पाने से पूर्ण आशा हो गई है कि, आप निश्चय मेरे मनोविकारों को निकाल कर शांति प्रदान करेंगे.

योगीराज ! जिज्ञासु के सर्व समाचाह सुन कर बोले. हे जिज्ञासु ! आज तुम बडा श्रम करके यहां आये हो, और रात्री भी विशेष हो गई है, इससे आज तुम अपनी शंकाओं को कि जिनाका उत्तर चाहते हो, उनका मनन करके निद्रा लो. और कल प्रात:काल में उठकर, शौच, स्नान, तथा ईश्वर प्रार्थना इत्यादि नित्य कर्मों से निश्चिंत्त होकर, मेरे पास आना, और अपनी शंकाओंका वर्णन करना. **जिज्ञासु ने!** योगीराज के यह वचन सुन कर कहा. **गुरुदेव !** आप से क्षमा मांगकर यह कहता हुं कि आप ने जो नित्य कर्मों में ईश्वर प्रार्थना करने की मुझे आज्ञा दी है ? सो कृपा नाथ प्रथम ईश्वर सिद्धि हये बिना, मैं प्रार्थना किस की करुं. कारण कि यह ही तो मेरी मुख्य शंका है, हां ! जब आप ईश्वरका होना सिद्ध कर दें गे. तब से मैं ईश्वर प्रार्थना करनी आरम्भ कर दूं गा. **योगीराज !** ने उत्तर दिया ! हे जिज्ञासु यदि तुझे ईश्वर के न होने की भी शंका है. तो कल प्रथम इसका ही निवारण करें. जिज्ञासु! ने कहा ठीक है ? पर मेरी आपसे एक यह भी प्रार्थना है कि, यदि आप दास पर पूर्ण कृपा रखते हैं. तो मुझे आज से ही अपना शिष्य जान कर बोध किजिये गा, तो बडा भारी मुझ को आनन्द प्राप्त होगा. **योगीराजाने** उत्तर दिया तथास्तु ! और फिर जिज्ञासुको शेन करने के लिये स्थान बतलाकर, अपने शेन स्थान में चले गये. और जिज्ञासु भी अपने शेन स्थान पर आकर अपनी शंकाओं को मनन करता हुआ निद्रा के वशमें हो गया.

(शेष आगे.)

भारत पै आरत !

(गतांकसे आगे) छंद पधरी.

सुन शेख जात उजबक्क नाम, मीरां प्रधान पुनि जुद्ध धाम; चाली-श्श दून जिन पीठ ढाल, चालीस दून उरकंठ माल. पच्चास दून पेहेरे कवच्च, पच्चीस दून शिर टोप रच्च; चकमार पंच मणको उदार, हज्जार तीर जिहि भाथ मार, कव्वान पकर उजबक्क पीर, दोय कोशपें न चूकंत तीर; दोय कोश पेंड पुनि तीर मार, सर लगत बान पाषान फार. षट भोग जोग महिषा अहार, सुनि पराक्रम अरि गर्व गार.

अर्थात्--महाराज ! सौदागरके योद्धाका नाम उजबक्क पीर है, और यह ही मीरां (सौदागर) का प्रधान मंत्री है, यह योद्धा छे २ पाडे (भैंसे) खा जाता है, और यह बडी पुष्ट (मजबूत) कवच, वा हथियार धारण करता है, कि जिस का कुछ वर्ण नहीं होसकताहै. इसका तीर तो दो २ कोससे चलने पर भी पत्थरको छेदन करदेता है. इस कारण इस वीरके सन्मुख युद्ध करनेकी किसी को समर्थ नही पडती है.

महाराज पृथ्विराजने चन्द कविके यह वचन सुनकर कहा! क्यों ! कविराज ! जब सौदागर का योद्धा ऐसा है तो, फिर अपने यहां उसके साथ कौन युद्ध करनेवाला है. और जब कोई उसके साथ युद्ध ही नहीं करेगा, तो, क्या ? हमारा मुफ्त में ही राज्य चला जायेगा, क्या इससे बडा कलंक अपनेको नहीं लगेगा. कविराज राज्य जाये तो कुछ परवाह नही है, पर क्षत्रिय नामको कलंकित तो नहीं होने देना चाहिये. अस्तु! यदि कोई उसके संग युद्ध करनेवाला हमारे सामंतोमें से नही निकलेगा, तो हम

१ दोमनका एक। दून. २ बखतर. ३ कटार. ४ बाण रखने का चौंगा.

स्वयं उसके साथ युद्ध करेंगे.और हार जीत तो परमेश्वरके हाथमें है; किन्तु कोई ऐसा तो न कहेगा कि डरकर मुफ्तमें ही राज खो दिया. इसलिये कविराजा हम उसके साथ युद्ध करेंगे.

कविचंदने पृथ्विराज का यह साहस देखकर उत्तर दिया. पृथिनाथ! अपने यहां भी उसके तुल्य एक योद्धा है, यदि वह तैयार हो तो निश्च उसको जीत ले ऐसा है.

महाराजने पूछा उसको जीतने वाला हमारे यहां एसा कोनसा योद्धा है. कविचन्द ने महाराजके उस योद्धका निम्न लिखत कवितामें वर्णन किया कि.

छप्पय।

पिये दूध मण पंच, शेर पेंत्तीश स सक्कर; अन्न नव ताकडी खाय, वळी इक मटको तक्कर; कालकूट त्रय शेर, सवा मण घृत सुपोषन; कस्तूरी इकशेर, शेर दो केशर चोषन,मण चार दहीं महीषी तरज, भोगराज मटकी भरे; सवा प्होर दिन चढतहीं, सीरामणी चामुंड करे॥१॥

महाराज! चामुंडरायका नाम सुनकर बेड प्रसन्न हुये, और तुरन्तही कविराजको संगले दरबारमें आये, और चामुंडरायको बुलवा*भेजा. जब **चामुंडराय** दरबारमें आया. तब महाराज नें अपना सर्व समाचार उसे कह सुनाया, चामुंडराय महाराजका सर्व समाचार सुनकर बोला? पृथिनाथ जबतक इस मेरे देहमें प्राण है,तबतक यवनोकी क्या समर्थ है जो आपका राज्य ले सकें. आप मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं सौदागरके योद्धाको एक दो क्षत्रीय हाथ तो दिखलाऊं. मैं हंकार से ऐसा नहीं कहताहुं. पर मुझे यह पूर्ण विश्वास है कि जबतक एक भी पतिव्रता क्षत्रराणीकी कोषका उत्पन्न क्षत्री जीतारहेगा,तबतक यवन इस भारत भूमिपर राज्य नहीं करसकेंगे. एसा कहकर, युद्धका बीड उठा लिया. चामुंडरायके यह बचन सुनकर पृथ्विराज झट सिंहासनसे उत्तर कर चामुंण्ड रायकी पीठ ठोंककर बोले, शावाश! वीर चामुण्ड राय शावाश! तूने क्षत्रराणिके कोषकी आज लाज रखली. नही तो जगतमें आज क्षत्रियोंकी वडी हंसी होती. इतना कह, फिर तुरन्त ही एक दूतके द्वारा **सौदागर** साहबको कहला भेजा कि, हम तुम्हारी बातसे राजी हैं, तुम शीघ्रही अपने योद्धा को मेदानमें लेकर आओ. हमारा योद्धाभी आता है.

तीसरे पहरका समय निकट आ रहाहै, मैदानमें लाखों मनुष्य दोनो योद्धाओंका युद्ध देखनेके लिये खडे हो रहे हैं. महाराज **पृथ्वीराज** मय अपने सामन्तोके एक ऊंचें सिंहासनपर बैठे हुये सौदागरके योद्धाकी वाट देख रहे हैं. इतनेमें सौदागर साहब भी मय अपने मंत्रीयों और योद्धाओंके मैदानमें आया और अपने नियत स्थानपर बैठ गया. महाराज **पृथ्वीराजने** सौदागरके बैठ जानेके उपरान्त. **चामुण्डराय**को सेन (इशारा) की. चामुण्डराय सेनके पातेही महाराजको नमनकर मैदानमें गया, और ताल ठोंककर खडा होगया. उधरसे सौदागर का पहलवान उजबक्क भी कवच पहर हथियारों सहत घोडे पर असवार हो मैदान में आया, सौदागर के पहलवान को ठाठ माठ से आते देखकर, महाराजने झट चामुण्डराय को भी एक घोडे पर सवार करा दिया. प्रथम तो दोनो योद्धा घोडों पर सवार हुये२ मैदान में चारों ओर घूमे, और फिर धीरे-२ एक दूसरे के सन्मुख आकर खडे हो गये. **चामुण्डराय** ने जब अपने सन्मुख शत्रु को देखा, तो ललकार कर बोला "शावाश! उजबक्कखां! शावाश! रंग है तुझे? जो तुने सौदागर साहब के लूण (निमक) हलाल करनें के लिये अपना जीव जोखममें दे दिया. अब शीघ्र ही तैयार हो जा, और प्रथम तूं अपना बार मुझपर कर ले, कारण तर कुछ मन में न रह जाये, फिर पीछे मैं तुझे क्षत्रीय हाथ दिखलाऊंगा.

उजबक्क ने उत्तर दिया 'शाबाश! है तुझे भी, जो तूने मेरे सन्मुख मैदान में आने की हिम्मत, की, नही तो किसकी ताकत है जो मेरे सामने आसके,

(१) पंचसेरी (२) छाछ (३) अफीम.

* चामुण्डराय कहीं बाहर गया हुआ था.

खेर! तू ने बडी ही हिम्मत की है इससे तू पहले बार हमपर कर ले, क्यों कि हम लोग तुम लोगों पर बिना अपराध चढ आये हैं.

चामुण्डराय! ने कहा नही २ तुम लोगोंने युद्ध कोलिये याचनीकी है, और याचकको दान देना हम क्षत्रियोंका परम धर्म्म है, इस लिये तुम पहले शस्त्र प्रहार करो.

उजवक्कखां! बोला: यदि पहले२ मैं प्रहार करूंगा तो फिर पीछे तेरा प्रहार कैसा है, इसके देखनेका मुझे समय नहीं मिलेगा, क्यों कि तुम तो मेरे पहलेही बारके भक्ष हो.

चामुण्डराय! ने उजवक्कके यह अभीमान भरे बचन सुनकर, तुरंत ही अपनी गदा (गरज) उसपर फैंक दी. पर उजवक्क इस गदाके आतेही घोडे सहत छत्तीस पग पीछे हटगया. और तुरन्तही फिर आगे बढकर चामुण्डरायपर अपनी गदा फेंकी. चामुण्डराय गदाको आते देखकर, बडी चालाकीसे आठपग पीछे हटगया, और फिर बडी फुरतीसे आगे बढकर अपनी तलबार का एक ऐसा प्रहार किया कि, जैसे कुम्भार चाक परसे घडेको डोरेसे उतार लेता है, ऐसेही उजवक्क पीरका सिर तनेस उतार दिया. परन्तु इतने पर भी उजवक्क पीरने चामुण्डरायका पीछ नहीं छोडा, अर्थात् उजवक्कका सिर जमीन पर गिरने के उपरांत, उसके शरीरने तलवार का एक एसा बार किया कि, यदि उस समय चामुण्डराय पीछे न हट जाता तो, इसका सिर भी तनसें जुदा हो पृथ्विपर गिर पडता. पर चामुण्डराय बडी फुरती से दस पग पीछे हट गया. इस्से उजवक्कका शरीर मय तलवारके पृथ्विपर गिर पडा. उजवक्क पीरको पृथ्विपर गिरते के साथ ही, पृथ्विराजकी सेना शंखध्वनी करने लगी. इस्से सौदागर साहवको बडा कोप चढ आया, और उसने तरन्तु ही महाराजको कहला भेजा कि "यह जीत नही है, कारण कि आपके योद्धाने जीते जी, दो बार किये हैं, और हमारे योद्धा ने एक ही वार किया है. इस्से यह युद्ध हमको स्वीकार नही है."

महाराज **पृथ्विराज** ने उत्तर दिया "तुम्हारे योद्धाको किसने रोका थोडाही था, चाहे वह सौ वार करता तो क्या हम उसे रोकते"

सौदागर साहव का तो केवल यह एक बहानाही था. महाराज का एसा उत्तर पाकर, मारे क्रोद्ध के लाल पीला हो गया, और तुरन्तही कुछ अपनी सेना को नगर लुटने को, तथा कुछ सेना को युद्ध करने की आज्ञा दे. आप नंगी तलवार हाथ में लेकर महाराजपर टूट पडा. परन्तु चामुण्डराय ने बीच में ही सौदागर साहव को पकड लिया, और सेना को सामन्तों ने काटना आरम्भ कर दिया. और जो सेना नगर लूटने के लिये गई थी, उसको नगर की ओर आते देख कर, झटपट नगर निवासियोंने नगर के दरवाजे बन्द कर लिये. इस्से वह सेना निराश होकर अन्ना सागरके मन्दरों में जा घुसी, और वहां की मूर्तियोंको तोड फोड करने लगी. जब इसका समाचार महाराज को मिला तो, उन्हो ने तुरन्त ही कुछ सामन्तों को, इस यवन सेनाके भी दण्ड देने के लिये आज्ञा दी. सामन्त आज्ञा के पाते ही अन्नासागर पर गये, और वहां यवनो को मूर्तियों को तोडते, तथा भ्रष्ट करते देखकर, मारे क्रोद्ध के यवन सेना को घास की भांति काटने लग गये. एसी दशा देखकर बचे बचाय यवनने जिधर मार्ग पाया, उधर प्राण ले भाग निकले. जब युद्ध शांत हुआ, तब चामुण्डराय ने सौदागर साहब की मुशकें बंधवा कर बंदी ग्रह में भेजवा दिया, और इसका सर्व धन हरकर महाराज ने सामन्तो को बांट दिया. परंतु जब महाराजको यह समाचार मिला कि, सौदागर साहब गजनी के बादशाह ग्यासुद्दी का छोटा भाई शहाबुद्दीन है, तब दया करके इस को छोड दिया. (शेष आगे)

मेस्मेरिजम.

(गतांग से आगे)

सिद्धि—शरीर तथा मनको अच्छा (आरोग्य) करने के उपरान्त, यह विद्या; योगाभ्यास का भी मार्ग सुझाती है. यह विद्या कनिष्ट प्रकार का एक योग है. यदि इसमें से संकल्प बलकी वृद्धि द्वारा, आत्मध्यानमें दृढ होने के लिये वृति निरोध साधा जाय तो, सहज समाधि संपादन होजायगी. और इस तंत्रका प्रयोग अपने उपर न करके, यदि दूसरे पर किया जाये, तो पुष्क सिद्धियों जैसे चमत्कार बन सकते हैं, जिनका आगे वर्ण किया जायेगा. इसपर से प्राणविनिमय विद्याके दो भाग होगये हैं. एक **संधायक!** अर्थात् तन, मन, की बिगडी हुई स्थिति को समाधान में लाने वाला; और दूसरा **चमत्कारिक!** अर्थात इस में से चमत्कार जैसे प्रयोग बन सकते हैं, और योग साधन भी हो सकता है.

जादु—जो उपरकी कलम में कहा है, वह दक्षण मार्ग का शुद्ध सात्विक उपयोग है. इस प्रयोग को परमार्थ बुद्दिसे वर्तने वाले जन, महात्माओं तक के पद को प्राप्त हो गये हैं. बचन सिद्धी, दृष्टि सिद्धि इत्यादि सामान्य सिद्धियां, तथा योग में की अणिमा अदि महां सिद्धियां भी उनको प्राप्त हो चुकी है. बस! इसका ही नाम दक्षण मार्ग है. और दूसरा वाम मार्ग है, इससे बहुत प्रबल स्वार्थ-बुद्धि द्वारा, जैसा चाहें वैसा ही परिणाम ला सकते हैं. और इस्सेही बहुत तंत्र इस वाम मार्ग का उपदेश करते हैं. परन्तु यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाये, तो इसमें भी प्राणविनिमयके ही तत्वों का मुख्य उपयोग, और आधार मिलता है. कारण के संकल्प परसे ही, इस अधम संसार से उत्तमता में पहुंचने, और अधमसे भी अधम दशामें गिरनेका आधार रहता है. **निदान!** हमारा उद्देश नरक में ले जाने वाले, इस मलीन मार्ग के सिखलाने का नही है. परन्तु केवल इस विषयकी सावचेती देकर अठकाने का है, कि इस प्रकार के सकाम कार्य मात्रको वाम जान के, इसका कदापि संग न करना चाहिये.

(शेषफिर)

रघुनाथ सरयू.

(गतांक से आगे.)

प्रकरण २.

मोती का हार.

सरयू ने पिता की आज्ञानुसार अतिथी सतकार के लिये रसोई तैयार रक्खी थी. जब **जनार्दन** मिश्र रघुनाथ को संग लेकर रसोई में आये, तब सरयू रसोई से बाहर एक कोने में खडी थी, परन्तु इन दोनो को रसोई में बैठ जानेपर, सरयू ने दो थाल परोस कर दोनो के आगे रक्खे दिये, और फिर वहीं जा खडी हुई. **रघुनाथ** भोजन के लिये रसोई में बैठ तो गया, और इसके आगे नाना प्रकार के पदार्थो से सजा हुआ थाल भी रखा गया, पर इसका चित्त उस थालके पदार्थों की ओर आकर्षण न हो, थाल परोसने वाली की ओर जा लगा. उस समय इसका सोद्वेग देख कर एसा समझ में आता था, कि इसका सर्व तन मन तदर्पण हो गया है. **सरयू** जब पुनः रसोई परोसने के लिये आई, तब अकस्मात दोनोकी दृष्टा दृष्टि होगई, पर सरयूका मुख लज्जा से लाल हो गया, और वह तुरन्त ही परोस कर धीरे २ उसी स्थान पर चली गई. **रघुनाथ** की भी यह ही दशा हुई कि, मारे शर्मके नीचे की ओर देखने लगा. तीसरी बार फिर भी **सरयू** को रसोई देते आई, परन्तु **रघुनाथ** कोई असभ्य नहीं था, इस्से उसने फिर सरयूको मुख उठाकरके नही देखा, किन्तु इसकी दृष्टि केवल सरयू के कोमल स्वर्ण चूडियां पहरे हुये हाथों पर पडी कि, तुरन्त ही इस के हृदय में विकार प्रबल हो आया, और इस ने मंद

लम्बा एक श्वास लिया, यह श्वास केवल सरयू के ही कान में सुनाई दिया. इससे सरयू का शरीर थर थराने लग गया, परंतु वह बडी धर्य्यता से पीछे हट गई.

भोजन करने के उपरान्त सोने की तैयारी हुई. **रघुनाथ** अपने आसन पर गया. और बिछोना बिछा कर उस पर लेट गया. परन्तु उस्से निद्रा न आई. तब इस ने मकान की बारी उघाडी. उस समय तारा गणों की ज्योती जगमगा रही थी, उस ज्योति के प्रकाश से, रघनाथ मकान की आकाशीके उपर चला गया, और इधर उधर घूमने लगा. फिर खडाही उस गंभीर अंधरे में नक्षत्रों से विभूषित आकाश की ओर स्थिर दृष्टि कर के, कुछ विचार में निमग्न हो गया, उस समय अंधकार घोर रूप से छाय रहा था. और उस सुस्निग्ध छाया में जगत के सर्व मनुष्य इत्यादि जीव जन्तु निद्रा के वशीभूत हुये २ थे. और किल्ले में भी सर्वत्र शांतता फैलाई हुई थी, केवल पहरा बदलने में कभी २ गडबड होता था, यह ही एक शांति को भंग करता था. कारण कि घडी २ किल्ले के चारों दरवाजों परके बूरजों में जो घडियाल बजते थे, उनकी टंकोर, उस गाढ अंधकार में, पहाडों से प्रति ध्वनी देती थी. उस समय अपना नव युवक किस विचार में निमग्न हुआ २ था, सो तो वह ही जानता था, उसको ऐसे गूढ विचार में पडने का यह प्रथम ही प्रसंग था. पहले उसके मन में कभी इस प्रकार का उद्वेग नही हुआ था क्या? नव युवक के इस विचार का अंत, आज ही रात्री को पूर्ण हो जायगा, नही! नही! नही, यह तो सारी आयु पर्यन्त भी पूर्ण होना कठन विदित होता था. **रघुनाथसिंह!** इतने दिवस तक तो बालक था, पर आज ही एकाएकी इसके शांत जीवनरूपी आकाश में वह रम्य मूर्ति, बिजली के समान एक बार ही चमक उठी, और इसके तेज से नव युवक की आंखे दिप होगई, और इतने दिवस पर्यन्त सोया हुआ विचार, मनो वृति के उद्वेग से एकदम जाग उठा, अर्थात् उस आनन्द मय मूर्ति की धनुष्य के समान भवें (भ्रकटीं). तथा पानीदार भमरा जैसे काले २ नेत्र, वा रक्तबिंब के समान लाल २ ओष्ट (होंठ) और शेष को लजाने वाले काले २ सिर के वालों क गुच्छा, तथा गोल और कोमल भूजा. एक पीछे एक यह सर्व अंग, उसके सन्मख आने लगे. इन सर्वके आने से नवयुवक उन्मत्त की भांति मनही मन में कहने लगा. "अरे रघुनाथ उस सुन्दरी का तेरे साथ क्या? पानी ग्रहण होगा. अरे वह स्नेह युक्त काली २ आंखें, तथा लाल २ होंठ, और वह चित हरने वाला लावण्य, यह सर्व क्या? तेरा होगा. अरे दिवाने! तु एक साधारण हवलदार, और वह एक ऊंचे कुलके ब्राह्मण जनार्दन की पाली हुई कन्या, जो राजों महाराजोंको भी मिलनी कठन है, तो फिर तू एक साधारण होकर उसकी आशा में व्यर्थ अपने चितको क्यों दुःखाता है. अरे! तू इस तृष्णाग्नि में अपने हृदय को मत दग्ध कर.

रात्री आधी से भी विशेष बीत गई, पर युवक की चिंता न मिटी, किन्तु उलटी इसके मनो विकार में पुष्कलता से आशा बढती ही गई, उस समय जगत शांत और निद्रा देवी के आधीनता में पडा हुआ था, केवल अपनाही ये नवयुवक आकाशकी ओर ध्यान लगाय गूढ विचार में खडा हुआ था. तरुण अवस्था में मनुष्य की आशायें बडी ही बलवान होती हैं, मनुष्य इन में फंसा हुआ एकाएकी कभी निराश होता ही नही है. यह असाध्य वस्तु को संभवित समझता है. वैसेही **रघुनाथ** की भी इस समयमें ऐसी दशा हो रही थी. **रघनाथ** आकाश की ओर टकटकी लगाय छातीपर हाथ रक्खे सगर्व वाणी से अपने मनही मन में बोला. हे भगवान्! तुमही मेरे सहाई होवो, कि मैं अपने निश्चय किये हुये कार्य्य में जय प्राप्त करूं. भला! जब यश, मान, और कीर्ति मनुष्य मात्रको साध्य

होती है, तो फिर मुझेही क्यों असध्य होयगी. क्या ? मेरे शरीर में औरों की अपेक्षा कुछ न्यूनता है, जो मैं निराश होजाऊं. नहीं २ ! कभी नहीं। जब मैं अपने कार्य्य में जय पाऊंगा. तब तो सरयू? तूभी मुझे अयोग्य न समझो गी, और मैं भी तवही अपनी सारी बातें तुझे कहुंगा. अरे ! मनमोहनी जब मैं इन हाथोंसे तेरा पानी ग्रहण करुंगा, उस समय तो स्वर्ग सुख को भी तुच्छ मानूगा. प्राणेश्वरी ! उस समय मैं अपने इन हाथोंसे तेरे सुन्दर काले २ बालों में मोती गूथूंगा. और तेरे दोनो लाल २ होटोः"—रघुनाथ ! सावधान हो ? दिवाना न बन !

रघुनाथ ! का विचार थोडी देरमें कुछ शांति हुआ. इस्से वह सोने के लिये अपनी कोठरी की ओर नीचे चला कि, अस्कमात उसे मार्ग में; जहां पर सांयकालको सरयू बैठी हुई थी, वहां पर एक मोती का हार पडा हुआ देखा. रघनाथने तुरन्त ही उसको उठालिया. यह हार दो २ मोती और एक २ नीलमसे परोया हुआ था. रघुनाथने इस हारको हाथमें ले, देख २ कर; मनही मन कहने लगा. यह हार तो कल सरयूके गलेमें था. यहां कैसे आया. श्यात् । वहही कल भूल गई होगी. अहा ! प्रभु । मेरी इच्छा पूर्ण होनेका यहही प्रथम लक्षण है क्या ! फिर उस हारको कुछ देर तक देख २, बडे प्यारसे चुम्बता रहा. और फिर अंतको उसे अपने अंगरखेके खीसेमें रक्ख; नीचे उत्तर कोठरीमें जाकर सोगया. परंतु इसकी निद्रा स्वपनकी भांती थी.

दूसरे दिन सबेरे उठकर शौचादि क्रियासे निश्चित हो, मनही मनमे कहने लगा. "प्रथम प्रोहितजी के पास चलकर, महाराजके लिये संदेसा लेना. और फिर किल्लेदारसे चिट्ठीपत्र लेकर.आजके आजही महाराजके पास पहुंचजाना चाहिये" फिर आपही आप"क्या सरयू की भेंट किये विना मुझसे चला जायगा. नहीं ! नहीं ! कभी नहीं चला जायगा. इस्से चलनेके प्रथम एक बार तो अवश्यही सरयूकी भेंट लेनी चाहिये." एसा विचार निश्चय करके, जनार्दन मिश्रके पास गया, और चरण वन्दना करके सन्मुख बैठ गया. जनार्दन मिश्र ने असीस देकर कहा. वत्स ! महाराज सिवाजीसे कहना कि "म्लेच्छोंके साथमें युद्ध करनेसे तुम्हे जय मिलेगी. और स्वधर्म वालोंके साथसे पराजय होगी. ऐसी देवी भवानीकी आज्ञा है" रघुनाथ यह संदेसा ले, प्रणामकर के बाहर आया,और सरयू की खोज करने लगा. सरयू नित्य सबेरको भगवतीकी पूजा किया करती थी, आज भी वह अपने नियमानुसार पूजा करके मन्दिरसे निकल कर घरकी ओर जारही थी, कि अकस्मात् रघनाथकी दृष्टि उसपर पडी, और यह उसके पीछे२घरकी ओर गया. जब सरयू घरके अंदर जाने लगी. तब रघुनाथ अपने हृदयमें उत्पन्न हुये२ विकारोंका दबाकर, तनी कांपते स्वरसे बोला. "सुन्दरी रात्रीको आकाशी के उपरसे मुझे यह मोतीका हार मिला है. श्यात यह तुम्हाराही होगा, इसे देनेके लिये मैं यहां आया हुं. मुझे इस कृत्य के बदले क्षमा करना." रघनाथके यह विनय वचन सुनकर, सरयूने ज्योंही पीछे फिरकर देखा, तो अपना वोही तरुण योद्धा कि, जिसने कलसे मन हरण कर लिया, पीछे खडा है. सरयू रघनाथके यह विनय वचन, तथा उसका उदार मुख, वा उसकी वह केशो वृतोन्नत ललाट, और उसके पानीदार काले २ नेत्र, एक बारही दृष्टि में पडे, अर्थात् तरुण योद्धाका अति मन मोहन स्वरू देखकर, सरयू का हृदय धडकने वा शरीर कापने लगा, और उसके गोरे मुखपर लालीसी छाय गई.इस कारण तरूणीसे रघनाथके वचनोंका कुछ उत्तर न वनसका, और वह पत्थरकी मूर्तिके समान वहीं की वहीं चुपके खडी रहगई. जब सरयूने कुछ उत्तर नहीं दिया. तब रघुनाथ ने पुनः धीमे बडे मृदु स्वरसे कहा."अनुमती हो तो इस सुन्दर हारको इसके सदैव स्थानमें यदि पुनः स्थापन करोगी, तो मैं अपने ताईं धन्य मानुगा." सरयूने फिर भी कुछ उत्तर न दिया. तब तो रघनाथ ! ने इस मौनको सम्मतिका लक्षण जानकर, बडी नम्रतासे यह हार सरयूके आगे

पृथ्विपर रखदिया,परन्तु सरयूके पवित्र शरीरको स्पर्शसे दूषित नहीं किया. रघुनाथ के ऐसे करनेसे सरयूका पवित्र शरीर रोमांचित होगया. अर्थात जैसे पवनसे पीपलके पत्तोंकी स्थिति होती है, ऐसे ही सरयूके शरीरकी स्थिति होगई, भला! फिर वह कैसे उत्तर दे सकती ? कारण कि उस समय तो उसके कम्पायमान होठों में से वाचाकी स्फूर्ति होही नहीं सकती थी.

रघुनाथ ! सरयूकी यह स्थिति देख, अपनेको धन्य मानकर, थोडीही देरके उपरान्त फिर खेद युक्त स्वरसे बोला "अब तो अतिथी को विदा होनेकी आज्ञा मिलनी चाहिये." इस समय **सरयू** ने अति लज्जाको कुछ न्यून करके, रघुनाथकी ओर सप्रेम दृष्टिसे देखा,और फिर दृष्टि नीचे करके बडे धीमे स्वरसे कुछ अस्पष्ट शब्दोंसे कहा "आपके यहां पधारनेसे हमपर बडा अनुग्रह हुआ, फिर आप यहां कब पधारोगे?" तृषित चातकको जैसे वर्षा, और मार्ग भूले हुयेको जैसे सूर्य्यकी पहली किरण आनन्दित करती है. ऐसेही सरयूके यह वचन, रघुनाथ को अति आनन्दित लगे, और इसका मन आनन्द सागरमें मगन होगया, फिर कुछही देरके उपरान्त बोला "रमणीरत्न! मैं दूसरे का सेवक हुं,और यह ही मेरी जीवकाहै. इससे मैं ठीक नहीं कह सकता हुं कि, फिर कब यहां आऊंगा, वा न आऊंगा. परन्तु जहां सुधी इस देहमें जीव है, और जहां सुधी यह शरीर नाश नहीं हो जायेगा.तहां सुधी तुम्हारा यह सौजन्य, तुम्हारी अतिथि सेवा, और तुम अप्सरा की इस उपकार मूर्तिको कदापि भूलने वाला नहीं हुं. देखो! परोहितजी आते हैं,मैं अब आज्ञा मांगताहुं, साथही इतनी विन्ती और यह करता हुं कि, कभी २ मुझ अनाथ सिपाई को याद करते रहना, **सरयू**! से इसका कुछ उत्तर न बनसका. और रघुनाथ चल पडा, परन्तु कुछ ही दूर जाकर जो फिर पीछे देखता है तो, सरयूके नेत्रोंसे टप २ पानी बेह रहाहै, सरयूकी यह दशा देखकर, अपने तरुण योद्धांकी भी यहही दशा होगई, पर जनार्दन मिश्रके आनेसे बडी शीघ्रतासे घोडे पर स्वारहो किलेकी ओर चल पडा.

रघुनाथ के हाथ नीचेके घोडे सवार जो कुछ इसके संग **तोरणगड** को आये थे. और वर्षाके कारण पीछे रहगये थे. वह दूसरे दिवस सायंकाल होजाने पर तोरणगढमें पहुचे, परंतु किलेका फाटक बन्द होनेसे बाहरही पडे रहे थे. आज सवेर ही यह लोग अपने साहसी और शूरा अधिकारीको आते देखकर, बडे खुश हुये, और सबने उठकर इने मान दिया. पर पूर्वकी भांति आज रघुनाथ सिंहका वह बाल स्वरूप उनकी दृष्टि में न आया. कारण कि **तोरणगढ** के किलेमें प्रवेश किये पीछे रघुनाथकी प्रथम जैसी बाल चपलता जाती रही थी. और उसको अब मनुष्यत्त्व की चिंता व्याप गई थी.

रघुनाथ उसी दिन किलेदारसे चिठ्ठी पत्री ले सिंहगढमें जापहुंचा, और महाराज **सेवा** जीको सर्व समाचार जा निवेदन किये.

(शेष फिर)

विनाश काले विपरीत बुद्धि!

प्रिय वाचक वृन्द! इस वचन के लिखने का यह कारण है कि, जब मनुष्य को हीन दशाके दिन आते हैं तो, बुद्धि भी उलटी (मलीन) हो जाया करते है. इस बात की पुष्टी **विष्णु** शर्म्मा निम्न लिखित श्लोक में करते हैं:—

> **पौलस्त्यः कथं मन्य दार हरणे दोषं न विज्ञात वान् । रामेणापि कथं न हेम हरिणस्या संभवोलक्षितः ॥ अक्षैश्चापि युधिष्ठिरेण सहसा प्राप्तोह्यनर्थः कथं । प्रत्यासन्न विपत्ति मूढ मनसां प्रायो मतिः क्षीयते ॥**

अर्थात्—**रावण** ने परस्त्रि हरण करने में क्यों दोष नही जाना ?, **रामचन्द्र**जी ने स्वर्ण मृग के असंभव होने का क्यों विचार न किया?' और महाराज **युधिष्ठिर** ने पासे का जूआ (द्यूत) करके, अकस्मात

अनर्थ को क्यों प्राप्त किया. इसका कारण यह ही है कि समीप आई हुई विपत्ति के कारण मूढ हुये २ मनुष्य की मति बहुत करके क्षीण होजाती है.

हमारे ऐसें लिखने का कारण यह है कि, सर्व साधारण इस विषे को जानते हैं कि, भारत वर्षका सर्व कार्य्य गाय बैलोंके ही सहारे पर है. भला? कोन एसा मनुष्य है कि,जिसने गाय के दूध, दहीं घृत, तथा, बैलोंके सहारे से उत्पन्न हुये२अन्न से, अपने साढे तीन हाथ के शरीर का पोषण नही क्या ? और न करता है ? फिर एसा जान बूझ करके भी इन उपकारी प्राणियों की ओर, दया दृष्टि नही रखनी **"यह विनाश काले विपरीत बुद्धि "** का लक्षण नही तो और क्या है ?

प्रिय पाठ गण! कुछ समय हुआ है कि, भारत वासियों कों गोवध घोर पाप में फँसे जानकर, काशी निवासी श्रीयुत भारतेन्द्र, बाबू **हरिश्चन्द्र.** तथा श्रीमान स्वामी **दयानन्द** सरस्वती आदि महातमाओं*ने गाय बैलोंके महत्व विषयमें **गोमहमा और गोकरुणानिधी** नामक दो*पुस्तकें बनाईथीं. इन पुस्तकोंको पढ कर भारत भाईयोंका कुछ विशेष ध्यान गोरक्षा पर न हुआथा.परन्तु जब अजमेर निवासी यवन कुल भोपण श्रीयुत मोलवी **मुहम्मद मुरादअली,** तथा पंजाब निवासी श्रीयुत मौलवी **गुलाम अहमद,** तथा बंगाल निवासी श्रीमौलवी **कुदरतुला** * इत्यादियों के गोरक्षा विषय पर लेख, पंजाबके प्रसिद्ध ऊर्दु पत्र (अखबार) **कोहनूर** में * छपने लगे, तब लोगोंकी रुचि गोरक्षा करने पर हो गई, और नगर २ में गोशालायें तथा गोरक्षणी सभायें स्थापन होने लगीं. ऐसी दशा देख "विनाश काले विपरीत वुद्धि' के मनुष्य इस उत्तम कार्य में हानी पहुंचाने के लिये खडे हो गये, और थोडे ही काल में, हिन्दु मुसलमानो का परस्पर लडाई झगडा करवा, झूठे ही इस उत्तम कार्य के मस्तक पर यह काला टिका लगा.उत्साहियोंका उत्साह भंग कर दिया. परन्तु तोभी कुछ उत्साही जन अपने कार्य को थोडा बहुत किये ही जार हे हैं. और कुटल जन अपनी कुटलाई भी जता रहे हैं. थोडे समय की बात है कि विहार प्रान्त के एक मौलवी साहब ने मन मानी **" मुबायसा गोकुशी "** नाम की एक पुस्तक बनाकर हमारे पास भेजीथी. जिसका कुछ उत्तर हमने अपने **गोसेवक** नामक पत्र में दिया भी था. आप जानते हैं कि उत्तम कार्यों में नाना विघ्न आ पडते हैं, अथवा यूं कहें कि हमारे पूर्व कर्म्मानुसार हमे पवित्र **काशी** धाम छोडकर, इस **मुम्बई** (मोहमैई,यदि इसको कलंका भी कहें तो कुछ अनुचित नहीं है) में आना पडा. परन्तु यहां पर भी मौलाना साहेबके बिरादर (भाई) आगे ही कमर बांधे तैयार बैठ हुये थे. हमारे यहांपर पहुंचतेही, उन्होंने गोरक्षाके विरुद्ध,यहांके प्रसिद्ध गुजराती भाषाके **मुम्बई समाचार** पत्र में लेख छपवाने आरम्भ कर दिये. और यहांकी दोनों*सभायें एक दूसरेकी ओर ताकने लगी. ऐसी दशा देखकर हमसे न रहा गया, हमने तुरन्तही एक लेख उनके उत्तरमें उसी पत्रमें छपवा दिया. फिर तो लेखाणियों (कलमों) का परस्पर युद्ध होने लगा, और यह युद्ध लगभग तीन मासतक चलता रहा. परन्तु अंतको पत्र वालेने तंग होकर यह युद्ध*बन्द करवा दिया,पर आप जानतेहैं कि हठी कभी अपने हटको त्याग दें ऐसा तो होही नहीं सकता. उन्होने अपने*पत्रोंमें छपवाना, तथा ग्रंथ बनाने आरम्भ कर दिये.अब हम कैसे उत्तर दें, कारण,कि न तो हमारे पास धन,और न कोई धनवान सहायक कि, जिस

* चाहे मनुष्य कैसाभी क्यों न हो गोरक्षा पर उसका चित है तो महात्माही है. *गोमहमा बाबूजी की और गोरुणाधि स्वामीजी की बनाई हुई है. *इन्होने ११ अप्रेल सन् १८८३ ई में अंजमन हमदरदी हेवानात अर्थात गोशाला स्यापन कीथी. * देखो ४ जोलाई सन् १८८१ ईसे २७ जनवरी सन १८८३ तक के लेख.

*यहां गोपालन और गोरक्षक मंडलीहै, पर शोक कि दोनोका परस्पर मेल नही है. * मुसलमानो ने तीन चार ग्रंथ बनाकर यहां की सभाओं को भेजे कि जबतक इनका उत्तर न दो,तुम्हे पानी पीना हराम है.

के द्वारा निजका पत्र निकालकर उत्तर दें. इसी विचारमें गई दिन बीत गई कि, अकस्मात सेठ नारायण रामाजी वर्म्मा से भेंट हो गई, उन्होने पत्र निकालने के लिये सहायता देनी स्वीकार की, और यह **श्रीधर्म्मामृत** पत्र निकलना आरम्भ हुआ, और एक वर्ष इसका पूरा भी किया. पीछले वर्ष में उनका इस कारण से हम उत्तर नही दे सके, कि एकतो हमारे पास उनके धर्म ग्रंथ नही थे. दूसरे जब ग्रंथ अकाठे और लेख तैयार हुये तो स्वार्थियों ने बीचमें ऐसी खटपट मचा दी कि सेठजीको पत्र बन्द कर देना पड़ा. किन्तु कोटशः धन्य वाद **परमात्मा गोपाल** जी को देते हैं कि, जिन्होने अकस्मात नागपूर निवासी श्रीमान सेठ **धौंकल मल गणपत लाल** जी के हृदयमें प्रेणा कर, दस रुपया मासिक पत्रकी सहायता के लिये एक वर्ष तक देना स्वीकार करवा दिया. और सेठजी के तीस रुपये के आते ही हमारा पुनः उत्साह पत्र निकालने का होगया, और एक अंक निकाल कर ग्राहकों की सेवामें भेजवा दिया. परंतु बीच में शरीर के ठीक न रहने, तथा मैनेजर के न मिलनेसे बंद रहा. किंतु अब ईश्वरकी कृपा से शरीर ठीक होगया है. अब उन साहबों के लेखों का क्रमशः उत्तर देते जायेंगे. आशा है कि पाठक गण उन के प्रश्नों और हमारे उत्तरोंको पढकर उर्द्ध लिखत वाक्यका लिखना, हमारा सत्य है वा नही इसका निर्णय कर लेंगे. सम्पादक

सांप्रत स्थितीनुसार सुख संकल्प।

(गतांकसे आगे)

इस वार्तासे सिद्ध होगया कि, यह हानी हम लोगोंको अनीति पर चलनेसे ही प्राप्त हुई है. तो क्या? इतनी दशा होनेसे भी हमे अनीति पर चलते रहना उत्तम है? यदि उत्तम नहीं है तो इसका क्यों नही परित्याग करते.

शोक! अज जिधर देखो उधरही पवित्र भारत भूमि में अनीति ही अनीति फैलहुई दृष्टि पडरही है. इस दुष्टाने गुरु, महात्मा, साधू, निर्धन, धनवान इत्यादि सबको अपने पंजेमें दबाया हुआ है. भला फिर कैसे भारतकी उन्नती होसकती है.

आर्य्य बांधवो! यदि तुम भारतकी उन्नती चाहते हो तो प्रथम इस अनीति दुराचारनीका परित्याग करो, और कराओ. तब तुम नाना प्रकारके दुखोंसे बचकर उन्नती करसकोंगे. देखो मनु भगवान मनुस्मृतिके अ० ४ श्लोक १५७ में कहते हैं.

दुराचारोहिपुरूषो लोके भवति निन्दितः।
दुःखभागी च सततं व्याधितोऽल्पायुरेवच॥

अर्थात्–दुराचारी * पुरुष लोकमें निन्दित होताहै और उस दुराचारके ही कारण से सदा दुःखी, तथा रोगी बना रहता है, और इस लिये उसकी आयु भी नाश होती जाती है.

इसी लियेही परमात्मा! लोगोंको झूठ परपंच दुराचार से बचने के लिये निम्न लिखत उपदेश करता है. देखो ऋग्वेद अ० ७ अ० ५ व० २६.

ऋतं वदन्नृतद्युम्न सत्यं वदन् सत्य कर्मन्॥४

अर्थात्–हे! मनुष्यो तुम यथार्थ बोलत हुये सच्चे धनधान्य, और यशको प्राप्त होवो, और सत्य बोलते हुये सत्य कर्मोंको करो. एवं मनुभगवान भी मनुस्मृतिके अ० ४ श्लो० १५६ में कहते हैं.

आचाराल्लभते ह्यायुराचारादीप्सिताःप्रजाः।
आचाराद्धनमक्षय्यमाचारो, हन्त्यलक्षणम्॥

अर्थात्–आचारसेंही आयु मिलती है, आचारसे जैसी चाहिये वैसी प्रजा (संतति) मिल सकती है, एवं आचारसे ही मनुष्यको धन मिल सकता है, इस सदाचारसे ही मनुष्यके सर्व कुलक्षण दूर होजाते हैं,

---

*आचार हीनं न पुनन्ति वेदा यद्यप्यधीता, सहषड्भिरंगैः। छन्दांस्यैनं मृत्युकाले त्यजन्ति नीडं शकुन्ता इव जात पक्षाः॥ १॥ नैनं छन्दांसि वृजिनात्तारयन्ति मायाविनं मायया वर्तमानम्॥ २॥ वसिष्ठस्मृति० अ० ६

सदाचार एक ऐसा गुण है कि जिसके होनेसे सब गुण सुशोभित होते हैं, और जिसके न होनेसे अन्य सब गुण अवगुणके सदृश होजाते हैं, जैसे कोई विद्वान् हो वा बुद्धिमान हो किम्वा सुशीलतादि अन्य किसी गुणसे भूषित हो, परन्तु एक सदाचार रूप सद्गुण न होनेसे उसके अन्य सब गुण नहींसे होजाते हैं. मनुष्य चाहे कितनाही विद्वान् बुद्धिमान् क्यों न हो, परन्तु यदि सदाचारी न होयतो वह लोकमें प्रतिष्ठा नहीं पासकता है. इसपर मनुभगवान अ० ४ श्लो० १५८, में कहते है कि:

सर्व लक्षणहीनोऽपि यः सदाचारवान्नरः।
श्रद्धानोऽनसूयश्च शतं वर्षाणि जीवति॥

अर्थात्–सदाचार वान पुरुष चाहे सर्व गुणोंसे रहित भी हो; परन्तु सत्यग्राही और अनिन्दकतादि गुणावशिष्ट होनेसे सौ वर्ष पर्य्यन्त जीता है, सदाचारी पुरुषमें मनुष्योंकी पूज्य बुद्धि होती है; सद्वर्तनसे मनुष्यकी जगत में प्रतिष्ठा होती है; इतनाही नहीं किन्तु सदाचार मनुष्यको महात्मा बना देता है, जैसे भर्तृहरिजी लिखा है कि:–

यासधूंश्च खलान्करोति विदूषो मूर्खान्
हितान्द्वेषिणः। प्रत्यक्षं कुरुते परोक्षम-
मृतं हालहलं तत्क्षणात ॥ तामाराधय
सत्क्रियां भगवतीं भोक्तुं फलं वाञ्छि-
तम् । हे साधो व्यसनैर्गुणेषु विपुले-
ष्वास्थां वृथा मा कृथाः ॥ ९८ ॥

अर्थात्–(सत् किया) सदाचार ऐसी उत्तम वस्तु है कि जो दुर्जनोंको सज्जन, मूर्खोंको विद्वान, शत्रुओंके मित्र, परोक्षको प्रत्यक्ष और विषको अमृत उसी क्षणमें कर देता है. इसलिये इस सदाचार रुप वस्तु का प्रत्येक मनुष्य को सेवन करना परमावश्यक है. कारण कि इस सदाचार से मनुष्य का उभय लोक सुधरता है, इस लिये प्रत्येक मनुष्य को इधर की ओर अवश्य ध्यान देना चाहिये.

इन उर्द्ध लिखत वाक्यों से सिद्ध हो गया कि, सदाचार (नीती) विना मनुष्य की कदापि उन्नति नही होसकती है. भला! जब भारत वासियों में अनीती (अनाचार) फैली हुई है तो, वह फिर कैसे अपना वा आपने देश की उन्नती कर सकते हैं: हां! जब यह अनीति को त्याग नीतिकी ओर झुकेंगे तो, निश्चिंप उन्नति को प्राप्त होसकेंगे.

इस समय बहुत सी लोग पश्चिमी वियाके भरोसे अपनी उन्नती की आशाकर रहेहैं, परयह उनकी बडीभारी भूल है. कारण कि आज कलके नवयुवक लोग पश्चिमी लोगों की भीतरी नकल, परस्पर प्रीति, संप, उद्योग, देश भलाई इत्यादि की ओर दृष्टि न करके, बाहरी नकल (कोट पटलून चूरट टोपी जूता) को धारण कर रहे हैं. क्या? इनही वातों से उन्नीती हो जायेगी. यदी कोई यह कहे कि पश्चिमी वियाके प्राप्तकरने से लोग वडी २ नोकरीयों के पद पर प्राप्त हो रहे हैं, तो इसका हम यह उत्तर देते हैं कि, इतनेपर भी तो भारत वासी लोग दुःखी ही दिखलाई पडरहे हैं, कारण कि इस विया के पढे हुओंसे सिवाय नोकरी के और कोई धंधा हो नही सकता है, इसे से आज सहस्त्रों इस विया के पढे लिखे नोकरी के लिये दर २ घूम रहे हैं, परन्तु कहीं नोकरी की जगह नही पाते हैं. वहुत सी लोग ऐसे भी कहते सुनाई देते हैं कि "देखो वलायत में जाकर जो लोग वेरिस्टर" डाक्टर, सिविल सरवंट वन कर आते हैं, वह देश की कैसी भलाई कर रहे हैं, कि सहस्त्रों रुपया देश का विदेशीयों के हाथों से वचा रहे हैं. इसका उत्तर यह है कि प्रथम तो यह लोग कितना रुपया देशका वलायत में जाकर स्वाह कर आते हैं. और वहुतसी भारत को कलंक भी लगा आते हैं. इन वातों को भी कुछ विचार किया है? देखो "थोडा ही समय हुआ है कि, मदरास प्रांत का प्रसिद्ध "हिन्दु" नामक पत्र में, भारत हितेच्छुक रेडिकल राज्य. दरवारी विद्वान मिष्टर केन ने जताया था कि, भारतीय विद्यार्थी, जो वलायत में जाते हैं. वहां उन के सिरपर किसी का अंकुश न होने से वह चंचल वृतिके हो जाते हैं.

(शेष आगे.)

देशहितैषी कार्य्यालय मुम्बई का

ताम्बूल रञ्जन.

जो महाशय इस ताम्बूल रञ्जन मसाले को पान में रखकर खांय गे. वे इस की प्रशंसा अवश्य ही करेंगे. इस को नित्य पान के साथ खाने से मुहकी बदबू को नष्ट कर पान को स्वादिष्ट बना देता है. और पान के खाये बाद भी बहुत देर तक मुख सुगंधित रहता है. विशेषता यह है कि इस को पान में रख देने से चूना कत्था डालनेकी भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि जिस परिमाण से पान के साथ कत्था व चूना खाया जाता है, उतना इसी मसाले में मिला दिया गया है. मूल्य १ डिबियाका ।) चार आने डांकव्यय ।) में ४ डिबिया जा सक्ती हैं.

देशहितैषी कार्य्यालय मुंबई के जगत्प्रसिद्ध सुरमे.

"नयनामृत" अर्क

हमारे कार्य्यालय के आठ प्रकार के सुरमों में से नं० ८ का तरल सुरमा बहुत ही लाभ दायक समझा गया है, इस को नित्य लगाने से नेत्रोंकी ज्योति बढने के सिवाय रतोंधा, नजला, ध्वन्द सबलवाय, खुजली बारबार आखों का दुखनी आना आदि अनेक रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं. एक बार मगाकर परीक्षा करेंगे तो हकीकत में इसको नयनामृत समझ कर फिरभी मगावेंगे. मूल्य १ सीसी का ॥) आठ आने डांकव्यय ।) में४ शीशियें जा सक्ती हैं.

काला सुरमा नं. १—यह सुरमा हमेशह नेत्रोंमें डालने से सर्व प्रकार के नेत्र रोग और आंखोंकी गर्मी नष्ट करके ज्योतिको बढाता है मूल्य आधे तोलेकी शीशीका ॥) आने.

सफेद सुरमा नं. २—यह सुरमा वृद्ध पुरुषोंको बहुत ही लाभदायक है. आंखोंके धुंधलेपन व कीचड़ वगैरहको बहुत जल्दी दूर करता है. रातको सोते समय दो तीन सलाई लगाकर ५ मिनट के बाद नं. ३ के सुरमें की एक या दो सलाई लगाने से बहुत ही फायदा होता है. मूल्य आधे तोलेकी शीशी का ॥) आने.

काला सुरमा नं. ३—इस ठंडे सुरमें को सोते समय लगानेसे नेत्रोंके समस्त रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं. और नेत्रोंकी गर्मी दूर कर ठण्डक पहुचाता है, मूल्य आधे तोलेकी शीशी १) रु.

सफेद सुरमा नं. ४—इसको प्रतिदिन रातको सोते समय तीन चार सलाई लगाने से आंखमें मांस बढ़ना, पाणी गिरना, पलकें मोटी हो जाना, आदि अनेक रोग नष्ट हो जाते हैं, रोग रहित जनोंको, दूसरे तीसरे दिन इसको लगानें से किसी प्रकार के रोग होने का भय नहीं रहता, मूल्य आधे तोलेकी शीशी का १।]

मिलनका पत्ता—**पन्नालाल जैन,**

मैनेजर—देशहितैषी प्रधानकार्य्यालय,

पोष्ट मार्केट बम्बई.

REGISTERED No B 247.

श्रीधर्म्मामृत की संक्षेप नियमावली।

(१) इस पत्रका मूल्य, नगर और बाहर सर्वत्र डाकव्यय सहत अग्रिम वार्षिक केवल १॥ रु. है. गर्वमेन्ट तथा राजा महाराजाओंसे उनके आदरार्थ ५ रु. है.

(२) पांच श्रीधर्म्मामृत एक साथ खरीदने वालों को एक प्रति मुफ्त अर्थात जो पांच ग्राहक हो कर ७॥ रु. दाम भेज देंगे उनको एक पाकिट में ६ श्रीधर्म्मामृत की पुस्तकें हर मास की पहिली ता० को मिला करेंगी.

(३) पत्रके उत्तर चाहने वाले महाशय, जबावी कार्ड अथवा टिकट भेंजे, अन्यथा पत्रोत्तर न दिया जायगा.

(४) नमूने की प्रथम प्रति पहुंचने पर यदि ग्राहक होना स्वीकार हो, तो मूल्य ता० १ तक भेज देना चाहिये, यदि ग्राहक होने की इच्छा न हो तो कार्ड द्वारा सूचित करना पडेगा,और नमुने की पुस्तक पर आध आनेका टिकट लगा वापसकर देनी चाहिये, नहीं तो ग्राहक श्रेणी में समझे जा येंगे. (५) विज्ञापनकी छप वाई एक मासके लिये प्रति पंक्ति दो आना तीन मासके लिये एक आना, और छ मास या इस्से अधिक समय के लिये आध आना है. और छपे हुये विज्ञापनों की वितरण कराई ५ रु. लिया जायेगा.

श्रीधर्म्मामृत सम्बन्धी सर्व चिठ्ठी, पत्र,व मनीआर्डर और समाचारपत्र नीचे पत्तेपर आने चाहिये

भारत भाईयों का शुभचिंतक गो. पं. जगत नारायण शर्म्मा
चंदा वाडी पोष्ट गिरगाम—मुम्बई.

श्रीधर्म्मामृत पुस्तकालय की पुस्तकें

(१) गोरक्षाप्रकाश—गऊ मातके बारेमें विदेशियोंके एक सहस्त्र प्रश्नोका उत्तर, सर्वगोभक्तों को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये. मूल्य ८ आना (२) अकबर गोरक्षा न्यायनाटक इसमें अकबर बादशाहने किस रीतिसे गोरक्षा कीथी, यह नाटकी चालसे कथन किया गया, है, इसमें बहुत करुणामय नाना प्रकारके राग भी हैं. मूल्य १२ आना (३) अकबर बीरबल का समागम. इसमें बीरबलकी चतुराई के दोहे भरे हैं. देखने के योग्य पुस्तक है. मूल्य १२ आना. (४) ईसू परीक्षा. इसमें ईसामसीह की परीक्षा की बाते हैं. प्रश्न करते ही ईसाई दांत दबाते भाग जाते हैं मूल्य १ आना. (५) ईसाई मतपरीक्षा. इसमें ईसाइ धर्म के ढोलकी पोल खोली गई हैं. पढकर देखलो मूल्य १ आना. (६) हिंदुओंकावर्तमानीन धर्म अर्थात् भोलेभाले हिन्दु भाई किस रीतिसे विधर्मियों के फंदे में फंस जाते हैं. मूल्य १ आना (७) गाजीमियांकी पूजा. हिंदु कंवर पूजियों को यह क्या सूझा ? पढकर देखलो मूल्य आधा आना (८) गउकी नालिश. मूल्य आध आना. (९) गोपुकार. मूल्य आध आना (१०) गोपुकारचालीसी मूल्य आध आना. (११) गोविलाप ? मूल्य आध आना. (१२) गोदान व्यवस्था. मूल्य आध आना. (१३) गोगोहार. मू० आध आना. (१४) काऊपोटेक्सन. अर्थात् एक अंगरेज की गोभक्ति मू० आध आना. (१५) गोरक्षापर बादशाहाके फतवे (व्यवस्था) मू० आध आना. (१६) गोहितकारी भजन. मू० आधा आना. (१८) भारत डिंमडिमा नाटक. इकबार पढोगे तो भारतकी क्या दशा है जान लोगे मूल्य चार आन.

धर्म्मामृत पत्र.

अमृतं शिशिरे वन्हिरऽमृतं बाल भाषणम्।
अमृतं राजसंमानो, धर्म्मोहि परमामृतम्॥

वर्ष २.] बम्बई सिंहेऽर्कः श्रावण मास सम्वत् १९५६ सं० १८९९ आगष्ट. [अंक ५.

निवेदन

जिन महाशयों ने अभी तक श्री धर्म्मामृत का निछावर (मूल्य) नही भेजा है, उनकी सेवा में अगला अंक अर्थात ६ अंक मय उपहार के व्यल्यु-पेवल द्वारा भेजा जायेगा. आशा है कि धार्मिक सज्जन महाशय श्रीधर्मामृतके निछावर साथ एक आना उपहार का डाक महसूल देकर व्यल्यू पेवल ग्रहण करेंगे.

और जिन महाशयोंकी इसमे अरुची हो वह कृपा करके एक कार्ड द्वारा सूचित कर दें. ताके हम धर्म धन व्यर्थ पोष्टमें देकर नष्ट न करें, और जिन धार्मिक सज्जनोने श्रीधर्मामृतका प्रथम ही निछावर भेज कर हमारा उत्साह बढाया है उनकी सेवा में भी हम थोडे समय में उपहार भेज देंगे. कृपा कर के एक आनेका टिकट भेज दें.

सर्व भाईयों का हितेच्छु

ला० गोवर्धनदास मेहरा

मैनेजर श्रीधर्म्मामृत पत्र

सूचना

सर्व भाईयोंको सूचना दी जाती है कि, आजसे श्री धर्म्मामृत सम्बंधी सर्व चिट्ठी, पत्र तथा मनी-आर्डर निचे लिखे मेरे पतेसे आने चाहिये.

सर्व भाईयोंका शुभचिंतक
गो० पं० जगत नारायण शर्म्मा
श्री धर्म्मामृत कार्यालये
गिरगाम बम्बई

भारतोन्नती का साधन सद्धर्मही है

(गतांकसे आगे.)

(८४)अंगरेजी विद्याके विद्वान **गुरुदत्त** **एमे**. एकदिन व्याख्यान देते हुये, ज्योतिष शास्त्रके **सूर्य्य सिद्धांत** ग्रंथकी महिमा दर्शाते २ यह वचन बोले, कि संस्कृत फिलासोफी का वहां आरम्भ होता है. कि जहां अंग्रेजी फिलासोफी समाप्त होती है. वह कहा करते थे कि पश्चिमी विद्याओंमें पदार्थ विद्या उत्तम है, और यह पदार्थ विद्या तथा इसकी बनाई हुई कलें बुद्धि, बल की महात्ताको प्रकट करती हैं. इन कलोंसे भी

अद्भुत विचारनीय पश्चिमी पदार्थ विद्याके सिद्धांत हैं. परंतु वह सर्व सिद्धांत **वैशेषक** शास्त्रके आगे शांत होजाते हैं. वह कहते थे कि **कणाद** मुनिसे बढकर कोई भी **पदार्थ विद्याका** वेत्ता इस समय पृथ्विपर उपास्थित नहीं है. कई वेर उनको आर्य्य सज्जनोने यह भी कहते हुये सुना कि, मैं चाहता हुं कि पढी हुई अंग्रेजी विद्या भूल जाऊं. क्योंकि जो बात अंग्रजीके विद्वानसे, वा महान पुस्तकोंके सहस्र पृष्टोंमें मिलतीहै, वह बात **वेदके** एक मंत्र तथा ऋषिके एक सूत्र में लिखी हुई पाई जाती है. वह कहते थे कि जो * "**मिल**" ने अपने न्याय में सिद्धान्त रुप से लिखा है, वह तो **न्याय दर्शनके** दो **सूत्रों** का आशय है. एक वार उन्होने कहा कि हम एक पुस्तक लिखनेका विचार करते हैं जिस में दर्शायेंगे कि **तत्व** केवल पांच ही हो सकते हैं, नके ६४, जैसा कि वर्तमान समय में पश्चिमी पदार्थ **वेत्ता** मान रहे हैं. एक वार लाहोर समाजकी धर्म चर्चामें "बर्तमान समय की विद्या प्रणाली" के विषय में विचार होताथा. इस वारे में कई बी. ऐ. एम. ऐ. भाई, अंग्रेजी विद्या तथा वर्तमान समयकी विद्या. प्रणाली की उत्तमता दर्शानेका यत्न करते थे अन्तको पंडिजीने "**मातृमान पित्रमान, आचार्य्यवान पुरुषो वेद**" की प्रती रखकर एक अद्भुत और सार गर्भित रीतीसें उक्त वचन की व्याख्या करते हुये लोगोंको निश्चय करा दिया कि, अंग्रजी विद्या **भ्रान्ति युक्त** होनेसे विद्याही कहलाने के योग्य नही है. और वर्तमान **शिक्षा** प्रणाली शिर से पग तक छिद्रों से भरपूर है. उनका एक वचनकुछ ऐसाथा कि Modern System of Education is rotten from top to bottom

जब कभी वह हमे सुनाते कि यूरोप में अमुक नवीन **सिद्धान्त** किसी विद्या विषय में निकला है, तो अत्यन्त प्रसन्न होकर साथही कहते कि यूरोप **सत्य** के निकट आ रहा है. यदि कोई उनको कहता कि पण्डितजी यूरोप तो **उन्नति** कर रहा है; तो वे कहते कि भाई **वेद** के निकट आ रहा है. सत्य नियम की उन्नति कोई क्या कर सकता है? क्या दो और दो चारका कोई नवीन सिद्धांत उलंघन कर सकता है, कदापि नही? वह कहते थे कि वर्तमान यूरोप, **योग विद्या** से शून्य होने के कारण सत्य नियमों को निर्भ्रांत रीतीं से नही जान सकता, इसी लिये यूरोप में एक सिद्धांत आज **स्थापन** किया जात है, और दश वर्ष के पीछे उसको **खंडन** करना पडता है. यदि **योगदृष्टि** से यूरोप के विद्वान युक्त होते, तो जो सिद्धांत आज निकालते; वह कदापी परसों खंडन न होता. उनका कथन था कि विद्या, विना **योग** के अधूरी रहा करती है. **आर्ष ग्रंथ** इसी लिये पूर्ण हैं, कि उनके कर्ता योगी थे. **अष्टाध्यायी** इसी लिये अति उत्तम है कि, महर्षि **पाणिनी** योगी थे. **दर्शनशास्त्र** के कर्ता अपने २ विषयको इस लिये **निर्भ्रांत** वर्णन करते हैं कि, वह योगी थे. कई भिन्न उनके यह वचन सुन कर कहते थे कि, **योगी** तो किसी काम करने के योग्य नही रहते. इस शंका के उत्तर में वह कहते कि यह सत्य नही है, देखो महर्षि **पतंजली** ने योगी होने पर **योगशास्त्र**, और शब्दशास्त्र अर्थात् महा भाष्य लिखाहै. और **श्रीकृष्ण** जीने योगी होनेसे **परोपकार** किया. प्राचीन समय में कोई **ऋषि** योग से रहत न था, परन्तु सब उत्तम **वैदिक** कर्म करते थे. हां? यह तो सत्य है कि योगी व्यर्थ पुरुषार्थ नही करते.

पंडितजी कहा करते थे कि वर्तमान पश्चिमी **आयुर्वेद**, योग से हीन होने के कारण अधूरा बन रहा है. टूटी हुई अंगहीन **कला** से उसकी क्रिया मान उत्तम दशाका पूर्ण अनुमान जैसे नही हो सकता, वैसेही मृतक शरीर के केवल चीरने फाडने से जीते हुये क्रियामान शरीरका पूर्ण **निर्भ्रांत**

---

† J. S. Mill. † Death is no mystery. † Theory.

ज्ञान नही मिल सकता. एक योगी जीते जागते शरीर की कला को **योगदृष्टि** से देखत हुआ उस के रोग के कारण को निर्भ्रान्त जान सकता, और पूर्ण औषधी बतला सकता है. परन्तु प्रत्यक्ष प्रिय पश्चिमी **वैद्य** विद्या यह नहीं कर सकती. जब कोई विद्यार्थी उन से प्रश्न किया करता कि मैं **आत्मोन्नति** के लिये क्या करूं तो, वह उत्तर में कहते कि **अष्टाध्याई** से लेकर **वेद** पर्य्यंत पढो, और अष्टांग **योग** के साधन करो. एक अवसर पर **प्राणायाम** का वर्णन करते हुये वह कहने लगे कि, **असाध्य** रोगोंको येही **प्राणायाम** दूर कर सकता है. उन्हो ने बतलाया कि कभी २ एक हृष्ट पुष्ट **मनुष्य** को **प्राणायाम** निर्बल कर देता है, परंतु थोडे ही कालके पश्चात वह मनुष्य **बलवान**, और पुष्ट हो जाता है. उनका कथन था कि सृष्टि में सबसे उपयोगी वस्तु विना मोल मिला करती हैं, इस लिये सबसे उत्तम औषधी असाध्य रोगोंके लिये **वायु** है. और यह वायु प्राणायामकी रीति-से हमे औषधी कासा काम दे सकता है.

एकबार लाला शिवनारायण अपने पुत्रको पंडितजीके पास लाया, और कहने लगा कि पंडितजी इसको मैं अष्टाध्याई पढाता हुं और मेरा विचार है कि इसको अंग्रेजी न पढाऊं. आपकी क्या सम्मति है. पंडितजी बोले हमारी आपके अनुकूल सम्मति है. जब सौ में ९५ पुरुष विना अंग्रेजी पढे के, रोटी कमा सकते हैं तो आप रोटी के लिये भी इसको अंग्रेजी नही पढानी चाहिये.

एक दिन उन्हों ने गन्दे विषयासक्ति के दर्शाने वाले कल्पित ग्रंथों के पढने का खंडन किया और पश्चिमी देशो के बडे २ इंद्रियाराम धनी पुरुषों के पापमय जीवनो का वर्णन करते हुये कहा कि, निर्वाह मात्र के लिये धर्म से धन प्राप्त करना साहुकारी है, न कि पाप से रुपैय कमा कर विषय भोग करना अमीरी है. अंतमें उन्होने कहा कि पूर्ण उन्नति मनुष्यका दृष्टान्त ऋषि जीवन है. फिर उन्होने कहा कि वह ऋषि, नहि जान पडते कि कैसे अद्भुत विद्वान होगें जो, अपने हाथोंसे अनुभव करते हुये लिख गये कि, संसार में ईश्वर इसप्रकार दीख रहा है जैसा कि खारे जलमें निमक विद्यमान होरहा है.

एक समय ईसाईयों के स्थान में एक अंग्रेज ने व्याख्यान दिया, जिस में उसने मैक्स मूलर आदिके प्रमाणों से वैदिक धर्म्मको दुषित बतलाया. पंडितजी भी वहां गये हुयेथे. आते हुये रास्तेमें कहने लगे कि हम इसके कथन से सम्मत नही हैं. क्या? यह हो सकता है कि हम भारत वर्ष के निवासी लण्डन में जाकर अंग्रजों के प्रोफैसरों के सन्मुख "शेक्सपिअर" और "मेकाले" की अशुद्धियां निकालें, और अंग्रेजी शब्दों के अपने अर्थ अंग्रेजों को सुनाकर कहें कि तुम "शैक्सपीअर" नही जानते हो, हमसे अर्थ सीखो. क्या "मैक्समूलर" वेदोंके अर्थ अधिक जान सकता है, अथवा प्राचीन ऋषि, मुनि? निरुक्त आदि में वेदके अर्थ मिल सकते हैं. न के किसी विदेशी की कल्पना वेद के अर्थको जान सकती है.

एक बार स्वात्मा नंद स्वामीने उनसे प्रश्न किया कि वीर क्षत्रियोंको मांस खानेकी आवश्यक्ता है वा नहीं? इसके उत्तर में उन्होने यूनान देशके योद्धाओं, नामधारी सिखों, और ग्राम निवासी वीरोंके दृष्टान्तों से सिद्धकर दिया कि, क्षत्री को मांस खाने की कुछ भी अवश्यता नही है. उन्होने अर्जुन के दृष्टांत से विदित किया कि वीरता का एक कारण, आत्मिक संकल्प आदि हैं. क्यों कि जिस समय अर्जुन ने विचार किया था कि मुझ को नही लडना चाहिये, वह कायर होगया. परंतु जब कृष्णदेवके उपदेश ने उसके मनोभाव पलट दिये तो, वही अर्जुन फिर वीर होकर लडने लगा. अंत में उन्होने कहा कि अखंण्ड ब्रह्मचर्य वीरता के लिये अत्यंत आवश्यक है. स्वात्मानंद जी मान गये कि बिना मांस भक्षण किये क्षत्री वीर हो सकता है.

एक समय पंडितजीके संगप्रातःकाल हवा खाने को ग-ये और वातें करते२दूर निकल गये. रास्त में उन्होंने छोटे२ग्रामोंमें रहने के लाभ दर्शाय, फिर घोडोंकी कथायें वर्णन करते हुये हमे निश्चय करादिया कि पशुओं में भी हमारे जैसा आत्मा है. और यहभी सुख दुख को अनुभव करते हैं. गोल वागमें आन कर उन्हो ने हमे वतलाया कि वनस्पति में भी आत्मा मूर्छित अवस्था में है. और एक फुलको तोडकर वहुत कुछ विद्या विषयक वाते वनस्पतियों की सुना ते रहे. (शेषफिर)

आर्य्य जीवन चरित्र दर्पण.

(गतांकसे आगे.)

परम धार्मिक कवि जैदेव स्वामी !

यह चित्र महात्मा **जैदेव** स्वामीका है. यह नामांकित भक्त पुरुष श्री **जगन्नाथपुरीके** समीप **किन्दु विल्व** नामक ग्रामके निवासी थे. और यह महात्मा बाल वयसे ही गुरु गृहमें विद्याभ्यास के लिय रहते थे. इस महात्माकी एसी प्रवल वुद्धि थी कि गुरुके पाससे एक दिवस में एक वार ही पन्दरां दिनका पाठ लिया करते, और तुरंत ही मनन करके सुना दिया करते थे. इस पर से इनका दूसारा नाम **पक्षधर** मिश्र. पड गया था. यह परम विष्णु भक्त हुये हैं, इस कारण इनकी गणिना संतमालिका में की गई है. यह जैसे प्रवल वुद्धिके थे, वैसे ही ज्ञानी, ध्यानी दयावान, धार्मिक, तथा काव्य शास्त्रमें निपुण, प्रौढ वक्ता और विद्वान भी थे. इनको विद्याभ्यास समयसे ही काव्य रचनाकी ओर रुचि हो गई थी, और बाल वय में ही कविता करने लग गय थे. इस कारण से इनकी काव्य शक्ती वहुत ही उत्तम हो गई थी. इनके रचित ग्रंथोंकी वाणी अति कोमल, शृंगार और करुणा रस से भरपूर है. इनका एक **प्रसन्न राघव** नामक सप्त अंकी सुन्दर नाटक रचा हुआ है, उसमें वीर, शृंगार और करुणा रसका उत्तमता से वर्णन है, कितनेक स्थल में शब्दालंकार, और अर्थालंकार का भी वर्णन किया हुआ. है परन्तु अर्थालंकार पर इनका विशेष लक्ष देखने में आता है. कारणकि उसमें सीता स्वयंवर से लेकर रावणको मार कर, श्रीरामचंद्र सीताजी ले अयोध्या में आये, वहां तक उत्तम छटासे रस युक्त राम चरित्र वर्णन किया हुआ है. दूसरा ग्रंथ **गीत गोविन्द** नामका गद्यपद्यात्मक रचा हुआ है. इस ग्रंथमें अष्ट पद से राधा कृष्णाके विलास का वर्णन किया हुआ है. इन अष्ट पदियोंको कर्णाटकी गवैयो अनेक ताल और रागमें वहुतही मनोरंजक रीतोंसे गाते हैं. इनके सुननेसे चाहे कैसा भी कठोर छाती का मनुष्य क्यों न हो, एक वार तो उसका मन भी पिगले विना नही रहता है. एक एसी कहावत है कि, इस ग्रंथके लिखते समय जैदेवजीको एक स्थलमें राधिकाजी के वर्णन करनेमें एसा प्रसंग आ-गया कि, उसकी सूझ न पडने से उस विषय के

अधूरा छोड, स्नान ध्यानके लिये चले गये. इतनेमें साक्षात श्रीकृष्णजी प्रगट होकर उस विषयको पूर्ण करके चले गये. जब जैदेवजी नित्य कर्म और भोजनसे निश्चित होकर पुनः लिखने को बैठे तो क्या देखते हैं कि, वह अधुरा प्रकरण पूरा लिखा हुआ है. इस अद्भुत कार्य्यसे इनको बहुत अश्चर्य्य लगा. सांप्रत कालमें यह ग्रंथ देशो देशमें गाया जारहा है. परन्तु जैसा करनाटक देशमें यह मनोरंजक रीतिसे गाया जाता है ऐसा अन्य देशों-में नही गाया जाता.

इस समर्थ कविके समय जगन्नाथ क्षेत्रमें, सात्विक नामक एक राजा राज्य करता था. जब उसने जैदेवजीके इस गति गोविन्द ग्रंथका बहुत वखान सुना, तो उसने भी एसा ही एक ग्रंथ रचा, और इसकी पुष्कल प्रतियां (नकलें) लि-खया करके विना कुछ निछावर के लिये ऐसे ही अपने राज्यमें बटवा दीं. और साथहीं यह भी आज्ञा दी कि हमारे राज्य में कोईभी इस ग्रंथके नित्य पाट किये विना न रहे. परंतु प्रजामेंसे कि सीने भी राजाकी इस आज्ञाका पालन नहीं किया, और राजाके रचित ग्रंथको ताक परधर, जैदेव जीके ग्रंथका मान किया. जब राजाको इस विषयकी सूचना लगी कि, मेरे ग्रंथका कोई भी मान नही करता है. तब जैदेवजीको बुलवाकर पूछा कि जैसे आपके ग्रंथका लोग मान करते हैं, वैसे मेरे बनाये ग्रंथका क्यों मान नही करते? जैदेव जीने उत्तर दया. महाराज! यह लोगोंकी रुचि की बात है, इसमें हम क्या करें. जैदेवजीके ऐसे उत्तर देनेसे फिर सर्व विद्वानोको बुलवा कर यह निश्चय किया कि दोनो ग्रंथ जगन्नाथजी के पास रख दिये जायें, जिसको वह स्वीकार करें उसका ही सर्व को मान करना उचित है. राजाकी यह बात सब को ठीक लगी, और दोनो ग्रंथ जगन्नाथजी के आगे रख दीये गये. और फिर सर्वको मन्दिरसे वाहर कर, वारना (दरवाजा) बंद कराके उसकी कूंची राजाने आपने पास रख ली. और फिर दूसरे दिन सर्वके सन्मुख किवाड खुलवाकर मंदिरके अन्दर गये तो, क्या! देखते है, कि जैदेवजीका ग्रंथ जगन्नाथजीके आगे पडा है, और राजका पुस्तक वहां नही है. यह अद्भुत चमत्कारी कार्य्य देखके सर्वको वडा आश्चर्य लगा कि राजाका पुस्तक कहां गया. फिर खोज करने पर, राजाका पुस्तक फटा और विखरा हुआ मंदिरके पिछाडी से पाया गया. राजा अपने ग्रंथकी यह दशा देख, अपना अपमान होना समझ, प्राण त्याग करने को तैयार होगया. राजा की एसे दशा देखकर जैदेवजीने धर्यदी, और फिर जगन्नाथजी की अस्तुत कर, राजा के ग्रंथ में से थोडेसे श्लोक अपने ग्रंथ में मिलालेने के लिये आज्ञा मांगीली. इस्से राजा बहुत प्रसन्न हो गया. और जैदेवजी से मित्र भाव से वर्तने लगा. अर्थात् जैदेवजी को आश्रय देके आपनी दरवार मैं रख लिया. जैदेवजीके ग्रंथ को जगन्नाथजी के मान देने से, जैदेवजी की कीर्ति में विशेष वृद्धि हुई. और दिनप्रति दिन चारों और कीर्ती फैलने लग गई. जगन्नाथ पूरी में एक अग्नि होत्री ब्राह्मण रहता था. इस ब्राह्मण की पद्मावती नामक अतिरूप और गुणवती एक कन्या थीं. इस ब्राह्मणने अपने मनमें इस कन्याका किसी के साथ विवाह न कर के, इसे ब्रह्मवादनी बना, जगन्नाथजीके अर्पण कर देनेका निश्चय किया हुआ था. पर एक दिवस जगन्नाथ जीने स्वपन में इसको अपनी कन्याका विवाह जैदेवजीके संग कर देने की आज्ञादी. तब इस ब्राह्मणने अपनी कन्याका विवाह वेदोक्त विधी से जैदेवजी के संग कर दिया. यह कन्या विदूषी थी. इसने इसने पतिव्रत धर्म का एसा पालन किया कि, सती नारियों में गिणी गई है. यह सती राज्य भवन में राणियों के पास नित्य जाया करती थी. एक समय राजाके वेहनोई का मृत्यु समाचार आया, इस समाचार के पाते ही राजाकी बहिन अपने पती के संग सती होने को तयार होगई. इस्से सर्व राणियां राज्य भगनी की बहुत प्रशंसा करने लगीं. उस समय यह विदुषी सती भी वहां परथी

इसको राज्य वहिन की कुछ प्रशंसा न कर, चुप के बैठ रहने से राणियों को वडा आश्चर्य लगा, और उन्होने इस्से पूछा कि तुम इस वारे में क्यों नही कुछ बोलती हो. पद्मावतीने उत्तर दिया ऐसे ही? राणियोंने कहा ऐसे कैसे ही; क्या? तुम्हे यह कार्य अश्चर्यदायक विदित नही होत है. पद्मावतीने उत्तर दिया कि "यह पतिव्रता तो है, परंतु यदि सत्य पूछो तो खरी पतिव्रता वह स्त्रि है कि, जिसके प्राण पति मृत्यु सुनते के साथ ही निकल जायें, और शरीर में जीवात्मा के रहते पतिके साथ सती होने की अवश्यकता न रहे. पद्मावती के यह वचन सुनकर, सती होने वाली का भावज सम्बंध से राणियों को वुरे लगे, और उन्होंने पद्मावतीके अपमान करने के हेतु; इसके पतिव्रत धर्म की परीक्षा लेनेके लिये कमर वांधी. अकस्मात एक समय राजा और जैदेवजी कहीं यात्राको गये. उस समय राणियोंने एक दासको एसा समझाया कि, जव आज पद्मावती आकर हमारे पास वैठ, तव उस समय तूने आकर जैदेवजीके मृत्यु होजाने की खवर देनी. दासने राणियों के कथनानुसार वैसे ही किया कि, जव पद्मावती राणियोंके पास आकर बैठी उसी समय पास जा, वुरा मुख बना कर कहा "वडे ही शोक! की वात है कि, महाराजके संग जो अपने कविराज जैदेवजी यात्रको गयेथे. उन्हे मार्ग में एक व्याघ्रने मार दिया" मार दिया इतना शब्द कान में पडतेके साथ ही प्राण शरीरसे जुदा होगये. पद्मावती की यह दशा देख कर राणियां भयभीत होगई, और राजके डरसे थर २ कांपने लगीं. दैव योग से इतने में राजा और जैदेवजी भी वहांपर आ गये, और पद्मावतीको ऐसी दशा में होने का कारण सुन. सती हत्या लगी एसा जानकर, इसके निवारण के लिये, राजा अपने प्राण त्याग देने को तैयारहो गया. उस समय जैदेवजी ने राजा को धैर्य देकर शांत किया. और स्वयं अपनी प्यारी सती नारी के शव (मृत्य देह) के पास वैठ कर करूणा रस युक्त मधुर स्वर से अष्टपदियों का गायन करना आरम्भ कर दिया. शेष आगे.

सांप्रत स्थितीनुसार सुख संकल्प।

(गतांकसे आगे)

इस्से उनके मानभंग हो जाने का वडाही भय रहता है. क्यों कि इंग्लेंड में साधारण लोगों को भारत देश के विषय का बहुत थोडा ज्ञान है: और जो भारत वासी वलायत में जाते हैं, उनको वहांके लोग राजा, नवाव समझते हैं. तथा स्कूल के विद्यार्थि तो भारतीये विद्यार्थीयों को धनवान समझ कर इन के साथ सभ्यता से वर्तते हैं. उनके ऐसे वर्तने का कारण, इनकी ओर से वारंवार भोज (ज्याफत) लेने की आशा से रहता है. कितनेक भारतीय घमंडी, और खुशामद प्रियजन, भारत को कोई निर्धन न समझे, ऐसा जताने के लिये अपने खीसे में मुद्रा रक्ख कर छन छनाया करते हैं. इस्से वे बुरी संगत में पड जाते हैं, और व्यर्थ (फजूल खर्च) धन उडाने में लग जाते हैं. फिर अंतमें जव पैसे की तान (खोट) पड जाती है. तव खोटी (जाली) चेक वनामें, अथवा कोई प्रसिद्ध राजा, अमीर का सम्बंधी वन कर. थोडे समय तक फतेह पाते हुये अनजान अंग्रेजोंको ठगनेका धंदा चला ते हैं. परंतु अंत में पकडे जाने से अपना ही जीवन नाश नही करते हैं, किंतु अपने साथ के प्रमाणिक विद्यार्थियों की भी भार हानी करते हैं. उनके वहां पर एसे वन जाने का मुख्य दोष, उन के माता पिताका है कि, जो उनके वहां जाने पर कुछ देखरेख नही रक्खते हैं. इतनाही दोष नही है, परंतु उनको जो कची बुद्धिके होने पर ही वलायत में भेज देते हैं, इसका फल यह मिलता है कि वह विद्यार्थी कची बुद्धि के होने से, वलायत की गोरी चमडी वाली वनिताओं के प्रेम में फंस जाते हैं.

वाचक वृन्द ! उर्द्ध लिखत वचन कुछ असत्य नहीं हैं, थोडे ही दिनकी वात है कि मुम्बई के एक धनवान का छोकरा कच्ची बुद्धि के होने से बलायत में एक गोरी चमडी वाली वनिता के प्रेम में फंकर दस सहस्त्र मुद्रा स्वाह कर आया है, और ता० २२ आगस्ट के भीमसेनादि गुजराती पत्रों में दो भारतीय विद्यार्थियोंको ठगाईके धंदे करनेसे, एक को नव मास सख्त मजदूरी करने की सजा मिली है, और दुसरे को दो मासका दंड मिला एसा छपा है. हम यह नही कहते हैं कि सर्व विद्यार्थी ऐसे ही होते हैं. परतु हमारे कहनेका तात्पर्य यहहै कि जो वहांसे बैरिस्टर, डाकर और सिविल सरवंट की परीक्षा पास करके आते हैं. उन्होने भी देश का क्या? उपकार किया है. क्या ? कोई एसा कह सकता है कि, इन्होने वलायत से आकार कुछ नीति का पसार किया है. हां ? यदि इन लोगोंने आकार कुछ भी नीति का पसार किया होता तो, निसंदेह इनका वलायत में जाना सुफल समझते. किन्तु यह तो उलटे यहां के हानी कारक बन गये, और बनते जा रहे हैं. और गोस्वामी तुलसीदासजी के निम्न वचन को पूरा कर दिखला रहे हैं.

जस जस सुरसा बदन वढावा ॥
तासु दुगुण कपि रूप दिखावा ॥

भावार्थ येहै कि-ज्यों२वकील, बैरिस्टर, डाक्टरों की वृद्धि होती जारही है, त्यों २ ही जाल फरेब और नाना प्रकार के रोग भी बढते ही देखने में आरहे हैं. यदि यह लोग स्वयं नीति वाले होते तो, कदापि जाल फरेब और रोगों की वृद्धि न होने पाती.

प्राचीन समय में, अजी प्राचीन समय को तो जाने दीजीये ! वर्तमान समय में भी कई एक स्थानों पर एसे भी पुरुष देखनेमें आये हैं कि, जिन के बाप, दादा, पर दादा ने किसी से कुछ धन लिया है. तो वह उनकी मृत्यु के उपरांत भी बिना कुछ लिखा पढी हुये के अपने पुरुषोंका कर्ज अदाकर दिया और कर रहे हैं. परन्तु जहां इनका प्रवेश है वहां लिखा पढी होने पर भी नही देते हैं. कारण, कि जहां वादी प्रतिवादी और साक्षी धर्म से डरेंगे, वहां कदापि अनीति का प्रवेश नही होगा. इस समय धर्म शिक्षाके न मिलने से वादी प्रतिवादी और साक्षी तो दूर रहे, परन्तु वकील बैरिस्टर भी अनीति वाले हो रहें हैं. क्या ? यह नही जाते हैं कि, हमारे वादी, प्रतिवादी, वा साक्षी सरासर झूठे हैं, पर तो भी उनके मुकद्दमों को हाथ में ले कर, परमेश्वरतुल्य न्यायधीश के सन्मुख खडे हो करके, झूठे, अधर्मी को भी जताने के लिये नाना युक्ति रचते हैं. यदि इनको धर्मनीति का ज्ञान होता तो कदापि लाखों मुद्रा देने वाले झूठे का मुकद्दमा न ले लेते. परन्तु उलटा उसको झूठा मुकद्दमा बनाने का दोषी ठहरा कर न्यायधीश से दंड दलाते, तो निसंदेह इनसे वडा भारी उपकार होता. क्यों कि इनके ऐसे करने से फिर कोई भी झूठा मुकद्दमा न बनाता, और देशमें सत्यका प्रचार होजाता, अनीति दूर हो जाती, नीति फेल जाती, और देश उन्नतीके शिखपर पुनः चढने लग जाता. प्राचीन समयमें जो भारत उन्नतिके शिखपर चडा हुआ था, इसका मुख्य कारण न्यायधीश, वकील बैरिस्टर, धर्मन्यायसे स्वयं चलते थे और प्रजाको भी चलाते थे, इससे अनीती नहीं होने पाती थी. देखो मनु भगवान अपनी मनुस्मृति में न्यायधीश और वकील बैरिस्टर इत्यादियोंके बारे में एसा लिखते हैं कि:—

सभान्तः साक्षिणः प्राप्तानर्थि प्रत्यर्थि सन्निधौ । प्राड्विवाकोनुयुञ्जीत विधिनाऽनेन सान्त्वयन ॥ यद् द्वयोर नयोर्वेत्थ कार्ये स्मिन्र चेष्टितं मिथः । तद् ब्रत सर्वं सत्येन युष्माकं ह्यत्र साक्षिता। सत्यं साक्ष्ये ब्रवन्साक्षी लो-

कानाप्नोतिपुष्कलान । इह चानुत्तमां कीर्तिं वागेषा ब्रह्म पूजिता ॥

अर्थात्–जब अर्थी (वादी) और प्रत्यर्थी (प्रति वादी) के सामने सभाके समीप प्राप्त हुये साक्षियोंको शांत पूर्वक न्यायाधीश और प्राड्विवाक (वकील, वैरिस्टर) इस प्रकारसे पूछे, हे साक्षी लोगो इस कार्य्यमें इन दोनोंके परस्पर कर्मोमें जो तुम जानते हो उसको सत्यके साथ बोलो क्योंकि, तुम्हारी इस कार्य्यमें साक्षी है. जो साक्षी सत्य वोलता है वह जन्मान्तरमें उत्तम जन्म और उत्तम लोकांतरोंमें जन्मको प्राप्त होके सुख भोगता है. इस जन्म वा पर जन्ममें उत्तम कीर्तिको प्राप्त होताहै क्योंकि, जो यह वाणी है वह ही वेदोंमें सत्कार और तिरस्कार का कारण लिखी है इत्यादि.

भला? जब कि आज कलके वैरिस्टर वकील स्वयम जानते हैं कि, हमारे वादी प्रतिवादी सरासर झुटे हैं, तब वह साक्षियोंसे उर्द्ध लिखत रीतिसे कब पूछ सकते हैं; और वह भी कैसे सत्य कह सकते हैं. और डाक्टर (वैद्य) प्राचीन समय ऐसे होते थे.

गुरोर धीता खिल वैद्य विद्यः पीयूष पाणि कुशलः क्रियासु । गतस्पृहो धैर्य्य धरः कृपालुः शुद्धोऽधिकारीभिषगो दृशःस्यात् ॥

अर्थात्–वैद्य सत्यवक्ता, गुरुसें निघंटु, निदान, चिकित्सा आदि समग्र वैद्य विद्या पढा हुआ, अमृतके समान हाथ वाला (अर्थात् जहां औषधी दे वहां यशको प्राप्त करे) दवा देनेमें पूर्ण चतुर, निर्लोभी, धैर्यवान, दयावान, सदा पवित्रतासे रहने वाला निष्कपटी और आलस्य रहित, इन लक्षणोंसे जो युक्त हो सो सद्वैद्य कहलाता है, उक्त वैद्यसे ही औषधी लेना चाहिये अन्यसे नही.

अब विचारनेका स्थान है कि आज कल के डाक्टर लोग क्या? उर्द्ध लिखत वाक्यके अनुसार पाये जातेहैं?

वाचक वृन्द? डाक्टर और वैरिस्टर दोनो जैसे उपर लिखे होने चाहिये इस समय में ऐसे नही मिलते हैं, कि जिनसे अपने देशका कल्यान समझें. हमारे कहनेका यह तात्पर्य नहींहै कि डाक्टर और वैरिस्टर न वनें. वनें? परंतु यदि वर्तमान समयके वैरिस्टर डाक्टर, वेद धर्मकी नीतिका वाल्यवस्था में शिक्षण पाय हुये होते तो वह अवश्यही उर्द्ध लिखत वाक्यानुसार होजाते, और अपने देशकी अनीतिको भी अवश्यही रोक देते.

(शेषफिर).

योगी और जिज्ञासु.

(गतांकसे आगे.)

योगी राज पिछली चार घटीका रात्री रहने पर निन्द्रा से उठा, और शौचादि क्रिया से निश्चित हो, फिर एकांत स्वच्छ स्थान में एक पवित्र आसन पर बैठ कर अंतर शौच करने लगा. इसके उपरान्त स्नान करके पर्वत की ऊंची शिखरपर की आकाशी में गया, और वहां जाकर प्रथम एक बार चारों दिशाओं की ओर दृष्टि की, एसे करने से उन को निर्मल आकाश में अस्त होता हुआ चन्द्र पूर्ण प्रकाशित देखने में आया, इस्से उस स्थान पर योगासन लगा, सर्व इन्द्रयों को निग्रह कर, एकाग्र दृष्टि से चंद्रबिंब के सन्मुख देख, चन्द्रकला के तेज को चक्षुइन्द्रियों के साथ एकता की. इन दोनो के एक मार्ग होने के उपरान्त, चक्षु इन्द्रियों और कर्ण इन्द्रियों को अंगुष्ट और कनिष्ट अंकुली से वंद करके, एक सदृश ध्यान वा धारणा करता हुआ योगी राज समाधि में हो गया. योगी राज के ध्यानावस्थित हो जाने के कुछ देर उपरांत जिज्ञासु भी वहां पर आगया, और योगी राज

को समाधी में बैठे देख कर, चुपके से सन्मुख बैठ गया. जब **योगीराज** समाधी से जागे, और जिज्ञासु को सन्मुख बैठ हुये देखा, तो बडी प्रसन्नतासे बोले. हे **वत्स!** तुम यहां पर कब से आये हो **जिज्ञासु** ने विनयसे उत्तर दिया. महाराज! मुझे यहांपर आने में थोडा ही समय हुआ है. **योगीराज** ने कहा अति उत्तम हुआ कि जो तुम यहां पर आ गये. इतना कह, फिर अति स्नेह से समाधी के प्रयोग द्वारा चन्द्र, तारा इत्यादि ग्रहों के मार्ग, स्थिति, और चलने (हरकत) के विषय की कुछ बातें सुनाई. इन बातों में से कितनी एक बातें **जिज्ञासु** को, खगोल विद्या के जानकार होने से ठीक लगीं, इस्से वह सानंदाश्चर्य हुआ, और **योगी** राज के इस अद्भुत ज्ञान विषय में उस का कुछ भी तर्क न चल सका. परन्तु तो भी सांप्रत काल के नलिका अर्थात् **सूक्ष्म दर्शक** यंत्रों(दुरबीन वा खुर्दबीन इत्यादि)द्वारा, चन्द्र और अन्य ग्रह आदिके चलने, तथा दुसरे कितनेक खगोल विद्या के बारेमें जो पश्चिमी भोम के ज्योतिषियों ने नवीन शोध की है. उसके तत्काल ज्ञान होने से जिज्ञासुको कुछ गर्व उत्तपन्न हो आया, और वह बोला. **महाराज!** आप समर्थ तो हैं? किन्तु सांप्रत काल के यंत्रों द्वारा जो अलौकिक खगोल पदार्थों की गती, (चलने) की नवीन शोध हुई है, एसी सत्य, और प्रमाणिक शोध अन्य किसी रीतिसे हो सके, एसा मुझे विदित नही होता है. कारण कि थोडा ही समय हआ है कि, अमरीका देश के आग्रही विद्वान ज्योतिषियों ने सूक्ष्म दर्शक यंत्रों द्वारा जो चमत्कारी शोध की है, वह जानने के योग्य है. उन्होने मंगल नामके ग्रहको दो चंद्र अथवा उपग्रह है, एसा सिद्ध किया है. और यह इस रीतिसे सिद्ध किया है कि, एक समय एक विद्वान जोतिषीने महा विशाल सुक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा सबसे छोटा जो मंगल ग्रह है, इसका उस समय में अवलोकन किया कि जिस समय उस देश में सूर्य ग्रहण लगा हुआथा, उस समय में देखने से ज्योतिषी को एसा विदित हुआ कि मंगलके पास दो सुक्ष्म तारें हैं. इस्से उस ज्योतिषीने आनंद में आकर उन ताराओंकी हिलचल (हरकत) उस महा विशाल सुक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा देखनी आरम्भ की. परंतु वही तारे अपने स्थान परसे हटे हुये उसे जाननें में नही आये. इसपरसे उस जोतिषीनें एसा सिद्धांत निश्चय किया कि, यह तारे अचल हैं, पर मंगलके साथ ही साथ फिरा करते हैं, इस्से यह मंगलके उपग्रह होनें चाहिये. फिर उसे इन दोनो उपग्रहों के विषय में एसा भी सिद्ध हुआ है कि, यह दोनो उपग्रह छोटे बडे हैं. इनमें जो बडा है वह पूर्वमें उदय होता है और पश्चिम में अस्त हो जाता है, और जो छोटा है वह पश्चिम में ही उदय और अस्त होता है. इस कारण से मंगलके लोक में उसके दोनो ओर दो चंद्र उदय होते हैं. और यह दोनो मध्य में बराबर आते हैं. मुझे तो इस पर अति आश्चर्य लगता है! किन्तु फिर एसा भी अनुमान हुआ है कि, उपर के उन दोनों चन्द्रों का प्रकाश अपने यहां के एक चन्द्रमा के प्रकाश से अधिक नही है. **योगी राज** को इन सर्व वातों के सुन्ने से महा संतोष हुआ, और वह बोले हे **वत्स!** तुम विद्वान जिज्ञासु हो, इस्से तुम्हारे सर्व तर्कों का यथार्थ निवारण हो सके गा. और तुमने जो ज्योतिष विद्या की शोध विषय में कहा, यह सत्य है. सुक्ष्म दर्शक यंत्र की सहायता से खगोल के पदार्थों का कितनाक सत्य और चमत्कारी ज्ञान मिलना ठीक है! परंतु इसके द्वारा संसारिक द्रव्यवाले गृहस्थ विद्वान पुरुष ही शोध करने के योग्य हैं, दुसरे नही. हे वत्स! हम इस प्रसंग के बारे में इतनी ही सूचना करते हैं कि, इस महा **योग** विद्यामें निपुण, एसे जो योगी, व ऋषि, जिनकी ध्यान धारण और समाधी इत्यादि योग कला संपुर्ण हैं. उनको अनेक प्रकारके चमत्कार देखने में आते हैं. यदि वे खगोल पदार्थों के विषय में भी जितनी जानने की इच्छा करें, तो उतनी सर्वी उनकी परिपूर्ण हो सकती है. परन्तु वे केवल अनुभव से ही सिद्ध कर सकते हैं, और इसका अनुभव प्राप्त करना अति दुर्घट है, इस्से ही बहुत विद्वान भी इस विषय में प्रयत्न नहि करते हैं. अस्तु! अब अपने को जो विषय प्रथम लेनेका है, उसे छोडकर इस समय

दूसरे मार्ग में जानेकी अवश्यता नहि है, आगे प्रसंग आने पर यह सर्व विषय जैसे २ आते जायेंगे, वैसे २ इनका परिपूर्णता से निर्णय करते जायेंगे. **योगी** राज के यह वचन सुनकर. **जिज्ञासुने!** कहा. महाराज! आप महा समर्थ हो, और मैं तो आपके आगे केवल दीन जैसा हुं, इस्से मेरे मुखसे यदि कोई अयोग्य शब्द निकल गया होये तो क्षमा करना. और अब मैं आपके आगे आपना अंत:करण स्पष्ट करके योग्य अयोग्य शंकाओं को निवेदन करता हुं, इनका कृपा करके निवारण कीजीये गा.

योगीराज! ने कहा तुम अपना अंत:करण स्वच्छ रक्खके, चाहे कैसा भी तर्क वतर्क हमारे आगे स्पष्ट करोगे, तो इस्से हमे कदापि क्रोध आनेवाला नही है.

जिज्ञासु! बोला प्रथम विषय पर चर्चा करने के पहले यदि मेरे वाकी रहे हुये एक संशय का निवारण हो जाय, तो फिर पीछे अपने चलते विषय में कदापि विक्षेप नही आयेगा. वह शंका यह है कि, आप लोग कृपालु, और सर्व संसारके कल्याण की इच्छा रखने वाले हो करके भी फिर आप लोगों के मनुष्य प्राणियो का संग त्याग एसे आरण्य में निवास करने का क्या प्रयोजन है. इस्से तो सर्व प्राणियों का कल्याण कदापि नही हो सके गा. कारण कि इस समयमें ऐसे पुरुष थोडे ही होंगे कि, जो धर्म्म सम्बंधी सत्य ज्ञान की अभिलाषासे, अपना संसारिक सुख त्याग, और अनेक कष्ट सहन करके, आप महान पुरुषों के समागम करने के लिये ऐसे दुर्गघट स्थान में आवें. फिर आप दयालु पुरुषों का एसे स्थानो में निवास करने क्या प्रयोजन होगा, यह समझमें नही आता? **योगीराज!** हे जिज्ञासु यद्यपि इस समय इस विषय पर लक्ष देने की कुछ अवश्यकता नही थी, परन्तु तेरी इच्छा इस विषयके जानने की है इसलिये हम संक्षेप से कहते हैं. **हे वत्स!** महाज्ञानी विद्वान, ऋषि मुनी, और वैराग्य वान साधुजन जो योग साधन में संपन्न हैं. उनको इस प्रापंचिक सृष्टिके सर्व भोम महाराजासे लेकर रंक मनुष्य प्राणि पर्यन्तके, सर्व सुख दु:ख का तद रुप ज्ञान होता है. एसे महान पुरुषों को, संसारके किसी प्रकारके सुख की तृष्णा नही रहती है. कारण कि उनका अंत:करण सदाकाल अखंड आनन्द मय रहने से, वह सर्वके मूल कारण रूप ब्रह्म स्वरूप में निमग्न रह के, योगादिक महा अद्भुत विद्याकी शोध करने वा जन उपयोगी परमार्थ कार्यो के करने की ओर सदा काल अपना लक्ष रखते हैं. इस लिये ऐसे परदु:ख, भजन पुरुषों की सदा काल प्रवृति में रहनेकी इच्छा नही होती है. कारण कि प्रवृति में विशेष रहने से शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गंध इत्यादिक पंचविषयों का वारंवार संयोग होनेसे विक्षेप हुये विना रहे, एसा तो हो ही नही सकताहै. इस लिये योगसाधन वाले पुरुषों को मुख्य करके एसा स्थानो में रहनेका प्रतिबंध किया गया है. इतना ही नही! परंन्तु उनको किसी प्रकार के धातु पात्र, वा द्रव्यादिके स्पर्श करने को भी वर्जित किया है. केवल स्पर्श कोही वर्जित नही किया, किन्तु दृष्टि से भी बारंबार एसे पदार्थों वा स्त्रि आदि के रूप देखने की इच्छा रखने को भी वर्जित किया है. क्यों कि जो एसे अकर्षण पदार्थ हैं, उनके त्याग किये बिना यथार्थ योग साधन नही हो सकता है. योग साधन करने वाले के लिये उत्तम स्थान आरण्य अथवा किसी प्रकार की गुफा मे रहने के लिये श्रेष्ट कहा है. कारण कि जहां श्वासोच्छ्वास न्यून लिया जाय ऐसे स्थान में रहना चाहिये. और एसा ही भोजन भी करना चाहिये कि, जिसके करने से प्राण का निरोध अल्प प्रायाससे हो सके. यह सर्व वातें कदापि इस समयके अधुरे तत्त्वज्ञानी पुरुषों को मिथ्या, और मूर्खता जैसी लगें गी, क्यों कि उनको स्वत: अनुभव, किंवा महा विद्या के पूर्ण ज्ञान हुये शिवाय, अधिक निश्चय, एसे पुरुषों को नही होता, परंन्तु तो भी अपने पूर्वों के प्राचीन इतिहासों के प्रत्यक्ष प्रमाण से उन्हे इतना तो निश्चय होय हिगा कि, प्रवृति में विशेष रहने से विद्वानो का भी मन चलित हो जाता है. इस प्रत्यक्ष प्रमाण को अपने प्रथम पुरुषा ऋषि मुनि भली भांती जानते थे, इस्से ही वह पुष्कल काल महा अरण्यों, वा गुफाओं अथवा पर्व

कुटियों में निवास किया करते थे. एसे स्थानों में निवास करने से उनका सदा मन निर्मल और विकार रहित रहता था. इस से वह योगसाधन को दृढ करके, सत्य ब्रह्म विद्या, और दुसरी अनेक उपयुक्त विद्याओं के ग्रंथभी रचते थे. तीसरे महा अरण्यों में रहने से उनका शरीरभी विशेष दृढ होजाता था. कारण कि वहां शित उष्ण इत्यादि त्रिविध ताप सहन करने पडते थे. और चौथे व्याघ्र, इत्यादि भयकारक वन पशुओं के समागम से मनभी दृढ हो जाता था इससे उनके शोक मात्र का भी नाश हो जाता था. निदान। इन्ही सब कारणोंसे, सर्व लोगोंके कल्याण की शुभ इच्छा रखने वाले महाज्ञानी, ऋषि, मुनि, क्षत्री, इत्यादि इतर जाती के शुद्ध मनुष्यों को एसे विकट स्थानों में अपनें पास रखकर, शस्त्र इत्यादि अनेक प्रकार की उपयुक्त विद्यायें, उन्हे सिखलाया करते थे. महान पुरुषों के एसे करने से, क्षत्रिय जाती, भय,शोक,आदिसे रहत हो जातीथी. और इस्सेही वह अपनी, वा अपने आर्य्य बंधुओं की दुष्ट प्राणियोंसे रक्षण करने में समर्थ होती थी.

पूर्व समय में क्षत्रियोनें सर्व भोम पद, ऋषि, मुनियों की सहायता से,सत्य विद्या,वा परमार्थ गुणों के सम्पन्न होने से ही प्राप्त किया था. पीछे ज्यों २ द्रव्य और सत्ताका अभिमान बढनें लगा, त्यों २ राज वंशी वनवासी महात्माओं का सत संग वा रक्षण त्याग विषया सक्त हो, सत्य विद्या, और परमार्थ गुणों से हीन हो कर धर्म भ्रष्ट होने लगगये, और इन के एसे सम्बंध होने से ऋषि वंशी ब्राह्मणों को वनोंमें अनार्य्यों के हाथोंसे कष्ट प्राप्त होने लगा, इससे वह साधु, व वैराग्य वान पुरुष, लाचार हो कर नगरों मे चले आये. यहां पर उनको अती सन्मान और प्रतिष्ठा के मिलने से,वह स्थाईक नगरों और राज्यधानीयों में रहने लग गये. इससे वह उपर कहे पांच विषयोंके संयोग होने से, विषयी हो दिक्षा भ्रष्ट होने लग गये. और इन्ही कारणो से वह नाना प्रकार के कपट और छल भेद करके द्रव्य हरण करने में लग गये. और यह बो प्रत्यक्ष ही देखने में आ रहा है,कि उनके ऐसे करने से अब दिवस २ विद्याभ्यास, व वन कष्ट सहन करने की टेओ(आदत) जाती रही,और इसके जाते रहने से वह विद्याहीन,बुद्धिहीन,बलहीन, और धैर्यहीन हो,द्रव्य हीन भी होने लग गये, और अंत में सर्व वस्तुओं से हीन हो गये हैं.

सांप्रत काल में पुष्कळ ब्राह्मणों में ब्रह्मत्व,साधुओं में योगविद्या का साधन, और वैरागियों में वैराग पन का नाश हो गया. अब उनमें केवल नट के समान वस्त्र इत्यादि अलंकार धारण करके उपरी भेष दिखलाने मात्र का ही रह गया है. अल्पज्ञानी कभी जिज्ञासु पुरुष उनके उपरी भेष को मान प्रतिष्ठा दे, इस दान धर्म करने से अपना कल्याण होगा? ऐसा समझते हैं. इसका फल यह मिल रहा है कि आर्य्य बंधुओं में बुद्धि हीन पुरुष बहुत हो गये, और होते जा रहे हैं. सो यह तो तुम्हेभी विदित ही। हो गा. इससे अब तुम्हे उपरी विषय भी स्पष्ट विदित हो गया होगा कि, सदा काल रात्री दिवस प्रवृत्ति मार्ग में रहने से, और वैसे ही कर्म करने से, केवल विषयासक्त होय सिवाय रहा ही नही जाता है.

जिज्ञासु–हे दीन दयालु! हे सर्व समर्थ गुरुदेव! आपके उपर कहे हुये प्रत्यक्ष प्रमाण से मेरे तर्क का निवारण हो गया. यद्यपि मैं यह बातें जानता तो था, परन्तु योग्य समय में स्मृति नही आती, यह एक भारी न्यूनता है. अब मेरी प्रथम शंका "ईश्वर है कि नही" इस विषय को सिद्धि करने की अगत्य है. और यह निर्दोष रीति से होनी अति कठण है. क्योंकि प्रत्यक्ष प्रमाण बिना "ईश्वर है," एसा निश्चय मे कहने में नही आता है. कारण कि प्रथम ईश्वर को किसी ने समक्ष देखा? इसका निश्चय पूर्वक उदाहरण नही दिया है. अल्प ज्ञानी लोग अवतारादिक पुरुषों, को,कि जो प्रथम समय में प्रतापी अथवा वीर्यवान हो गये हैं, उनको ईश्वर, अथवा ईश्वर अंश समझके, बालकों की भांती खोटा निश्चय कर रहे हैं. इस रीती से मेरा समाधान होने वाला नही है. आप महान विद्वान और ज्ञानी हैं. इस लिये मेरी इस विनती को ध्यान में रखके, मुझ को निर्दोष रीति से निश्चय होये, एसा उत्तर दीजीयगा.

(शेष आगे)

भारत पे आरत

(गतांक से आगे)

प्रकरण ३ रा.

राजकुंवर. **करणसिंह** तीन वर्ष का होने को आ गया,इसलिय अब यह किसी दास,दासी के वश में न रहता. यह कभी २ उद्यान में जाता, और वहां पर खेलता कूदता, कभी फूलों को तोडता, कभी पालित मृग आदि पशुओं को पकडने के लिये उनके पीछे दोडता,यदि कोई दास दासी इसके कार्य्य में विघ्न करता तो, उसको डांट बताता. इस भांती नाना प्रकार की क्रिडा करता २ जब थक जाता, तब दास दासी की गोद में बैठ जाता और अपनी तोतली वाणी से सर्व का मन रंजन करता. एक समय यह दासी की उंगली पकडे हुये उद्यान में फिर रहा था; और दासी हंसी की बातें सुना २ इसे खुश कर रही थी कि, इन्ही बातों में दासी ने दिवानी **बिन्दु** की बात छेडी. **कुंवर** ने पूछा वह दिवानी अब कहां है, और वह अब यहां क्यों नही आती है? **दासी** ने उत्तर दिया " उसका तुम्हे क्या काम है? और वह यहां आके क्या करेगी? " **कुंवर** ने कहा " मैं दोड के उसकी गोद में बैठुंगा " **दासी** ने उत्तर दिया " मैं तुम्हे उसके पास कदापि जाने न दूंगी तो?" **कुंवर** ने कहा! वाह २ ? तू क्यों न जाने देगी, मैं दोड कर उसके पास चला जाऊंगा तो तू क्या करेगी. " **दासी** ने उत्तर दिया " अजी वह दिवानी है, यदि तुम्हे कहीं मार बैठे तो?" कुमार ने कहा " मुझे तो कोई भी मारता नही, फिर वह क्यों मारेगी ? मैं तो दोडकर उसके पास चला जाऊंगा" **दासी** ने उत्तर दिया " तुम कभी भी उसके पास न जाने पाओगे, और न मैं उस पास जाने ही दूंगी. "

बालक का यह तो स्वभाव ही होता है कि, जिस कार्य्य की उसे ना की जाये,तो वह उसके लिये तत्पर हो जाता है. और यदि उसे अटकाया जावे तो, वह और भी हठ पकड लेता है. वैसेही कुमार ने हट पकड लिया. और क्रोद्ध से बोला " मैं तो अवश्यही उसके पास जाऊंगा. **दासी** कुंवर का हट देख कर बात भूलाने के लिये बोली " **कुमारजी!** वह तो यहां पर नही है, भला? फिर उसके पास तुम कैसे जाओगे?" **कुमार** ने कहा " हां! हां! मै तो अवश्य ही जाऊंगा." **दासी** ने बात टालने के लिये उत्तर दिया " अजी कुंवरजी देखो २ वह कैसा सुन्दर फूल उस लता में लटक रहा है. अहा! अहा? जैसा तुम्हारा मुख उजला और सुन्दर है, वैसाही वह फूल है. **कुमार** दासी के यह बचन सुनकर, दिवानी **बिंदु** की बात भूल गया, और बोला "कहां है वह फूल?" **दासी** ने कुंवर के मुख के पास अपनी उंगली करके कहा " वह २ तलावडी के उस पार किनारे पर " **कुमार** ने पुनः पूछा "कहां पर" **दासी** ने उत्तर दिया " अजी वह २! जो सामने वृक्ष है न, उसकी यह शाखा जो पानी पर डोल रही है उसपर. **कुमार**! हां! हां! अब मैंने देखा? तो चल मुझे वह फूल लेने दे! मैं वह फूल लूंगा " एसा कह. दासी से अपना हाथ छुडा कर तालावडी की ओर भागा. दासी कुमार की यह चपलता देख, घबरा कर कुमार २ पुकारती हुई पीछे दोडी, और पकड कर बोली " अरे कुमार फूल तो तलावडी के उस पार वाले किनारे पर है.तुम दोड कर उसे कैसे ले सकोगे, क्या पानी में कूदके लेओ गे? कुमार ने दासी से अपना हाथ छुडाने का बहुत यत्न किया. पर दासने नही छोडा. इस्से कुमार रोकर बोला." मैं तो वह फूल लूंगा, नही तो मांजी से कहुंगा." —

दासी कुमार का हाथ पकड कर तलावडी के उस किनारे पर तो ले गई, परन्तु वह फूल लेना कठन जान कर, एक वृक्ष से दूसरा फूल तोड के बोली " लो! लो! कुमार जी यह फूल उस्से भी अति सुन्दर है. कुमार ने वह फूल फेंक के कहा " **चल २** मैं यह फूल नही लूंगा. मुझे तो वह ही चाहिये. **दासी**ने कुमार के हट से तंग हो कर कहा "**अच्छा २** चलो दरवाजे पर से द्वारपाल को भेज कर वह फूल

तुम्हे मंगा देती हूं. कुमारने उत्तर दिया "नही ! नही! द्वारपाल के हाथ से फूल नही लूंगा. मैं तो तेरे ही हाथ से लूंगा, तू ही जाके मुझे वह फूल ला दे." एसा हट देख कर दासीने बहुत समझाया पर, कुमार ने अपना हट नहीं छोडा. तब लाचार होकर दास ने कहा "अच्छा भाई ! मैं ही ला देती हुं, पर तुम द्वारपाल के पास बैठ रहना.

चितौड ! का राज्य भवन क़िले के आकार का बना हुआ था. इस के चारों ओर भारीर दिवारें थीं. और इन दिवारों के बीच में एक बडा उद्यान बना हुआ था, कि जिस मे कुंज लतां आपनी बहार देरहां थीं. और इस उद्यानमें एक छोटी सी तलावडी भी बनी हुई थी. जो फव्वारों और अन्य कई प्रकार के जल यन्त्रों से सजी हुई अलग शोभा दे रही थी. और इस उद्यान के एन मध्य में रणवास था. इस रणवास में आने जाने के लिये एक दरवाजा था, जिस पर दासीयों की चौकी रहती थी. और रणवास के बाहर उद्यान में एक एसा राज मार्ग बना हुआ था कि जिस्से मनुष्य चारों दरवाजोंपर आ जा सकते थे. और इन चारों दरवाजों पर द्वारपाल रात्र दिवस चौकी दिया करते थे. और इन दरवाजों के सिवाय अन्य कोई भी मार्ग राजभवन में आने जानेको नहीं था. यद्यपि इस राजमहल के बाहर भी चारों ओर उत्तम उद्यान की रचना रची हुई थी. परन्तु उसकी दिवारें नहीं थीं, वह केवल लोहे की तारों से ही घेरा हुआ था. और इसके दरवाजे भी लोहे की छडों के ही बने हुये थे. जैसे रणवास उद्यान के चार दरवाजे थे, वैसे ही इस बाहरी वाडे (उद्यान) के भी थे, किन्तु इन पर विशेष चौकी नही रहती थी. कारण कि इसमें महाराजा समरसिंह जी दरबार किया करते थे यद्यपि सर्व साधारण के आने जाने के लिये बडा दरवाजा नियत था. तथापि कभी२ राज्य कर्म चारी अन्य मार्गों से भी आया जाया करते थे. ऐसे ही रणवास उद्यान में आने जाने के लिये बडा दरवाजा नियत था. परन्तु किसी २ समय दास दासी अवश्यकिय कार्य्य के लिये छोटे दरवाजों से भी बाहर के वाडे से हो कर महल में आया जाया करते थे. किन्तु अनजाने मनुष्य बडे दरवाजे के सिवाय अन्य दरवाजों से नही आने जाने पाते थे.

कुमार करणसिंह अंदर के उद्यान में भ्रमण करता हुआ, तलावडी में से फूल लेने के लिये दासीके साथ दरवाजे पर आया. और दासी ने द्वारपाल से कहा "भाई बलवन्तसिंह यह कुमार तो बडाही कठन है, जिस बातका हठ पकड लेता है, उसको छोडता ही नही. ले? भाई मे पुष्करणी के तीर से फूल ले आऊं. उतनी वार तू कुमार को सम्भाल." एसा कह? कुमार द्वारपाल को साप, फूल लेने के लिये तलावडी पर गई और तलावडी के किनारे पर पग रख, वृक्ष के समीप हाथ बढाकर ज्यों ही फूल तोड ने लगी, कि त्योंहा उस वृक्ष का एक कांटा इस के हाथ में चुभ गया और यह चिल्ला उठी, और मनही मन में कुमार को बुरा भला कहने लगी. यदि अन्य किसी का बालक होता तो बिना फूल लिये ही पीछे चली आती, पर यह तो राजकुमार था. इस के लिये फूल ले गये बिना छुटकाराही नहीं था. कुमार इसे आती को देखते के साथ ही दोडकर फूल मांगने आवेगा इस्से बिचारीने लाचार होकर हाथ में से कांटा निकाला, और फिर अपने कपडे के एक कोने से वृक्षकी डाली को पकड़कर धीरे से फूल को तोडा. परन्तु कांटेकी दर्द एसी कठन थी कि, इस के चित्तको चैन न था, यह फूल को तोड के शीघ्रही पीछे हटने लगी कि इतने में इस का वस्त्र कांटों में फंस गया. और यह फिर कर ज्योंही उतावली से कपडा छुडाने लगी कि, त्योंही इसका पैर किनारे पर से फिसल गया, और यह पुष्करणी में जा पडी. परन्तु गिरते२ एकवार एसी चिल्लाई "अरे मैं मोई रे ! मैं मोई !" इस के यह शब्द द्वारपालके कानों में पडनेसे वह कुमार को वहां अकेला छोड दौड कर पुष्करणी पर गया, और तुरंत कूद के, दासको पानीसे बाहर निकाल लाया. यद्यपि पानी में गिरनेसे दासी अधमोई सी तो हो गई थी, किन्तु कुछ

ही विलंब के उपरान्त सावधान हो आई, और खड़ी हो, कुमार पर क्रोद्ध कर के बोली "भाई बलवंत सिंह परमेश्वर तेरा भला करे, तूने मुझे प्राण दान दिये, नही तो वह हठीला कुंवर आज मेरे प्राण ले ही चुका था. अरे भाई ! वह राजपुत्र है नही तो एक ही तमाचे से उसका सारा हट निकाल देती. द्वारपाल! ने दासी के यह वचन सुनकर कहा "अरी, दिवानी चुप २ ? एसे वचन तनी संभालके बोलने होत हैं. और मन में ही रखने योग्य हैं. इतना कह फिर द्वारपाल उसे अपने संग लेके दरवाजेपर आया. परन्तु यहां कुमारको न देखा तो अती घबराया और आसपास खोजने लगा किन्त, जब कहीं दृष्टि में कुमार न आया तब बोली "हाय ! हाय ! कुमार कहां चला गया. कुमार के हठ से दासी तो पहले ही खीजी हुई थी, तिसपर कांटेके लगनेसे और भी चिड गई थी, और पानी में गिरने से कांप रही थी. इतने में कुमारको यहां न पाने से और भी भयभीत हो गई प्रथम तो दोनोको यह शंका हुई कि, खेलता २ कुमार कहीं इधर उधर चला गया होगा. इस्से दोनोने फिर आसपास दौड धूप की. पर जब कहीं न मिला,तो यह निश्चे किया कि, श्यात् किसी कार्य्यके लिये कोई दासी इस मार्ग से आई गई होगी. वह कुमार को यहां पर अकेला देखकर, मेहल में ले गई होगी. दासीने कहा ठीक है! ऐसाही हुआ होगा. किन्तु मैं रणवासमें कैसे जाऊं, कारण कि कुमार को यहां अकेला छोडने से कदाचित् राणी क्रोद्ध करेंगीं तो ? इस भयसे फिर थर २ कांपने लगी, और चुप हो गई. फिर मनही मन में विचार करने लगी, कि गये बिना तो छुटकारा ही नही है. इस्से चलना ही चाहिये. पर यदि राणी जी तिरस्कार करेंगी, तो मैं क्या उत्तर दूंगी? ऐसे विचार करती२ धीमे२ रणवास में गई. और राणी जी के पास पहुंचते के साथ ही उने के चरणों में सिरधर,करुणा स्वर से बोली "माताजी ! मेरा इस में कोई दोष नही है, मैं तो द्वारपालको सोंपके गई थी, पर ! पर ! इतना कहके चुप हो गई. राणी कमलादेवी ! ने दासी के यह वचन सुन कर आश्चर्य से कहा "क्योंरी ? यह तू क्या बक्ती है ? कहीं दिवानी तो नही होगई." दासी ! ने देखा कि राणीजी मेरा तिरस्कार तो नही करती हैं; इस लिये फिर बोली. देवी ! मैं शपथ खा के सत्यही कहती हुं कि, मैं तो कुमारजी को द्वार पाल के पास छोड के पुष्करणी पर फूल तोडने के लिये गई थी. पिछे वहां एसा हुआ इस में मैं क्या करूं?" कमला देवी! ने घबराकर पूछा. "क्या हुआरी ! क्या हुआ ! द्वारपाल के पास से कुमार कहीं गिर पडा है क्या ?" दासी ! ने उत्तर दिया. "ना माजी ? ना ! कुमार क्यों गिर पडे ! मैं वारी जाऊं! मैं ही आज पुष्करणीमें गिरकर मर गई होती?" दासी के यह वचन सुनकर राणी के पास बैठ हुई एक स्त्री झट बोल उठी. "तो क्योंरी ? फिर तू यहां कैसे जीती आई" दासी! ने उत्तर दिया "मैं गिरते समय जो चिलाई इस्से द्वारपाल दोडकर आया, और झट कूदकर उसने मुझ डुबती हुई को बचा लिया ? अब आप विचार करें कि, इस में मेरा कुछ दोष है ? कमला देवीने धीमे स्वरसे उत्तर दिया "बाई इसमें तेरा कोन दोष निकालता है ? जलमें गिर पडी को द्वारपाल ने तुझे बाहर निकाला, इसमें तेरा क्या दोष है ! " दासी ने उत्तर दिया श्यात इतने पर भी आप मुझे ठपका दें, इस्से मैं भयभीत होगई हुं" कमलादेवी! ने कहा " इसमें भयभीत होने का क्या कारण है ? तू मरती २ बची यह सुन के तो हमे बडी खुशी हुई, फिर तुझे ठपका किस बात देवें ?

दासी! ने कहा " आप मेरे अन्नदाता और माता पिता के समान सिर छत्र हो, फिर आप खुशी न होंगे, तो और कोन होगा. भला? मुझे यह तो बतलायें कि कुमार कहां है ? उसके लिये मैं यह फूल तोड के लाई हुं,और इस को तोडते समय ही मैं जल में गिर पडी थी." कमला देवी ! ने उत्तर दिया कुमार कहां है उसको हम क्या जाने कि कहां है.अभी तो तू ने कहा न था कि,द्वारपाल को मैं सोंप करके गई थी. फिर हमे क्या पूछती है, तू ही जान?" दासी!

राणी के यह बचन सुनकर रोती २ फिर बोली. हाय! हाय! मैं तो समझी थी कि आपने मेरा अपराध क्षमा किया होगा." भला माताजी जब आप जानती हैं कि इस में मेरा कुछ दोष नही है, तो फिर आप अब मुझे क्यों रुलाती हो? तनी क्षमा करो" **दासी** के यह बचन सुनकर **कमला देवी** लाल पीली होकर क्रोद्ध से बोली. तेरे बोलने से तो हमें एधा लगता है कि तुम सर्व के दोष से कुमार को कुछ अवश्य ही हुआ है. अरी! स्पष्ट रीत से सत्य २ कहो न? मेरे लाल को क्या हुआ है? मैं तेरे और बोल कुछ सुना नही चाहती हुं" **दासी!** ने उत्तर दिया "ना मातेश्वरी? कुमार को तो कुछ भी हुआ नही" **कमला देवी!** ने पूछा, तो फिर तू क्या बकती है." **दासी!** ने उत्तर दिया "माताजी कुमार को अकेला छोडकर जब द्वारपाल मुझे पुष्करणी में से निकाल ने के लिये आया, यह ही कहती हुं." **देवी** ने कहा "यदि वह अकेला कुमार को छोड के गया था, तो इस में क्या हुआ? **दासी** ने उत्तर दिया "और तो कुछ नही हुआ, पर मैं रांड तो ठपके के पात्र न हो गई." **कमला देवी** ने पूछा तू कैसे ठपके पात्र हुई? **दासी** ने कहा "कुमार को अकेला देख के कोई, मुझे ठपका दिलाने के लिये उन्हें उठा के ले आई है." **कमला देवी!** ने उत्तर दिया इस में तुझे ठपका काहे को मिलेगा? **दासी** ने कहा "वह कुमार को आप मातेश्वर के सन्मुख लाये, और मैंने जो कुमारको अकेला छोडा, इयात् इस्से आप मुझे ठपका दो? **कमला देवी!** ने उत्तर दिया यहां तो कोई भी कुमारको नही लाया है, कहां है कुमार?

दासी को राणी के इन बचनो पर यत्किंचित भी विश्वास नही आया.इसने समझा कि राणीजी मेरी हंसी करती हैं, इस्से वह पुनः बोली "माताजी! हे देवी! क्षमा करो, क्षमा करो! अब आगे कोई दिवस कुमार को अकेला न छोडूंगी, आप बतलायें कि कुमार कहां है? उसे मैं फूल दूं." **कमला देवी!** ने आश्चर्यान्वित, और भय भीत हो के कहा "अरी! तूने किस के पास कुमारको छोडा था? और वह वहांसे कहां गया? यह हम क्या जाने?," **दासी!** कमला देवीके यह बचन सुनकर चरणो में गिरके रोती, २ बोली, हे देवी! मुझे ठीक शिक्षा मिली, अब फिर कदापि एसी भूल नही होगी, कृपा करके बतलाईयें कि कुमार कहां पर है.?' दासी के इस विलापसे एक संग दोनो **राणियां** अति घबराकर व्याकुलसी हो गई. राणियों की यह दशा देखकर पास में बैठ हुई अन्य दासियां भय भीत होके, कुमारकी दासी को डपट कर पूछने लगीं,तब कुमारकी दासीने सर्व वृत्तांत जैसा बना था कह सुनाया.दासी का कथन सुनकर महलकी सर्व स्त्रियां घबरा कर महलके चारों ओर कुमार की शोध करने लगीं. पर कुमारका पता न मिला. इस्से कोई राजमार्ग, और कोई उद्यान में खोज करने के लिये दौडी गई,परन्तु जब कुमार कहीं न मिला. तब सर्व को यह शंका हुई कि, इयात कुमार खेलता २ कहीं पुष्करणी में न गिर गया हो. इस शंकासे महल में कोलाहल मच गया, और तुरंत महाराजा समर सिंहजी को इस समाचारकी सूचना भेजी गई. वह समाचार के पाते ही घबराकर मेहल में आये, और पुनः सर्व ठोर खोज कराने लगे, और स्वयम् भी मेहलके प्रत्येक कोने, वा उद्यानके वृक्ष लता में शोध करने लगे. पर कुमार का कहीं भी पता न लगा. अब तो महाराज कोभी निश्चय हो गया कि, कुमार अवश्य ही पुष्करणी में गिरगया है. इस्से तुरन्त नाविकों को बुलवा कर पुष्करणी के सर्व स्थल में शोध कराई, किंतु कुमारका वहां भी कुछ पता न लगा.

जब कुमार की शोध करते २ सांझ हो गई, तब महाराज ने बडी धर्यतासे उस दासी को पास बुलाकर पूछा. क्यों भैना जब तुझे द्वारपाल ने पुष्करणीसे निकाला, उस समय कुमार कहां पर था? और तुझे जल से निकालने में द्वारपालको, वा तुझे पुनः दरवाजे पर जाने में कितना विलंब लगा था? इत्यादि प्रश्न किये. दासीनें सर्व वृत्तांत जैसे प्रथम महाराणी से कहा था वैसे ही सत्य २ महाराज के सन्मुखभी कह

दिया. दासीसे बात चीत होते समय बहुतसी मनुष्य वहां आगये थे, उनमें से एक ने कहा " दासी झूट बोलती है, फूल तोडनके लिये यह नही गई थी, परंतु वलवंतसिंह द्वारपाल गया था. और जिस समय वह फूल तोडने को गया हुआ था, उस समय कुमारजी इसकी गोद में थे. महाराज रत्नसिंहजी ने पूछा " तुने यह कैसे जाना कि द्वारपाल फूल तोडने को गया था, और यह नही गई थी. उसने उत्तर दिया कि जिस समय यह कुमारजीको गोद में लिये दरवाजे पर खडी थी, उस समय द्वारपाल वहां नही था, इस्से मैं कहता हुं कि, फूल तोडेने को यह नही गई थी, परन्तु द्वारपाल गया था. दासीने उस मनुष्यकी यह बात सुनकर आश्चर्य हो कहा " गोदमें कब था रे ? जब से मैं उद्यान में कुमार को लेकर गई थी, तब से तो वह मेरी गोदमें बैठे नही थे ? केवल वह मेरी ऊंगली पकडकर घूमते रहे. और फूल तोडने के लिये मैं ही गई थी, इसकी मैं सौगंद खाती हुं व द्वारपाल का साक्षी भी इस बारे मे दला सकती हुं. और तूने जो कहा है, इसकी सत्तताके लिये सौगंध खाता है क्या ?. महाराज ! ने दासी की यह बातें सत्य जानने के लिये द्वारपाल को बुलवाया, और दासी के समन्ख उसे पूछा. द्वारपाल ने कहा. महाराजाधिराज ! निसंदेह दासी कुमारजी को मुझे सौंपकर फूल तोडने के लिये गई थी. और यह पुष्करणी में गिर भी गई थी. मैं अनुमानसें कहता हुं कि दासी को निकाल कर दरवाजे पर लाने में मुझे एक वा डेढ घडी का विलंब लगा होगा. इतनें मेंही कुमार कहीं जाता रहा. हम दोनो ने आकर बहुत शोध की पर कहीं पता न लगा. तब मैंने समझा कि स्यात् कुमारजीको अकेला देखकर कोई दासी महल में ले गई होगी, मेरी इस बात से दासी महल को चली गई. और इस मनुष्य ने, मेरे द्वारपर उपस्थित न रहने के पीछे कुमार को इस दासी की गोदमें देखा. एसा जो कहा है यह मिथ्या है. कारण कि जब यह कुमार को लेकर मेरे पास आई थी, उस समय कुमारजी इसकी गोद में नहीं थे, परन्तु वे पाओंसे चलते हुये आये थे मेरे द्वारपर न रहने के पीछे कुमार दासी की गोद में थे, इस के इस कथन से विदित होता है कि, मेरे पीछे कोई दसरी दासी अवश्य ही कुमार को गोद में उठाकर लेगई है. उसकी गोद में कुमारजीको देखने से कदाचित इसको इस दासी का भ्रम हुआ होगा. पर यह मेरा अनुमान ठीक होये, एसा भी मैं ठीकर नही कह सकता ? क्यों कि सर्व दासी कहती हैं कि हमने कुमार को देखा ही नही !"

इस बात चीत में तीन चार घडी रात बीत गई. इतनेमें अकस्मात एक दूसरे द्वारपालने आके कहा, आज वह दिवानी बिन्दु आई थी. कहीं वह रांड कुमारको अकेला दरवाजे पर देख, उठा कर न ले गई हो ये ? द्वारपालके यह वचन सुनकर कुमार की दासी झट बाल उठी. " हां ! हां ! एसा ही हुआ होगा, कारण कि एक दिन वह दिवानी मेरे पास आई, और कुमार को प्यार करने के लिये मांगने लगी; पर मैंने कुमार उसको दिया नही, इस्से वह रिस्या कर बडे क्रोद्ध से दांत पीसती हुई बोली " ठीक है, ठीक ! मेरा बालक आज नहां देती है, तो कुछ अडचण नही, याद रख एक दिवस चुप चापही उठा ले जाउंगी. तब तुम सौ की सौ देखती र ही रह जाओगी." इस्से महाराज मुझे संदेह होता है कि कहीं वह ही कुमार को न ले गई होये दासी के यह वचन सुनकर महाराज कोभी शंका हो आई कि, अवश्य ही दिवानी कुमार को ले गई है. इस्से वह बोले शोक ! शोक ! इसका किसी को भी ही ध्यान ही नही आया, और व्यर्थ इतना समय नष्ट गया ? इतने में एक और पहरे वाले ने कहा हां ! महाराज ! वह दिवानी आज तीसरे पहर को आई थी. महाराज ने पूछा. अरे ! जब तूने दिवानी को महल में आते देखा था, तो अभी तक क्यों नही उसकी हमे सूचना दी. उसने उत्तर दिया. महाराज ! उसे महल में जाती को तो मैंने देखा था ? पर वह महल में से निकलती हुई मुझे देखने नही आई, इस्से मुझे उसपर संदेह नही आया. कारण कि यदि वह कुमार को लेकर जाती, तो दरवाजे परसे, किसी न किसी द्वारपाल की दृष्टि में

वह अवश्य ही पड़ती. परन्तु उसे तो अंधेरे में भी किसने जाते नही देखा! फिर खोज करने से यह भी जानने में आया कि, एक दरवाजे पर आज तीसरे पहर को कोई भी द्वारपाल पहरे पर न था. श्यात् उसी दरवाजे से वह रांड कुमार को ले के भाग गई होये. वह दरवाजा यह ही था कि, जिस पर कुमार अकेला छोड गया था. अब तो सर्वको निश्चय हो गया कि, दिवानी **विन्दु** ही कुमार को दरवाजे पर से ले गई है. इस बात के निश्चय होने से महाराज **समरसिंह** को गुरु देव के उस भविष्य कथन की शंका हो आई. इस्से वह व्याकुल हो गये. और घवरा कर तुरन्त ही दासों को दिवानी **विन्दु** के पकड लाने की आज्ञा दी. दास आज्ञा कि पाते ही दिवानी को पकडलाने के लिये चारों ओर खोज करने को दौडे गये. यहां तक कि **महाराज** स्वयम् भी **मंत्री** को संग लेकर कुमार की शोधन के लिये भवन से निकले. (शेष फिर)

रघुनाथ सरयू !

(गतांक से आगे)

प्रकरण ३ रा.

जिस **समय** भारत में अविद्या रुपी अंधकार छाय रहा था. और **आर्य्य** सन्तान फूट का फल खा, इसके नशे में मद्योनुमत की भांती आपस में कलाह कर रहे थे. ऐसे समय में चंडाळ राक्षस पश्चमी यवन चोर डाकुओं के समान इस पवित्र भारत भूमि में घुस आये. और यहां की कला कोशल को तोड फोड धन बटोर कर कुछ तो भय से भाग गये, और कुछ जो पीछे बचे बचाय धन बटोरने के यत्न में लगे रहे, जब उन्होने देखा कि आर्य्य पुत्र तो अभी तक भी होश में नहीं आये हैं. फिर ऐसे समय में इन से "हिन्दोस्तान जिन्ते निशान" (स्वर्गीय भूमि) का छीन लेना कुछ भी कठन नही है. ऐसा विचार कर के झटपट उन्होने अपने एकयता रूपी जंजीरों से, नशे में चूर भारतीय जनो को बांध, धर्म धुरंधर महाराज **युधिष्टर** के धर्मासन पर बैठ, अन्याय और अधर्म करने लग गये. इन राक्षसों में से **कुंभकरण*** अवतारी **औरंगजेब** ने तो इस पवित्र भारत भूमि पर वह अधर्म, और अन्याय फेलाया कि, जगतपिता जगदीश्वर से भी सहन न हो सका, जगत **नियंता** ने अपने निम्न वचनानुसार† इस राक्षस के दमन हेतु राक्षस कुल विनाशक श्री राम वंश में एक पवित्रात्मा को भारतोद्धार के लिये भेज दिया. वह पवित्रात्मा यह हमारे छत्रपति श्री **सेवाजी** महाराज हैं. यद्यपि इनका जीवन चारित्र पूर्णता से तो आगे इसी उपन्यास में आवेगा, परन्तु यहां पर केवल प्रकरण जाने के हेतु संक्षेप से लिखा जाता है.

श्री **शिवा** जी महाराज का जन्म शिशोडिया वंश क्षत्रीय कुल दीपक वीर रत्न चितौडधिपति श्री महाराज **भीमसिंह** जी भोसला के पौत्र श्री महाराज **खेल करण सिंह** जी, जो दक्षिण देश के **वीरुल** नगर में राज्य करते थे, उनकी छठी पीढी पीछे हुआ था. शिवाजी के पिता का नाम **शाहजी** था और मातेश्वरी का नाम **जीजीया** बाई था. **शाहजी** अहमदनगर के नवाव सरकार के यहां एक उच्च पद पर शिओभित थे.

---

* कविभूषण अपनी भूषण बावनी ग्रंथेम औरंगजेब के बारे ऐसा लिखते हैं.

कुंभकरण असुर, औतारी औरंगजेब कीनी मथुरा कतल दुहाई फिरी रबकी. खोद डारे देवी देव; शेहर मुहल्लाके, लाखों हे मुसल्लां माला छूट गई तबकी. भूखन भनंत भाग्यो काशी पति विश्वनाथ, और कौन गिन्ती में भूली गती भवकी. चारों वर्ण धर्म छोड़, कलमा निमाज पढें, शिवाजी न होतेतो सुनत होत सबकी.

† यदा यदा हि मूर्ति मत्सत्वं श्रीम दूर्जितं मेव वा. तत्त देवाव गच्छ त्वं मम तजोंश संभवम् ॥ गी० अ० १० श्लो० ४१.

एक समय शाहजी को राज्य काज की खटपट के प्रबन्ध हेतु द्रवड देश में जाना पडा. इस लिये शिवाजी को मय उनकी मातेश्वरी जीजीया बाई के अपनी जागीर पूने नगर में भेज दिया.

अब हमारे क्षत्रपति सात वर्ष के हो गये. जन्म से सात वर्ष पर्यन्त यह केवल धर्म परायण विरांगणा जीजीया बाई मातेश्वर से ही शिक्षण पाते रहे.

प्राचीन समय में यज्ञोपवीत से प्रथम २ माता ही बालकों को पढाया करती थी. इस्से ही महा भारत में लिखा है कि ' नास्ति मातृ समो गुरुः " अर्थात माता के सदश बालक का कोई और गुरु नहीं है. मनु भगवान भी कहते हैं कि

उपाध्यायान्दशाचार्या आचार्याणां शंत पिता सहस्त्रन्तु पितृन्माता गौर वेणाति रिच्यते॥

अर्थात माता दश हजार गुरुओं (माष्टरों) से भी वढकर है महामुनि धन्वतरी जी कहते हैं कि **कारणानु रुपं कार्या मिति:** सु० शा० अ १

कारण के सदश ही कार्य्य होता है. अर्थात् जब बालक का कारण भूत माता मूर्खा है तो, उसका कार्य्य बालक कब विद्वान हो सकता है. जब तक बालक की माता विदूषी न होगी तब तक सम्भ नहीं कि बालक विद्वान होवे गा. यद्यपि हमारी जीजीया बाई जी प्राचीन समय की स्द्योदधु व ब्रह्मवादनीयों की भांत संस्कृत की पंडिता नहीं थी, और न यह आज कल का स्त्रि शिक्षण पाई हुई थीं. यह तो केवल व्यासों के मुखसे महाभारत व रामायण की कथा सुनी हुई थीं इन ग्रंथों के सुनने से वे एसी तो धार्मिक और सती हो गई थीं,कि अर्वाचीन समय में उनके सदश कोई भी स्त्री देखने नहीं आती है. भला? फिर एसी माता के पुत्र क्यों न धार्मिक और परोपकारी होता. सात वर्ष के उपरांत जीजीया बाई जी ने भी शिवाजी के लिये एक ऐसा शिक्षक नियत किया, कि वैसा शिक्षक आज प्रायः देखने में ही नहीं आता. शिवाजी के शिक्षक दादा जी कुण्डरा यद्यपि एक साधारण ब्राह्मण थे परन्तु उनके जैसा बुद्धिमान, ज्ञानी वा बहु दुर्दर्शी, प्रायः नहीं पाये जाते हैं उद्धे गुणों के सिवाय उनमें स्वधर्म निष्टा, स्वजाती निष्टा और स्वदेश निष्टा यह गुण प्रधान थे. गुरु दादाजी ने अपने शिष्य शिवाजी को लिखना पढना तो नहीं सिखलाया. परन्तु मौखिक (जुवानी) उपदेशों से ही उन्हे शिक्षा रत से भूषित किया.बाल्य व्यय में ही शिवाजी के चित्त में प्रबल दुर्दम्य स्वधर्म अभिमान वा स्वदेश अनुराग उत्पन्न कर दिया. और यवनो के दौरात्म्यता दुष्टता से उन्हे घोर रूप घृणा उत्तेजित किया था. हिन्दु धर्म्म रक्षा के लिये इनकी बाल्यपन से ही कमर कसवा इन्हें क्षत्रियो चित बिरोचित मल्लशास्त्र और युद्धि विद्या का सर्व्व तो भावसे अधिकारी कर पक्का और प्रौढ किया था. इसकारण शिवाजी लडक पन सेही गुरु उपदेशसे गोब्राह्मण और वर्णाश्रम धर्म की रक्षा के लिये दृढ संकल्पसे तैयार गये थे. शिवाजी की माता जिजियाबाई भी उनके उपदेश की सहायता किया करती थी. पुत्र को अति साहसी होते देख कर कभी वह दुखित वा भय भीत नहीं होती थी.

एक समय शाहजी सेवाजी को नवाब दरबार में ले गये. वहां पर सेवा जी बिना सलाम किये चुप चाप ही बैठ गये. इन के बिन सलाम किये बैठ जाने से नवाब को बहुत बुरा लगा और उस ने शाह जी से कहा,क्यों सरदार साहब आप का यह ही फरजिन्द (पुत्र) है. वाह ! २ क्या उत्तम शिक्षण पाये हुये है. शाह जी को यद्यपि नवाब साहब के यह वचन वाण जैसे तो लगे और सेवा जी पर बहुत क्रोध उत्पन्न हो आया, परन्तु उस समय कुछ उत्तर न दे के घर पर चले आये, और सेवाजी को बहुत कुछ बुरा भला कहा. सेवाजी ने बडी नम्रता से उत्तर दिया परम पूज्य पिता जी गऊ, ब्राह्मण, सन्त महात्माओं तथा स्वजाती जनो के लाख बार चरण पर सिर झुकाओं का पर धर्म द्रोही पक्षपाती यवनों के आगे यह आपका पुत्र सिर छेदन कर दाय गा परन्तु जीते जी तो कदापि सर झुकाने वाला नहीं है. पिता जी यद्यपि

आप को यह मेरे वचन बुरे विदित हुये होंगे. परन्तु यदि इनका विचार करोंगे तो कुछ अनुचित न लगेंगे. पिताजी अपना देश, अपनी जन्म भूमि, अपनी सत्ता, सब कुछ अपना हो कर भी हम क्षत्रियों ने आपसकी फूट से नीच परधर्मी यवनो के हाथ में दे रक्खी है हम क्षत्रीय जैसे इनके आगे सिर झुकाय रहते हैं यदि अपने ही क्षत्रिय भाईयों के आगे सिर झुकाय रहते तो आज हमे नीच यवनो के आगे सिर झुकाने नही पडते. शोक! अपनी जाती के आगे सिर झुकाने मे कलंक, और नीच यवनो के आगे सिर झुकाने में अपना गौरव समझने वाले क्षत्रिय, धिक्कार के पात्र नही तो और क्या हैं. मैं तो एसे क्षत्रियों को वार २ धिक्कार देता हुं कि जिन्हें अपने क्षत्रित्व का तनी भी अभीमान नहीं है.

पुत्र के विजातीय यवन विद्वेषसे पिता शाहजी को विपतमें पडना पडा, शाहजी जब मुसल्मान अमलदारी में काम करते थे. शिवाजी उस समय अपने यवन द्वेषका परिचय देते थे. उसका प्रचार भी करते थे. लडकपन सेही वह हिन्दु आधिपत्य की पुनः प्रतिष्ठा करने को कृत संकल्प हुये २ थे. इस्से थोडी ही आयुमें अनुचर सहचर सलाह कार आदि जुटा भरपूर जवानी में वह एक बलवान दल पति हो उठे. धनी लोगों पर शिवाजी का वैसा अनुराग भक्ति नही थी वह इन को अच्छा भी नही समझते थे. (शेष फिर)

समालोचना

श्री काल प्रबोध

यह पुस्तक श्रीयुत बाबू जगन्नाथ प्रसादजी (उपनाम भानुकवि) कृत है यद्यपि इसमें और भी विषय हैं परन्तु हिन्दी, अंग्रेजी, फारसी के. वर्ष, महिने, तिथ, वार, घडी, पल, विपल निकाल ने की कविता द्वारा ग्रंथ करताने बडी ही सहल युक्ती रखदी है. इसकी प्रशंसा क्या करें देखने से आपही विदित हो जावेगी. पर इतना तो कहें बना नही रहते कि विद्यार्थीयो के लिये तो यह बडी ही उपयोगी है. दाम छ आने है मिलने का पता बाबू रघनाथ सौंजी निवासी बिलास पूर है.

श्रीधर्माम्मृत की

सहायता व मूल्य प्राप्त स्वीकार.

निखिल शास्त्र निष्णात श्री स्वामी बालरामजी उदासीन के शिष्य.

श्रीयुत स्वामी आत्मरूपजी महाराज ... ... १०)
श्रीमान वैद्यराज श्री परमहंस स्वामी परमानन्दजी महाराज ... ... ५)
श्रीमान सेट धौकलमल गणपत लालजी ३०)
श्री मप्र क्षत्री मित्र मंडल ... ... २७)
श्रीयुत पांडे राधिका प्रसादजी जमादार ... १)
श्रीयुत सेठ माधजी लक्ष्मीदासजी ... ... १।।)
श्रीयुत सेठ नरोत्तमदास जगजीवन प्र. क्ष.... १।।)
श्रीयुत सेठ गणपतराम परशोतम प्र. क्ष. ... १।।)
श्रीयुत हीराचंद रघुनाथ प्र. क्ष. ... ... १।।)
श्रीयुत पांडे राधिका प्रसाद जमादार ... १।।)
रा० रा० मान्यवर लक्ष्मणराव बलवंत टिगवेकर एसिस्टेन्ट माश्टर ... ... १।।)
श्रीयुत बाबू उम्बादत्त शुक्ल स्टेशन माश्टर ... ३)
श्रीयुत बाबू रघुनाथ सिंह एसिस्टेन्ट माश्टर ... १।।)
श्रीयुत बाबू मखनलाल गिरधरलालजी प्रेस बाजार ... ... १।।)
श्रीयुत बा० शिवप्रसाद लक्ष्मी नारायणजी प्रेसबाजार ... ... १।।)
श्रीयुत लाला सिताराम भिकारामजी प्रेसबाजार ... ... १।।)
श्रीयुत लाला राम कुमारजी मैनेजर कोटन प्रेस. ... ... १।।)
श्रीयुत पं० प्रेमवल्लभ शर्म्मा विद्यार्थी ... १।।)
श्रीयुत पं० अमृतलालजी पात्र अलफ्रेट नाटक कम्पनी. ... ... १।।)
श्रीयुत पं० भोजराज तिवारी पूर्णग्राम ... १।।)
श्रीयुत सेठ नारायणदासजी पोद्दार ... ... २)
श्रीयुत से० जमनालालजी जालाणी ... ... १।।)

जिन महाशयों का नाम न छपा हो वह कृपा करके हमे एक कार्ड द्वारा सूचित कर दें.

सम्पादक श्री धर्मामृत पत्र.

आयुर्वेदोक्तौषधालय.

सहस्रों रोगी अच्छे होगये.

लीजीये ! लीजीये !! लीजीये !!!

अति गुण दायक काष्टौषधियां एक बार परीक्षा कर के देखलें,

(१) दांत का मंजन. इस मंजन के लगाने से दांतों के सर्व रोग नाश हो जाते हैं और दांतोंकी जड़ पुष्ट कर देता है, अर्थात दांतों का हिलना, दाढ़ का दर्द, मसूड़ों का फूलना, अकस्मात् दांतों का टीसना कीड़ोंकी कलबलाहट, और मुंहकी दुर्गंध एकवार के ही लगानेसे दूर करता है. मूल्य एक सीसी का आठ आना है.

(२) आंखका अंजन. इस अंजन के लगतेही आंखोंमें गर्म २ दो चार बुंद पानी के निकल जाते हैं और टंडक पड़ जाती है. सत्य तो यह है कि यह अंजन आंखों की कमजोरी, लाली, पीली धुन्ध, जाला, मोतिया बिन्दु आदि सर्व रोगोंको नाश करता है और आंखों की ज्योति को बढ़ाता है कि फिर ऐनक की कुछ जरूरतनहीं रहने देताहै १ सीसी मूल्य बाराआना

(३) दाद खुजली की गोलियां. यह गोलीयां दाद खुजली के लिये रामबाण का सा काम करती हैं अर्थात चाहे कैसी भी दाद खुजली क्यों नही हो तीन चार के लगानेसे जढ़ मूलसे नाश होजाती हैं मूल्य ८ गोलीयोंका आठ आना है.

(४) ताकतकी गोलियां. इन गोलियों के आठ दिन सेवन करनेसे वीर्य अपनी स्वाभाविक अवस्था पर आजाता हैऔर स्वपन आदि दोषों को दूर करता है. और वीर्य को गाढ़ा बनाता है और शक्ति (ताकत)को बढ़ाता है. एकवार परीक्षा करदेखीये आपही मालूम पड़ जायेगा मूल्य आठ गोलियों का दो रुपया हैं

(५) आतशक नाशक गोलियां. इन गोलियों के सेवन से चाहे कैसी भी आतशक क्यों नहो सोलां गोलियों के सेवन से जढ़ मूलसे जाती रहती है मूल्य १६ का डेढ १॥) रु० है.

(६) सुजाक नाशक गोलियां. इन १६ गोलियों के सेवन से कैसी सुजाक क्यों न हो नाशहो जाती है १६ गोलियों का मूल्य १।) रु० है.

(७) हैजा (कुलारा) की गोलियां. यह गोलियां प्रत्येक मनुष्य को अपने पास रखना चाहिये, कारण कि न जाने कौन समय यह चोटकर बैठे. यह गोलियां पास होनेसे चोटका डर नही रहेगा. मूल्य ८ गोलियों का एक रुपया है.

(८) वात हरण गोलियां इन गोलियोंके सेवन से चौरासी प्रकारका वायु नाश होजाता है १६ गोलियों का मूल्य १॥ रुपया.

(९) मन्दाग्नि गोलियां. इन गोलिया के सेवन से अग्नि अपने स्वाभाकि अवस्थापर आजाती है १६ गोलियों का मूल्य एक रुपया.

(१०) हाजमे की गोलियां इन गोलियों के सेवन करनेसे अजीरणका नाश और हाजमा ठीक, और अग्निदिपन होजाती है मूल्य १६ गोलियों का एक रुपया है.

(११) जखम (घाओ) केअच्छा करनेकी गोलिया चाहे कैसा भी घाओ क्यों न हो इनके सेवनसे अच्छा होजाता है मूल्य १२ गोलियों का एक रुपया है.

(१२) खांसी दमाकी गोलियां. चाहे कैसाभी पुराना दमा खांसी क्योंन हो इन के सेवनसे नाशको प्राप्त होजाता है मूल्य १६ गोलियों का एक रुपया है.

(१३). जुलाब की गोलियां. इन गोलिया मेंसे एक गोली खाने से४दस्त होते हैं जो नसोंमें (नाड़ीयों में मलको बाहर निकाल शरीरको हलका, और निरोग करदेती हैं आठ गोलियोंका मूल्य आठ आना है.

(१४) मूत्र कृश वा बहुमूत्र नाशक गोलियां इन गोलियों के सेवनसे मूत्र अपनी स्वाभाविक अवस्था पर आजाता है और शरीरमें ताकत देती है एकबार परीक्षा कर देखीये मूल्य आठ गोलियोंका दो रुपया है

१५ ताकत और बंधेजका माजूम. इसके सेवनसेशरीरमें ताकत आती है और बंधेज हो आता है त्रिदोषका नाश होताहै और खूनको बढ़ाताहै और खराब खूनका नाश करता है क्या प्रशंसा करें एकवार खाकर देखलें आपहि मालूम पढ़ जायेगा मूल्य एक तोलेका दसरुपया है.

(१६) मुम्बईके प्रचलित मरकी रोगका लेप और **अर्क** तथा **गोलियां** इनतीनो के सेवन से मुम्बई के सहस्रों मनुष्य इस रोगसे बचगये हैं ऐसे रोगके लिये यह तीनो औषधियां रामबाण हैं इन तीनों वस्तुओं का पांच बार सेवनसे रोगी अच्छा हो जाता है तीनोंका मूल्य ५ रुपया है (१७) **अर्ककपूर** यह अर्क हैजे और अजीर्ण के लिये बड़ाही उपयोगी है मंगा कर देख लिजीये एक सीसी का मूल्य आठ आना है.

(१८) जखम का तेल यह तेल जखमों के लिये बड़ा ही लाभ दायक है एक सीसीका दाम १ रुपया है.

(१९) चूर्ण. इस चूर्ण के सेवनसे दमा खांसी बुखार और तपेदिक नाश होजाता है एक पुड़िया का दाम एक रुपया है.

(२०) नसूर की पुड़िया. इसके लगानेसे नसूर अच्छा होजाता है एक पुड़ियाका दाम१रुपया है. इनके सिवा और भी कई प्रकारकी औषधियां इस औषधालय से मिल सकती हैं और इन औषधियोंके सेवनका विधि पत्र औषधियों के साथ भेजा जाता है जिन सज्जनों को जिस किसी रोग की औषधी मंगानी हो वह हमें पत्र द्वारा सूचितकरे हम वैल्यूपेबुल द्वारा भेज दे सकते हैं.

सर्व का शुभचिंतक—**परमहंस परमानन्दजी वैद्यराज**

भूलेश्वर तालावके सामनें—**मुम्बई.**

RECISTERED No B 247.

श्रीधर्म्मामृत की संक्षेप नियमावली।

(१) इस पत्रका मूल्य, नगर और बाहर सर्वत्र डाकव्यय सहत अग्रिम वार्षिक केवल १॥ रु. है. गवर्मेन्ट तथा राजा महाराजाओंसे उनके आदरार्थ ५ रु. है.

(२) पांच श्रीधर्म्मामृत एक साथ खरीदने वालों को एक प्रति मुफ्त अर्थात जो पांच ग्राहक हो कर ७॥ रु. दाम भेज देंगे उनको एक पाकिट में ६ श्रीधर्म्मामृत की पुस्तकें हर मास की पहिली ता० को मिला करेंगी.

(३) पत्रके उत्तर चाहने वाले महाशय, जवाबी कार्ड अथवा टिकट भेंज, अन्येथा पत्रोत्तर न दिया जायगा.

(४) नमूने की प्रथम प्रति पहुंचने पर यदि ग्राहक होना स्वीकार हो, तो मूल्य ता० १ तक भेज देना चाहिये, यदि ग्राहक होने की इच्छा न हो तो कार्ड द्वारा सूचित करना पडेगा, और नमुने की पुस्तक पर आध आनेका टिकट लगा वापसकर देनी चाहिये, नहीं तो ग्राहक श्रेणी में समझे जा येंगे. (५) विज्ञापनकी छपु वाई एक मासके लिये प्रति पंक्ति दो आना तीन मासके लिये एक आना, और छ मास या इस्से अधिक समय के लिये आध आना है. और छपे हुये विज्ञापनों की वितरण कराई ५ रु. लिया जायेगा

श्रीधर्म्मामृत सम्बन्धी सर्व चिठ्ठी, पत्र, व मनीआर्डर और समाचारपत्र नीचे पत्तेपर आने चाहियें

भारत भाईयों का शुभचिंतक गो. पं. जगत नारायण शर्म्मा

चंदा वाडी पोष्ट गिरगाम—मुम्बई.

श्रीधर्म्मामृत पुस्तकालय की पुस्तकें

(१) गोरक्षाप्रकाश—गऊ मातके बारेमें विदेशियोंके एक सहस्र प्रश्नोका उत्तर, सर्वगोभक्तों को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये. मूल्य ८ आना (२) अकबर गोरक्षा न्यायनाटक इसमें अकबर बादशाहने किस रीतिसे गोरक्षा कीथी, यह नाटकी चालसे कथन किया गया, है, इसमें बहुत, करुणामय नाना प्रकारके राग भी हैं. मूल्य १२ आना (३) अकबर बीरबल का समागम. इसमें बीरबलकी चतुराई के दोहे भरे हैं. देखने के योग्य पुस्तक है. मूल्य १२ आना. (४) ईसू परीक्षा. इसमें ईसामसीह की परीक्षा की बातें हैं. प्रश्न करते ही ईसाई दांत दबाते भाग जातें हैं मूल्य १ आना. (५) ईसाई मतपरीक्षा. इसमें ईसाई धर्म के ठोलकी पोल खोली गई है. पढकर देखलो मूल्य १ आना. (६) हिंदुओंकावर्तमानीन धर्म अर्थात् भोलेभाले हिन्दु भाई किस रीतिसे विधर्मियों के फंदे में फंस जाते हैं. मूल्य १ आना (७) गाजीमियांकी पूजा. हिंदु कबर पूजियों को यह क्या सूझा? पढकर देखलो मूल्य आधा आना (८) गउकी नालिश. मूल्य आध आना. (९) गोपुकार. मूल्य आध आना (१०) गोपुकारचालीसी मूल्य आध आना. (११) गोविलाप ? मूल्य आध आना. (१२) गोदान व्यवस्था. मूल्य आध आना. (१३) गोगोहार. मू० आध आना. (१४) काऊपोटेक्सन. अर्थात् एक अंगरेज की गोभक्ति मू० आध आना. (१५) गोरक्षापर बादशाहाके फतवे (व्यवस्था) मू० आध आना. (१६) गोहितकारी भजन. मू० आधा आना. (१८) भारत डिमडिमा नाटक. एकवार पढोगे तो भारतकी क्या दशा है जान लोगे मल्य चार आन.

अमृतं शिशिरे वन्हिरऽमृतं बाल भाषणम् ।
अमृतं राजसंमानो, धर्म्मोहि परमामृतम् ॥

वर्ष २.] वम्बई कन्याऽर्कः भाद्र मास सम्वत् १९५६ स० १८९९ सप्टंवर. [अंक ६.

सूचना

सर्व भाईयोंको सूचना दी जाती है कि, श्री धर्म्मामृत सम्बंधी सर्व चिट्ठी, पत्र तथा मनी-ऑर्डर निचे लिखे मेरे पतेसे आने चाहिये.

सर्व भाईयोंका शुभचिंतक
गो० पं० जगत नारायण शर्म्मा
श्री धर्म्मामृत कार्य्यालये
गिरगाम वम्बई

भारतोन्नती का साधन सद्धर्मही है

(गतांकसे आगे.)

आर्यों की वैद्यक विद्या.

(८१) राईट आनरेवुल मौंस्टर्ट एल्फिन्स्टन अपने प्रसिद्ध हिन्दोस्तान के इतिहास में हिन्दुओं की वैद्यक विद्या के विष में लिखते हैं कि उनकी वैद्यक विद्या उत्यन्त वढ़ी हुई थी, हमे उन की तत्त्व विद्या का कुछ आश्चर्य नही है. यूरुप वालोंने यह विद्या पहिले उन्ही लोगों से सीखी थी. और यह वात तो अभी ही सीखी है कि श्वास के रोग वाले को धतूरा के पत्तों का धुआँ पिलावें और कृमिरोग में कौंच दें. और उनकी रसायन विद्या भी अत्यन्त ही आश्चर्य वान और उत्तम है.

(८६) प्रोफेसर जे एफ रायल डी, एफ, आर, एल, ऐस, जी, सी, जो प्रथम बंगाले की सेना के डाक्टर थे, और मेम्बर एशियाटिक व मेडीकल व फिजीकल सुसाईटी एडिंवर्ग के, और मेडीको सर्जीकल सुसाईटी लण्डन के मेम्बर थे, वह अपने व्याख्यान में कहते हैं कि, हिन्दुओं की वैद्यक विद्या वहुत प्राचीन है. अरब और यूनान वालों से बहुत पहिली है और यथार्थ (असली) यही है. सब प्रकार से निश्चय करलिया है, कि वैद्यक विद्या का किसी समय निःसन्देह अरब में बहुत व्ययवहार हुवा. धतुरेका धुआं श्वास के रोग में और कौंच कृमि रोग में श्रेष्ट है. हिन्दुओं की वैद्यक विद्या की,

और औषधियों की हमने भली प्रकार परिक्षा करली है कि, पूर्वकाल में यह अरब में प्रचलित हुई, इसमें किञ्चित्मात्र सन्देह नही; और इसी से मैं उन को यथार्थ समझता हूं, क्यों कि मैं नहीं जानता कि वह किस के द्वारा इस स्थान में आई. इस कारण हिन्दुओं की औषधि और तंत्र विद्या अरब में पहिले से प्रचलित थीं, और ऐसा भी विदित होता है, कि उन्होंने इन्ही पुस्तकों से यह विद्या ग्रहण की, क्योंकि प्रथम रोगों का निश्चय हिन्दुस्तानी वैद्यों ने किया धातुओं का और रसों का बनाना प्रथम हिन्दोस्तान से ही प्रगट हुआ है. बहुत प्राचीन पुस्तकों से हमने निश्चय कर लिया कि भारत वर्ष में उन के बडे २ **औषधालय** स्थापित थे. और उन भैषज्य भवनो में उन वैद्य लोगोंका लौली न होना सदासे निश्चय होता है. और अनुसंधान उन से भली भांति किया, जो मनुष्य इस देश के निवासी सनातन से थे. इनहीं कारणों से मैं हिन्दोस्तान की औषधियें को प्राचीन समझता हुं, यद्यपि मैं कोई ठीक तिथी (तारीख) इस काम के प्रचलित होने की नही दे सक्ता, और न किसी साक्षी से ठीक तिथी ज्ञान होसक्ती है, इसी लिये मैं इस को प्राचीन और यथार्थ स्वीकार करता हुं.

(८७) प्रोफेसर हौरेस हेमेन **विलसन** एम, ए, ऐफ, आर, एस, प्रेजीडन्ट (सभापति) सेडिकल सुसाईटी कलकत्ता, और प्रोफेसर आफ संस्कृत युनी वर्सेट्री कालिज, आफ एक्सफोर्ड जो कि अत्यन्त विख्यात और संस्कृत विद्या के पूर्ण पार गामी माने जाते हैं, उन्होंने भी हिन्दोस्तानी **वैद्यक** विद्या की प्राचीनता, और यथार्थता अपनी पुस्तकों में दर्साई है, यहां एक तर्क (दलील) है कि उसका प्राचीन निर्णय हम रखते हैं. **औषधि** और **ज्योतिष, शिल्पविद्या** और **तंत्र** विद्या में उन्हो ने इस कामों में अत्यन्त योग्यता प्राप्त की है. ऐसे ही **अस्त्र, चिकित्सा** और **द्रव्य गुण** में वह विचक्षण हैं. पुराने २ भारत वासियों को आयुर्वेदादिक शास्त्र में इतनी योग्यता होगई थी कि बराबर जिसका प्रथम से प्रमाण मिलता चला आया है, देखा ओरेन्टल मेगजीन सन १८२३ की जिल्द प्रथम पृष्ट २०७ व २१२ में है,

(८७) **अयनुल अमल, कातुन, कैतुन,** और **अतवा** नामी पुस्तकों में लिखा है कि अष्टम शताब्दि हिजरी में भारत वर्ष के पंडित **बुग्दाद** की राज सभा में आनकर **ज्योतिष** और **आयुर्वेद** की शिक्षा दिया करते थे; **सरक, सर्सस** और **येदान** नामक आयुर्वेद के तीन ग्रंथ भारत वर्ष से अरब में आये, यह तीनो ग्रंथ **चरक, सुश्रुत** और **निदान** नाम के अपभ्रंश विदित होते हैं. इससे स्पष्ट जाना जाता है कि प्रथम सब स्थानो में हमारे ही आयुर्वेदी ग्रंथ थे. और **इंग्लिस्तान** के लोगों ने भी **भारत खंड** वालों से ही आयुर्वेद को पाया. **जालीनूसने** अपने रसालों में लिखा है कि प्रथम आयुर्वेद विद्या **मिश्र** में थी, और मिश्र लोगों से यूनान और अरब वालों ने पढी. और मेरे गुरु **अफलातून** ने हिंदोस्तान में जाकर **कालज्ञान** के ३६ छत्तीस लक्षण पढे. और उनको इतना गुप्त रक्खा कि दुसरे पुरुषको उस पुस्तक के दर्शन तक न कराये, वरना एक काठ की **तख्ती** पर लिखा कर दिन रात गले में बांधे रहता, और उसका भेद किसी से न कहता. मैने और मेरे सिवाय और चेलोंने उनसे बहुत कहा कि यह विद्या हमको सिखाओ, परन्तु उन्होने कुछ ध्यान न किया. और उस विद्या को गुप्त ही रक्खा. जब मृत्यु का समय हुआ तो अपनी स्त्री से कहा, कि जिस समय मेरी मृत्यु हो जाये और मुझ को गाडो तो यह तख्ती मेरी समाधी (कबर) में मेरी छाती पर रक्ख देनी. उन की स्त्री ने पति की आज्ञानुसार वैसा ही किया, उस समय मुझे बडा शोक हुआ कि गुरू तो मरे, परन्तु विद्या भी मरी जाती है. वह विचार हो गए

दिन उपरान्त रात के समय गुरु की समाधि को खोद कर वह तख्ती निकाल ली, तब तो मेरे प्राणमें प्राण आया. जब इस परिश्रम से वह तख्ती मुझ को मिली तब तो मैं भी उसको बहुत गुप्त रक्खता. जब मेरी विद्या का चमत्कार हुआ तो फिर अरसतू आदि और भी उन के शिष्य हिन्दोस्तान को गये, और आयुर्वेद पढा, और कई ग्रंथों का अनुवाद भी किया. देखो (अर्क प्रकाश की भूमिका)

अन्यों की भूतदया.

(९९) प्रसिद्ध पादरी ननस्टीफन्सन साहब कहते हैं कि मूक (बिन वाचाके) प्राणीयों के संग नेक वरताओ, और उनके साथ दया भाओ की रीती नीती हमे हिन्दुओं* से सीखनी चहिये. वह लिखते हैं कि महात्मा ईसा की उत्पत्ति से अढ़ाई सौ वर्ष पहले के बने हुये पुरातन स्थान देखे हैं, जिन पर यह लिखा है कि बिन वाचाके प्राणीयों को कदापि वध मत करो. और न किसी प्रकारका कष्ट ही दो. देखो

*हमे शोक से लिखना पढता है कि जिन हिन्दुओं की उपमा उपर आई है.आज उन्ही की बहुत सी सन्तान एसा नाम चमकाने वाली हुई है,जिसके लिखते हमे लज्जा आती है. यह रात दिवस बिन वाचा प्राणीयों के साथ राक्षसी बर्ताव में लिप्त रहते हैं. प्रत्येक स्थान पर विचारे मूंगे(गूंगे) प्राणी बकरोंका झटका कर व करवा रहे हैं. मुर्गी के अंडे चवाय जा रहे हैं. सूर अरना भैसा व नीलगाय भूनी जा रही हैं. और इन सर्व के पचाने (हजम) के लिये तेज शराब खाना खराब पी जा रही है. धिक ! धिक ! परमात्मा इनकी बुद्धि शुद्ध करे कि यह हिन्दु नाम को बदनाम न करें—

(पत्र सत्य धर्म प्रचारक पना प्रथम छपा ६ अंक्तूबर स १८९९ ई. जालंधर का)

संस्कृत विद्वानों का मान

(१००) बंगदेश के पूर्व लफटनेण्ट गवर्नर साहब बहादुर स्वर्गवासी पंडित ईश्वरचन्द्र विद्या सागर से बडी प्रिती रखते थे. पंडित जी की सेवा में उनके स्थान पर जाने से लाट साहब महाशय तनी भी संकोच न करते थे. परन्तु इसमें पंडित जी को कष्ट होता था. इस कारण से पंडितजी स्वयं प्रत्येक शुक्र वार को एक घंटे के लिय लाट साहब के पास जाया करते थे. एक समय कोई बडा महाराजा भी पंडित जी के नियत समय पर लाट साहब के बंगेल में पहुंचे गया,और रिपोट (सूचना)भी दे चुके था कि इतनेमें पंडित भी आगये, और आपने आने की सूचना दी. लाट महाशय ने सूचना के पाते ही पंडित जीको अंदर बुलवा लिया, और एक घंटे तक बात चीत की. इस पर महाराजा को बहुत बुरा लगा. और उन्होने वाईसराय (बडे लाट साहब) तक सूचनादी, कि प्रथम हमारी रीपोट थी. और पंडित साहब एक साधारण मनुष्य पहलो बुलाये गये, और हमको व्यर्थ अपेक्षित (इन्तजार) और अपमान में रक्खा. इस पर छोटे लाट साहब ने उत्तर दिया, कि महाराजा साहब किसी आपने कार्य के लिये आये होगें. किन्तु पंडित जी तो अपनी विद्वत्ता से हमे सदैव कुछ दान देने आते हैं. इसलिये प्रथम इनका सतकार करना हमे उचित* हैं.

न हायनैर्न पलितैर्न वित्तैर्न न बन्धुभिः
ऋषियश्च क्रिरे धर्मं योऽनूचानः स नो महान् ॥
मनु अ. २ श्लो. १५४

* अर्थात मनुष्य न तो वर्षों से, न सुपेद केश होने से, न धन से, और न भ्राताओं के होने से बडा हो सकता है, किन्तु ऋषियों ने यह नियम स्थिर किया है कि जो विद्वान हैं वही हम सब से बडे है. (देखो. सत्य धर्म प्रचारक ता. १० नम्बर स ९९

आर्य्य जीवन चरित्र दर्पण.

(गतांक से आगे)

महात्मा जैदेव.

उस समय जैदेवजी के करुणा जन गायन सुन,पास खडे सर्व मनुष्य अति शोक से रुदन करने लग गये. अब जैदेवजी नें आठमी अष्ट पदी पूर्ण की, कि उस के पूर्ण होने के साथ ही श्री कृष्ण कृपा से पद्मावती आलस लेकर उठ बैठी, और पतिको सन्मुख बैठे देख कर बडे आनन्द से झट खडी हो, परदक्षणा कर के चरण वन्दा की- पद्मावती के संजीवन होने से सर्व को बडा आनन्द प्राप्त हुआ, और सर्व जैदेव, तथा उनकी सती पत्नी को धन्यावाद देने लगे. इस अद्भुत कार्य्य से जैदेवजी की कीर्ति चारों ओर फैल गई.

इस अद्भुत कार्य्य को सुन कर पास के एक दुसरे राजा ने अपनी राजधानी में इस पवित्र जोडे की पधरामणी की, और बहुत मान से पुष्कळ धन दान दे कर विदा किया. परन्तु मार्ग में चोरों ने सर्व धन हरण कर, इनके हाथ पग तोड करके इन्हें एक गडे में फैंक दिया. अकस्मात उस मार्ग से उत्कल देश का क्रोंच नामक राजा यात्र में जा रहा था. वह जैदेवजी को एसी स्थिति में देख कर, इन्हे अपने संग अपनी राजनगरी में ले गया, और वहां पर इन का राजाने बहुत मान सन्मान किया. जैदेव जी के कुछ दिन वहां पर रहने से ईश्वर कृपा से सर्व अंग जैसे थे, पुनः वैसे ही हो गये. यह अद्भुत कार्य्य देख कर राजा को बडा आश्चर्य लगा, और वह इन का और भी सन्मान कर ने लगा. इस कवि महात्मा ने **कुवलयानन्दनी मूलकारिका** की है. इसके सिवाय न्याय शास्त्र का भी एक ग्रंथ रचा हुआ है. भक्तमाला ग्रंथ में इस महात्मा के विषय की तीन चमत्कारिक वार्ता लिखी हैं. इनका रचीत गीत गोविन्द ग्रंथ,महराजा **विक्रमादित्य** की सभा में गाया जाता था. इस पर से सिद्ध होता है कि यह महान पुरुष पंडित कालीदास से प्रथम हुआ है. और इसके होने को दो सहस्त्र से भी कुछ विशेष वर्ष विदित होते हैं. कलिंग देश में **श्रीकृष्ण** भगवान का प्रत्येक वर्ष में वार्षिक **उत्सव** होता है. उस उत्सव में इस महात्मा के रचे गीत गोविन्द की अष्ट पदियों के गायन करने का प्रचार है. **सर वलियम जोन्स** साहब ने गीत गोविन्द अष्ट पदियों का इंग्रेजी भाषा में बहुत उत्तमता से अनुवाद किया है. इस रीती से यह महात्मा अपनी अमर कीर्ति को छोड गया है कि जो आज पर्यन्त सतेज है. हे परमात्मा आप पुनः भारत भूमि में जैदेव जैसे सच्चे महात्मा और पद्मावती जैसी सची सतीयों को उत्पन्न करो, कि जिन के द्वारा भारत का पुनः कल्याण हो !

(शेष आगे.)

सांप्रत स्थितिनुसार सुख संकल्प

(गतांक से आगे)

इतना तो है कि यह लोग अंग्रेजी विद्या के प्राप्त करने से अंग्रेजों की भांती अपने देश की भी उन्नति करने पर दत्तचित हो रहे हैं.

वर्तमान समय में सहस्त्रों **समाज** (सभायें) देखने में आरही हैं. और यह सबी एक ताल स्वर से **भारतोन्नति** के गीत, कई वर्षों से गाते सुनाई दे रहे हैं. पर शोक ! कि अभी तक **भारतोन्नती** का कुछ भी अंकुर उगा दिखलाई नही देता है. किन्तु और भी उलटा अवनति की ही दशा में पडता जा रहा है. इससे विदित होता है कि इन समाजों के करता हरता जन समाज, और समाज का कर्त्तव्य, इन दोनो शब्दों के अर्थों से अनजान हैं. यदि यह इन दोनो शब्दों के अर्थों को जानते होते

तो कदापि भारतोन्नति में इतना विलम्ब न लगता.

" समाज " इस शब्द के बारे में एसा लिखा है कि:—

पशूनां समजोऽन्येषां समाजोऽथ सधर्मिणाम् ॥ ४२ ॥ अमर कोष कां० २ वर्ग ५ जो शास्त्रों में पशुओं के समुदाय को " समज. " और जड के समुदाय को राशि आदि संज्ञा उन सब पदार्थों की उस लिये रक्खी हैं कि जिस से समाज कह ने से मनुष्यों की सभा का ज्ञान हो और समज कहने से पशुओं के झुंड का, और राशि कहने से जड़ समुदाय का ज्ञान होवे, परंन्तु वास्तव में इन के सम्मेलन से तात्पर्य्य है. अर्थात मनुष्यों के समुदाय का नाम समाज " है. अब देखना चाहिये कि मनुष्यों का समुदाय अर्थात समाज कब हो सकता है कि जब परस्पर प्रीति होगी, और प्रीति का होना धर्म से सम्बंध रक्खता है. प्रत्यक्ष ही देखलो कि मुसल्मानो की उन्नती धर्म प्रीति समाज से ही हुई थी, और वर्तमान समय में जो अंग्रेज उन्नति की शिखर पर चढ़े हुये हैं, यह धर्म प्रीति समाज का ही कारण है. देखो अंग्रेज धर्म समाज पादरी लोगों को विदेशों में धर्मोपदेश के लिये भेजता है, इसका यही करण है कि ये विदेशीयों को अपना धर्म भाई बनावें जिसे सुख पूर्वक हम व्योपार फेला अपने देशकी उन्नती करें. पूर्व समय में जो **भारतोन्नती** के शिखर पर चढा हुआ था, यह केवल धर्म समाज से ही चढा हुआ था. कारण कि **धर्म**, नीती का मार्ग बताने वाला है और जो मनुष्य अथवा समाज धर्म नीती से चलता है वह सर्व सुखों को प्राप्त होता है. देखो महात्मा कह गये हैं कि:—

धर्म्मात्सं जायते ह्यर्थो धर्म्मात्कामो भिजायते ।
धर्म्मो देव परब्रह्म तस्माद्धर्म्मं समाचरेत् ॥

अर्थात–धर्म के प्रभाव से मनुष्यों को धन, निष्कंटक राज्य पाट, तथा यश और विजिय प्राप्त होता है, और धर्म के ही प्रभाव से वांछित स्त्रि पुत्र भी प्राप्त होते हैं अर्थात सर्व सुखों का देने वाल केवल एक धर्म ही है.

यद्यपि अन्य धर्म्मों की नीति तो केवल अपने २ समुदाय (समाज) को ही सुख पहुंचाना सिखलाती है. परन्तु **वेदधर्म** की नीती सारे संसार भर के प्राणी मात्र को सुख पहुंचाना सिखाती है. जब से भारतीय जन वेद धर्म की नीती को त्याग स्वार्थ प्रिय हुये हैं. तब से ही उत्तम आर्य पद से गिर कर नाना दुःख के भोगी हो रहे हैं.

वर्तमान समय में जो **समाज** (सभायें) है. इनको हम समाज नही कह सक्ते. कारण कि इन में परस्पर धर्म प्रीति देखने में नही आती है. भला जहां धर्म प्रीति नही है वहां **सम्प** (एकयता) केसे हो सक्ती है और जहां **एकयता** (सम्प) नही है वह **समाज** क्या उन्नति कर सक्ता है. महा भारत में लिखा है कि:–

**न वै भिन्ना जातु चरन्ति धर्मं न वै सुखं प्राप्नुवन्तीह भिन्नाः ॥
न वै भिन्ना गौरवं प्राप्नुवन्ति न वै भिन्नाः प्रशमं रोचयंति** ॥ ५६ ॥ भा० उ० प० अ० ३६

अर्थात् **एकता** (सम्प) बिना के भिन्न २ मनुष्य न तो धर्मोन्नति कर सकते हैं और न वे सुखी हो सक्ते हैं और न वे गौरव और शांति की प्राप्ति ही कर सकते हैं,

हम उपर कह आये हैं कि प्रीति, बिना **एकता** (सम्प) के न ही हो सक्ती. और एकता, **धर्म** विना नही होती है.

पूर्व काल में एतद्देश निवासीयों में (धर्म एक्य) एक **वैदिक धर्म** था. आज कल के सदृश अनेक मत मतान्तर और मत भेद न थे. इससे सर्व आर्य पुत्रों में परस्पर प्रीति थी, और इससे भारतोन्नती की

शिखर पर चढा हुआ था. जब से मत भेदों ने भारत भूमि में पग धरा. तब से ही आर्य्यों में परस्पर वैर विरोध फैल गया है और इस वैर विरोध ने भारत को उन्नती के शिखर से नीचे गिरा दिया, और अभी तक गिराये ही चले जा रहा है इतने पर भी आर्य सनतानो के नेत्र नही खुलते हैं.

इस समय जितने **समाज** हैं वह सभी मत भेदो में फंस हुये हैं. इस्से ही इन में परस्पर प्रीति नही होने पाती. भला जहां प्रीति नही वहां एक्यता कहां और जहां एकता नही वह समाज कैसे कहला सक्ता है. इस्से ही हम कहते हैं कि समाजों के करता हरता (सभासद) "**समाज**" शब्द का अर्थ नही जानते हैं. यदि जानते होते तो मत भेदों में न पड़ते. यदि अब भी केवल वैदिक धर्म की शरण लेतो सर्व संसार की नही तो अपने आर्यावर्त की तो उन्नति कर सकते हैं.

दूसरा रहा "**समाजिक**" कर्त्तव्य. समाजिक **कर्त्तव्य** उस को कहते हैं कि जिसके करने से सर्व साधारण को सुख की प्राप्ति होवे. बस! इसको समाजिक कर्त्तव्य और समाजिक कार्य्य कहते हैं. न के पांच दस मिलकर किसी एक वडे मनुष्य के लाभार्थ, अनेक मनुष्यों की हानी करना. अथवा स्वयं स्वार्थ वश हो कर समाजोन्नति की ओर ध्यान न देकर केवल अपने ही सुख से संतुष्ट हो, यह समाजिक कर्त्तव्य समझ लेना. समाजका कर्त्तव्य तो सर्व के सुख प्राप्ति के लिये यत्न करते रहना है. भला जो मनुष्य सर्व साधारण के **सुखोपायमें** नही लगता किन्तु* केवल अपने ही सुख की प्राप्ति का प्रयत्न करता है,क्या वह भी कभी सुखी हो सकता है! कभी नही! क्योंकि जब संपूर्ण देश उपर किसी प्रकार का कष्ट आपडे, तो क्या उस संकट से वह स्वार्थी मनुष्य बच सकता है? कदापि नही. जैसे किसी समय में दुष्काळ विशेष पडने से सब मनुष्य भूखे मरने लगते हैं. उस समय में किसी **धनिक** पुरुष के पास धन होने पर भी वह सुख पूर्वक नही रह सक्ता, कारण कि जिन दीन लोगों के पास धन नही है, वह **क्षुधातुर** लोग उस के धन धान्य का हरण करलेते हैं. और जैसे फिर उसको भी अन्य मनुष्यों के सदृश दुःख भोगना पडता है. ऐसे ही स्वार्थी जनो की दशा होती है. इस हेतु से व्यक्ति की उन्नती के अर्थ **जाती** की हानी करना, वा व्यक्त्युन्नति के प्रबन्ध में निमग्न हो कर **जात्युन्नति** की ओर ध्यान न देना.यह महा हानी कारक है.जिस **जातिउन्नति** के न होने से **व्यक्त्युन्नति** स्वतः हो जाती है और जिस जात्युन्नति के न होनेसे, हुई२ व्यक्त्युन्नति* का भी ह्रास हो जाता है. फिर उस **जात्युन्नति**‡ का परि त्याग करके केवल व्यक्त्युन्नति की ओर ही लग जाना इस से अधिक और क्या मूर्खता होगी. बहुदा मनुष्य एसा भी कहते हैं कि **व्यक्त्युन्नति** से भी जात्युन्नति हो जाती है. जैसे किसी समग्र राष्ट्र के संपूर्ण मनुष्य उद्योग शील होने से उन सब मनुष्यों की उन्नती हो जाने से **जात्युन्नति** (समाजोन्नति) आपसे आप हो जाती है. यद्यपि यह कथन कितनेक अंश में ठीक है. कारण कि राष्ट्र

---

* तृणं चाहं वरं मन्ये नरादनुपकारिणः । घासो भूत्वा पशून् पाति भीरून् पाति रणाङ्गणे ॥ ४ ॥ सभा० प्र० २

* व्यक्तिर्गुण विशेषाश्रयो मूर्त्तिः । ६९) न्याय सू० अ० आ० २

‡ आकृतिर्जाति लिंगाख्या । ७० ॥

समान प्रसवात्मिका. जातिः ॥७१॥ न्यायसू० अ० २ आ० २

यहां जाति शब्द से मनुष्य जाती का ग्रहण करना चाहिये, कारण कि महर्षि **गौत्तमजी** ने जाति का यह लक्षण किया है कि जिन की समान्याकृति और समान उत्पत्ति हो उस्को जाती कहते हैं,जैसे मनुष्य, गौ, अश्वादि.

के सब मनुष्य उद्योगी होने से धनाढ्य होंगे, फिर दरिद्रियों से धनाढ्यों को दुःख होने की सम्भावना न रहे गी. परन्तु यदि विचार से देखा जाय तो सब मनुष्य उन्नति शील होने पर भी भिन्न २ व्यक्ति होने के कारण से वे अपना कार्य यथावत् नहीं करसक्के, जैसे किसी राज्य के सर्व मनुष्य (प्रजा) युद्ध शील होने पर भी यदि भिन्नत्वेन किसी शत्रु से युद्ध करने में प्रवृत होवें तो उनका कदापि जय नहीं हो सक्ता, जो कार्य **समुदाय** (समष्ठ) अर्थात समाज कर सकता है, वह कार्य एकाकी (व्याष्टि)अर्थात बिखरे हुये मनुष्य नहीं कर सक्के. क्यों-कि इस संसार की ओर ध्यान देने से स्पष्ट विदित होता है कि बिना **समाज** के संसार का कोई भी कार्य्य नहीं हो सक्ता. जैसे सर्व नियंता परमेश्वर नें पृथ्वि के सर्व परमाणुओं को मिला कर यह पृथ्वि बनाई है, कि जो **पृथ्वि** आप के दृष्टि गोचर हो रही है. यह केवल पृथ्वि के परमाणुओं का **समुदाय** (समाज) है, इसी प्रकार **जल, वायु, आदि** त्यादि भी अपने २ परमाणुओं का **समाज** (समुदाय) है. जल के परमाणु परस्पर मिल के **समाज** रूप हो जाते हैं, तब से तृषा निवृत्ति रूप कार्य के करने में समर्थ होते हैं, यदि जल के परमाणु आपस में मिले हुये न हों. किन्तु भाफ (बाष्प) रूप होवें तो वे तृषा की निवृत्ति रूप स्वकार्य को कदापि नहीं कर सक्के. ऐसे ही **समाज** रहित पृथिवी, वायु, आदित्यादि के परमाणुओं की व्यवस्था भी जानिये. जैसे **शरीर** के हाथ पैर अवयवों का परस्पर सम्बन्ध रूप **समाज** जब तक है तब तक मनुष्य सब व्यवहार कर सकता है. यदि हाथादि अवयव सब अलग २ कर डालें तो इन का **समाज** न होने से **मनुष्य** कुछ भी नहीं कर सकता. यदि मनुष्यों में दरजी, खाती, लोहार, सुनार, सिलावट, ठठेरा, तेली, जुलाहा, मोची, बनिया, डाक्टर, माष्टर इत्यादि समाज न होवे, तो क्या? एक मनुष्य दरजी, धोबी, तेली, तमोली आदि सब मनुष्य **समाज** का कार्य्य कर सक्ता है, कदापि नहीं? जब तक मनुष्य अपना **समाज** नहीं बनाते तब तक मनुष्य जाती की यथावत् उन्नती नहीं होसकी. देखिये पशु पक्षी आदि प्राणी भी सब अपना २ समाज बनाकर अपनी रक्षा व **जात्युन्नति** करते हैं, जैसे किसी एक **वानर** पर कोई प्रहार करता है, तो वह उसी क्षण में सब के सब मर्कट एकत्र हो कर प्रहार करने वाले विजातीय पर एक साथ आक्रमण करते हैं, और अपने **सजातीय** वानर को दुःख से मुक्त कराते हैं. वैसे ही **हाथी** आदि अन्य पशुओं की भी व्यवस्था है इन उर्द्ध लिखत दृष्टान्तों से यह सिद्ध होता है, कि जो कार्य **समाज** कर सक्ता है. वह कार्य **व्यक्ति** से कदापि नहीं हो सक्त. इसी अभिप्राय से नीती कारों ने लिखा है कि:—

बहूनामल्पसाराणां समवायोहि दुर्जयः।
तृणैर्विधीयते रज्जुर्वध्यन्ते दन्तिनस्तया॥

अर्थात्—अल्प व क्षुद्र **वस्तु** भी बहुतसी मिलने पर **महान्** कार्य्य करने में समर्थ होती हैं. जैसे **तृण** (घास) एक ऐसी तुच्छ वस्तु है, कि जिस को बालक भी तोड सक्ता है. और हाथी इत्यादि पशुओंका तो यह खाद्य पदार्थ ही है. परन्तु, जब इन तुच्छ तृणों का भी परस्पर मिलने से **समाज** (समूह) हो आता है तब तो यह बडे २ **मदोन्मत्त** हाथी इत्यादि पशुओं को भी बन्धन कर देता है, इसी हेतु से महा भारत में लिखा है कि:—

अथये संहिता वृक्षाः संङ्घशः सुप्रतिष्ठताः।
तेहि शीघ्रतमान् वातान् सहन्तेऽन्योन्यसं-
श्रयात्॥ ६३॥
एवं मनुष्यमप्येकं गुणैरपिसमन्वितम्॥
शक्यं द्विषन्तो मन्यन्ते वायुर्द्रुममिवैक-
जम्॥ ६४॥

मा० भा० उ० प० अ० ३६

अर्थात्—बहुत से मिले हुये सघन वृक्षों को, वायु तोड़ नहीं सक्ता, और न वृक्ष को मूल से ही उखाड़ सक्ता है. परन्तु यदि उन वृक्षों का समुदाय न हो, किन्तु अकेला वृक्ष होय तो, उस वृक्ष को आंधी एक ही क्षण में मूल से उखाड़ देती है. ऐसे ही पुरुष चाहे कैसा ही बुद्धि व विद्यादि गुणों से भूषित क्यों न होवे, परन्तु बहुतसी ऐसी आपत्तियां मनुष्य पर आ पड़ती हैं, कि जिनको अकेला मनुष्य कदापि निवारण नहीं कर सक्ता. इन पूर्वोक्त उदाहरणों से स्पष्ट विदित होता है कि जड़ पदार्थों का समाज भी कैसे २ कार्य करनें में समर्थ होता है. तो फिर मनुष्य रूप चेतन समाज भला किस कार्य को नहीं कर सक्ता, इसी कारण से महात्माओं ने जात्युन्नति का मुख्य साधन समाज को ही माना है, देखो:—

अन्योन्य समुपष्टम्भादन्योन्यापाश्रयेणच। ज्ञातयः संप्रवर्द्धन्ते सरसीवोत्पलान्युत ॥ ६५॥ भा० उ० प० अ० ३६

अर्थात्—परस्पर मिलने और एक दूसरे के सहाय से मनुष्य जाति की उन्नति ऐसी होती है जैसे सरोवर (तालाव) में कमल वृद्धिङ्गत होते जाते हैं, अस्तु ! जो कुछ मनुष्य जाति की उन्नति हुई है वह सब समाज का ही फल हैं, राज्यादि व्यवस्था का मूल भी समाज ही है. जिस देशमें समाज नहीं होता, उस देश पर अन्यदेशीय जन आक्रमण कर के स्वसत्ता स्थापन कर लेते हैं. एवं मनुष्यत्व भी समाज से ही आता है, जैसा कि वेद में प्रतिपादन किया है कि:—

सभां*सभ्योभवति एवं वेद ॥५॥ अ० कां० ८ अनु० ५ व० २५

---

*न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा न ते वृद्धा ये न वदन्ति धर्मम् ॥

ना सौ धर्मो यत्र न सत्य मस्ति न तत्सत्यं यच्छलेना भ्युपेतम् ॥ ५८ ॥ भा० उ० प० अ० ३५

मनुष्य समाज से ही सभ्यता को सीख सक्ता है, परन्तु "सभ्य सभां मे पाहि" ॥६॥ अथ० कां० १९ अनु० ७ व० ५५

वह सभा सभ्य श्रेष्ठ जनों की होने चाहिये, जिससे संसार में सभ्यता की वृद्धि हो

प्राचीन समय में श्रेष्ठ पुरुष ही सभाओं(समाजों.) के कर्ता धर्ता सभासद होते थे. इससे ही भारतोन्नति की शिखर पर चढा हुआ था, कारण कि वह पुरुष स्वार्थ परता के त्यागी होते थे. वर्तमान समयके समाजों में पूर्व जैसे श्रेष्ठ पुरुष नहीं हैं इससे ही समाज कुछ नहीं कर सके. यदि कोई यह कहे कि:—

" विद्वान् पुरुषः श्रेष्ठः "

अर्थात्—विद्वान पुरुष ही श्रेष्ठ कहलाते हैं. सो विद्वान पुरुष समाज में हैं. यह तो हम भी मानते हैं. परन्तु किस भाषा के विद्वान श्रेष्ठ पद के योग्य हो सक्ते हैं.ये शंका है! क्योंकि वर्तमान समय भारतवर्ष में दो भाषाओं अर्थात् एक राज्य भाषा (अंग्रेजी) और दूसरे धर्म भाषा संस्कृत के विद्वान पाये जाते हैं. (अपराध क्षमा) हमारी समझ में यह दोनों विद्वान श्रेष्ठ पद के योग्य नहीं हैं. कारण यह है कि अंग्रेजी भाषा के विद्वान धर्म शून्य होने से लिन्न वचनानुसार नहीं चलते हैं.

मैत्री करुणा मुदि तोपेक्षाणां सुख दुःख पुण्या पुण्य विषयाणां भावनातश्चित्त प्रसादनम् ॥ ३३ ॥ योगदर्शन० पा० १

अर्थात्—सुखी पुरुषों को देख कर ईर्षादि न करके उन से मित्री (मित्रता) करना, दुःखी पुरुष के उपर दया (करुणा) कर ना, पुण्यात्मा को देख प्रसन्न हो कर अपने को भी पुण्यात्मा बनाना, पापी पुरुष को देख कर पाप से ग्लानि करके पाप से बचने का उपाय करना, तथा:—

आत्मवत्सर्वं भूतेषु ॥ १४ ॥ हि० १

अर्थात्—अपने सदृश सर्व प्राणियों को जानना

मानना और ऐसा ही वर्ताव करना. देखो प्राचीन समय के श्रेष्ट जन जब सर्व प्राणीयों को अपने आत्मा सरखा समझते थे तब भारत कैसी उन्नती के शिखर पर चढ़ाहुआ था. वर्तमान समय के विद्वान जब तक उर्द्ध लिखत वचनानुसार सर्व से सम वर्ताव न करें गे, तब तक कदापि श्रेष्ट पद और समाज के योग्य नही हो सकते हैं. और नाही किसी प्रकार की उन्नती कर सकते हैं. पर ऐसा भाव धर्म से मिल सकता है. इससे ही महात्मा जन कह गये हैं कि

कामार्थौ लिप्समानस्तु धर्म्म मेवादितश्चरेत ॥
नहि धर्म्मादपेतोर्थ कामो वापि कदा चनः ॥१॥

अर्थात् जो मनोर्थ की इच्छा रखते हो तो प्रथम धर्म्म का आचरण करो. जो धर्म्म का आचरण नही करते उनकी कदापि मनो कामना और कार्य्य सफल नही होते. इसका भावार्थ यह ही है कि धर्म्मके बिना सम्प (एकता) नही होता, और एकता के बिना कार्य सिद्ध नही हो सक्ता है.

अब दूसरे रहे धर्म भाषा (संस्कृत) के विद्वान सो यह उर्द्ध लिखत पद के इस लिये योग्य नही हो सकते हैं कि यह पोपट (शुक. तोते) के भाई बन रहे हैं. बेशक पढे हैं पर गुढ़े नही? यदि यह गुढे होते तो आज भारत जो मत मतान्तरों के वैर विरोध से चौपट हो रहा है न होने पाता. क्योंकि वेद में लिखा है कि.

सक्तु मिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचम क्रत । अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मी निहिताधि वाचि ॥२॥ ऋ० अ० ८ अ०२ वं० २

अर्थात्—जैसे चालनी (छाननी) से छान कर आटे को साफ करते हैं. ऐसे ही मन रूप चालनी से सार्थक (उपयोगी) विद्या को पढ कर जिन्होंने अपनी वाणी रूप आटे को शुद्ध किया है वह बुद्धि मान पुरुष विद्वानो (श्रेष्ठों) की सभा में युक्त, पवित्र निश्चय और सत्य, वाणी को परस्पर बोलते हैं... जो उनके श्रेष्ठ विद्वान हैं वेही उनकी विद्वत्ता वाचो को जानते हैं इतर मूर्ख उनकी बातों को नही समझ सक्ते, एवं उन विद्वानो की वाणी ही में कल्याण कारक लक्ष्मी भी वसती है.

यदि वर्तमान समयके संस्कृत विद्वान उर्द्ध लिखत रीती के विद्वान होते तो आज भारत में मत भेद का वैर विरोध न होने पाता. पर यह तो निम्न लिखत श्लोकको भांती हो रहे हैं.

अजात मृत मूर्खेभ्यो मृता जातौ सुतौ वरम् ।
यतस्तौ स्वल्प दुःखाय यावज्जीवं जडो दहेत् ॥ ४॥

पञ्चतन्त्र १—अर्थात् एक बालक उत्पन्न होकर मरजाय. एक उत्पन्न ही नहो. और एक उत्पन्न हो कर मूर्ख रहे. इन तीनो बालकों में से जो उत्पन्न हो कर मर जाय वह अच्छा है. और उत्पन्न न हो वहभी अच्छा है. परन्तु जो उत्पन्न हो, जीता रह कर भी विद्या न पढे अर्थात मूर्ख रहे,वह बालक, बहुत ही बुरा है. क्योंकि पुत्र उत्पन्न न हो, वा हो कर मर जाय तो जन्म भरका दुःख नही होता, परन्तु जो मूर्ख पुत्र होता है उससे जन्म भर माता पिताको दुःख होता. ऐसे ही हमारे देशके संस्कृत विद्वानोकी दशा है.कारण कि यदि यह पढे हुये न होते तो तो इनका कुछ दोष नही था, और धर्म जिज्ञासुओं को दुःखभी न होता. परन्तु जब यह विद्वान हो करके भी मतमतान्तारों के वैर विरोध को नही मिटाते हैं. तो यह विद्वान कैसे समझे जासक्ते हैं. जो यह श्रेष्ठ पद और समाज के योग्य होवें. परन्तु सत्य पूछो तो यह ही भारतौंनती के बाधक हो रहे हैं. यदि इनसे प्रार्थना की जाती है कि आप इस मत भेद के विरोध को मिटाकर परस्पर आर्य्य सन्तानो की ही प्रीति करादो कि जिस से भारत जो इस समय अधो. गती को चला जा रहा न जाये, तो वह यह उत्तर देते हैं कि,

(शेष आगे)

भारत दशा

पं गोविन्द सिंह कृत पंजाबी भाषा मिश्रित फारस चाल.

(झूलना छन्द)

अलफ—उठो प्यारो मिल बैठ सोचो,
कोई नेक तदबीर उपकार वाली।
छोड़ो खुआब ख्याल हुश्यार होवो,
खोलो इलम की आंख बेदार वाली।
दीन दशा देखो देश आपने की,
समझ बात जावो कुछ सुधार वाली।
शोक शोक यह देश वे समझ निर्बल,
जान बूझ खेले वाजी हार वाली ॥ १ ॥

बे——बुरे आचार व्यवहार सारे,
बुरे धर्म के फंदे में फस बैठे।
खान पान पहरान सब बुरे पकड़े,
बुरीयां सोहबतां के विच रस बैठे।
आर्य्यवर्त को छोड के खुशी सेती,
हिंदोस्तान में जांगेली वस बैठे।
बुरे काम में दाम बर बाद करके,
मूर्ख हाथ खाली तौभी हस बैठे ॥ २ ॥

ते——तक देखें जेकर धर्म तांई,
कौन धर्म माने भार[illegible]मूम अंदर।
कहीं गोर गिरजा मसजिद मकबरा है,
देवल भूत परेत के बने मन्दिर।
कहीं गद्धा, घोडा, हाथी लोग पूजें,
कहीं रिच्छ लंगूर सग काकं बंदर।
शोक शोक यह स्वार्थी राह सारे,
मोदक गोवरी उपर से बने सुंदर ॥ ३ ॥

से——सावती किसी के विच नाहीं,
ठग खान के धर्म हज़ार होये।
झूठे धर्म पावक में पतंग हो कर,
खान दान देखो कई छार होये।
नेक मर्द देखें इज़त साथ बैठा,
वीसों मुफत खोरे गल का हार होये।
इस रोग की औषधी नही कोई,
कोवद खोज कर कई लाचार होये ॥ ४ ॥

जीम——जंग करना अकल साथ जेकर,
फौजदार जाहल आगे लवना क्यों।
अमल भंग अफीम औ चरस गांजा,
जान देश द्वेशी तौ फिर खावना क्यों।
जान एक अकाल हर हाल हाजर,
मडी गोर जा सीस निवावना क्यों।
शाह राह विसार के वेद मार्ग,
ईसा मूसा को मुरशद बनावना क्यों ॥५॥

चे——चैन न अवता मुफत खोरां,
कई ढंग कर दे ठग खावने को।
कईयां जाये के ईसा की पुछल पकड़ी,
पाप बोझ सिर उसके चुकावने को।
इधर उधर की वात दो याद करके,
खड़े चौक में भाई बहकावने को।
तेरी ऐसी सन्तान सिर छार [illegible]भारत,
प्रकट भये जो नाम डुबावने को ॥ ६ ॥

हे——हाल से सवी वेहाल होये,
भूखे मरन लगे धर्म कर्म वाले।
उपर दीखते खूब सुफेद पोशी,
फ़ाको जरन [illegible] घरके शर्म वाले।
दीन दुखी [illegible] शरण और की लें,
उस को हरन लगे ज्ञात मरम वाले।

* ५ आगे [illegible]

१ सौ धर्मों यत्र न सत्य मस्ति न[illegible] रस में फंस गये. २ वन
३ [illegible]त ॥ ५८ ॥ भा० उ० प[illegible] [illegible]स करके हंस दिया. ४
[illegible]न स्थान हैं.

शोक शोक विचार के देश हानी,
कई मरन लगे दिलके नरम वाले ॥ ७॥

खे——खौफ कर बोल न सकता मैं,
भारत स्वार्थी झुंडों के झुंड होये।
मंग खावना सहज रोजगार पकड़ा,
इसी हालमें कई सिर मुंड़ होये।
कहीं प्रेम मिलाप की बात नाही,
सारे लोक देखो वक्र तुंड़ होये।
अल्प बात कारण भाई काट डारें,
इसी तौर घर घर पाप कुंड़ होये ॥८॥

दाल——देश के दुःख की दाद किस्से,
कहूं सुने ना कोई भी कान देके।
दौलत हीन जेड़ सो हम जिनस होये,
धनक वधरसा सुने ना ध्यान देके।
जहां फूट फरेब चौं तर्फ छाया,
तहां कौन मरसी इक जान देके।
मिलन जेड़न की नेक तदबीर कोई,
पुछो आकलां कसम ईमान देके ॥ ९ ॥

जाल——ज़रा सोचो प्यारे देश वालो,
आकल होये जाहेलां पीछे जावना क्यों।
जे कर देश उपकार का ख्याल दिलमें,
भाई भाई को नीच बनावना क्यों।
छोटी उमर नारी पुरुष मेल करके,
अंग भंभ संतान जन्मावना क्यों।
प्यारे होय चेतन सरो ताज खलकृत,
खालिक छोड सिर संग उठावना क्यों१०॥

रे——रंग बदरंग हो गया तेरा,
भारत और दिन दिन मन्दा हाल होसी।
तेरी सबी संतान हैवान निकली,
तेरी तरफ न किसीका ख्याल होसी।
भाई भाई के खोस के खावने का,
नवां ढंग हर एक पै जाल होसी।
एक शरण बिन इक जगदीश भारत,
तेरा नहीं कोई रक्षक पाल होसी ॥ ११ ॥

जे——ज़ोर तेरा सबी नाश होया,
घेरी द्वेशियों ने तेरी जान भारत।
महा कपट छल झूठ वर्तीव होवे,
ज्यों ज्यों बदलती नई संतान भारत।
बिछु वांग दसें इक दूसरे कों,
इसी तौर सब नष्ट महान् भारत।
अंत आन विदेशियां दास कीते,
नामाकूल बेमफ्रूल कहान भारत ॥ १२ ॥

सीन——समझ विचार सब दूर होवन,
जिस काल में जो बद नसीब होवे।
करें आन बिमारियां ज़ेर उसकों,
ला ईलाज न कोई तबीब होवे।
मरे नाह मुसीबत देखने को,
ऐ पर मरन की मुदत्त करीब होवे।
हालत तुमकी भी वैसी आज भारत,
वक्त परे फिर कौन हबीब होवें ॥ १३ ॥

शीन——शरण पालक कोई नही तेरा,
तेरी कौम की होयी है वैर्स भारत।
राम कृष्ण अर्जुन भीम नुकुल जैसे,
कहां गये ऐथों सानुं दसें भारत।
मिलती भीख नाही मंगी बीच तेरे,
असीं कहां जावें दस नसें भारत।
जीवन सफल होवे सादे देख तुझे।
कभी फेर पिछली तरह वैसे भारत ॥१४॥

६ साधू. ७ सी गा के स्थान में समझना. १ जैसी मिलाप करने का यत्न.

१४ मूर्ख. १५ मूर्ख. १६ वैद्य. १७ मित्र. १८ समाप्ति १९ यहां से. २० हमे. २१ बता (कहो) २२ हम. २३ भाग० २४ हमारा. २५ बसें.

स्वाद—सबर कर भाग का त्याग करना,
राज वंशियों का यह धर्म नाही ।
जिसम जान फिर आन गुल्मान होना,
हैफ राज पूतां यह कर्म नाही ।
एक दूसरे को देख बने पाजी,
राज नीति का जानते मर्म नाही ।
देश देश सुन देख तांकियां को,
भारत वासियों को शोक शर्म नाही ॥१५॥

ज्वाद—ज़ौक ते शौक तज देश वालो,
होवो ऐक जो देश बसावना है ।
नेक राज राजेश्वरी राज सिर पर,
हरइक तरह से खूब सुहावना है ।
ज़ोर ज़ुल्म ना किसी पर करे कोई,
ऐसा वक्त फिर हाथ न आवना है ।
साकल होये ऐसा समय हाथसे दे,
अंत फेर तुसां[२८] पच्छो तावना है ॥१६॥

तोये—तौर मंदे सारे लोग होये,
किस एक को बैठ समझावता में ।
जुदा जुदा हर बात में राय सब की,
जिनको अकल अय्योल[२९] सुन पावताभें ।
अपनी तरफ सब खेंच वैरान करते,
किसको आपनी राय सुनावता मैं ।
दीन दुनी के काम से होन वंकसां,
सारे भारती ईश मनावता मैं ॥ १७ ॥

ज़ोय—ज़ुल्म छोड़ो प्यारे देश वालो,
खून नही नहावो देश वासियों के ।
बैठ अदल पर झुठियां तोहमतां दे ।
भाई नहो चाहड़ो उपर फांसियां के ।
टैक्स चुंगी की राव सरकार को दे,
आण सोच न करो विश्वासियां के ।
शोक शोक यह कर्म ना नेक पुरुषां,
सारे काम यह कौम विनाशियां के ॥१८॥

ऐन—इशक ने देश यह ज़ेर कीता,
कई इलम आकल इसमें ख़ार हो गये ।
दीन दुनी के कार फरार करके,
दिलबर देखने के रवादार होगये ।
आठों पहर दलील ज़लील उनको,
पस माशूक के गले का हार हो गये ।
उनसें देश उपकार उम्मेद नाहीं,
बाज़ी लाये सिर जो हट्टां पार हो गये१९॥

ग़ैन—ग़ौर करके सोचो देश वालो,
आप भारती कौम कहावते हो ।
ऋषि मुनि के मतों को छोड़ प्यारे,
नये ढंग मन माने चलावते हो ।
तुसां नेक नसीब ने पृष्टे[१] दिती,
पल पल राह बुरे चले जावते हो ।
सत्य प्रेम उद्योग को छोड़ गोविन्द,
तीन ताप में आप जलावते हो ॥ २०॥

फे—फ़र्ज़ है तुसां सिर इलम वाले,
अपनेदेश की तर्फ ख्याल करना ।
देनी पुशत[२] ना जहां तक पेश जावे,
ओड़क[३] देश पर जान को वार[४] मरना ।
एक जान दो वार ना जाय प्यारे,
ऐसा सहना मरन से मूल डरना ।
रोशन सदा संसार में देश प्यारे,
नेक नाम से कवी ना होये मरना ॥२१॥

काफ—कोट पटलून को परे फेंको,
अपने देशकी चाल गवाओ नाही ।
बूट चुट[५] चश्मा टोपी टार देवो,
यूरपीन बन लोग हंसा[६] ओ नाही ।

२६ दूसरे का. २७ शर्म. २८ तुम. २९ख्याल देश वाले

१ तुमने. २ पीठ. ३ अंत ४ निछावर. ५ दूर ६ उतार.

भले भले घराने के तुसी जाये,
जात नाम कुल गोत डूबाओ नाही।
देश देश की चाल हर हाल न्यारी,
आर्य होय इसाई कहाओ नाही॥ २२॥

काफ—कौम के काम में दीन दौलत,
देवे वार सो मरद मशहूर होवे।
कौम वास्ते लरे ना डरे हर गिज,
सूर्य्य लोक गामी सांचा सूर होवे।
कौम वास्ते करे कुरबान काया,
सोई कौम की चश्म का नूर होवे।
ऐ पर गीदिर्यों से भरी भूमि भारत,
गोविन्द एसथीं सखत मजबूर होवे॥२३॥

गाफ—गुजर गये कई वर्ष तुझे,
दुख पावते को इसी तौर भारत।
तेरे रोग की औषधी नही मिलती,
आकल कई थके कर कर गौर भारत।
बाज़ी बन्द चौ तरफ ही रोक नदों की,
किसी तरफ ना रही है दौर भारत।
प्यारे दस कोई दिवस जीव सैं गो,
इके जन्म होंसी तेरा और भारत॥ २४॥

लाम—लूट होई भारत भूम अंदर,
देश वासियां कारे रोज़गार नाही।
बात बात में गरज़ पर देसियों की,
भारत वासियों के पले छार नाही।
उमर सकल दौलत खोई पास करते,
ऐसे नोकरी की ओड़ेक तार नाही,
शोक शोक अनजान वे समझ मूर्खे।
भारत वासियां जैसा कोई खुवार नाही।२५

मीम—मौत आई मरे सब कोई,
बिना मौत मर शूर कहान ओखा।
पकड़ तेज़ शमशेर खिरे वैरीयां के,
धड़चे जुदा कर खून वहान औखा॥
घरो घरीं बैठे बने खांन सारे,
पस मैदान में मुंह दिखलान औखा॥
खोवे कोटि के काम को पलक मूर्खे।
विगड़ गये को फेर बनान औखा॥ २६॥

नून—नाम मातर चार वर्ण आश्रम,
ब्राह्मण धर्म धोखे ठगी करन लग गये।
शीश महल अन्दर सोय खाट उपर,
चूहे खटक से क्षत्रिय डरन लगगये।
वैश्य वणज व्योपार तज कार खेती,
धाड़े मार स्वदेशियां हरन लग गये।
शूद्र शरण चाहते नही दूसरे की,
कर अभिमान घर में भूखे मरन लग गये२८

वाओ—वास्ते रेब के समझ जाओ,
सुनो नेक सहाल पुकार मेरी।
सीना ज़खम भरिया दशा देख भारत,
प्यारें कोई तो लवो बोसार मेरी।
रैल मिल करो एका खोल कला कालिज
बहर वही किश्ती लावो पार मेरी।
सारे काम बिन दाम सब आज होवन।
अर्ज़ सुने जे ज़रा सरकार मेरी॥ २८॥

हे—होश मंदां देश प्यारेयां को,
करे करम सरकार अधिकार देवे।
गेरे यूरपी भारती और कोई,
एसी बात को मनो विसार देवे।
दीन दशा देखे भारत वासियों की,
माई बाप वत दौलतां वार देवे।
नीति नेक रखे प्रजा पालने की,
नेकी बदीका इवज़ करतार देवे॥ २९॥

ये—याद कर देश को यतन करना,
येही मसल मशहूर जहान अंदर।

---

१ कायर. २ जीवेंगा. ३ कार ४ स्कूल की परिक्षा दे दे. ५ अंत. ६ जाती शत्रु.

७ वीर. ८ सहस्र १ लूट दश देके सो लिखवालेना. २ परमेश्वर. ३ मिल जुल. ४ काले गोरे फर्क.

ईश करे कृपा कीट होवे हाथी,
शेर जाय सियार दहान अंदर।
कुल सिफत मौसूफ है वही मुतलक।
कौन सिफत न औस महान् अंदर,
यतन वाल्यों का वेड़ा पार हर गिज़।
यतन हीन हरदम हार हान अंदर ॥ ३०॥

ये:——याद आवन मेरे वचन उसकों,
जिसका कौम की तर्फ कुछ ख्याल होसी,
देख दीन दुवली दशा देशियों की।
तप्त जिस्म जिस का वाल वाल होसी,
ऐसे सख्त वीमार को खास नुसखा,
मेरे वचन आवे सरद हाल होसी,
गोविन्द सिंह अपनी सनतान द्वारा,
कवी पुरुष वह साहिब इकवाल होसी ३१॥

रघुनाथ शरयू

प्रकारण. ३

(गतांक से आगे)

यह इनको अच्छाभी नही समझते थे इन्होने सामान्य लोगों में से सहयोगी चुन लिये थे और छोटी सम्प्रदाय के असभ्य वर्वर. किन्तु वीर प्रभु भक्त विश्वास वाले लोगों को ही अनुचर वनायथा. यह मवला सम्प्रदायके लोगथे. यह मवला सम्प्रदाय वाले थोडे ही दिनो पीछे समर विद्या में शिवजी के वडे २ सहायक और सहयोगी होगये, और सब वड़े ही वीर निकले. ऐसे वीर शिवाजी को वहुत मिले थे. श्रीरामचंद्रजीने वन्दरोंकी सहायतासे रावणा को विध्वंस कर सीताजीको विपत्तसे छुडाया था. शिवाजीने भी मानो रामायणके उपदेशसे वर्वर मवला वन वासीयोंकी सहायता द्वारा धर्मको औरंगजेवसे वचाया था. निपोलियनके मार्शलोंकी तरहा शिवाजीकी सेना शौर्य वीर्य और रणकौशलमें अद्वैयीथे. और प्रभु भक्तिमें फ्रेन्स वाले मार्शल लोगोंसे वढकर नही तो घटकेभी नहीथी. यह तो हम उपर लिख ही है आये हैं कि शिवाजी लिखना पढना कुछ नही सिखे थे, यहां तक कि अपने नाम के हस्ताक्षार करनाभी नही जानतेथे. केवल गुरुदादाजीने इन्हे घोड़ेपर चढ़ना धनुष चलाने और तलवार पट्टा खेलने तथा अन्य युद्धके अस्त्रशस्त्रों में वाल्यव्यसेही वह श्रुत कर दिया था.

शिवाजीका शरीर वाल्यावस्थामें कसरत करनेसे वल वान और हृष्ट पुष्ट मजवूत हो गया था. इस्से लोगोंकी दृष्टि में युवक दिखलाई पडने लग गये. और लोग इन्हे देखकर कहते "मरेठा एक उत्तम स्वार है" यह चर्चा सारे दक्षणमें फैल गई, इस्से इधर उधरसे लोग इनके देखनेके लिये आने लगे.

शिवाजी अपना सारा समय युद्धशिक्षामें ही लगाते जव इस कार्यसे छुट्टी पाते तो जहां पर रामायण अथवा महाभारत की कथा होती वहांपर जाते और वडी भक्ति श्रद्धासे कान लगाकर* सुनते. इन ग्रंथोंकी शौर्यवाले कथाओं और दादाजीके धियाने शिवाजीके हृदयमें स्वधर्म प्रीति और शूरवीरों का अनुकरण करने, तथा आर्य्यधर्मके द्वेषी यवनोका नाश करने की एक वार ही उमंग(साहस)उत्पन्न करदीथी. इस उमंगने १६ वर्ष के वालक में ऐसा तो वल किया, कि शिवाजी इस छोटी व्यय में ही कोकण और मावल देशों के घोर वनों, पर्वतों तथा घाटों में विचरने लग गये. इनका इन स्थानों में विचारना कुछ वावलों की भांती नही था, परतु दूरदर्शी विद्वानों की सी भांती था. यह इन वन, पर्वतो तथा घटों पर विचर ते हुये वडी गूढ़ दृष्टी से इन्हे देखते, और

---

५. मुन. ६ परमेश्वर क्या नही कर सकता. यद्दी २ मजवूत.

* मृत्यु पर्यन्त इन कथाओं को सुनते रहे.

विचारते थे कि इनपर चढ़ने उत्तरने के कौन २कहां २ मार्ग हैं. और इन पर के किल्लों में प्रवेश करने और निकलने के कहां २ पर स्थान हैं. कौन किले पुख्ता और मजबूत हैं. इन पर घेरा डालना तथा संरक्षण कौन उपायसे करना चाहिये. इत्यादि विचार में दिवस व्यतीत करने लग गये. मानो शिवाजी की उमंग के रक्षक या पालन पोषण के लिये यह वन पर्वत कारण भूत हो गये. शिवाजी इन वन पर्वतों में विचरते २ ऐसे तो इनसे जानकार हो गये कि मानो वह वहीं के निवासी होते हैं. शिवाजी इन में भ्रमण, और दुष्ट पशुओंका शिकार करते २ मनुष्य के भी पक्के शिकारी बन गये. दादाजी शिवाजी के इन आचरण को देख कर निराश हो आये. इसलिये उन्होने शिवाजी को अपने पास बुलाया कर इस कर्म को त्याग करने और अपनी जागीरको सम्भाल लेने का उपदेश किया, पर! जिस घटमें एक वस्तु भरी हुई है, दुसरी उसमें कैसे समा सकती है. यदि दादाजी ने प्रथम से ही यह घट कुछ खाली रहने दिया होता तो निस्संदेह उसमें और कुछ भी वस्तु भरसकते. किन्तु इस घट को तो प्रथम ही से शौर्य रूपी बीज से भर पूरकर रखा था. अब यह उपदेश कहां समाते. यद्यपि शिवाजी गुरु दादाजी को पिता के समान मानते थे. पर अब तो गुरुजी के बोये हुये शौर्य रूपी बीज का अंकुर फूट निकला था अब वह कहां जाये? अर्थात जिस मार्गका अब शिवाजीने अवलंब कर लिया उसका छोडना इन्हे कठन लगा, इससे दादाजी के वह वचन इनके मन से स्वीकार न किये, और वह पुनः चुपके वनको चले गये. इन वनो के निवासी मावला लोग बडे शूरा और विश्वासू तथा सहन शील वचनके पक्के " प्राण जाये पर आण न जाये. " ऐसे थे. इन के यह गुण; शिवाजी ने अपने उद्देश के बहुत ही अनुकूल पाये इससे इन से प्रीति बढाई. यशाजीकंक, तानाजी, मालुसरे और बाजी फसलकर इत्यादि, जो शिवाजी के परम स्नेही थे. यह सभी मावला जाती के थे. यह आस पास के सर्व किल्लों. और वन पर्वतों से परचित थे. इससे इन्होने शिवाजी को भली भांत सर्व वस्तुओं से परचित कर दिया. अब तो शिवाजी के मनमें किल्ला लेने की लालसा उत्पन्न हो आई, और इन्होने स १६४६ ई में, तौरणगढ के किल्ले को इन की सहायता से अपने तावे में कर लिया.

इस किल्ले को ठीक ठाक (मरम्मत) करते समय अकस्मात शिवाजी को मोहोरों से भर पूर एक देग मिल गई, इसके मिलने से लोगों को विश्वास हो गया कि शिवाजी पर भवानीजीकी बडी कृपा है. यह चर्चा सारे देश में फैल गई, इससे पुष्कल लोग शिवाजी के संग आ मिले.

इस प्रथम किल्ले के लेते समय शिवाजी की व्यय लग भग १९ वर्ष के थी. तौरण गढ किल्ले को तावे में करनेके एक वर्ष उपरांत इसके समीप ही डेढ कोस पर अग्नि कोन में एक पर्वत की चोटी पर, शिवाजी ने एक नवीन और किला बनवाया, और उसका रायगढ़ नाम रक्खा, इन दोनो किल्लों में शिवाजीने युद्ध का सर्व सामान गोला बारुद खरीद कर यथास्थित प्रबन्ध किया.

(शेषफिर)

पंचराज.

डियर श्रीधर्म्मामृत साहब। गुडीवनी गुड नाईट गुडमारनी नमस्ते, नमस्कार जैगोपाळ जोवार सलाम परनाम बन्दगी आदाब तसलीम.

आहा ! क्या आप हैं ? आईय पंचों के सरदार महाराजाधिराज गुरु घंटाल पदारिये २ बहुत दिवस उपरांत कृपालु ने कपाल दिखलाया, कहिये खुशीमें तो रहे. अजी क्या तुम्हारी तरहा थोडे ही हम धर्म कर्म के लफडे में फंसे हैं "काजीजी दुवले क्यों ? कि शहरका अंदेशा." यारों का तो दिन रात सर्व खुशी में ही कटते हैं. अच्छा साहब तुम खुशी में ही रहिये अब आप अपने आगमन का कारण कहिये. क्या हम आजही अपने आगमन का कारण कह दें? लो कहही देते हैं, सुनो हम एक नई खबर लायें हैं. कहीं दाखल दफतर न कर, मुद्रित कीजिये गा ? सुनोजी समय विपरीत है. श्री काशी निवासी भारतेंदु श्रीयुत बाबू हरिश्चन्द्र जी के इस कथन के समीप है.

"सांची कहे पनेई खावे, झूठा बहु विध पदवी पावे ।"

हमने पीछे एक लेख दिया था उस्से ही लोग नाराज होगये. फिर तुम्हारे समाचार से तो कपडोंसे ही वाहर हो जावेंगे. हमे मालूम हुआ कि तुमने भी धर्म की आड से एक नेई दुकान जारी की है, खेर? हम अब जातें है. पर आप अपने नवीन समाचार को तो सुना जाईये, मुद्रित करने योग्य होगा तो करही देंगे. अजी तुम डरपोकों से क्या मुद्रित होगा,

खैर ! उसे जाने दीजिये और एक नवीन वात. सुन लीये. धर्म सम्बंधी होगी तो सुनेंगे. अजी धर्म सम्बंधी ही है सुनो तो सही. सुनाओ? जाओ २ हम अब वह भी नही सुनाते, क्योंकि कहीं सुनते के साथही दम खुश्क् हो जायें तो? भला एसी कोन सी वात है कि जिसके सुनते ही दम खुश्क् हो जायें गे. बस तुम्हारे सुनाने के योग्य ही नही है. धर्म सम्बंधी और फिर हमारे सुनाने के योग्य नही यह कैसी बात है. अजी ऐसी ही है. फिर जरा कहिये तो सही. नानाा! हम जाते हैं. भला सुनाये विना जाने पाओगे. क्या तुम्हारी जबर दस्तीहै. अजी ! जबर दस्ती तो कुछ नही है तुम्हारी मर्जी है. हां ! ऐसा कहो तो सुनलो तुमभी क्या कहोगे. यहलो सुन लो ? सुनाईये. अजी पास आईये कान लगाईये. यह लो कान लगाये. " नाया समझ के बीच में. " अजी कुछ भी नही. अच्छा सुनो हम जोरसे सुनाते हैं? तुम्हारे धर्म ग्रंथ का यह श्लोकः—

* सकृज्जल्पान्ते राजनः, सकृज्जल्पन्ति पण्डितः ।
सकृत्कन्याः प्रदीयन्ते त्रीण्ये तानि सकृत्सकृत् ॥

है या नही. जी ! हां है. अच्छा । यह श्लोक है या नही ।

* पिता रक्षति कौमारे भर्त्ता रक्षति यौवने ।
रक्षंति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वतंत्र्या मर्हति ॥

* भ्रमन्सं पूज्यते राजा भ्रमन्सं पूज्यते धनी ।
भ्रमन्स पूज्यते विद्वान् स्त्रिभ्रमंती विनश्यती ॥

---

* अर्थात्—राजा लोगों की आज्ञा एक ही वार होती है, पंडित जन एक ही वार बोलते हैं, कन्या दान एक ही वार होता है. यह तीनों वातें एक ही वार होती हैं, उचित है.

* अर्थात्—स्त्रीको वालपण में पिता, युवावस्था मैं पति, और वृद्धावस्थामें पुत्रोंके आधीन रहना. स्वतंत्रता से कभी रहना उचित नही है.

* अर्थात्—वाहर फिरने से राजा, धनवान, तथा विद्वान पूज्य हैं. परन्तु स्त्री तो भ्रष्ट ही हो जाये है. स्वतंत्रता, पिता के घर निवास, मनुष्योंके झुंड में अकेला आना जाना, पर पुरुष के संग गुप्त वातें करना, मर्यादा त्याग के वर्तना, वहुत करके पतिका परदेश में वास, वारंवार खराब स्त्रियोंका संग करना, अपने खाने पीने की चिंता, पतिकी वृद्धावस्था, तथा अपनी इच्छा नुसार प्रवास (मुसाफरी) यह स्त्रियोंको भ्रष्ट करने वाले मार्ग हैं. इस लिये सुज्ञ पुरुषों को उर्द्ध लिखे हुये, स्त्रीयों के भ्रष्ट होने वाले कारणों से सदैव दूर रक्खना उचित्त है.

हां ! यह श्लोक भी हैं. इनको तुम मानते हो ? हां मानते हैं. अच्छा जो इनको नही मानते उनकी कैसी दशा होती है. बहुत ही बुरी. कोई उदाहरण रक्खते हो. प्रत्यक्ष उधाहरण तो हमारे पास कोई नही है. अजी तुम भी वह...ही हो. लो यह उदाहरण प्रत्यक्ष ही देखने में आने लगे हैं. क्योंकि जब से नई सभ्यता वालों ने स्त्रीयोंको स्वतंत्रता प्रदान की है. तब से उर्द्ध लिखत श्लोकों के विपरीत स्त्रीयों के आचरण हो गये हैं. बाल विधवाओं का दूसरी बार दान देना. पहले तो हम भी आच्छा समझते थे, पर यह हमारी भूल निकली. कारण कि इनके देखा देखी अब बालबच्चों वालीं और बुढी भी अपना पुनर दान कराने लग गई हैं. अजी दान तो दूर रहा, स्वतंत्रता पाने से खुला खुली बच्चों को गोद लटकाये, ऊंगली पकडाये, दुसरे वर की खोज करने लग गई हैं. और पढी लिखी करने तो स्वतंत्र से विज्ञापनो को प्रसिद्ध करवा के खोजही लगगई हैं. लो यह विज्ञापन पढलो. देखना कहीं कपडों से बाहर न हो जाना किन्तु गंभीरता से पढना.

योग्य वर चाहिये.

यह बात दिल में न लाना कि मैं ५१ बरसकी हो चुकी हुं, यद्यपि मेरा ब्याह इसके पहले चार बार हो चुका हैं और बारह कि बाइस बच्चे जन चुकी हुं, किन्तु पति पुत्र कोई भी जीता नहीं है, घर सुनसान और मैं एकेश्वरी हूँ, खुला दरवाज़ा है, लेकिन पत्ता खड़कने तक का शब्द नहीं आता, केवल हमारा कोमल कण्ठस्वर हारमोनियम के स्वर में मिलकर घर का सुनसान भङ्ग करता है. विज्ञान यह नहीं कहता कि चार चार शादी करलेने ही से स्त्री बूढ़ी हो जायगी, क्योंकि चार दिनमें भी चार ब्याह हो सकता है. गिरती रात को स्वामी का मरना, और पौ फटते विवाह बस इसी तरह सब हो जा सकता है, और बातों को भी इसी तरह लेने से आपकी शङ्काओं का समाधान और आपत्ति का खण्डन हो जायगा. यह नहीं जमता तो तीन महीने रखलो, या इसपर भी कुछ सोच सङ्कोच हो तो एक बरस सही. यदि कोई कूटवादी अरसिक मूर्ख हों, तो वह तीन बरस लेसकते हैं, मैं कुछ न कहूँगी, पाँच बरस लेने पर भी प्रसन्न ही रहूँगी. । अगर बारह बरस की उमर में मेरी शाहदी शुरूअ हुई मानये, तो इस घड़ी मेरी विज्ञान सम्मत आयु १७ बरस हुई. इस कारण आप किसी वैरी की बात न सुनना मेरी आयु इक्यावन बरस की नहीं है, इसमें अगर किसी को सन्देह हो तो डाक्टर बुला कर नाड़ी दिखालें, ज्योतिषींजी से जन्म नक्षत्र जन्मपत्रीसे पढवा लो, शरीर का चमड़ा देखो, बारकि हरफ़ सामने लावो, देखो बिना दुरबीन के पढ़ सकतीहूँ कि नहीं, तब फिर कहिये कि मेरी उमर ५१ बरस से कम है कि नहीं ।

दश हजार रुपया इनाम

मैंने उत्तमाङ्ग के बालों को खिज़ाबसे काला किया है, जो इसका सुबूत देंगे वही इनाम पावेंगे । जो मेरे शरीर से एक सेर पके बाल निकाल सकें गे, उनको और क्या कहूं मैं अपना **सर्वस्व** दान करूँगी—

श्री मती द्वादश योजन गन्धादेवी
साकिन फाँदा नहीं हँसा बाड़ी चमार तलाव.
तहसील गड़ बड़ गंज जिला विनाश पूर.

"अब आया समझ के बीचमें." लो अब हम तशरीफ ले जाते है गुड़नाईट.

गोरक्षणी सभा.

बड़ी खुशीकी बात है कि हमारे परम गोभक्त श्री युत सेठ **बारसीदास**जी जो तीन वर्षसे बंगाल प्रांत के जिला सिंगभूमके अंतरगत, चांईबासा और पाुलिया इत्यादि नगरों में गोरक्षणी सभाके स्थापनका प्रयत्न कर रहे थे. इनका यह धर्मकार्य्य श्रीमान सेठ **ना-**

थूरामजी खेडिया के पधारने से सफल होगया. श्रीमान सेठ **नाथुरामजी** खेडियाकी इस प्रांत में बहुत जगह पर दुकाने हैं, पर सेठजी ९ वर्ष से इस प्रांत में नही पधारे थे अब के केवल इस प्रांतकी गऊओंका कष्ट सुनकर पधारे थे इनके पधारनेसे झटपट गोरक्षणी सभा स्थापन होगई. सुना है कि सेठजी साहेबने हिन्दुमात्र के यहां एक २ लोहेका बक्स रखवादिया है, और सर्व से कह दिया है कि अपनी श्रद्धानुसार जो बने गऊ माताजी की सहायता के लिये अपनी २ आमदनी में से इन बक्सों में डालदिया करो. सर्व लोगोंने इस बातको बडी खुशी से स्वीकार किया है. इस्से लगभग १०० रु० मासिक की आमदनी अलग गोरक्षणी सभाको होगई है. और यहभी सुना है कि प्रत्येक व्योपारीने अपने व्योपार परभी कुछ गो कर बाद दिया है, हम पुरु लिया तथा **चांईबासा**के निवासीयोंको कोटाशः धन्यवाद देते हैं परमात्मा सर्व भाईयों की इन ऐसीही मती करे.

योगी और जिज्ञासु.

(प्रकर्ण ३ रा-)

योगीराज—हे जिज्ञासु ! निर्मल अंतःकरण कर के लक्षपूर्वक सुनो, यदि तुझे दर्शन विद्याका ज्ञान होगा, तो तुम हमारे उत्तर को यथार्थ समझ सकोगे. **वत्स** ! हम लोग जो कुछ प्रत्यक्ष चक्षु इंद्रिय द्वारा देखते हैं यह प्रथम ही दृष्टोत्पत्ति होता नहीं, क्योंकि प्रत्यक्ष देखा हुआ पदार्थ स्वयं कारण नही, परन्तु वे किसी का कार्य्य है और उसका कारण तो जुदा ही होता है. **दर्शन** विद्यासे सिद्ध होता है कि, कोईभी पदार्थ देखने के पहले, उसकी प्रथम इच्छा उत्पन्न होने से उसका मनन होता है, तब पीछ चक्षु इंद्रियद्वारा पार दर्शीक भिंग में प्रथम उस पदार्थकी आकृति पडी कि वे तुरतही परावर्तन होकर दृष्टिद्वारा प्रत्यक्ष प्रमाण रूप दिखाता है, इस्से वह कार्य है. हे **वत्स** ! कारण विना कार्य्यका ज्ञान हो ही नही सकता है, कार्य और कारण इन दोनोंका परस्पर निकट संबन्ध है. इसपर से विद्वान और ज्ञानी पुरुषोंके तो स्पष्ट जानने में आये गा कि ईश्वर सिद्धि चक्षु इन्द्रिय द्वारा तरन्त ही नही हो सक्ति, किन्तु जैसे कार्य किंवा कोई भी वस्तु जाननेकी इच्छा और उसके मनन करने से उत्पन्न हुवा जो प्रत्यक्ष प्रमाण रुपी फल, उसी कारण जनाता है. इसी रीतसे, इस ब्रम्हांड में कार्य अथवा क्रिया से उत्पन्न हुई जो अनंत चमत्कारी वस्तुयें हैं, इनके प्रत्यक्ष प्रमाणसे इन सर्व वस्तुओं का मूल कारण रूप जो **शुद्ध ब्रह्म किंवा परमात्मा**, ज्ञानी पुरुषों के जानने में आता है. यदि तुम संसार के कोई भी क्षण भंगुर कार्य्य अथवा क्रिया से उत्पन्न हुई वस्तु को, प्रथम ही चक्षु इन्द्रिय द्वारा प्रत्यक्ष देखे पीछ कोई जात का कार्य्य अथवा काम करते होवे तो ईश्वर की भी सिद्धि चक्षु द्वारा प्रत्यक्ष दिखाय पीछ वे सत्य माननी योग्य है. पर इस रीत से संसारिक कोई भी कार्य्य तुम से हो सकता नही. क्योंकि तुमने मुझे प्रथम चक्षु से देखे पीछे इस्थान में आने का विचार किया नही, परन्तु पहले तुमने सुना कि कोई योगी राज नामक है, उसके पास जाने से हमारे मन का समाधान होगा, इस पर से तुम अपने मन में आस्ता रक्ख के इस स्थान में आने का विचार किया, तब पीछे इस स्थान पर चलकर आने की क्रिया किये उपरान्त, इस स्थान का और हमारा प्रत्यक्ष दर्शन हुवा. दुसरे ! जैसे तुम भोजन किये पीछे इसकी सामग्रि तैयार करत नही, परन्तु प्रथम सामग्रि तैयार करके स्वयं पाग किय पीछे प्रत्यक्ष भोजन प्राप्त सक्ते हैं. तीसरे ! जैसे आते कल के

(शेष आगे)

पीछले अंकमें जो हमने बम्बई के एक धनवान के बालक विषे लेख लिखा था, वह बात मिथ्या होनेसे क्षमा मांगते हैं. सं०

RECISTERED No B 247.

श्रीधर्म्मामृत की संक्षेप नियमावली।

(१) इस पत्रका मूल्य, नगर और बाहर सर्वत्र डाक व्यय सहित अग्रिम वार्षिक केवल १॥ रु. है. गवर्मेन्ट तथा राजा महाराजाओंसे उनके आदरार्थ ५ रु. है.
(२) पांच श्रीधर्म्मामृत एक साथ खरीदने वालों को एक प्रति मुफ्त अर्थात् जो पांच ग्राहक हो कर ७॥ रु. दाम भेज देंगे उनको एक पाकिट में ६ श्रीधर्म्मामृत की पुस्तकें हर मास की पहिली ता० को मिला करेंगी.
(३) पत्रके उत्तर चाहने वाले महाशय, जवाबी कार्ड अथवा टिकट भेज, अन्यथा पत्रोत्तर न दिया जायगा.
(४) नमूने की प्रथम प्रति पहुंचने पर यदि ग्राहक होना स्वीकार हो, तो मूल्य ता० १ तक भेज देना चाहिये, यदि ग्राहक होने की इच्छा न हो तो कार्ड द्वारा सूचित करना पड़ेगा, और नमुने की पुस्तक पर आध आनेका टिकट लगा वापसकर देनी चाहिये, नहीं तो ग्राहक श्रेणी में समझे जा यंगे. (५) विज्ञापनकी छपवाई एक मासके लिये प्रति पंक्ति दो आना तीन मासके लिये एक आना, और छ मास या इससे अधिक समय के लिये आध आना है. और छपे हुये विज्ञापनों की वितरण कराई ५ रु. लिया जायेगा.

श्रीधर्म्मामृत सम्बन्धी सर्व चिट्ठी, पत्र, व मनीआर्डर और समाचारपत्र नीचे पतेपर आने चाहिये

भारत भाईयों का शुभचिंतक २ गो. पं. जगत नारायण शर्म्मा
चंदा वाडी पोष्ट गिरगाम-मुम्बई.

श्रीधर्म्मामृत पुस्तकालय की पुस्तकें

(१) गोरक्षाप्रकाश-गऊ मातके बारेमें विदेशियोंके एक सहस्र प्रश्नोंका उत्तर, सर्वगोभक्तों को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये. मूल्य ८ आना (२) अकबर गोरक्षा न्यायनाटक इसमें अकबर बादशाहने किस रीतिसे गोरक्षा कीथी. यह नाटकी चालसे कथन किया गया, है, इसमें बहुत, करुणामय नाना प्रकारके राग भी हैं. मूल्य १२ आना (३) अकबर बीरबल का समागम. इसमें बीरबलकी चतुराई के दोहे भरे हैं. देखने के योग्य पुस्तक है. मूल्य ८ आना. (४) ईसू परीक्षा. इसमें ईसामसीह की परीक्षा की बाते हैं. प्रश्न करते हो ईसाई दांत दबाते भाग जाते हैं मूल्य १ आना. (५) ईसाई मतपरीक्षा. इसमें ईसाई धर्म के ढोलकी पोल खोली गई है. पढकर देखलो मूल्य १ आना. (६) हिंदुओंकावर्तमानीन धर्म अर्थात् भोलेभाले हिन्दु भाई किस रीतिसे विधर्मियों के फंदे में फंस जाते हैं. मूल्य १ आना (७) गाजीमियांकी पूजा. हिंदु कबर पूजियों को यह क्या सूझा ? पढकर देखलो मूल्य आधा आना (८) गऊकी नालिश. मूल्य आध आना. (९) गोपुकार. मूल्य आध आना (१०) गोपुकारचालीसी मूल्य आध आना. (११) गोविलाप १ मूल्य आध आना. (१२) गोदान व्यवस्था. मूल्य आध आना. (१३) गोगोहार. मू० आध आना. (१४) काउपोटेक्सन. अर्थात् एक अंगरेज की गोभक्ति मू० आध आना. (१५) गोरक्षार्थ बादशाहोंके फतवे (व्यवस्था) मू० आध आना. (१६) गोहितकारी भजन. मू० आध आना. (१८) भारत डिमडिमा नाटक. एकबार पढोगे तो भारतकी क्या दशा है जान लोगे मूल्य चार आने.

अमृतं शिशिरे वन्हिरऽमृतं बाल भाषणम्।
अमृतं राजसंमानो, धर्म्मोहि परमामृतम्॥

वर्ष २.] बम्बई तुलाऽर्कः भाद्र मास सम्वत् १९५६ सं० १९०० अकतूबर. [अंक ७

भारतोन्नतिका साधन सद्धर्म ही है

(कतांग से आगे)

वर्तमान समय के भारतीय नव शिक्षक जो विदेशिया को उन्नति के शिषर पर चढे हुये देख कर, वैसे ही अपनी उन्नति की इच्छा कर रहे हैं, यह उनकी भूल हो रही हैं. कारण कि श्रीयुत माष्टर आत्मारामजीने विदेशी उन्नतिकी पोल अपनी "ब्रह्मयज्ञ" नामक पुस्तकमें अच्छी प्रकार से जताया है. यदि हमारे नव शिक्षक यह पुस्तक पढें तो उनको विदित हो जाये गा, कि जिस विदेशी उन्नति को देख कर हम भारतोन्नति करना चाहते हैं यह उन्नती नहीं है. देखो माष्टर साहब लिखते हैं कि:—

(१०१) "पृथिवी को स्वर्ग धाम बनाने के लिये सब से प्रथम ब्रह्मयज्ञ की अवश्यकता है"

"इस समय यूरोप और अमरिका के रहने वाले जो कि उन्नति के मार्ग में चल रहे हैं. उन्होंने जड़ जगत की स्तुति को जिनको कि वह 'सायंस' कहते हैं अपनी उन्नति का मूल मंत्र सिद्ध कर दिखाया है. जड़ पदार्थों के यज्ञ रचने से उन्होंने नाना विध कला कौशल रच, पुरुषार्थ से भौतिक सुखों की कुछ प्राप्ति की है. भौतिक ज्ञान और भौतिक कर्म से युक्त हो कर, जड़ जगत के एक मात्र उपासक बन रहे हैं, ईश्वर उनके लिये कोई सत्ता नहीं है. ईश्वर की स्तुति, ईश्वर की प्रार्थना और ईश्वरीय उपासना अथवा *ब्रह्मयज्ञ के फल वह अनुभव नहीं कर सकते उनका सारा पुरुषार्थ एक मात्र लौकिक व्यवहारों की सिद्धि के लिये लग रहा है, तिसपर भी सारे नर नारी सच्चे सुख के भोगने से शून्य हो रहे हैं वह शांति के पीछे भागते हैं और शांति उनके आगे २ भाग रही है.

जड़ स्तुति का नाद बजाते हुये; भौतिक शस्त्र हाथों में पकड़े हुए वह विषय सुख के कोष की पूर्ति के लिये उद्यत हो रहे हैं. उनके धन्दे रचने वाले मन को एक घंटा सायं प्रातः ईश्वर के ध्यान में लगाने का अवकाश कहां? कोयला, लोहा, ओकसीजन (प्राणवायु) आदि के स्तोत्र से उनके शास्त्र भरपूर हो रहे हैं. परन्तु कहीं उन शास्त्रों में ईश्वर का स्तोत्र दृष्टि नहीं पडता? जड जगत के उपासक होने से वह एक क्षण भी उस को तज कर

* ब्रह्मयज्ञ का दुसरा नाम सन्ध्या और सन्ध्याका दूसरा नाम, ईश्वर स्तुति, प्रार्थना और उपासना है.

एकान्त और शांत हो किसी और चेतन शक्ति की उपासना के लिये उद्यत नही हो सकते. इस संसारिक उन्नतिका चमत्कार ऐसा अद्भुत है कि 'बकल' से कोई लेखक उसकी प्रशंसा के गीत गाना एक मात्र अपना जीवन उद्देश्य समझते हैं. चारों ओर से बुद्धिमान और विद्वान इस उन्नति की जय २ ध्वनी इतनी उच्च स्वर से पुकारते हैं कि कानो के परदे फटे जाते हैं, इस उन्नति मार्ग में चलते हुये, वह पग २ पर "**उन्नीसवीं सदी**" और उस की फड़कती हुई उन्नति का महातम पाट करते हैं. अविद्यामें सोये हुये मनुष्य उनके कोलाहल और उनकी जयध्वनी सुनते हुये आंखें खोल उनकी ओर चकित हो २ देखत हैं. **रेल** की खडखडाहट, **बिजली** की जगमगाहट, **कलों** के फुंकार, **डिनामाइट** के चमत्कार विदेशों का दलन, और स्वदेश का पालन, मानो आपने स्वरूप से इस उन्नति की महमाका उपदेश दे रहे हैं. इस उन्नति की **बाह्य मूर्ति** को देख कर मनुष्य एक क्षण के लिये स्वयं मूर्छित मूर्तिमान हो जाता है. इस जंगी ढोल की गर्जन, सिंघ नादकी तरहा निर्बलों को आगे से भगाय चली जा रही है. साधारण पुरुषका काम नही कि इस उन्नति के स्वर्णमयी आवर्ण को उतार कर उसके ढपे हुये मुखका दर्शन कर सके. ऐसे वीर बहुत थोडे हैं जो नरसिंह की गर्जन को सुनते हुये भागना छोड़, खडे हो कर निर्भय उस के दर्शन करने का साहस कर सकें.

तथापि पृथिवी ऐसे वीरोंसे शून्य नही है. पृथिवी पर ऐसे वीर हो गये हैं कि जिन्होंने सिंहकी गर्जन सुनते हुए उस के निर्भय दर्शन ही नहीं किये, किन्तु सिंह के पग पाशों से जकड दिये, और फिर सिंहके रूप को देखा और उसके एक २ रोम की पड ताल की. ऐसे वीर पृथवी पर हो गये हैं जिन्होंने कि स्वर्णमयी आवर्णो की झलक से न डगमगा कर आवर्ण उत्तार चादर वाले का मुख देख लिया. हमारे ज्ञान नेत्र इस समय भी ऐसे ही वीरों की एक पंक्ति खडी हुई देख रहे हैं *१ "हेनरीजोर्ज" ‡ २ "कारपेण्टर और" § ३ परोढन" आदि अनेक पश्चिमी वीर हमें साक्षी देते हैं कि हमने इस उन्नति के स्वर्णमयी आवर्ण को उठा कर उसके यथार्थ रूप के दर्शन किये हैं. और लो! कैसा शोकमय समाचार है, कि उन्हें स्वर्णमयी आवर्ण के उठाते ही एक कोढी के रूपका दर्शन हुआ. इस पश्चिमी सिंह का गर्जन सुनकर डरनें और भागने वालो थम जाओ. जिस गर्जनसे तुम डर रहे हो, वह गर्जन तो नरसिंह के क्लेश और पीड़ाकी चीख है, रोगी सिंह मृत्यु के भयसे स्वयं रो रहा है फिर तुम उसकी गर्जनसे क्यों भागते हो.

यह पश्चिम उन्नति जिसने कि मनुष्योंके सुखकेलिये जड जगत को लताडना और जीतना आरम्भ कियाथा, अब मनुष्यको ही दलन और पादाकान्त कररही है. जिन मनुष्योंकी इसने सेवा करनी थी उन मनुष्योंके हाथोंसे भोजन ग्रास छीनती हुई उनको भूख और रोगसे पीडित कर रही है. जिन मनुष्योंके लिये इसने घोडा बनकर रहना था, उनपर यह स्वयं चढकर उनको औंधा शिरके बल गिरा रही है. जहां सर्व मनुष्योंकी अवश्यकतायें भले प्रकार पूर्ण करना, इसका जीवन उद्देश था, वहां यह पक्षपात में गिरकर मुठीभर मनुष्योंको धनसे पूरित करती हुई असंख्य मनुष्यों को रोटी की जगह पेटपर पत्थर बंधवा रही है. इसने भाई से भाई लडाने का ठेका लिया हुआ है, इसने मनुष्योंको मनुष्योंसे दलन करा कर रक्त नद बहा दिये हैं. इसीने रेल, तार, व्योपार, को भूख और भयके साधन बना दिये हैं. स्वर्णमयी चादर उतारतेही देखो तो इसके माथेपर लहूका टिक लगाहुवा है, इसका मुंह खुला और पेट खाली है, इसका हृदय ठंडा और शिर अग्निरूप है, यह अपनी विद्यारूपि आखोंमें कपट

---

* (1) Henry George, the author of "Progress and Poverty" social Philosopher and orator.

‡ (2) Edward Carpenter, the socialistic writer and the aurthor of "Civilization, its cause and cure.

§ (3) P. J. Proudhou, the French writer and author of "What is property.

के सुरमेकी भर २ सलायां डाल रही है. इसका गाल जो दूरसे लाल प्रतीत होते थें, पास जाकर देखो तो कोढके घाव ही हैं. कान लगाकर सुनो तो यह क्या पाठ कर रही है? कैसी धीमी मीठी स्वरसे यह कह रही है कि, बलवान निर्वलोंको चटकर जाय, ठहर कर कहती है कि जिसकी लाठी हो उसकी भैंस रहे. नया आलाप इस प्रकार करति है कि औरोंका नाश करने पर तुम आपना पेट भरो. इसके दक्षिण हाथमें भिक्षापात्र, और वाम हाथमें माहरोंकी थेली है. जेलखाने, हस्पताल, अदालतें, पुलिस, अनाथालय, परिवारिक कलह, विदेश दलन, और पागलखाने इसके तुच्छ चमत्कार हैं. व्यभिचार, विषयासक्ति, मद्यपान, मांस भक्षण, अन्याय, वैर, अविश्वास, और निरर्थकी चिन्ता, सब इसकी ठण्डी छायामें विश्राम करतेहैं

५* "जैनरल बूथ" अपने लेख में इसकी महमा दर्शाते हैं कि तीस लाख नर नारी इंग्लेंड में जहां कि इस जड़ उपासक उन्नति का पूर्ण राज है, निर्धनता और दःखोंके अथाह समुद्र में आज मूर्छित बहते हुये रोटी, हाय रोटी की पुकार मचा रहे हैं, इंग्लेंड की राजधानी लण्डन नगर में एक ओर तो बडी २ अटारियां जगमग २ आकाश से बातें करती हुई धन धान्य से पूरित दिखाई देती हैं और दुसरी ओर उसी लंडन के *"ईस्टएन्ड" कोने में अनेक भूखे पुरुष स्त्रिया और बच्चे भूखसे व्याकुल दर्शके चान्द की तरहा रोटीके दर्शनो की अभिलाषा करते धनवानो को गोलोंसे उडा देने का एक मात्र विचार करते हुये, इस उन्नतिके अन्तरीय रूपको दिखा रहे हैं. इसी लंडन के कार्यालयों में सहस्र नर नारी अठारह घंटे प्रतिदिन रोटी कमाने के लिये काम करते हुये कभी धनको भावी कालके लिये संचय नही कर सकते. अमरिका अथवा "आस्टरेलिया" में जहांकि यह उन्नति फैल रही है. ऐसी ही मूर्तियां आपको मिलें गीं. अमरिका में जहां कि एक धनी पुरुष अपने बच्चे के सोने के लिय स्वर्णका हिंडोला बनाता है, वहां उसके ही पडोसमें भूख से व्याकुल नरनारी इस उन्नति को शाप देती हुई रोटीकी चिंतामें रात सोना तक खो बैठी है.

६ "टालस्टाय" इस देशके महान पुरुष स्त्रियों की दीन, मलीन, और धन से रहित, कंगाल अवस्थाका भयंकर चित्र दर्शाते हुये हमे चकित और उन्नति से घृणित कर रहे हैं.

हिंसा जोकि जड़ उपासक उन्नति की फल रूपी खेल है उसकी लहुलुहान नदियों को देखते हुये, उसकी गोद में पले हुये पश्चिमी विद्वान इस प्रकार इसके रूपसे घृणित हो रहे हैं.

७ "ग्लेडस्टोन" ने १८७१ के नवम्बर मास में लंडन में व्याख्यान देते हुये शोक से कहा था, कि झगडे जो युद्धके विना निर्णय नही होते, यह बडी भारी न्यूनता है, उनका कथन है कि युद्ध एक भयानक और एक भारी छिद्र उन्नति का है.

८ "राबर्ट पील" ने कहा था कि क्या समय नही आया कि यूरोप के राजे युद्ध के ठाठ को कम करदें, जो कि उन्होने इतना बढा रखा है? क्या वह समय नही आया जब कि यह राजे कह सकें कि इस प्रकार व्यर्थ धन खोने से क्या लाभ है? एक राजा जो जल स्थल की सेना बढाता जाता है. क्या वह नही देखता कि अन्य राजे मेरा अनुकरण करें गे? यूरोप की उन्नति का दिन तब आवेगा जब कि सारे राजे मिलकर अपने २ देशोंमें युद्ध के व्यय को कम करेंगे.

९ "अर्ल आफ एबर्डीन" का कथन है कि यह जन श्रुति "कि यदि तुम शांति चाहते हो तो युद्ध करो" सत्य नही है. यह बात पिछली जंगली जातियों पर घटती होगी, जब कि युद्ध करने पर कुछ व्यय ही लगता होगा. आज कल जबकि युद्ध की सामग्री के लिये बहुत व्यय चाहिये तो यह निष्फल

(4.) The Darkest England by General Booth.

(5) The Place of Politics in the Life of a Nation" by Annie Besant.

(6) What to do? By Count Leo Tolstoi.

है. युद्ध की सामग्री एकत्र करते ही शांति के स्थान में युद्ध आरम्भ होजाता है.

१० "जैनरल ग्राण्ट" का कथन है कि दो देशस्थ जातियों के मध्य में शांति मानो उनको उस समय तुष्ट न करे, परन्तु यह मनुष्य के आत्मा को शान्ति देती है. यद्यपि मैंने युद्ध शिक्षा पाई है, और संग्रामों में जा चुका हुं, मेरे विचार में इन सब लडाईयों में बिना तलवार चलाये के भी उद्देश पूर्ण हो सकता था. मैं उस समय को देख रहा हुं जब कि एक न्याय सभा जिसको मिलकर सब देशस्थ जातियों स्वीकार करें, जातियों के झगडे निवारण करनके लिये पुष्कल होगी, इसके स्थान में हम क्यों बड़ी २ सेनायें रखें.

७ "जान बराइट" निजके झगडों के निर्णय करनेके लिये थोडे वर्ष हुये, कि परस्पर लडनाही निर्णय का उपाय माना जाता था. आजकल वैसे ही विदेशीयों के लिये युद्ध आवश्यक समझे जाते हैं. मेरे विचार में वह समय आयेगा जब कि सर्व देशस्थ जातियों के मध्य में युद्ध वैसे ही दुष्ट और पागलों के काम समझे जायेंगे, जैसा कि अब दो पुरुषों के मध्यमें लडना समझा जा रहा है.

८ "लार्ड रोज बरी" सब प्रकार का युद्ध घृणित है. प्रत्येक युद्ध पर हमें शोक करना चाहिये, क्योंकि यह उस उन्नति को एक पग पीछे लेजाता है जिस उन्नति को कि हमने वर्षों के प्रयत्न और महा पुरुषों के यत्न द्वारा प्राप्त किया है.

९ "केनन फ्रीमेण्टल" युद्ध का वास्तविक कारण आत्मिक है न कि भौतिक, इस लिये उनकी निवृत्तिका उपाय वही हो सकता है जोकि दुष्टाचार के लिये होना चाहिये.

६ "प्रोफैसर सीली" यदि दो मनुष्यों ग्रामों, और नगरों के मध्यमें लडाई रोकी जा सकती है, तो दो देशस्थ जातियों के मध्यमें क्यों नही रोकी जा सकती ? इंगलेण्ड और स्काटलैण्ड बिल्ली और कुत्ते की तरह कई सौवर्ष लडते रहे और अब वह आपसमें एक हैं. जब हम यह सुना करते हैं कि अंग्रेज और फ्रांसीसी वा फ्रांसीसी और जर्मन कई सौ वर्ष पर्यन्त अपने विरुद्ध भाव न छोडेंगे तो हमको इङ्गलैण्ड और स्काटलैंड का दृष्टान्त याद कर लेना चाहिये.

"विकटर हियूगो" यदि हिंसा करना पाप है तो बहुत हिंसा करना कम पाप नहीं हो सकता. यदि चोरी करना लज्जा दायक है, तो किसी देश निवासियों को लूट लेना यशकी बात नही हो सकती, हिंसा हिंसा ही है. यदि कोई अपने आपको "सीज़र वा निपोलियन" कह ले तो इससे कुछ भेद नही होता. अनादि ईश्वर के सन्मुख एक हिंसक का आकार बदल नही सकता, चाहे फांसी दिये जाने वाले मनुष्य की टोपी के स्थान में राजकीय मुकुट ही शिर पर क्यों न रखले ? आज के लिये राजा हैं कल को लोग उनके स्थान में होंगे. वह दिन आयेगा जबकी "पैरस," लण्डन, पीटर्सबर्ग, बरलन, वाईना, और टीयूरन" नगरों के परस्पर युद्ध ऐसे ही असंभव दिखाई देंगे जैसा कि "रोएन और एमीन्ज" नगरों के हैं. जब कि गोलियां और गोलोंके स्थान में सम्मति ली जाएंगी. जबकि तोपें अद्भुतालयों में दिखाने के लिये रखी जायेंगी. जैसा कि आजकल पुराने समय के पीडा देने के शस्त्र रख गये हैं. जब कि "अमरिका" के मिले हुये देश यूरोप भर के सर्व देशों से प्रेम पूर्वक हाथ मिलायेंगे.

"डियूक आफ विलिंगटन" युद्ध अत्यन्त भयानक वस्तु है यदि तुमने लडाईका एक दिन देखा होता तो तुम प्रभुसे निवेदन करते कि हमें दुसरा दिन लडाई का न दिखा।

जरैमीबेनथम" जो देशस्थ जाति सबसे पूर्व अपने युद्ध सम्बंधी व्यय को घटाने और सेना की संख्या नियत करने में उत्साह दिखाएगी, सदैव काल की शोभा उसी जाति के लिये है.

"टालस्टाय" मैं विचार करता हुं कि शत वर्ष

पर्य्यन्त युद्ध होने रुक जायेंगे और लोग युद्ध वैसा ही याद करेंगे, जैसा कि आज कल हम पीडा देने का ध्यान करते हैं चकित होते हुये कि जिन्होने इसको चलाया था वह कैसे भद्दे थे.

अरथर हेलपस " जितना कोई देशस्थ जाति युद्ध करने को बुरा समझती है, उतनीही वह उन्नत है.

लामारटन "* युद्ध मनुष्य उन्नति को रोकता, नष्ट भ्रष्ट और शोभा रहित करता है. वह देशस्थ जातियें जो लहु में खेल रही हैं. वह पृथिवी की उन्नती को नष्ट करनेके हेतु बनरही हैं,अन्याय से हिंसा करना जैसा कि एक मनुष्य की दशा में पाप है वैसे ही एक देशस्थ जाति की दशा में समझना चाहिये

बैंजेमन फ्रेङ्कलन" न कभी यह हुआ और न होगा कि युद्ध अच्छा है और शांति बुरी.

डीमण्ड " की पुस्तक से सिद्ध होता हैं कि पिछले २५ वर्षों के मध्यमें २१ लाख ८८ सहस्र पुरुषोंकी (व्यर्थ) हिंसा हुई और इस हिंसा की सिद्धि के लिये पश्चिमी देशोंने २६ अरब ६५ क्रोड ३० लाख रुपये व्यय किये, यदि यह रुपैया भूगोल में बांटा जाता तो प्रत्येक मनुष्य को २० रुपैये मिलते इस लेख को विचारते हुये यदि कोई कहे कि २५ वर्ष के भीतर २५ लाख पुरुष इस उन्नति के समय में बध किये जाते हैं तो १०० वर्ष के भीतर एसी हिंसा की संख्या एक क्रोड ठैहरती है*

* इस प्रकार के लेख जो प्रत्येक नाम के आगे हैं वह उनके कथन का सार भावार्थ समझना चाहिये न कि अक्षरार्थ ॥

जिन पर ऐसा ‡ चिन्ह किया गया है; वह सब प्रमाण " जोनाथन डीमण्ड " की बनाई हुई पुस्तक से हैं.

All these are quoted from the " Principles of Morality " by Jonathan Dymond. r. r. 279—285.

" उक्त नामों को अंग्रेजी में भी लिख देते हैं

W E. Gladstone.	John Bright.
Sir Robert Peel.	Lord Rosebery.
Earl of Aberdeen	Canon Freemantle.
General Grant. (President of the U. S.)	Professor Seeley
	Victor Hugo.
Duke of Wellington.	Arthur Helps.
Jeremy Bentham.	Lamartine.
Count S. N. Tolstoi.	Benjamin Franklin.

*॥ १८५५ सन् ई० से लेकर १८८० तक २५ वर्ष होते हैं और इसकाल में निम्न लिखित युद्ध हुये जिनमें निम्न लिखित व्यय हुआ और उक्त संख्या मनुष्य हिंसा की हुई.

युद्धकानाम.	जो मारे गये वा घाव खाकर मरे	व्यय.
करीमियाकायुद्ध	७ लाख ५० सहस्र	३ अर्ब ४० करोड.
इटलीका युद्ध	४५ ,,	६० ,, रु.
शलिसविग	३ ,,	७ ,,
उत्तरी (अमरिका)	२ लाख ८० हजार	९ अर्ब ४० क्रोड रु.
दाक्षिण (अमेरिका)	५ ,, २० ,,	४ ,, ६० ,,
पराशिया आदि	४५ ,,	६० ,, ६०ला.

पाठ मात्रसे नही किन्तु पुरुषार्थ द्वारा दो काल तो क्या पल पल में सची प्रार्थना करते हैं. इसी की उपासना का प्रत्यक्ष फल हिंसा से सर्व विषयभोग सामग्री की प्राप्ति है, वर्तमान उन्नति एक मात्र अपने शिरपर भौतिक जड़ आदर्श धारण किये हुये मनुष्य मात्र को अपनी शरण आनेके लिये निमन्त्रण देर ही है.

प्राचीन समयकी वैदिक उन्नति इसके विपरीत थी, उस सची उन्नतिके राज्य में एक मात्र ईश्वर ही लोगों का आदर्श था. उस ईश्वर आदर्श ारी उन्नति के राज्य में ईश्वरीय स्तुति, प्रार्थना और उपासना के करने वाले ब्रह्म ऋषि ही सर्व उत्तम मान और पदवी को प्राप्त होते थे. उस समय जिसके पास जितना ईश्वरीय उपासना रुपी धन होता था, उतना ही वह मान को प्राप्त होता था, परोपकार, शुद्धाचार, आत्म बल उस समय पूजानिय थे. ईश्वरीय गुणोंका धारण अर्थात् धर्म्म उस उन्नति का आधार था, उस उन्नतिकी गोद में पले हुये ऋषि मुनि कोपीन धारी होते हुये भी मुकुट धारी राजाओंसे पूजे जातेथे. उस समयमें जनकादि राजे ऋषि चरणकी शरण लेतेथे. उस समय भौतिक पदार्थ आत्माके साधन और सेवक बनाय गये थे. नाना विध कला यन्त्र आत्मोन्नतिके सहाय कारी थे न कि बाधक. धनोपार्जन करना उस समय आदर्श धारण करना नथा. किन्तु आदर्श रुपी सच्चिदानन्द की प्राप्तिका साधन था. साध्य एक मात्र ईश्वर और शेष सब साधनवत् थे, ब्रह्म धन का स्वामी ब्राह्मण, चक्रवर्ति क्षत्रीय से अधिक माननीय था. थोडाही काल हुआ है कि एक आत्म बलधारी दण्डी सन्यासी ने सिकन्दर से भौतिक उपासक के आत्माको पराजय किया था. आजकल तो लोगोंको मर्ण पर्यन्त धन बटोरनेके विना और कोई काम नही सूझता, परन्तु उस समय संसारिक तुच्छधनकी चिंतासे रहित होकर आयुका उर्द्ध भाग वह वानप्रस्थ और सन्यास के निमित्त अर्पण करते थे. उस समय मनुष्य को भूख का भय न था. प्राणीमात्र दुःखों से रहित आनन्द की जै २ गाता था. वही समय था जब कि बलवान निर्बलों की रक्षा, न कि हिंसा करते थे. उसी उन्नति के आदि में स्वस्ति और अन्तमें शांति दृष्टि पडती थी, उसके माथे पर:—

"मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे" स्वर्णमयी अक्षरोंमें शोभादे रहाथा. उसी समय प्रत्येक मनुष्य को सांयं और प्रातः यह प्रतिज्ञा धारण करनी पडतीथी "योऽस्मान द्वेष्टियंवयं द्विष्मस्तंवो जम्भे दध्मः" उसी समय दोकाल ब्रह्मयज्ञ अथवा सन्ध्या न करनेवाला, मनुमहाराजकी आज्ञानुसार द्विज पदवीसे पृथक् किया जाताथा. परमात्माके प्रेम प्रवाहसे नित्य प्रेम बलधारण करते हये वह कभी किसी मनुष्यसे घृणा वा ईर्षा द्वेष नही करतेथे.

दुर्भिक्षकी आपत्तिमें प्रेमादि आत्मिक गुणोंको लोग भूल जाया करते हैं. माताओं तक तो कोमल बच्चोंको स्तन नही देती, भाई, भाईसे वैर करता है, पत्नि पतिको तिलांजली देती है, पति पत्निको जूतियां लगाता है. दुर्भिक्ष कालमें एक, दुसरेकी रोटी छीनना ही कर्तव्य जानता है. क्या यह अवस्था सचमुच पश्चिमी भौतिक उन्नति की नही होरही? क्या भौतिक उन्नतिके पूजारी एक दूसरेके भोजन ग्रासको नही नोंच रहे? क्या पश्चिमी देशोंमें मातायें दयासे शून्य नही हो गई? क्या भाई भाईका शिकार (आखेट) नही खेल रहा?

क्या इस समय धर्म अथवा ईश्वर उपासनाकी अनावृष्टिसे आत्मिक दुर्भिक्ष काल नही होरहा? आवश्यक्ता है कि इस दुर्भिक्ष अवस्थाको दुर करनेवाली ब्रह्मयज्ञ रुपी वर्षा दग्ध भूगोल को शांत करे. दुर्भिक्षके स्वरुप वाली वर्तमान उन्नतिको एक मात्र ब्रह्मयज्ञ ही दूर कर सकता है, इस ब्रह्मोपासना रुपी वर्षाके अभाव से ही पृथिवी वैर अग्नीसे जलकर, जलाने वाली श्मशान भूमी बन रही है,कोई उपाय विना ब्रह्मयज्ञके इस पृथिवीको स्वर्ग धाम बनानेका नही है, रक्तनद बहाने वाले, रक्तकी दुर्गन्धीसे अब घृणित होरहे हैं.

पश्चिमी देशोंमे अनुभव कर लिया कि मनुष्य हिंसा का मूल कारण आत्मिक है न कि भौतिक. भौतिक शस्त्र मनुष्य हिंसाके मूल कारण दुष्ट इच्छाको रोक नही सकों, भौतिक पदार्थ क्यों कर चैतन आत्माकी इच्छाको रोक सके ? तलवारें हमारे मनको कैसे जीत सकें. शस्त्र शिर के काटते हुये मन को वेध न करने के समर्थ नही हैं, मनुष्य हिंसा की मूल कारण दुष्ट इच्छा की वैर रुपी अग्नि, केवल ईश्वरोपसनाके शांत जल से ही बुझ सकती है. भौतिक पदार्थ, भौक्तिक पदार्थों की काया पलटा सकते हैं, आग लोहे को अग्निवत बना सकती है, आग जल को उष्णता दे सकती है. परन्तु कोईभी भौतिक पदार्थ चैतन आत्माकी काया नही पलटा सकता. जल आत्माके साधन शरीरको शांत करता हुआ आत्माको शांत करनेके सामर्थ नही है, अग्नि निराश आत्मा में उत्साह नही दे सकती. आत्मा की आत्माही काया पलटा सकता है. एक क्रोधित आत्मा, दुसरे जीवात्माको क्रोधाग्निसे युक्त कर सकता है. एक योगी पुरुषका शांतात्मा एक भोगी पुरुषके क्रूरात्मामें शांति प्रवेश कर सकता है. जब यह बात है तो क्या मनुष्यका अल्पज्ञ दुष्ट इच्छाके धारण करनेवाला आत्मा सच्चिदानन्द स्वरुप परमात्माके योगसे शुद्ध और निर्मल नही हो सकता ? परमात्माके योगसे आत्माकी काया पलट जाती है. इसकी मनुष्य हिंसा करने और भाईयोंके भोजनग्रास छीनने वाली रक्त नद वहाने और भौतिक शस्त्रोंसे न रुकने वाली दुष्ट इच्छा ईश्वरीय इच्छा के योगसे "शिव सकंल्प" रुपमें बदल जाती है. काटने वाला लोहा, बिजली के योगसे प्रेम रुपी आकर्षणसे युक्त हो जाता है. प्राणीयोंके दलन करने वाल मन ईश्वरोपसनासे प्रेममय होकर कल्याणकारी हो जाता है. ब्रह्मयज्ञके करने वाला परोपकार रुपी सुगन्धीको धारण करता हुआ फूलके सदृश उसको जगत में फैलाता है.

भौतिक उपासक प्राणियोंको प्राणोंसे रहित करना अवश्यक समझता था, इसके विपरीत ब्रह्मोपासक अग्निहोत्रादि देवयज्ञ प्राणियोंके प्राणों की रक्षा करनेके लिये नित्य रचता है, वह प्राणियोंके सुखके साधन जल वायुको शुद्ध करता हुआ उनकी रक्षाका निमित्त बनता है. वह विष्टाकी विषको हटानेके लिये सुगन्धित पदार्थ हवनकुण्डमें डालता है. वह हवन कोटरीमें किवाड वन्द करके नही किन्तु खुले स्थानमें करता हुआ प्राणिमात्रको उससे लाभ पहुंचाना चाहता है.

ब्रह्मोपासक देव ऋषि और मातापितादि पित्रयोंकी सेवाके लिये पित्रयज्ञ आरम्भ करता है. नानाविध उत्तम भोजन द्वारा वह सत्यवादी ब्राह्मण देवकी तथा विद्या पढानेवाले ऋषिमहात्माकी पूर्ण तृप्ति करता है. अपने पिता पितामहा आदि विद्यमान पित्ररोंकी वह श्राद्ध और तर्पण द्वारा सेवा करता हुआ अपने शिरसे पित्रऋण उतार कर कृतकृत्य होता है.

ब्राह्मण ऋषि तथा मातापितादिकी सेवा करते हुये ब्रह्मोपासी अपने भोजन भण्डारसे कुत्तेआदि प्राणियों तक तो अन्नदान करता है. आज कलकी भांति वह उनको विषकी गोलियां देकर मारना नही चाहता, किन्तु उनकी रक्षा करता है. ईश्वर आदर्शधारी उन्नतिके राज्यमें कोईभी किसी निर्धन मनुष्य अथवा रोगीको भूखसे पीडत नही देखसकता. निर्धन वा रोगीकी रक्षा करने के लिये ब्रह्मोपासक भूत यज्ञ रचता है. प्राणी मात्रकी रक्षा करने वालेके घरसे काक, कृमि, आदिभी भोजनको प्राप्त होते हैं.

इसप्रकार प्राणीमात्रको भूखके भयसे रहित करते हुये ब्रह्मोपासक सूर्यवत् विद्या और धर्मके प्रकाश करनेवाले सन्यासी; अतिथीकी सेवाके लिये नृयज्ञ रचता है. वह जानता है कि संसारसे हिंसा पापके हटानेवाले सत्योपदेश हैं न कि भौतिक शस्त्र. वह पृथिवीको स्वर्गधाम बनाने वाले उपदेशकों की सेवा अपनी शिव संकल्प की मूर्तिका साधन मानता है. उसके जीवन शास्त्रमें हिंसा नही, किन्तु रक्षा, ईर्षा नही किन्तु प्रेम, घृणा नही किन्तु सेवा विद्यमान है.

वह सच्ची उन्नति जो इस प्रकार मनुष्यों को सुख सिद्धि कराती थी, आज ब्रह्म यज्ञके अभावसे नष्ट होगई है. इस उन्नतिका राज्य प्राचीन समय में आर्यावर्त में ही न था किन्तु ईरान, चीन, मिश्र, युनान हरिवर्ष, पातालादि देशों अर्थात सर्वत्र भूगोल पर करोडों वर्ष पर्यन्त निस्सन्देह रह चुका है.

आर्योन्नति (भार्तोन्नति) का आधार केवल ब्रह्मपरही था. यदि हम चाहते हैं कि यह पृथिवी जो कि प्राचीन समय में स्वर्ग धाम थी पुन: स्वर्ग बन जाये तो हमे ब्रह्मोपासना के बीज को हृदय स्थल में बोनेका पूर्ण पुरुषार्थ करना चाहिये. भूगोल पर ब्रह्मका सच्चा आदर्श पुन: स्थापि करने के लिये आओ हम पुरुषार्थ करने की मन से प्रतिज्ञा करें.सज्जनजनो पुरुषार्थ से उस समयको प्रत्यक्ष कर दिखाओ जिसमें कि श्री रामसे सपूत धर्म्म पालने के लिये जड पदार्थों को लात मारते थे. जिस समय कि विश्वामित्र से वीर क्षत्रत धर्म को तुच्छ समझते हुये ब्राह्मण बनना चाहते थे. जब कि भूगोल को एक देश, मनुष्य मात्रको एक जाती मानते हुये भूगोल के सर्वस्थनोंमें ब्रह्मका राज्य स्थापित करनेके लिये उपदेश ब्रह्म लिये हुये आत्मिक विजय पाते थे. जिस समय कि ऋषि मुनि वेद के एक २ मंत्रको जीवन में सिद्ध करते हुये मृत्यु त्रासले रहित हो जीवन मुक्त कह लाते थे, जबकि अरबामि (बारुत) पहाडोंमें सन्यासियोंसे आत्मिक योद्धाओंके लिये रासते बनानेका काम करती थी. जबकि वैर अग्निको ईश्वर प्रेमसे नित्य शांत किया जाता था. जिस समय के ही शेष प्रभावकी * "मैगसथिनीज़" से यात्री साक्षी दे रहे हैं. जबकि भूगोल पर लोग विमान द्वारा यात्रा करतेथे, जब कि अर्जुन से वीर अश्वत्री नौका पर पाताल जाते थे.

जब कि सांसारिक उन्नति एक मात्र ब्रह्मकी आज्ञा पालनके निमित्त थी. उस समय. हां उस स्वर्ग के सच्चे राज्यको लाने के लिये एक मात्र ब्रह्मका सच्चा आदर्श भूली भटकी जली भुनी दुखों से पीडित भूगोल पर पुन: स्थापित करते हुये सत्योपदेश से ब्रह्मनाद वजाते और जड उपासकोंको जगाते हुये सर्वोत्तम ब्रह्मयज्ञ को रचकर आत्मा समर्पण रुपी आहुती उसमें डालकर दिखादो. (शेष आगे.)

"The Future of the Arya Samaj" By Shriman Pandit, Munshi, Ramji, President, Arya Pratinidhi Sabha PUnjab.

* Megasthenes.

योगी और यज्ञासु (गतांक से आगे)

दिवस सूर्य्य उदय होगा, एसा तुम कहो तो, यह तुमने उस समय सूर्य्य उदय हुआ प्रत्यक्ष देखके कहा नही ? परन्तु आगे सिद्ध हुये कार्यपर से कहा है. इसी कारण से प्रथम चक्षु से देखे उपरांत सब कार्य्य होते नही. जैसे इस स्थान में जो सुन्दर चित्र बने हुय हैं, इन का कर्ता हमने देखा नही, इससे ऐसा कहें कि इनका कर्ता कोई नही, तो क्या मूर्ख न ठहरेंगे ! इस लिये हे जिज्ञासु ? कार्य्य उपर से ही कर्ता का निश्चय हो सक्ता है.

जिज्ञासु—हे गुरुदेव ? आपका ज्ञान तो सर्वोपर है. परन्तु आपके प्रमाण उपर से ऐसी शंका होती है, कि वे "स्वयंपाक किये पीछे भोजन हुआ देखा है. वैसेही सूर्य गये दिवस उदय हुआ वे भी प्रत्यक्ष दृष्टि से देखा है. इस पर से यह आते काल के दिवस भी उदय होगा, एसा भविष्य कहते हैं,

योगीराज—हे जिज्ञासु ! हम लोग प्रथम भूत काल के प्रमाण देखके वर्तमान और भविष्य काल के प्रमाणका निश्चय करते हैं सो ठीक है ? परन्तु यदि दीर्घ दृष्टि से देखोगे तो वे सर्व प्रमाण सदैव सत्य ठहरते नही. जैसे किसी मनुष्यको कमल रोग होने से उसे सर्व वस्तु पीली ही पीली दृष्टि पडती हैं. परन्तु सर्व वस्तु पीली नही होती हैं. और यह कोई सत्य भी नहीं मानता, इससे दृष्टि और चक्षु

से देखा हुआ सवी सर्वकाल सत्य नही होता है, कारण कि जैसे स्वपन में रात्री के ठिकाने दिवस देखता है, और उस समय सूर्य्यका प्रकाश भी देखता है (तो भी वह असत्य है ?) फिर स्वयं निर्धन होने परभी अतुल्य द्रव्य देखता है. इसी भांति स्वपन में नाना प्रकारके वाहन इत्यादि उपर चडता बैठता है, तथा अनेक जात के भोग भोगता है, किंवा कष्ट सहन करता है, किन्तु यह सवी जाग्रत हुये पर मिथ्या ठहरते हैं. और भ्रांति मात्र जनाते हैं. इसी भांति सदा सर्वदा प्रत्यक्ष देखे हुये कारण सत्य ठहरते नही हैं, परन्तु कार्य का साधन जो कार्ण वह जो सत्य होये तो ही उसका कार्य्य भी सत्य है, एसा जानना. इस सिवाय उपर कहे हुये कमल रोग वाले पुरुष, तथा निद्रावश हुये २ पुरुष जो कुछ कहें वह सत्य नही होता, इसी रीति से यदि कोई अल्प ज्ञानी मिथ्या प्रत्यक्ष प्रमाण उपर से साकार ईश्वर जैसी अमूल्य वस्तु सिद्ध करने का प्रयत्न करे, परन्तु वह विद्वान और ज्ञानी पुरुषों के आगे कोई काल सत्य ठहर नहीं सकती. परन्तु कितनी एक एसी भी सत्य वस्तु हैं जो चक्षु इन्द्रिय द्वारा देखाती नही, किन्तु केवल वह ज्ञान से ही पहचानी जाती हैं. जैसे वायु और शब्द जोकि दृष्टि से दिखला नही सकते, पर तोभी इन्हे विद्वान वा अविद्वान और बालक प्रयंत कोई असत्य मानते नही. इसलिये सत्य और प्रत्यक्ष प्रमाण वाली वस्तु सदा सत्य ही ठहरती हैं.

जिज्ञासु—महाराज आपके इस कथन पर से मुझे ऐसा जानने में आता है, कि इस ब्रह्मांडमें सर्व वस्तुओं का मूल कारण रूप एक शब्द ब्रह्म, अथवा परमात्मा, किंवा ईश्वर की सिद्धि को, इस सृष्टि में जो सत्य अद्भुत कार्य्य हैं, इनके प्रत्यक्ष परमाण उपर से आप करना चाहते हैं. परन्तु इस ब्रह्मांड में जितनी वस्तुयें दिखलाई पडती हैं यह सवी महा भूतादिक जो तत्व हैं उनका एक दूसरे के साथ में समयानुसार मिश्र होने से उत्पन्न हुई २ जनाती हैं. पर इनका कोई करता होगा, ऐसा विदित नही होता. इस पर से मनुष्य और पशु पक्षी आदिक भी, महा भूतों के मिश्र होने से ही स्वयं उत्पन्न हुये २ होने चाहिये. इस लिये जहां तक महा तत्वों का कोई कर्ता सिद्ध नही होता तहां सुधी सृष्टि के करता तत्व ही हैं.

योगीराज—हे जिज्ञासु ! तुम विद्वान, बुद्धिमान और सत्य शोधक हो ? इस लिये यदि तुम तनिक भी विचार करोगे तो तुम्हारे लक्ष में आजायेगा. अब लक्ष रखना ? देखो तुम्हारे ही कथनानुसार सर्व ब्रह्मांड और उसमें उत्पन्न हुई २ सर्व वस्तुओं का कर्ता महा भूतादिक तत्व हैं, इसलिये यह अनादि होने चाहिये. अब विचार करो कि इन महा तत्वों का मूल परमाणु एक शुद्ध चैतन्य मिश्रत वह प्रकृति अथवा जड वस्तुओंका तत्विक परमाणु की गती किंवा चलाने वाला एक शुद्ध चैतन्य है. इस लिये सर्व वस्तु प्रकृति और जड चैतन्य के मिश्रित से अपने २ कार्य किया करती है. इससे शुद्ध चैतन्य रूपी एक मूल वस्तु तुम्हारे कथनानुसार भी अनादि होनी चाहिये. इसलिये वह मूल चैतन्य तेज कलातीत, सच्चिदानन्द, घन, अनंत, परात्परा अथवा परमात्मा एसा अल्प प्रयास से सिद्ध हुआ.

जिज्ञासु—महाराज ! सर्व जड वस्तुओं की गती अथवा चलाने वाली एक जात की शक्ति अथवा गती हैं, इससे सर्व हिलती चलती हैं. (शेष फिर.)

श्री धर्म्मामृत.

समय पर क्यों नही निकलता ?

प्रिय पाठक गण ! इस पत्रके जन्म लेने का मुख्य कारण तो आपने इस वर्ष के चौथे अंक में पढा ही होगा. अब रहा यह कि समयपर क्यों नही निकलता, इसी कोताई के कारण कुछ दिवस से इसका सर्व भार हमने अपने उपर लेलिया था. पर आप जानते

है कि " स्वार्थी दोषो न पश्यती." यद्यपि हम को तो इस पत्र से किसी प्रकार का स्वार्थ नहीं है, जैसे हम प्रथम धर्म व देशहित के लिये इसका अवैतनिक काम करते थे वैसे ही अबभी करत हैं,और वे जानते भी हैं कि ईर्षा करनी व्यर्थ है. परन्तु यूनान के प्रसिद्ध विद्वान सुक्रात हकीम का यह वचन है कि " यह बात दैवी देखी जाती है कि मनुष्य चाहे कितना ही विद्वान और सज्जन क्यों न हो दो चार ईर्षा करने वाले अवश्य हो जाते हैं. " हाँ ! हम ने तो इस का भार लेते समय ही यह निश्चय कर के लिया था कि"कार्य्यं साधयामि या शरीरं पातयामि. " हां इतना तो है कि यह पत्र अब मुझ सरीखे निर्धन गोसेवक साधु द्वार-मुद्रित होने लगा है कि जो प्रति दिन भिक्षा से ही अपना उदर पोषण करता है, यहां धनका कहां ठिकान ! अब तो केवल आप ही सज्जनों की देशहितैषिता के अधारपर इस पत्र का जीवन निर्भर है. हम तो उर्द्ध लिखत वचनानुसार सेवाही कर सकते हैं.

भारत भाईयों का शुभ चिंतक.

गो. पं. जगत नारायण शर्मा

निवेदन.

श्री धर्म्मामृत के पिछले वर्ष के भी सर्व अंक पुनः छपकर तैयार हो गये हैं. जिन महाशयों के पास से कोई अंक खो गया हो, अथवा हमारी भूल से न पहुंचा हो, वह कृपा कर के मंगा लें. और यदि नवीन ग्राहक महाशय पिछले सर्व अंकों के देखने की अभिलाषा रखते हों तो वह १।) मय पोस्टेज भेजकर प्राप्त कर सकते हैं.

गो. पं. जगत नारायण शर्मा.

मुरादाबाद निवासी श्रीयुत पंडित बनमाली शंकर रचित.

अंगरेज–वीर भारत लावनी.

है ट्रान्स वाल अब कुरु क्षेत्र कुस्तानी ॥
अंगरेज तेज संग वीर घोर जंग ठानी॥ टेक
महाभारत को हुये वर्ष पांच हजारी ।
कौरव पांडव में हुआ युद्ध अति भारी ॥
वह था हिन्दोस्थानी भारत भय कारी ।
पुनि हुआ मुसलमानी भारत इक बारी ॥
लडे पानी पत में लोधी मुगल अभिमानी
॥ १ ॥ अंगरेज तेज०

अब ट्रान्सवाल का हाल सुनो मन लाई ।
दक्षिण आफ्रीका में जहां होत लडाई ॥
लडा है ब्रिटिश मृगराज वीर गजराई ।
नाना प्रकार से इत उत फौज सजाई ॥
कौरव पांडव की उपमा है अनुमानी
॥ २ ॥ अंग्रेज तेज०

धृतराष्ट्र तुल्य है क्रूगर अति मति हीना ।
दुर्योधन सम है जुबरट कपट प्रवीना ॥
है इलाल्क वगैर द्रोण भीष्म छीना ।
फौजी है कर्ण दल बल सबके आधीना ॥
हैं इधर वीर रणधीर ब्रिटिश बल-
खानी ॥ ३ ॥ अंगरेज तेज०

हैं लाट मेथयन अर्जुन सम बल धारी ।

सात्यकि सम जनरल खूल पराक्रम भारी॥
अभिमन्यु तुल्य साईमन्स वीर वंशारी॥
फ्रेंरी, व्हाईट, सहदेव नकुल रिपु हारी॥
हैं बुलर, गदाकर भीम युधिष्टिर ज्ञानी
॥ ४ ॥ अंगरेजते०

श्री कृष्ण शक्ति रूपिणि विक्टोरिय माई।
उनकी पालित लालित अंग्रेज रजाई॥
क्या हुआ जो अब तक हुई हानि
अधिकाई।
पर विजय पायंगे ब्रिटिश वीर समुदाई॥
वन माली शंकर कहे जीतें महा-
रानी॥ ५॥ अंगरेजते०

होली के दिवस.

(होरी. काफी—ताल दीपचंदी.)

कृष्ण कैसी होरी मचाई,
अचरज लखियो न जाई;
असत सत कर दिखलाई.
रे कृष्ण कैसी. (टेक)
एक समय श्री कृष्ण देवके,
होरी खेलन मन आई,
एकसें होरी मचे नहि कबहुं,
यातें करूं बहुताई;
याहि प्रभु ने ठहराई.
रे कृष्ण कैसी० १
पांच भूत की धातु मिलाकर,
अंड पचकारी बनाई,
चौद भुवन रंग भीतर भरकर,
नाना रूप धराई;
प्रकट भये कृष्ण कन्हाई.
रे कृष्ण कैसी० २
पांच विषयकी गुलाल बनाकर,
बीच ब्रह्मांड उड़ाई,
जिस जिस नैन गुलाल पडी वह,
सुध बुध सब विसराई;
नही सुझत अपनाई.
रे कृष्ण कैसी० ३
वेद अंत अंजन की सिलाका,
जिसने नैन में पाई,
ब्रह्मानंद तिस को तम नास्यो,
सूझ पडी अपनाई,
होरी कुछ बनी न बनाई.
रे कृष्ण कैसी० ४

(होरी. ताल. उपरी.)

शाम कैसी खेलत होरी होरी,
अचरज खूब बनोरी,
कोई जन भेद लहोरी.
शाम कैसी० (टेक)
तन रंग भूमि बनी अति सुंदर,
बाल न बागल गोरी,
नाडी अनेक गली जहां शोभित,
खेले तहां सांवरो री,
संग रूप भान किशोरी.

---

१ आत्मा. २ बुद्धि.

शाम कैसी० १
पांचं सखीं मिल पांच रंग भर,
देत वहोर वहोरी;
राधिका लेकर डारे शाम पर,
सब तन दीन भिगोरी,
शाम मन मोद भयोरी.
शाम कैसी० २
होरी में मोद मानकर शामने,
राधिका वेष धरोरी,
मिल सखियन संग फाग मचायो,
खेलत मगन भयोरी;
आप सुध भूल गयो री.
शाम कैसी० ३
खेलत खेलत जान न पायो,
दीर्घ काल गयोरी,
वनें वन फिरत मिले जब सत गुरु,
सखियन संग विछोरी;
शाम ब्रह्मांनंद मिलोरी.
शाम कैसी० ४
(राग ताल उपरवत्.)
आयो वसंत सखीरी,
मिल खेलिये होरी (टेक)
घरके भूल गई गृह काजन,
मन में ताप रहोरी,
जिन जिन खेली होरी शाम से,
तिन वड भाग भयोरी, मिल० १
तज सब काज आज घरके रे,
लाज को दूर धरोरी,
फागुन के दिन बीत जात हैं,
फिर पीछे पछतोरी, मिल० २
सत संगति वृन्दावन जाकर,
शाम को खोज करो री.
मिल विचार जुगति से घेरो,
जान न पावे वहोरी, मिल० ३
मन पचकारी पकड़ कर सुंदर,
ध्यान को रंग भरोरी,
प्रेम गुलाल मलो मुख उपर,
ब्रह्मानन्द रस लोरी, मिल० ४
(विरवा. ताल. दीपचंदी.)
सखी मिल खेलो शाम संग होरी,
आयो वसंत समोरी. (टेक)
मिल व्रजनारी चली वृन्दावन,
मारग चूक गयोरी,
इत उत ढूंडत सोच करत मन,
मिलत नहि सांवरो री, सखी० १
ढूंड़त ढूंड़त दुखित भई जब,
नारद आन मिलो री;
काहे सोच करत हो बवरी,
या दिशि शाम गयो री. सखी० २
देखत देखत जात डगर में,
मोहन पाय गयो री.

१ पांच इन्द्रियां. २ पांच विषय. ३ योगी पुरुषों में. ४ मनुष्य देह.

१ सद्गुरु. २ मूर्ख. ३ रस्ता.

लपट झपट कर चारी तरफ से,
मिलकर जा पकडोरी. सखी० ३
कोई गुलाल मलत मुख ऊपर,
कोई देत रंग बोरी;
कोई लपट कटिको पट खैंचत,
ब्रह्मानन्द बरसो री, सखी० ४

(वसंत.)

खलो खलो रे जन ऐसी वसंत,
जातें भव सागर को आवे अंत. (टेक)
मात पिता सुत कुटुंब नार,
तामें स्नेह लगाय क्युं होत ख्वारे;
अंत में कोई ना वे अवें काम,
तातें भज मन सदगुरु आठ जाम.खे.१
संत समाज सो सरस बाग,
जामें कुबुद्धि कवरी नाहीं लाग;
निगम वचन बहु फूले फूल,
वामें 'तत्वमसि' गंध आते अमूल.खे० २
जांहां ब्रह्म निरुपण नित्य होई,
ताकुं बाध न लागत अन्य कोई,
रे ता मध बैठ तुं कर ले चेन,
मन दूर करी सब विषय फेन. खे० ३
शुद्ध सत्य गुण वस्तू धार,
तम रज कृत मल दूर डार;
ज्ञान गुलाल चडाव अंग,
जा को कब हूं न उतेरे रंग. खेलो०४
में ब्रह्म ए दृढ रोप आम,
मन जानि झुठ सब रूप नाम;
अस्ति भांति प्रिय सकल धार,
सत देव कृष्ण एहि समज सार. खे०५

भारत पै आरत.

(गतांक से आगे.)

प्रकरण चौथा.

शाहाबुद्दीन, महाराजा पृथ्विराज के बंदीग्रह से छुटकारा पाकर गजनी को चला तो गया, पर चित्त भारत वर्ष से न गया अर्थत् रात दिवस भारत लेने के ही सोच में लगा रहता. एक दिन इसके मन में आया कि यदि नाना जान सहायता दें तो निश्चय भारत हाथ में लग जाये. कारण कि वह उत्तम रीती से जासूस (गुप्तचर) का कार्य्य करने वाले हैं. एसा सोच कर बलख नगर में आपने नाना जानके पास गया. और उनसे निवेदन किया कि आपको याद होगा कि जब आप मेरी शादी की खुशी में शामिल होने के लिये तशरीफ लाये थे. उस वक्त मैंने आप से पूछा था कि "आप इस दुनियां की खुशी में शामिल होने के लिये तशरीफ लाये हैं; या दीन की खुशी के लिये" उस वक्त आपने जवाब दिया था कि "दोनों के लिये," अब वह समय आगया है. अगर इस समय आप दुनिया की खुशी को लात कर, दीन की खुशी में मद दीजियेगा, तो दुनियां में अपना नाम रोशन कीजियेगा. और आप अब जईफ (बुढे) भी हो गये हैं अब तो दीन की खुशीयां मनाना आपका फर्ज है. आपने बजुर्ग होने से जमाना देखा है. इस लिये बंदा अर्ज करता हैं कि जैसा आप जासूस का काम कर सके गें, एसा और से हर्गिज न हो सकेगा. आप हमारे और दीन इसलाम के पक्के हम दर्दी हैं. इस लिये बंदे ने यह अर्ज की है. अगर आप मेरी अर्ज कबूल करें गे, तो बंदा आप का उमर भर फरमान् बरदार रहे गा. और सारी दुनिया से आप की कदम बोसी कराये गा. चाहे जिस अजमेर शहर की जमीन उपर हजारों दीनदारों का खून बहा है.

उसको फतेह कर के आप के,मरने के बादभी आपका नाम दुनिया में रोशन रहे, ऐसी खांन गाह बनवाऊं गा. इस्से आप हिन्द में जाईये और काफर राजाओं की आपस में ऐसी खटपट कराईये कि जिस्से उनका आपस में मेल न रहे. ऐसा करने से झटपट हिन्द अपने हाथ में आजाये गा.आप यहतो जानते ही हैं कि गुजरात के राजा भीमदेव, और कन्नोजके जयचंद को पृथिराज से पुरानी दुशमनी चली आती है इनको और भडकाये रहना.सबब? अगर यह तीनो एक हो जायें गे तो फिर हिन्द का हाथ में आना बडा दुशवार (कठन) हो जायगा. आप को मैं क्या समझाऊं आप तो सब कुछ जानते ही हैं.

खवाजा ने जवाब दिया "इनशा अल्ला तआला", हम दीनकी खुशी के लिये तैयार हैं. इतना कह कुछ अपने नोकरों को संग ले फकीर बन कर भारत की ओर रवांना हुआ, और दिल्ली इत्यादि रियास्तों में घूमता फिरता अजमेर में पहुंच अन्ना सागर पर डेरा लगा दिया. अर्थात तालाब के किनारे पर गज चर्म का आसन बिछा उस पर बैठ, हाथ में तसबी लेकर कलमा पढने लगा. उस समय कुछ पनिहारन पानी भर रहीं थीं इस को बैठे देख कर आपस में कहने लगी. देखो यह और मुसलमान साधू आया है, ईश्वर दया रखे कहीं फिर उपद्रव न उठे.

दूसरी—वह उपद्रव तो पहले साधू की ऊंगलियां काटने से हुआ था.

तीसरी—तो उसकी लुचाई से न ऊंगलियां काटी गई थीं.

चौथी—हां! हां! उसकी लुचाई से ही काटी गई थीं, पर अंतमें कैसी दशा आगई थी. कहीं वह जीत जाते तो हम लोगों की कैसी भयानक दशा होती.

पांचवी—हां! बेहन—मैंने सुना है कि यवन स्त्री जाती की बडी कुदशा करते हैं.

पहिली—तबही तो सत्या नाश भी हो जाते हैं.

दुसरी—मैंने सुना है कि पहले एक यवन राजा तेरां तेरां बार आपने देश पर चढ आया था और वह बहुत सी स्त्री बच्चों को बांध कर अपने देश में ले गया था.

तीसरी—धन और स्त्रीयों की लालच से ही तो यह मोये घडी २ आते हैं.

चौथी—पर हमारे बडे महाराज सोमेश्वर देवजी ने भी कैसे इन मोयों के दांत खट्टे किये थे. उनके स्वर्ग होने से मोय अब फिर आने लगे हैं.

पांचवी—यदि हमारे देश के सर्व राजों में सम्प होवे तो यह क्यों आयें.

पहिली—हां! ठीक है बेहन—पर अब नही मालू यह मोआ क्यों यहां आया है.

दूसरी—कोई उपद्रव ही करने आय होगा.

तीसरी—देख तो मोआ कैसा बगुला भक्त बन के बैठा है.

चौथी—इस को समझा कर यहां से उठा देना चाहिये नही तो महाराज को पत्ता लगने से वह इस को कुछ दण्ड दिये न छोडें गे. और यह भी कहीं पहले ऊंगलीयां कटानें वाले की भांति फिर यवनों को चढा कर न ले आये.

पांचवी—तू तो बडी डर पोक है, आयें गे तो फिर मोये मार खाकर भाग जायें गे.

एक बुढी—छोकडियों तुम अपने २ घर को जाओ ना. इन मोयों की तो शामत आई है जो यहां घडी२ आते हैं. इतना कह कर फिर खवाजा के पास जाकर बोली "साई यहां से कहीं और स्थान पर चले जाओ, कारण कि तुम्हारे जैसा पहले भी एक साई यहां आया था उसकी यहां के राज्य मंत्री ने ऊंगलियां कटवा कर निकाल दिया था. कहीं तुम्हारी भी एसी दशा न हो. इस लिये मैं कहती हुं कि आप यहां से चले जाओ.

खावाजा—ने कुछ उत्तर नहीं दिया इस्से बुढिया नगर को चली गई. स्त्री जाती के कोई

बात मन में नही समा सकती है. अपने२ घर में चर्चा करने से सारे नगर में चर्चा फैल गई. जब यह चर्चा महाराज पृथ्विराज के कान तक पहुंची तो उन्हो ने तुरंत ही चंद कवि को खाजा के मेदल ने के लिये आज्ञा दी. कवि चन्द महाराज की आज्ञा के पाते ही अन्ना सागर पर गया. और वहां फकीर को बैठे देखकर मन में विचार किया कि इसको यहां से बलातकार से उठाना ठीक नही. पन्तु किसी *युक्ति से उठा देना चाहिये. एसा विचार कर के फकीर के पास जा बडी नम्रता से बोला.

* ख्वाजा तू दूजा खुदाई.
जुग जीयो ख्वाजा सांई.

इस वखान से सांई को रिझा लिया "खुशामद तो खुदा को भी प्यारी है, फिर मनुष्य को क्यों न प्यारी लगे" सांई जी चन्द के वखान से पानी २ हो गये, और बडे सन्मान से चन्द के पास बैठ कर पूछने लगे. भाई तुम कौन हो. (शेष आगे.)

सांप्रत स्थिति नुसार सुख संकल्प !

(गतांक से आगे)

भाई ! यदि भारत अदोगति को चला जारहा है तो इसकी प्रारब्ध में ऐसा ही लिखा होगा इस में हम क्या करसक्ते है कारण कि अपनी २ प्रारब्ध का भोग तो बडे २ महान् पुरुषों को भी भोगना पडत है देखो लिखा है कि:—

अवश्यं भावि भावानां प्रति कारो भवेद्यदि ।
तदा दुःखैर्नलिप्येरन्नल राम युधिष्ठिराः ॥

अर्थात्—अवश्य होने वाले भावी पदार्थों का यदि दूरकार हो सके तो नलराम और युधिष्ठिरादि विविध दुःख न उठाते, इस्से हमे तो पूर्ण विश्वास है कि:—

प्राप्तव्यमर्थं लभते मनुष्यो देवोऽपितल्लंघयितुं न शक्तः तस्मान्न शोचामिन विस्मयो मे यद स्मदीयं नहि तत्परेषाम् ॥

अर्थात्—प्राप्त होने योग्य वस्तु पुरुष को स्वयं ही प्राप्त हो जाती है, उसके निवारण में देव की शक्ति नही है. इस लिये. हमे तो न इस में कुछ सोच होता है और न ही कुछ आश्चर्य प्रतित होता है, कारण कि हमे तो यह पूर्ण विश्वास हैं कि, जो हमारे भाग (प्रारब्ध) में है, वह दूसरे को नही मिल सकता. इस का तात्पर्य यह है कि हानी लाभ जो कुछ होता है वह प्रारब्ध से ही होता है मनुष्य बल से कुछ भी नही हो सकता है.

प्रिय वाचक वृन्द ? जब कि वर्तमान समय में, अपने यहां के विद्वानो के ऐसे विचार है तो—यह भारतोन्नति क्या कर सकते हैं.अजी भारत उन्नति तो दूर रही वह भाग्य (प्रारब्ध) के भरोसे से अपनी ही उन्नति नही करसक्ते हैं; तो फिर देश की क्या करें गे. आप लोगो ने देखा होगा कि बहुत से जन अपने हाथों के होते भी उनको कार्य्य में न लाकर दूसरों के हाथों की आशा से भूखों मरते हैं; अर्थात् दूसरा जब अपने हाथों से खिलाता है तो तब खाते हैं पर आपने हाथों को नही हिलाते और एसे आलसी महात्मा कहलाते हैं. क्या आप ऐसे विद्वानों और महात्माओं से भारतोन्नति की आशा रखते हैं. अपराध क्षमा हम तो ऐसे लोगों को विद्वान और महात्मा नही कह सकते, परन्तु आलसी कह सकते हैं. कारण कि पूर्व जितने विद्वान महात्मा हो गये हैं वह सबभी प्रारब्ध को मानते थे पर आज कल के विद्वानो की भांति प्रारब्ध के सहारे पर नही बैठे रहते थे. यदि आज कल के विद्वानों की भांति प्राचीन विद्वान प्रारब्ध को मान बैठे रहते थे, तो भारत कीर्ति की पत्ताका ही न फहराती ! परन्तु वह प्रारब्ध को निम्न लिखत प्रकार समझते थे कि:—

* कवि चंद के मन में किसी युक्ति से उठा देने का कारण यह था कि कहीं यह भी रोशन की भांति उपद्रव न उठावे.

* धनवान, सरदार, खुदा इत्यादि कई अर्थ हैं.

पूर्व जन्म कृतं कर्म तद्दैव मिति कथ्यते।
तस्मात्पुरुष कारेण यत्नं कुर्याद तन्द्रितः॥ ३३॥
हि० प्र०

अर्थात्–पूर्व जन्म कृत उद्यम का ही नाम प्रारब्ध है, इस लिये पुरुष को पुरुषार्थ करना ही चाहिये. कारण कि उद्यम करने से ही प्रारब्ध बना, और अब उद्यम करते हैं तभी प्रारब्ध फल दे सकता है. जब उद्यम के बिना न तो प्रारब्ध उत्पन्न ही हो सक्ता है और न फल ही दे सकता? तब तो यह बात है कि प्रत्यक्ष फल दायक उद्यम को त्याग करके भाग्य के भरोसे पर भूखे मरना यह अपना भ्रम तथा मूर्खता नही तो क्या है? कारण कि जब स्वयं ईश्वर ही उद्यम करने की आज्ञा देता है तो फिर प्रारब्ध के भरोसे पर बैठे रहना मूर्खता ही है. देखो ईश्वर आज्ञा देता है: " श्रमेण तपसा सृष्टा॥ ॥ १॥ अथर्व. कां० १२.

पूर्व काल में सर्व ऋषि मुनि इस वेद वाक्यानुसार श्रम करते थे. न कि वर्तमान काल के लोगों की भांति आलसी बन कर प्रारब्ध २ पुकारते हुये कहते थे कि जो कुछ हमारी प्रारब्ध में लिखा होगा वह हम को आपसे आपही मिल जाये गा. जो लोग ऐसा समझते हैं वेलोग स्वप्रमाद से " अतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्ट " हो जाते हैं कारण कि जगत में पढने के बिना पण्डित, भोजन के बिना तृप्ति और करता के बिना कार्य्य कदापि नही हो सक्ता. जब प्रत्यक्ष यदि प्रमाणोंसे व वेदादि सत शास्त्रोंसे यह सिद्ध हो चुका है तो फिर केवल प्रारब्ध के भरोसे पर बैठ कर अपना जन्म नष्ट करना यह मूर्खता नही तो और क्या है? यद्यपि उत्तम प्रारब्ध के कारण से घुणाक्षर * न्यायवत् मनुष्य राजा महाराजाके गृह में जन्म लेता है, एवं काकतालिय न्याय से उत्तम प्रारब्ध वशात दीन मनुष्य के गृह में उत्पन्न हुये का भी राज्य-भिषेक हो जाता है पन्तु उद्योग न करने से प्राप्त हुआ २ राज्य भी नष्ट हो जाता है पुनः नवीन राज्य प्राप्ति की तो कथा ही क्या है. (शेष आगे.)

* पद पथ्य वतो मायुर्वेद नीति मतांप्रियः॥
तदेतत्कालतालीयं तदेतद्घुणाक्षरम ॥ ५७८॥
सुभा० प्र० ३

मित्र—और सज्जन कौन (अमित्र)

अहा! " मित्र " इन दो अक्षरों के रचने वाले ने इन में कैसा रहस्य भर रक्खा है कि यदि यह दो अक्षर न होते तो संसार का एक भी सार्य्य न चल सकता. इससे ही हमारे ऋषि मुनि महात्मा इस शब्द की बडी प्रशंसा गाय गये हैं. वेदों में भी ईश्वर आज्ञा देता है कि:—

मित्रं कृणुध्वम् खलु॥ १४॥ ऋ०अ०७अ०८व०५

अर्थात्—हे मनुष्यो! तुम मित्र करो अर्थात् तुम परस्पर मित्रता करो और एक दूसरे को सुख पहुंचाओ, मित्र से मनुष्य के सर्वा भीष्ट सिद्ध होते हैं. कारण कि:—

मित्रवान् साध यत्यर्थान् दुःसाध्यानापि वै यतः॥
तस्मान्मित्राणि कुर्वीत समानान्येव चात्मनः॥२८॥
पं० तं० २

अर्थात्—जिस पुरुष के मित्र हैं वह सब दुःसाध्य कार्य्यों को भी सिद्ध कर सकता है इस प्रयोजन के लिये अपने सदृश मनुष्य को मित्र अवश्य ही करने चाहिये, एवं:—

आपन्नाशाय विबुधैः कर्त्तव्याः सुहृदोऽनलाः॥
न तरत्यापदं कश्चियोऽत्र मित्र वि वर्जितः॥१८६॥
पं० तं० २

अर्थात्—जब मनुष्य को कोई दुःख आकर पडता है तो अति ही कठिनता होती है इसलिये कहा है कि आपद् नाश के अर्थ बुद्धि मानो को मित्र अवश्य करना चाहिय कारण कि आपत्काल में मित्र विना दुःख से छुटना असम्भव है. इसी लिये कहा है कि:—

केनामृत मिदं सृष्टं मित्र मित्यक्षर द्वयम्॥
आपदाञ्च परित्राणं शोक सन्ताप भेषजम्॥
॥ ६२॥ पं० तं०

अर्थात्—" मित्र " इन दो अक्षरों को किस ने

बनाया है जो कि अपदा से बचाने वाला तथा शोक और संताप का औषधंद है, इसलिय धर्म और नीती शास्त्र कारों ने भ्राता माता स्त्री पुत्रादि से भी मित्र को अधिक विश्वासनी कहा है.

न मातरि न दारेषु न सौदर्य न चात्मजे ॥
विश्रम्भस्तादृशः पुंसां यादृग् मित्रे निरन्तरे ॥ १९४ ॥ पं० तं० २

यद्यपि सत् शास्त्रों में मित्र के विषय में बहुत कुछ लिखा है. और वास्तव में वह यथार्थ है. परन्तु कौवे (अमित्र) भी कभी २ मित्र बन जाया करते हैं, और उपर से एसी सज्जनता दिखलाते हैं कि हंस रूपी मित्र उनको अपने सदृश हंस समझ कर उन से मित्रता कर बैठता है और अंत को बुरा फल भोगता हैं. जैसे लिखा है कि, एक समय एक कौवा मान सरोवर पर गया वहां पर हंसों को बैठे देख कर उन के समीप जा बडी सज्जनता जातने लगा. निष्कपटी हंस विचारों ने एक तो उसे सज्जन और दुसरे अतिथी जान कर बहुत सन्मान किया. चलते समय कौवे राजने हंस राज से प्रार्थना कि कृपा करके आपने भी कभी हमारे देश में पधारना.हंस राज ने कौवे के अति हट से उस के देश में जाने का बचन दिया, और कौवा बचन ले कर अपने देश को चला अया. कुछ समयके उपरांत एक दिन हंसराज कौवे के देश मेंगया, कौवा राज एक स्थान पर बैठा हुआ अपना स्वाभाविक भोजन कर रहा था. हंस को आते देख झठ एक वृक्षा पर जा बैठा और मन में विचार करने गया कि हंस राजने मुझे विष्टा खाते तो देख लिया अब यह मेरी निन्दा अपने देश में करेगा.इस लिये इसको मर वा देना चाहिये कि जिस्से निन्दा ही न कर सके. इतने में हंस राज पास आगया. कौवे राज ने बडा मित्र भाव दिखला कर सन्मान किया. और एक बडे वृक्ष पर कि जिस के साया के नीचे एक राजा बैठा हुआ था लेगया, और बातें करते २ अपना विष्टा उस राज पर कर झट वृक्ष की दुसरी शाखा पर हो बैठा, हंस विचारा निष्कपटी वहीं बैठा रहा. जब राजा पर विष्टा पडा तो उसने उपर हंस को बैठे देख कर यह ही समझा कि इस ने ही हम पर विष्टा किया है, ऐसा समझ कर अति कोपसे हंस को एक एसा बाण मारा कि हंस बाण के लगते ही नम्र लिखत बचन कहता हुआ नीचे गिरकर मृत्यु को प्राप्त हो गया.

ना हं काक महाराजन वसामि निर्मले जले ॥
दुष्ट संग प्रसादेन ऐव मृत्यु न संसया ॥

अर्थात्—हे राजन में काक नहीं था मैं तो मान सरोवरका हंस था पर दुष्ट संग के प्रसाद से मेरी यह गती हुई है.

वाचकवृन्द—हमारे ऐसे लिखने का कारण यह है कि आर्य देश में भी बहुतसे काक राज जी महाराज विराज मान हैं. प्रथम तो यह ऐसी उपर से मित्रता दिखलाते हैं कि मानो यह बडे ही सज्जन हैं परन्तु अंत को यह अपना स्वाभाव दिखलाये विना नहीं रहते हैं. इस्से ही कवि गिरधाराय ने यह बचन लिखा है.

"धन्य हमारो देश, जहां सज्जन जन कौवा"

पाठकगण ! जैसे काक पक्षी का स्वभाव मल खाने का है वैसे ही इन **सज्जन कौवों** का स्वभाव पर निन्दारूपी मल खाने का है. यह **मक्खी** की भांति अर्थात् जैसे मक्खी का स्वभाव है कि कैसी भी पवित्र देह क्यों न हो वह उस में भी मल ही खोजती रहती है और जब कहीं नहीं पाती तो अपने ही शरीर में लगे हुये मल को उस पवित्र देह से स्पर्श कर लगा देती है और फिर वहां भिणकरने लगती है, और उस पवित्र देह धारी को अपनी भिण भिणाहट से नाकों दम कर देती है. वैसे ही यह सज्जन कौवे पवित्र मनुष्यों के छिद्रों के ही खोज में लगे रहते हैं. जब छिद्र नहीं पाते तो अपना अपवित्र मित्रता रूपी मल लगाकर कैं २ करने लग जाते हैं. इन सज्जन **कौवों ने धनी, दरिद्र, मानी, राजा, प्रजा, साधु, महन्त, सती साध्वी,** इत्यादि की कीर्ति और गौरव का अपवाद करके कितनोंही का सत्यानाश कर दिया और कर रहे हैं, यह जाति की छाती पर कैसी

तीक्ष्ण छुरी मार रहे हैं, कितनेही लोगोंके सहृदय उत्साह को यह सज्जन कौवे चूर्ण किये डालते हैं, हित में विपरीत की प्रथा प्रकाशित करते हैं, देश हितैषी महात्माओं की निंदा करने से यद्यपि सज्जन कौवों को कुछ भी फल नहीं मिलता, और महात्माओं का भी कुछ नहीं विगडता, परन्तु इस कार्य्य से जाति की अत्यन्त हानि होती है, वहुत से रत्न जाति के हाथ से निकल जाते हैं. व्यर्थ निन्दा के भय से शुभ कार्यों को भी छोड बैठते हैं.सारे संसार के पापका बोझ सज्जनकौवें के माथे पर धरा रहता है, अतएव निन्दक का भार आठ पर्वतों के भार से भी अधिक है.

उचित वक्ता लोग भी पराई निन्दा किया करते हैं, परन्तु वह निंदा, निन्दा प्रचार करने के अभिप्राय से नहीं कीजाती, वरन दोषी का दोष दूर करने के लिये कीजाती है. ऐसे लोग हाट वाट चौहट्टे में निन्दा नहीं करते फिरते, वरन गुप्तभाव से दोषी के निकट ही उस के दोषों को कहला भेजते हैं।

"शत्रोरपिगुणावाच्या दोषावाच्या गुरोरपि"

जिनका मूलमंत्र यही है ऐसे लोग बुरे आदमी की निन्दा, और गुणी के गुणों का वखान किया करते हैं. ऐसा करने से गुणी का गौरव होकर दोषी का दोष दूर होता है. ऐसी उचित स्तुति से मंगळ के सिवय जाति का अमंगल नहीं होता, परन्तु सज्जन कौवों को तो पराये दोषोंकी आवश्यकता है. वह गुणों की ओर कभी मुख करके भी नहीं बैठते हैं, जिस प्रकार विष्टा भोजी शूकर नन्दनवन में जाकर भी फल फूल वृक्ष लतादि किसीकी ओर नहीं देखता, केवल विष्टाकी ओर को ही उस का ध्यान रहता है और उस के पाते ही आनंद से फूलकर कुप्पा हो जाता है, वैसे ही सज्जन कौवे भी गुण की ओर नहीं देखते, यह केवल पराया छिद्र और पराये दोषों को ही देखते रहते हैं, अर्थात् उसको प्राप्त कर ही अपने को महावीर मानलेते हैं.

पराई श्री, पराया गौरव, नीचाशय, सज्जन कौवे से किसी भांति नहीं सहाजाता, दोष न पाने पर भी यह उस समय अपने स्वभाव के दोष से परदोषकी कल्पना कर के इधर उधर प्रचार किया करते हैं, वहुत से लोगों को ऐसा भी देखा है कि अकारणही घरका रुपया खर्च कर के भी पराई निन्दाका प्रचार किया करते हैं। महाकवि कालिदासजीने कहा है कि:—

'न केवलं यो महतोपभाषते,
शृणोति तस्मादपियःस पापभाक्।

जो आदमी किसी बडे आदमी की निन्दा करता है, केवल वही पाप का भागी नहीं होता किन्तु श्रवण करने वाले को भी पाप होता है, परनिन्दा परापवाद रूप विष्टा पंक शरीर में लपेटकर निन्दुक (सज्जन कौवे) जिस स्थान में बैठ जाते हैं, वह स्थानभी अपवित्र होजाता है; बुराई करनेवाले सत्यासत्यका कोई विचार करके नहीं देखते, पराई बुराई पराया अपवाद करना आजकल एक खेलसा होरहाहै. (शेष आगे.)

सहायता व मूल्य.

प्राप्त स्वीकार.

हम कोटशः धन्य वाद नागपूर निवासी परम धार्मिक वैश्य कुल भूषण श्रीमान सेठ **धोंकल मल गणपत लालजी** को देते हैं कि जो आज तक अपने वचनानुसार **श्री धर्म्मामृत** की सहायता करते चले जा रहे हैं. यथार्थ में वचन के सच्चे ही लोगों की सहायता से कार्य्य पूर्ण होते हैं. न कि मुख से तो कह दिया फिर सहायता देते समय चीं, पीं, करने लगे. ऐसे क्या कार्य्य पूर्ण करें गे. इस्से ही पूर्व लोग बडों का आशरा लेने को कह गये हैं. कारण कि बडों की यह रीति है कि "बडे न बूडन देत हैं जा की पकडी वांह" क्यों कि बडे इस वचनानुसार चलते हैं "प्राण जायें पै वचन न जाई" इस्से वह जिस को वचन देते हैं फिर उसे बुडने नही देते हैं. हम इस समय बड़े ही सोचमें थे कि श्री धर्मामृत का

भार तो अपने उपर ले लिया पर कैसे निबायेंगे, कारण कि वर्ष होने को आया है, अप्रेल तक ६ अंक निकाल कर वर्ष पूर्ण कर नया वर्ष आरम्भ करना है. और हमारे पास तो एक पैसा भी नहीं है जो ग्राहकों को वी. पी. भेज कर भी मूल्य मंगासकें. इसी सोच में थे कि इतने में सेठ जी की हुंडी ३०) की आगई और उसी समय ही चाईं बास से श्रीयुत सेठ. गोमख बारसी दासजी का५)रु०का मनीआर्डर भी आगया. इन दो महाशयो की सहायता के आते ही हम गद २ हो गये और ईश्वर को धन्य वाद दे झट कुछ वी. पी. बना नम्र महाशयों की सेवामें भेज दी. और इन महाशयों ने भी हमारी तुछ उपार सहत वी. पी. को ग्रहण कर मूल्य भेज दिया फिर क्या था तुरन्त ६ अंक की कापी तैयार कर प्रेस में भेज दी कि जिस्से अप्रेल तक सर्व अंक ग्राहक महाशयों की सेवा में पहुंच जावें और तीसरे वर्ष की तैयारी भी करदी.

अब हम उन महाशयों की सेवा में कि जिनका मूल्य अभीतक नहीं आया है अगला अंक उपर सहत वी. पी. से भेजेंगे आशा है कि वह भी सज्जन नम्र लिखत महाशयों की भांति इसे धर्म संबंधी पुण्य कार्य्य जान एक रुपया दस आना सहत वी. पी. के इसकी भेट करने में कदापि त्रुटी न करें गे.

गो. पं. जगत नारायण शर्मा.

नाम — **मूल्य**

श्रीमान सेठ धौकल मल गणपत लालजी नागपूर— १०)
श्रीयुत गो. सेठ बारसी दासजी अग्रवाल मंत्री वो. गोरक्षणी सभा चाईंबासा— ५)
इतने न महाराजा पृथिवीसिहजी पुना— १॥)
मित्र मे. ठ गन्नू लाल बंसी लाल साहू
बडे वृक्ष पर २॥)
हुआ था लेकर जगन्नाथ राधे श्यामजी कानपुर- २॥)
राज पर कर हट दर्बीलजी छिंदवाड़ा— १॥)
हंस विचारा निष्कप
श्रीयुत बाबू रामेश्वर दयालजी कुड़हरा— १॥)
श्रीयुत बाबू पी. डी. दासजी नसीराबाद— १॥)
श्रीयुत बाबू बन्चू रामजी गिरधावर ललितपुर— १॥)
श्रीयुत पं. टीपनलाल कल्चन्द्रजी शिकारपुर— १॥)
श्रीयुत बाबू हजारी रामजी अमोर— १॥)
श्रीयुत पं. दीपचंद शर्माजी हेदराबाद— १॥)
श्रीयुत लाला चक्रपाणीजी मंत्री टेराबाकट— १)
श्रीयुत बाबू प्रयाग लालजी वेकर अमोर— १॥)
श्रीयुत माष्टर सुख देवप्रसादजी ओल— १॥)
श्रीयुत पं. कुन्जनन्दजी भट्ट कासीपूर— १॥)
श्रीयुत बाबू तिलकधारी प्रसादजी महता हजारीबाग— १॥)
श्रीयुत बाबू कालूसिंहजी खेतिया— १॥)
श्रीयुत बाबू अमानसिंहजी बर्मा देहली— १॥)
श्रीयुत बाबू लक्ष्मी नारायणजी गुप्त बनारस— १॥)
श्रीमान माजोष्ट्रेट मोती लालजी खेतिया— १॥)
श्रीयुत बाबू जुगल किशोर जी भतरोली— १॥)
श्रीयुत सेठ भवराज जी आकोला— १॥)
श्रीयुत सेठ हजारी मलजी पोदार आकोला— १॥)
श्रीयुत सेठ हजारी मल रामलालजी आकोला— १॥)
श्रीयुत सेठ नथ मल हजारी मलजी मूडावल— १॥)
श्रीयुत सेठ जोरा मल बजोरिया. आकोला— १॥)
श्रीयुत माष्टर नन्दलालजी खंडवा— १॥)
श्रीयुत बाबू रामनारायणजी मंत्री रतलाम— १॥)
श्रीयुत गोस्वामी रामकृष्णपूरीजी. नागपूर— १॥)
श्रीयुत सेठ बृद्धचन्दजी पोदार बृद्धा— १॥)
श्रीयुत पं. छज्जूरामजी मंत्री जगरांवा— १॥)
श्रीयुत बाबू चैनसिंह गोलाबसिंहजी इन्दौर— १॥)
श्रीयुत सेठ दुर्गादत्तजी पोदार आकोला १॥)
श्रीयुत सेठ हरसामल श्रीधरजी पोदार मुम्बई १॥)
श्रीयुत बाबू हनुमान सिंहजी वर्मा ऐसिस्टंट सुपरिटेन्डेन्ट. मईसोर— १॥)
श्रीयुत महात्मा पारस रामजी अहमदाबाद— १॥)

(शेष फिर)

RECISTERED No B 247.

श्रीधर्म्मामृत की संक्षेप नियमावली।

(१) इस पत्रका मूल्य, नगर और बाहर सर्वत्र डाकव्यय सहत अग्रिम वार्षिक केवल १॥ रु. है. गवर्मेन्ट तथा राजा महाराजाओंसे उनके आदरार्थ ५ रु. है.
(२) पांच श्रीधर्म्मामृत एक साथ खरीदने वालों को एक प्रति मुफ्त अर्थात जो पांच ग्राहक हो कर ७॥ रु. दाम भेज देंगे उनको एक पाकिट में ६ श्रीधर्म्मामृत की पुस्तकें हर मास की पहिली ता० को मिला करेंगी.
(३) पत्रके उत्तर चाहने वाले महाशय, जवाबी कार्ड अथवा टिकट भेजें अन्यथा पत्रोत्तर न दिया जायगा.
(४) नमूने की प्रथम प्रति पहुंचने पर यदि ग्राहक होना स्वीकार हो, तो मूल्य ता० १ तक भेज देना चाहिये. यदि ग्राहक होने की इच्छा न हो तो कार्ड द्वारा सूचित करना पडेगा,और नमुने की पुस्तक पर आध आनेका टिकट लगा वापसकर देनी चाहिये, नहीं तो ग्राहक श्रेणी में समझे जा यंगे. (५) विज्ञापनकी छप वाई एक मासके लिये प्रति पंक्ति दो आना तीन मासके लिये एक आना, और छ मास या इससे अधिक समय के लिये आध आना है. और छपे हुये विज्ञापनों की वितरण कराई ५ रु. लिया जायेगा

श्रीधर्म्मामृत सम्बन्धी खर्च चिट्ठी, पत्र,व मनीआर्डर और समाचारपत्र नीचे पत्तेपर आने चाहिये

भारत भाईयों का शुभचिंतक — गो. पं. जगत नारायण शर्म्मा
चंदा वाडी पोष्ट गिरगाम–मुम्बई.

श्रीधर्म्मामृत पुस्तकालय की पुस्तकें

(१) गोरक्षाप्रकाश—गऊ मातके बारेमें विदेशियोंके एक सहस्त्र प्रश्नोका उत्तर, सर्वगोभक्तों को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये. मूल्य ८ आना (२) अकबर गोरक्षा न्यायनाटक इसमें अकबर बादशाहने किस रीतिसे गोरक्षा कीथी, यह नाटकी चालसे कथन किया गया, है, इसमें बहुत, करुणामय नाना प्रकारके राग भी हैं. मूल्य १२ आना (३) अकबर बीरबल का समागम. इसमें बीरबलकी चतुराई के दोहे भरे हैं. देखने के योग्य पुस्तक है. मूल्य १२ आना. (४) ईसु परीक्षा. इसमें ईसामसीह की परीक्षा की बातें हैं. प्रश्न करते ही ईसाई दांत दबाते भाग जाते हैं मूल्य १ आना. (५) ईसाइ मतपरीक्षा. इसमें ईसाई धर्म के ढोलकी पोल खोली गई है. पढकर देखलो मूल्य १ आना. (६) हिंदुओंकावर्तमानीन धर्म अर्थात् भोलेभाले हिन्दु भाई किस रीतिसे विधर्मियों के फंदे में फंस जाते हैं. मूल्य १ आना (७) गाजीमियांकी पूजा. हिंदु कबर पूजियों को यह क्या सूझा ? पढकर देखलो मूल्य आधा आना (८) गऊकी नालिश. मूल्य आध आना. (९) गोपुकार. मूल्य आध आना (१०) गोपुकारचालीसी मूल्य आध आना. (११) गोविलाप ? मूल्य आध आना. (१२) गोदान व्यवस्था. मूल्य आध आना. (१३) गोगोहार. मू० आध आना. (१४) काऊपोटेक्सन. अर्थात् एक अंगरेज की गोभक्ति मू० आध आना. (१५) गोरक्षापर बादशाहाके फतवे (व्यवस्था) मू० आध आना. (१६) गोहितकारी भजन. मू० आधा आना. (१८) भारत डिमडिमा नाटक. एकबार पढोगे तो भारतकी क्या दशा है जान लोगे मूल्य चार आन.

श्री
धर्म्मामृत पत्र.

अमृतं शिशिरे वन्हिरऽमृतं बाल भाषणम् ।
अमृतं राजसंमानो, धर्म्मोहि परमामृतम् ॥

वर्ष २.] बम्बई कन्याऽर्कः आश्विन मास सम्वत् १९५६ सं० १८९९ अकतूबर. [अंक ८

शोक.

हमने विचार कीया था कि मार्च के अंत तक सर्व अंक पूर्ण कर, अप्रेल से तीसरा वर्ष आरंभ करेंगे. पर शोक कि, जिस प्रेस में श्री धर्म्मामृत छपता है (गोवर्द्धन प्रेस) उसके मालिक सेठ गोलावदास तथा उनके पुत्र सेठ छगनलालजी का यहां की बिमारी से स्वर्गवास होनेके कारण प्रेस वन्द रहेने से हम अपनी इच्छा को परिपूर्ण न कर सके. अब आशा है कि मई तक सर्व अंक निकाल, जून से तीसरा वर्ष आरंभ करेंगे.

सम्पादक.

निवेदन.

श्री धर्मामृत के पिछले वर्ष के भी सर्व अंक पुनः छपकर तैयार हो गये हैं. जिन महाशयों के पास से कोई अंक खो गया हो, अथवा हमारी भूल से न पहुंचा हो, वह कृपा कर के मंगा लें. और यदि नवीन ग्राहक महाशय पिछले वर्षके सर्व अंकों के देखने की अभिलाषा रखते हों तो वह ११) रु० मय पोस्टेज भेजकर प्राप्त कर सकते हैं.

गो. पं. जगत नारायण शर्मा.

भारतोन्नतिका साधन सद्धर्म ही है.

(गतांकसे आगे.)

पर यह स्मरण रखोकि ऐसा भाव सबही उत्पन्न होगा जब वेद रूपी वृक्षके अमृत फलको ग्रहण कर

गे, जब तक वेद वृक्षके अमृत फलको ग्रहण न करोगे तब तक आत्मा समर्पण रूपी आहुती नहीं डाल सकोगे, और नाही सारे संसार की बात तो दूररही अपने देश व स्वयं अपनी ही उन्नती कर सकोगे. प्राचीन समय में जो भारत उन्नती के शिखर पर चढा हुआ था इसका कारण यह ही था कि पूर्व समय में तुम्हारे पुरुषा प्रथम वेद के अमृत फल को ग्रहण करते थे. इस वेद वृक्ष के अमृत फल खाने से ही वह आज तक अमर हैं. देखो उनका यश रूपी पताका आज तक सारे भूमंडल में फैरा रही है ? कहिये फिर अमर हुये वा नही. इस लिये प्रार्थना करते हैं कि यदि भारतोन्नतीके इच्छक हो तो प्रथम वेद रूपी वृक्ष के अमृत फल को ग्रहण करो, कराओ. देखो वेद वृक्ष के बारे में कठोपनिषद में लिखा है कि:—

ऊर्ध्व मूलोऽवाक् शाखएषोऽश्वत्थ सनातनः॥
तदेव शुक्रन्तद्ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते ॥

तात्पर्य इस वाक्य का यह है कि इस संसार के वृक्षों से जिस का बीज और जड़े व शाखें उलटे प्रकार की हैं, एसा एक वेद नामक सनातन धर्म रूपी वृक्ष है. जो मनुष्य इस वृक्ष के अमृत फल को ग्रहण करता है वह अमर हो जाता है.

यदि इस वाक्य को सत्य न मानो तो हम इस वृक्ष की सत्यता के लिये मौलवी जलालुद्दीन की मसनवी (दोहे) रूम को आप के सन्मुख रखते हैं सत्यासत का आपही निर्णय हो जायेगा.

मसनवी.

गुफ्त दानाए बराये दास्तान.

के दरख्ते हस्त दर हिन्दोस्तान् ॥
हर किसे कज़ मेवाये ओ खुरद बुरद ।
ने शवद ओ पीर ने हर्गिज़ बमुरद ॥
पादशाहे ई शुनीद अज़ साद के ।
बेर दरख्ते मेवह ओ अश शुद आशके ॥
कासदे दाना ज़ दीवाने अदब ।
सूये हिन्दोस्तान् रवान कर दार तलब ॥
साल हा मे गश्त आन् कासद अज़ू ।
गिरद हिन्दोस्तान् बराये जुस्त जू ॥
शहर शहर अज़ बहरे ई मतलूब गश्त ।
ने जज़ीरह मांदने कोह व नह दश्त ॥
हर केरा पुरसीद करदश रीश खन्द ।
काईन न जोयद जुज़ मगर मजनूने बन्द ॥
कासदे शह बस्तह दर जुस्तन कमर ।
मे शुनीद अज़ हर कसे नोए दिगर ॥
बसस्याहत करद आँजा सालहा ।
मे फरस्ता दश शहनशाह मालहा ॥
चून् बसे दी दान्दरान् गुरबत तअब ।
आजज़ आमद आखरूल अमर अज़ तलब ॥
रिशताये उमीद ऊ बुगस्तह शुद ।
जुस्ताए ऊ आकबत ना जुस्तह शुद ॥
करद अज़ मे बाज़ गश्तन पैशे शाह ।
अश्क मे बारीद व मे बरीद राह ॥
बूद शेखे आलमे कुतबे करीम ।
अन्दरान् मजलस कि आवश शुद नदीम् ॥
रफ्त पैशे शेखबा चश्मे पूर आब ।
अश्क मे बारीद मानिन्दे सहाब ॥
गुफ्त शेखा वक्त रहम दराख्त अस्त ।
ना उमीद वक्त लुत्फ ई सायत अस्त ॥
गुफ्त वा गो कज़चह नौमीद नस्त ।
चीस्त मतलूबे तो रोवा कीस्त ॥

गुफ्त शहनशाह कर दम आखूयार ।
अज़ बराये जुस्तने यक शाख सार ॥
कि दरख्ते हस्त दर हिन्दोस्तान ।
मेवाये ऊ माये आबे जनान ॥
साल हा जुस्तम न दीदम जो निशान ।
जुज़ कि तनजो तसखरीन सर खुशान ॥
शेख खंदीदो वा गुफ्तश अय सलीम ।
ई दरख्ते ईलम वाशद अय अलीम ।
बस बलंदो बस शगरफो बस बसीत ।
आबे हेवानी ज दरयाऐ महीतं ॥
तू बसूरत रफताये अय बेखबर ।
ज़ान जे शाख मैने वे बरोवर ॥
तू बसूरत रफताये गुम्र् गश्ताये ।
जान न मे यावी कि मैने हश्ताये ॥
कि दरख्तश नाम शुद गाहे आफ़ताव ।
गाह बेहरश नाम शुद गाहे सहाव ॥
आन् यके कज सद हज़ार आसार खास्त ।
कमतरीन् आसारे ऊ उमरे बकास्त ॥
गर्चेह फरद अस्त उ असर दारद हज़ार ।
आन् यकेरा नाम बाशद वे शुमार ॥

भावार्थ—इसका यह है कि विद्वान् कहानियों में कहते हैं कि हिन्दोस्तान (भारतवर्ष) में एक ऐसा दरख्त (वृक्ष) है. जो कोई उस वृक्षके मेवे (फल) को खाता है, वह फिर न तो बूढा ही होता है, और न मरता है अर्थात् अमर होजाता है. जब यह बात बादशाहने सुनी तो वह उस वृक्ष पर आशक (प्रेमी) हो गया. इस लिये उसके विद्वान् दिवान ने तुरन्त ही एक चालाक और शीघ्र गामी सेवकको उस वृक्ष व फलके लाने के लये भेजा. वह सेवक बहुत दिनो तक भारत के नगर, ग्राम, तथा वनो, उपवने और नदी, नालों, व पहाडों, खाडियों, में घूमरकर खोज करने लगा पर जब उसको उस वृक्ष व फलका पता नही लगा. तब वह लाचार होकर अप ने देशको वापस लोट गया. और बादशाह के सन्मुख खडा होकर रोने लगा. शेख ने उसे बादशाहके सन्मुख खडे रोते को देखकर पूछा कि तू क्यों रोता है. उस दास ने उत्तर दिया कि बादशाह सलामत ने मुझे अबेहियात (अमृत) वृक्ष व उसके फल लाने के लिये हिन्दोस्तान में भेजा था. परन्तु बहुत तलाश करने पर भी वह वृक्ष व उसका फल मुझे नही मिला. सेवक की यह बात सुनकर शेख ने हंस कर कहा. अय ! बादशाह सलामत जिस वृक्ष के लाने के लिये आपने अपने दास को भेजा था, वह वृक्ष बडा भारी है और वह बडा ही ऊंचा है, तथा उसका बडा भारी घेरा है, और उसकी बडी भारी छाया है. और उसका पालन आबे हेवानी* से होता है. अरे तूने व्यर्थ इतने दिन वनों में घूम कर लगाये, और तुझे उसका अर्थ तक नही सूझा. अरे वह वृक्ष ईलम (अर्थात वेद विद्या) है, विद्वान् उसे सहस्रों नाम से पुकारते हैं. कोई उसे वृक्ष,

* आबे हेवानी का तात्पर्य ऐसा है कि जब तक मनुष्य इसको ग्रहण नहीं करता है तब तक वह मूर्ख होता है और जब विद्या पढने लगता है तब उसका कंठ सूखने लगता है अर्थात् उस मुखके पानी को 'आबे हेवानी' कहते हैं.

(१) वृक्ष नाम इस लिये कहा है कि जैसे वृक्ष सबै का उपकार करता है ऐसे ही विद्या सबका उपकार करता है.

कहते हैं, कोई सूर्य, कोई समुद्र और कोई उसे बादल कहते हैं; अर्थात उसके सहस्रों नाम हैं उस वेद (विद्या) रुपी वृक्ष के फल को जो कोई खाता है, वह अमर हो जाता है, अर्थात न वह बूढ होता है, न वह मरता है, चाहे वह कलका उत्पन्न क्यों न हो, इसके सहस्रों असर और सहस्रों नाम हैं

यदि अब कोई यह पूछे कि इस वेद रुपी वृक्ष की जड़ (वीज) कोन है, और इसकी शाखा व पत्ते (कोन) हैं और इसका फल क्या है, जिसको खाकर मनुष्य अमर हो जाता है, तो इसका उत्तर यह है कि इस वृक्ष का बीज (जड) रुप **ईश्वर** है. और **शिक्षा, कल्प व्याकरण, निघण्ट, निरूत, छन्द,** और **ज्योतिष,** यह वेदरूपी **वृक्ष** की बडी बडी शाखा हैं. और **न्याय, मीमांसा सांख्य, वैशेषिक, योग** और, **वेदान्त** यह इसकी उपशाखा हैं, और पुराण, इतिहास इसके पत्ते हैं. और **धृति, क्षमा, दमा- अस्तेयं, शौचं, इन्द्रियनिग्रहः, धी, विद्या, सत्यं, अक्रोधः** इत्यादि लक्षणों से मिश्रत इस वेदरूपी वृक्ष में लगा हुआ एक फळ है. जो कोई इन (नियम, रूल, असूल) को ग्रहण करता है उसको वह फल मिलता है जिस्से न तो वह फिर बूढा होता है और नाही उसकी मृत्यू होती अर्थात वह अमर हो जाता है.

---

(२) सूर्य्य इस लिये नाम है कि जैसे सूर्य्य के प्रकाशसे अंधकार दूर हो जाता है ऐसे ही विद्याके प्रकाश से अज्ञान अंधकार दूर हो जाता है.

(३) समुद्र इसलिये नाम है कि जैसे समुद्र गंभीर रहता है ऐसे ही विद्यासे मनुष्य गंभीर अर्थात मरयादा से बार नही होता है.

(४) बादल इसलिय कहा है कि जैसे बादल सर्वत्र अच्छे बुरे स्थानमें बरस कर साफ़ कर देता है ऐसे ही विद्या उंच नीच सर्वको दुर्गुणोंसे साफ कर देती है.

प्राचीन आर्यों ने इन नियमोको पालन कर के इस वेद रूपी वृक्ष के उर्द्ध लिखत फलको पाय अमर पद पाया था और भारतको उन्नती के शिखर पर चढाया था. **निदान** ? यदि तुम भी भारतोन्नति व अमरपद पाने की अभिलाषा रखते हो तो इन नियमो को ग्रहण करो निश्चय अपनी इच्छा को परिपूर्ण कर सकोगे.

कैसे आश्चर्य ! की बात है कि जिन **वेदों** में जीव दया का विस्तार वर्णन लिखा है. उनपर ऐसा मिथ्या दोष लगाना, तथा जो **ब्राह्मण** सदैवसे निलोंभी, निष्कटी, उनको स्वार्थी व देश नाशक ठहराना कैसे झूठापन है. **वर्तमान** समय में जितने **मत** भारत वर्ष में हैं, वह सर्व ही वेद और ब्राह्मणों को घृणा दृष्टी से देखते हैं. इतने पर भी **ब्राह्मण** पवित्र **वेदों** को कंठ से लगाये सर्व को करुणा दृष्टिसे ही देख रहे हैं. धन्य है इनकी सहन शीलता ? **ब्राह्मणों** को ऐसी सहन शीलता रखने का कारण यह है कि यह जानते हैं कि हमारे शत्रुता करने वाले अज्ञानी हैं. यदि यह वेदों को पढे होते तो कदापि जीव हिंसा इत्यादि दोष वेदोंपर न लगाते, और नाही हमे स्वार्थी तथा देश नाशक बताते. अब यदि कोई यह कहे कि हमने प्रत्यक्ष यज्ञ में वेद मंत्रो से जीव हिंसा को होते देखा है, और **ब्राह्मणों** को जीव हिंसा कराते भी देखा है, और इतिहासों में पढा भी है कि ब्राह्मणोंने अपने स्वार्थ वश देश का नाश करा दिया है, क्या यह सर्व बातें मिथ्या हैं. ? इस का उत्तर हम मुक्त कंट से देते हैं कि यह सर्व बातें विदेशियों की मिथ्या प्रज्वलित की हुई हैं. कारण इसका यह है कि जब परमात्मा ने वेदों की रक्षा के लिये ब्राह्मणों को नियत किया कि जो मुख से वे मुखी अर्थात नास्त हैं उन से इस वेद रूपी वृक्ष की रक्षा करना, और ब्राह्मणों की रक्ष के लिये क्षत्रियों को नियत किया था. तब से याने सृष्टि उत्पत्ति से लेकर महा भारत तक बडे आनन्द से दोनो अपने २ का-

ग्रंथ पर पूर्ण रीत से तत्पर रहे. काल के हेर फेर से अर्थात भारत के समय से क्षत्रियों में परस्पर झगडा उत्पन्न हुआ और उस झगडे से आजतक क्षत्रियों की हीन दशा के ही दिन आते गये हैं. यद्यपि महाराजा जन्मेजय तक वेदों तथा ब्राह्मणोंमें कुछ कलंक नहीं लगाथा, पर इनके पीछे वेदों और ब्राह्मणोंपर मिथ्या कलंक लगने लगगे. कलंक लगनेका कारण यह हुआ कि जब क्षत्रिय परस्पर विरोध और राज्य सत्ताके बढामें में लगगये. और यह तो आप जानते ही हैं कि प्राचीन समय में ब्राह्मण वनो में निवास किया करते थे. क्षत्रियों के परस्पर युद्ध तथा सत्ता प्राप्तिके यत्न में लगेसे उनकी संतान पूर्व रीत्यानुसार ऋषि मुनियों से जो सत्य विद्या व परमार्थ गुणों को सम्पन्न किया करती थी. वह महाराज जन्मेजयेके उपरान्त वनवासी महात्माओं का सत संग व उनका रक्षण त्याग सत्य विद्या और परमार्थ गुणों से हीन हो गये. राजवंशीयों की ऐसी दशा देखकर अनार्योंने महात्माओं को कष्ट देना आरंम्भ किया. उनके कष्टों से तंग होकर वह वनवासी ऋषि,मुनि सन्तान नगर और ग्रामों में आवसे. एसा समय पायेके अनार्य्योंने उनके स्थानो में महंत बन कर वेद रुपी वृक्षकी शाखाओं को कलमी बनाकर उसके चारों ओर नैय वृक्ष लगा दिये अर्थात वेदोंका कुछ सार लें, उनमें अपने मन मानी स्वार्थी बातें मिला,नाना ग्रंथ बना, लोगों को वेदवृक्षके अमृत फलके बदलमें विषफल खिलाने लग गये. ऐसी दशा अनार्य्योंकी देख उनकी कपट कला को न जानकर बौध तथा जैन इत्यादि धर्मके महात्मा वेद तथा ब्राह्मणों से विमुख हो गये, और वैसेही वर्तमान समय में भी लोग उन ग्रंथोंसे धोखा खा रहे हैं. यहां तककि असली ऋषि मुनियों की संतान ब्राह्मण भी वर्तमान समय में उन के कपट को न जानकर कह देते हैं कि "वेदकी हिंसा हिंसा न भवती" अर्थात् वेदों में जो हिंसा लिखी है वह हिंसा नहीं है. एसा कहे अनार्य्यों का संग देकर अपनी निन्दा करवारहे हैं.

अस्तु! जो हो. हमारा कर्तव्य तो सत्यासत के निर्णेका है याने हमको जो सबूत वेदोंकी पवित्रताके बारे में मिले हैं उन्हें यहां मुद्रित करने का है. यदि किसी को यह लेख असत्य लगे तो वह हमें कृपा करके लिख भेजें. हम उससे भी मुद्रित कर देंगे, कारण कि हम तो सत्यके जिज्ञासु हैं. (शेष फिर.)

सांप्रत स्थितिनुसार सुख संकल्प.

(गतांक से आगे.)

इस संसार में जो उद्योगी पुरुष हुये हैं उन्होंने निज बाहुबल से अनेक देशों में स्वराज्य स्थापन किये, और जो आलसी राजा हुये उन्होंने स्वपूर्वजो पार्जित राज्यों को भी भाग्य के भरोसे पर बैठ कर नष्ट कर दिये, प्रत्येक्ष देखीये कि जिस अन्न को खाते हैं वह सब परिश्रम से ही उत्पन्न होता है. जिन वस्त्र भूषणों को धारण करते हैं यह भी उद्योगोपार्जित ही हैं, जिन घरों में निवास करते हैं यह भी प्रयत्न से ही बने हैं, जिन कुओं का पानी पीते हैं वह भी पुरुषार्थ से ही खुदे हुये हैं,जो कुछ आप विद्या सीखे हैं तथा जो कुछ आप के पास धनादि पदार्थ हैं यह सब उद्यम काही फल है. तात्पर्य यह है कि जो कुछ दृष्टिगोचर होता है वह सब दीर्घ परिश्रम काही फल है, इसलिये मनुष्य मात्रको इस श्लोकका सर्वदा स्मरण करना योग्य है.

उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः॥
नहि सिंहस्य सुप्तस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः॥
॥१४१॥ पं०तं०॥

अर्थात्–मनुष्यों के कार्य्य उद्यम करने से ही सिद्ध होते हैं. शेख चिल्ली के सदृश मनोर्थ से कार्य्य कदापि

सिद्ध नही हो सकते. जैसे बिना प्रयत्न करने के वनमें सोते हुये सिंह के मुख में मृग नही चले जाते. इस अभिप्रायसे प्राचीन आर्य्य लोग पुरुषार्थ को करते थे. इस पुरुषार्थ सेही ऋषि मुनियोंने अनेक विद्याओं का प्रचार करके आर्य्य वर्तको सर्व देशोंका शिक्षक वनाया था. इस विषयको सर्व निष्पक्ष इतिहास वेत्ता स्वीकार करते हैं. एतद्देशोद्भव सर्व पितामह श्री ब्रह्माजो ने उद्यम सेही चार **वेदोंको** ईश्वरसे प्राप्तकर संसार में प्रचार किया था. ऐसेही पाणिनि, पतञ्जलि, कात्यायनादि ऋषियोंने उद्यम सेही व्याकरण बनाया, और पिंगल मुनिने **छन्द**, यास्क ने **निरुक्त**, आर्य्य भट्ट भास्करा चार्य्यादि ने **ज्योतिष**, गौतम, कणाद, कपिल, पतञ्जलि, जैमिनि और व्यास जीने क्रमशः उसीं उद्योग से **न्याय**, **वैशेषिक**, **सांख्य**, **योग**, **पूर्व मीमांसा** और उत्तर मीमांसा (वेदान्त) यह सर्व शास्त्र बनाये थे, तथा उद्योग केही प्रभाव से चरक मुनिने **चरक**, सुश्रुतने **सुश्रुत**, और वालमीकजीनें **रामायण**. ऐसेही अनेक त्यागी वैरागी ऋषि मुनियोंने अनेका अनेक ग्रथ उद्यम सेही बनाये, तथा उद्योगके प्रतापसेही सिंधु द्वीप, देवापि, विश्वामित्र, क्षात्रिय तथा कक्षीवतादि* अनेक शूद्रसे उत्तम पदाधिकारी, होगयी हैं, **हनुमान**जीने उद्यमसे ही लंका को गमन किया, **नलने** उद्यमसेही सेतुको बांधा था, **श्रीरामचंद्र** जीने पुरुषार्थसे लंकाको विजय किया था, और **भीष्म**, **भीम**, **कर्ण**, **श्रीकृष्णार्जुन**, विक्रम, भोज, शालिवाहनादि ने उद्योग सेही राज्य प्राप्त किया था. श्री शंकरस्वामी इत्यादि महात्माओंने उद्योग सेही इस देशका गुरुपद पाये था, श्री छत्रपती महाराज सेवाजी तथा पांचाल (पंजाव) के केशरी श्री महाराज रणजीत सिंहजी उद्यम सेही राजा वने थे. वर्तमान सम्राट भी उद्यमसेही सम्राट हैं, हमने भी उद्यम सेही यह पत्र मुद्रित किया है और आप भी उद्यम सेही इसको पढ रहे है. बस इस लेखसे स्पष्ट विदित होता है कि जगतमें जो कुछ होता है वह उद्यम करनेसे ही होता है. न के भाग्य के भरोसेपर बैठे रहनेसे होता है. कारण कि शास्त्रोंमें प्रारब्धको केवल बीजरूप माना है जैसेः—

यथाक्षेत्रं मृदुभूतमद्भिराप्लावितन्तथा।
जनयत्यङ्कुरङ्कर्म नृणां तद्वत्पुनर्भवम्॥३२॥

म० भा० शां० प० अ० ३३.१.

अर्थात्—जैसे कृषिकार भूमि को खेड कर खात डाल जल सेचनादि से मृदु करके बीज को बोते हैं तभी सुंदर अन्न उत्पन्न होता है, ऐसे ही प्रारब्ध रूप वीज भी मनुष्य की सुयोग्यता रूप भूमि में उद्योग रूप जलके सेचनसे कार्य्योद्भव रूप अंकुर देकर कार्य्य सिद्ध रूप वृक्ष होकर मनुष्य को सुख रूप फल को देता है. जैसेः—

यथै केन न हस्तेन तालिक संप्रपद्यते॥
तथोद्यम परित्यक्तं न फलं कर्मणः स्मृतम्॥३८॥

अर्थात्—एक हाथ से ताली नही बजती, इसी प्रकार उद्यम बिना प्रारब्ध कुछ भी फल नही दे सकता, ऐवम्ः—

पश्य कर्म वशात्प्राप्तं भोज्यकालेपि भोजनम्।
हस्तोद्यमं विना वक्त्रे प्रविशेन्न कथश्चन॥३९॥

पं. तं. २

अर्थात्—मान लो कि भाग्य के प्रभावसे भोजन के समय पर भोजन मिल भी गया हो परन्तु हस्त से ग्रास मुख में धरे तो भोजन आपसे आप पेटमें नही जा सकता यदि कोई मुख में भी ग्रास रख देगा परन्तु चावकर गले के नीचे तो भोजन करता को अवश्यही उतारना पडेगा, क्योंकि कण्ठके नीचे उतारे विना उदर पोषण नही होसक्ता और यदि विचार से देखा जाय तोः—

यश्च दिष्ट परो लोके यश्चापि हठवादिकः।
उभावपि शठावेतौ कर्म बुद्धिःप्रशस्यते॥१३॥

अर्थात्-जो मनुष्य इस संसार में भाग्य के भरोसेपर रहता है और जो हठ बांधकर बैठा हुआ अन्य था काम करता है वे दोनो मूर्ख हैं और जो कर्म करने में तत्पर (लगा) रहता है वह मनुष्य प्रशंसा के योग्य है, ऐसे हीः-

योहि दिष्ट मुपासीनो निर्विचेष्टः सुखंशयेत्॥
अवसीदेत्स दुर्बुद्धि रामो घट इवोदके॥ १४॥

भा० वनप० अ० ३२.

अर्थात्-जो मनुष्य प्रारब्ध के भरोसेपर रह कर अर्थात जो प्रारब्ध करेगा सोही होवेगा ऐसा मान कर सुख से सोता है उस मनुष्य का शरी ऐसे नष्ट हो जाता है जैसे मिट्टी का कचा घडा जल में डुबानेसे पिघल जाता है, अहो! वर्तमान समयमें अनेक वेषधारी साधु व गृहस्थ भी आलस्यके वश हो कर प्रारब्ध की आट लेकर आलस्य में पडे रहते हैं. परन्तु (शेष आगे.)

भारत पे आरत.

(गतांकसे आगे)

चन्द-जी मैं इस नगरी के राजा का गुलाम(सेवक)हुं,

सांई—तुम क्या काम करते हो.

चंद—हमारा काम तो राजो महाराजों और साधु फकीरों के वखान करने का है.

सांई—क्या तुम शाईर (कवि) हो.

चन्द्र—जी हो? एक साधारण कवि हुं.

सांई—तो तो तुम यहां के राजा के पास रोज ही जाते होगे.

चंद—जी हां! रोज ही जाना पडता है.

सांई—कुछ हमार भी काम करों गे.

चंद—क्यों न करूं.

सांई—तुम्हे खबर तो होहेगी कि इस जमीन पर थोडा ही वक्त हुआ है कि एक भारी लढाई हुई थी.

चंद—जी हां खबर है.

सांई—वेठा? इस लडाई में वहुत सी पीरों फकीरों का भी खून वहा है इससे अब यह जमीन पीरोंकी होगई है, इस जमीपर अब पीरों का दावा है. सो खुदा बन्द करीम का हमे हुक्म हुआ है कि तुम्हारे राज को समझा कर यह जगह खाली कर वादलों, इस सब से हमारा यहां आना हुआ है. खैर? वडी अच्छी वात हुई कि तुम हमे मिल गये, अब तुम आपने राजा को समझा बुझाकर यह नगर खाली कर वादो.

चंद—गरी पर वर! क्या यह स्थानही हमारे राजा को खाली कर देने का अल्लाने हुक्म दिया है. या और भी कुछ?

सांई—अभी तक तो फक्त यह ही हुकम दिया है.

चंद—गरीब निवाज! जब हमारे महाराज यह स्थान छोड़ देंगे, तो क्या राज कुल में जन्म पाके फिर वह दुकान, मज़दूर, या भीख मांग के पेट भरेंगे.

सांई—अगर तुम्हारे राजा हमारे सुखन (वचन) से एक दमडी की खाहिश न रख कर फक्त बदन पर पहरे हुये कपडों और जेवर (भूखन) के मय अपने नोकरो चाकरों के ऐसे ही निकल जायेंगे तो हम उसे दिल्ली के तख्त का वारस कर देंगे.

चंद—वंदे निवाज! इतना वड़ा राज्य और भारी सेना को ले कर केवल पहरे हुये कपडों से कैसे दिल्ली तक पहुंचे गा. और दुसरी वात यह है कि दल्ली तो हमारे महाराज के नाना का शहर है, विना कारण उसपर कैसे महाराज चढाई कर सकते हैं?

सांई—इन तुम्हारे सवालों में से अवल सवाल का जवाव यह है कि 'अजमेर से वारां कोस पर एक नगर आवेगा, उस नगर में एक साहुकार

बारां क्रोड रुपये का धन बटोर कर बिना कुछ खैरात (पुण्य) किये हीं मर गया है वह धन तुम्हारे राजा के हाथ लग जायेगा. दुसरे सवालका जवाब यह है कि दिल्ली पर चढाई करने की कुछ जरुरत नही है क्यों कि दिल्ली का अनंग पाल तुंमर जो तुम्हारे राजा का नाना लगता है उसके यहां कोई लडका नही हुआ, और वह अब बूढा हो गया है इस्से न अब होने की उम्मेद ही है. इस्से उस का अब दुनिया से दिल उठ गया है. वह अब सब राज छोड कर इबादत (तप) के लिये कहीं तीर्थ पर जाने वाला है (डरानेके लिये) और अपना वारस जये चंद्र वाली कन्नोज को बनाने वाला है. अगर तुम्हारा राजा नगर छोड देगा तो हम अल्ला के हुक्म से उस का दिल जयचंद से हटा कर तुम्हारे राज पर कर दें गे इस्से तुम्हारे राजा को बिना लडाई के किये ही दिल्ली की गादी मिल जायेगी.

चंद—(उपरी मन से) सांई साहब यह आपकी हमारे महाराज पर बडी कृपा है, पर वह नगर कोन सा है कि जहां बारां क्रोड का धन साहुकार छोड़ के मर गया है?

सांई—जब तुम्हारा राजा नगर खाली करे गा तब हम बतला देवें गे.

चंद—(भेद लेने के लिये) बन्दे निवाज़! आप का कहना अक्षर २ ठिक है. पर यदि मैं आपकी सबै बातें महाराज को कहुं और वह आपकी आज्ञाको न माने तो फिर क्या होगा.

सांई—मय नगर के राजा का नाश हो जायगा.

चंद—नाश कोन करेगा.

सांई—हम करें गे, और कोन करें गा?

चंद—गरीपरवर जिस समय हमारे राजा की सेना आप के पीरों का लहु बहाया उस समय आपने उन को क्यों नही बचा लिया. न राजा का नाश किया जो अब नाश करने को आये हैं.

सांई—उस वक्त अल्ला की हुक्म नहीं था.

चंद—इस समय आप पर ऐसा कोनसा अल्ला का परवान (आज्ञापत्र) आया है. तनि कृपा करके मुझ भी वह आज्ञापत्र दिखलाये जिस्से मुझ निश्चय हो जाये और मैं राजाको समझा कर नगर खाली करवादूं.

सांई—अरे दिवाने जब राजा हमारे सुखन से शहर खाली न करे गा तब खुदा का परवाना (आज्ञापत्र) दिख लावें गे. अभी तो जाकर तू हमारे कहने बमुजब सब बातें सुना तो सही, न मानेगा तो पीछे देखना क्या होता है.

चंद—(तनि क्रोद्ध से) सांई यहांसे चुप के उठकर चले जाओ राजा का नाश करतेर कहीं अपना नाश न करा लेना. कारण कि तुम्हारे जैसा पहले भी एक पांखडी सांई यहां आया था और उसने भी पाखंड चला या था, अंतको अपनी ऊंगलियां कटाई. और तुम्हारे जैस सहस्रों दाडी वालों के यहां मस्तक भी कटवा कर नाश हुआ था.

सांई—वह कोई ऐसा वैसा ही होगा.

चंद—तो तुम में उस्से क्या विशेषता है.

सांई—अरे बेअकल काम पडने पर जो हम में कुछ है दिख लावें गे.

चंद—अभी तो कुछ दिखलाओ जिस्से मुझे आप पर कुछ विश्वास आवे.

सांई—(चलाकीसे) अच्छा सुन आज से आठवें दिन में किसी न किसी दिन दिल्ली से तुम्हारे राजा को अनंगपाल का पत्र आवे गा जिस में यह लिखा होगा कि तुम यहां चले आओ मैं तुम्हे दिल्ली की गादी का वारस बनान चाहता हुं.

चंद—साईं साहब यह कोई आप की करामात नही है, यह तो हमारे यहां के छोकरे भी कह देते हैं कि अमुक कार्य आठ दिन के अंदर हो जायेगा. आठ दिन में किसी दन में तो होही गा इससे छोकरे के कहने में कोई करामात नही है वैसे ही तुम्हारी बात है. और चिट्ठी तो बारस बनाने की हमारे महाराजको तुम्हारे कहने से पहले ही आगई है. इस्से आपकी करामात आठ दिन की तो झूटी पढ गई. अब आपको फकीर जानकर विन्ति करता हुं कि दुनियां के पचडों को छोड कर. जंगलको चले जाओ, और खुदा से लो लगाओ.

साईं—हम ऐसे तो जाने वाले नहीं हैं.

चंद—'तुमारी इच्छा कुछ स्वाद ले कर जानेकी है,' इतना कह कर चन्द चला गया और महाराज को जा सब समाचार निवेदन किया. उस समय महाराज पृथ्विराज के पास वीर चामुण्ड राय बैठा हुआ था चंद की बातें सुन कर झट बोल उठा "पृथिनाथ विदित होता है कि यह भी रोशन कोई भाई ही है, आज्ञा हो तो इसे समाप्त ही कर आऊं. महाराज ने उत्तर दिया समाप्त करने की कोई अवश्यकता नही है उसे समझा बुझा कर यहांसे निकाल दो. यदि न माने तो बंदीग्रह में डाल दो कुछ दिन रह कर आपही चले जाने को कहे गा. दुसरे दिवस चामुण्डराय फकीर के पास गया और यहांसे चले जाने को समझाया, पर साईंसाहब ने एक न सुनी. तब लाचार हो चामुण्डराय को सख्ती से काम लेना पडा.

चामुण्डराय—साईं साहब यहां से चले जाओ नहीं तो वन्दी ग्रहमें डाले जा ओगे.

साईं—हमे बन्दी ग्रह में डालने वाला कोन है.

चामण्डराय—हम हैं! हम.

साईं—तुम्हारी क्या मजाल है जो तुम हमे वन्दी ग्रह में डालसको.

चामुण्डराय—क्या अपने हमारी मजाल देखनी है? इतना कह ज्यों ही हाथ पकड उठाने को तयार हुआ' त्योंही साईं झट बोला उठा. खबरदार हम को हाथ मत लगाना नही तो जल कर खाक हो जाओगे.

चामुण्डराय—(मसखरीसे बोला), ओ! हो! क्या तुम आग हो ?

साईं—(समझा कि डर गया) हां! हां! हम आग हैं.

चामुण्डराय—तुम आग हो तो हम पानी हैं. इतना कह हाथ पकड आसन से खडा कर दिया और बोला क्यों हम जले तो नहीं! अब आप भला चाहो तो चुपके यहांसे चले जाओ. नही तो बन्दी ग्रह में डाले जाओ गे.

साईं—मन ही मन में यह तो डरने वाले नही है, खैर यहां से चले जाना ही ठीक है, एसा विचार कर गज चर्म लपेट बगल में दबा कर चल पडा. पर अब कहां को जायें यह विचार करते २ उसके मनमें शहाबुद्दीन की वह बात याद आगई कि "पृथ्विराजकी कई राजाओ से शत्रुता है," इस बात के याद आते ही, पृथ्विराज के शत्रुओको बहकाना और शहाबुद्दीन की मद दलाकर इसका नाश करना मन में ठान शत्रुओं की जांच करने के लिये प्रथम गुजरात के भोला भीम देव की ओर रवाना हुआ.

प्रकरण ५ वां

यह तो पिछे लिख ही आये हैं कि उस समय दिल्ली की गादी पर महाराजा अनंगपाल तुंवर था. इस महाराज के यहां पुत्र न था केवल दो कन्या थीं, कमला देवी नामक कन्या अजमेर के महाराज सोमेश्वर देव के संग विवाही गई थी जिस के उदर से श्री महाराज पृथ्विराज का जन्म हुआ था. और दुसरी

कन्या कनोज के महाराजा जयचंद राठोर के संग विवाईगई थी. महाराजा जयचन्दका जन्म, महाराजा अनंगपाल की फूफी के उदर से हुआ था. और इनके पिताका नाम, महाराजा विजयपाल था. इससे जैचन्द का महाराज अनंगपाल से दो प्रकारका सन्बंध था. ज्यों २ महाराज अनंगपाल की वृद्धावस्था आती गई, त्यों २ पुत्र की आशा जाने लगी और अंत को पुत्र की आशा से निराश होकर इस संसारसे चित उठ गया, और इनके मन में वानप्रस्थाश्रम धारण कर बद्रिकाश्रम में तप करने का हुआ. पर यह इतना बडा राज्य किसको देकर जाऊं, इस विचार में कई दिवस बीत गये, अंत में यह निश्चय किया कि अपने दोहित्र पृथ्विराज को दत्तक ले कर यह राज्य पाठ उस को दे कर जाना ठीक है, एसा विचार दृढ कर नम्र रीते से महाराज पृथ्विराज को पत्र भेजा.

साटक.

स्वस्ति श्री अजमेर द्रोण दुरगं[1] राजा-
धिपो राजनं, पुत्री पुत्र पवित्र पंथव
घनो छत्रीस वंसावनं। मा वृद्धाय सु-
वृद्ध तत सरणं बद्री निमत्त तनं, आ
भूमीय हयं गयं च सकलं संकल्पिता
तर्पयं॥

अर्थात्—स्वस्ति श्री अजमेर अथवा द्रोण दुर्ग विषे विराजमान; छत्रीश राज कुल में पवित्र दोहित्र की ओरः—हमारी वृद्धावस्था होने से, हम बद्रिकाश्रम में तपस्या करने के लिये जाते को हैं. इस लिये यह पृथ्वि, घोडे, हाथी, इत्यादि सर्व राज्यकीय वस्तुयें तुम्हारे नाम संकल्प कर देते है.

जब महाराज अनंगपालने पृथ्विराज को दत्तक लिया और यह खबर कनोज के राजा जयचंदको लगी तब उसने भी दावा किया, कारन कि जो सगपन पृथ्विराज का अनंगपाल के संग था वैसा ही सगापन जयचंद का था. महाराज पृथ्विराज को दिल्ली स्वतंत्र प्राप्त होने से चौहाणों और राठोरों के बीच में कलाह का बीज रोपा गया, और यह बीज कुछ इन दोनों राजपूतों के ही बीच में कलाह का न हुआ, परन्तु सारे भारत खंड में से राजपूतों के राज्य का अंत लानेवाला होगया. ज्यों २ यह दिन प्रति दिन (पानीसे नहीं किन्तु रुधिर से) सींचा जाने लगा त्यों २ वृद्धि को प्राप्त होने लगा. और अंत में इससे फल यह मिला कि भारत का सर्व नाश हो गया.

नागोर के निकट खटूर नामक एक ग्राम था. उस ग्राम में पुरातन समय से एक गुप्त खजाना गडा था. उस खजाने पर पीतल की एक पुतली स्थापित थी और उस पुतली के कपाल पर यह लिखा हुआ था. **"शिर कटे धन संग्रहे शिर संटे धन जाय"** (अर्थात् जो माथा काटे वह मालिक होय) जब महाराज पृथ्विराज को इस खजाने का पता लगा तो वह अपने मंत्री कयमास को संग लेकर खजाने के स्थान पर गये, और पुतली के मस्तक पर लिखे हुये लेख को पढकर मंत्री से राय पूछी. मंत्री ने उत्तर दिया महाराज देखते क्या हैं पुतली के शरीर से शिर उडा दो, आप को धन मिल जायेगा. महाराज **पृथ्विराज** ने चतुर **मंत्री** के कथानुसार उस पुतली का शिर तन से उडा दिया. शिर के उडते ही खजाने का किवाड खुल गया, और उस में से महाराज **पृथ्विराज** को सत्तर लाख सोने की **मोहरें** हाथ लगीं. **साईं** साहब भी उस समय भेष बदले हुआ वहां मौजूद था, देख कर जल भुन गया. कारन कि इस के मन में यह विचार पैदा हो आया कि इस खजाने के मिलने से चौहाण और मजबूत हो जायगा और फिर जीता न जायेगा. फिर तुरन्तही मन में यह विचार हो आया कि कोई दावेदार खडा कर आपस में खपट करा अपना काम निकाल लेनेका यह समय बहुत अच्छा हाथ लग गया है. ऐसा विचार कर **साईं** साहब

---

1 कौरव पांडव के समय में अजमेर द्रोणाचार्य के हस्तगत था इस लिये द्रोणदुर्ग भी कहते थे.

कन्नोज और पट्टन के महाराजाओं के पास गया और उन को ऐसी पट्टी पढाई कि दोनों दावेदार खडे हो गये और अपनी सहायताके लिये शाहाबुद्दीन को बुला भेजा. शाहाबुद्दीन तो ऐसे समय की ताक लगाये बैठाही था. दोनो राजाओं के पत्र पाते ही दल सहत चला आया. जब इस विषय की खबर महाराज पृथ्विराजको लगी तो इन्होने अपनी सहायता के लिये अपने बेहेनोई महाराणा समरसिंह जी को संग ले लिया. उस समय महाराणा समरसिंह जी के पहाराव, और भापण से ऐसा विदित होता था कि, मानो इन्होने महादेवजी के अधिकारी का चिन्ह धारण किया हुआ था. कारण कि उस समय इन के कंठ में साधारण रुद्राक्ष की एक माला, तथा माथे पर जटा जूट, और मुख से जयशंकर २ निकलता था. तथा लोग भी उस समय इन को योगेंद्र के नाम से कहते सुनाई देते थे.

जब दोनो ओर से युद्ध की तैयारी हुई तो महाराण समर सिंहजी पट्टण के राजा से कुछ संबन्ध होनेके कारण उसके सन्मुख न जाकर शाहाबुद्दीनके सन्मुख गये. और महाराज पृथ्विराजने पट्टण के राजा से जा टक्कर ली. और उसे तुरंत जीत कर अपने पुराने यवन शत्रुके सन्मुख जा ललकारे. फिर क्याथा दोनो महान योद्धा मिल अपने दोनो हाथों के खड्ग प्रहार से यवनो के मुंड तनेस उठाने लगे. उस समय संग्राम की ऐसी शोभा विदित होती थी कि मानो साक्षात रुद्र और विष्णु राक्षसोंका दलन कर रहे हैं. इन दोनो महावीरों के भय से यवन दल में हा! हाकार मच गया और जिसको जिधर भागने का मार्ग मिला उधर वह अपने प्राण लेकर भाग निकला. शाहाबुद्दीन ने बहुत समझाया और कुरान के वाक्य भी सुनाये, पर मारके आगे कोन सुनता है. इस्से कुछ देरतक अकेला ही युद्ध करता रहा और अंतमें महाराज पृथ्विराज के हाथमें फंसगया. उस समय इसकी बहुत विन्ती करने वा कसमे खाने से दयालु महाराज पृथ्विराज ने आठ सहस्र घोटे दंण्ड लेकर फिर छोडदिया. जब यह युद्ध समाप्त हो गया तब इस युद्ध में जो धन प्राप्त हुआ था वह सर्वधन महाराज पृथ्विराजने महाराणा समर सिंहजी के सन्मुख रख कर विन्ती की कि जितना आपकी इच्छा हो उतना धन लेलिजीये. पर महाराणाजी ने एक कोडीभी लेनी स्वीकार न की. तब पुनः महाराजा पृथ्विराजने कहा कि यदि आप लेना स्वीकार नही करते हैं तो अपनी सेना को मेरी भेंट लेने की आज्ञा दें. महाराणा जीने उतर दिया कि हमारी और आप की सेना कुछ दो नही हैं यदि आपने अपनी सेना को भेंट देना विचार है तो यहभी आपकी भेंट को खुशी से स्वीकार करें गी. कारण कि यह युद्ध राज द्वारी खट पट का नही था. परन्तू धर्म युद्ध था. इस लिये यह धन भी जो हाथ में आया है धर्म का है. इस लिये इसको राज्य कोष (खजाने) में डालना हमने उचित्त न समझ कर ग्रहण नहीं किया है अब आपको अधिकार है चाहे किसी कार्य्य मे लगा दें. महाराणा जी के यह वचन सुनकर महाराजा पृथ्विराज ने वह सर्व धन कुछ तो सेनो को और कुछ निर्धनो को बांट दिया. ऐसा करनेसे महाराणा समर सिंहजी का प्रेम महाराज पृथ्विराज से अति बढ गया. और इसी दिवससे दोनों महाराजाओं की गूढ मैत्री हो गई. (शेष फिर.)

मित्र-सज्जन कौवे-अमित्र.

(गतांकसे आगे)

क्यों न खेल समझें? जब के यह यमराज महाराज की दरबारें में से पर निन्दा करने का बिडा ही उठाकर आये हुये हैं तो फिर परनिन्दा इनके लिये खेलसी ही है.

सज्जन कौवो! भारत दुर्भाग्य से तुमने आच्छा अवसर पाया है अब चाहे तुम कैसे भी किसी के पीछे पडो तुम्हे कोई पूछने वालाही नही है. कोन पूछे?

इस लोकमें पट्टेधिकारी से तुम्हारी यारी ही है, और पर लोकमें तुम्हारा दादा पूर्ण सत्ताधारी है, फिर तुमसे कोन चूं कर सक्ता है. पर वाह! तुमने भी अपनी आसुरी माया से क्या खूब रूप बनाया है. विचारे निष्कपटी लोग इसे देख कर झट तुमसे प्रति कर बैठते हैं. पर यार ! तुम्हारी जिन्हा तुम्हारे असली रूप का बोध करा देती है इस्से शीघ्र वह तुम्हारे जाल से निकल जाते हैं. पर शावाश! तुमभी विना दाग लगाये साफ किसी को अपने जाल से निकलने नही देते हो. हे सज्जन कौवो। सांपकी दो जिन्हा होती हैं पर तुम्हारी तो उनके वावा शेष नाग से भी ज्यादह जिन्हा पाई जाती हैं, और वह टेली ग्राफ की तार के समान परनिन्दा केलिये रातदिवस चलती ही रहती हैं, इस्से विदित होता है कि तुम कलयोग के विद्युद् जिन्हा हो. त्रेता युग में विद्युद जिन्हा एक राक्षस था. स्यात् इस कलयुग में तुम वह ही अवतार धारी हो. कारण कि जैसे वह ऋषि मुनियों के हाड मांस और लहु को चूसता था, वैसे ही तुमभी निष्कपटी मित्रोंको चूस डालते हो. इस्से विदित होता है कि तुम साक्षात विद्युत राक्षस के ही पूर्ण अवतार हो. महाभारत में लिखा कि कुरु क्षेत्र के युद्ध में कबन्ध उठा था कि जिस का शिर नही था. सो तुम्हारे भी तो शिर नही देखते, तब तुम द्वापर युग के वह ही कवन्ध हो क्या? और समय पाकर कालयुग के मयदान में आये हो क्या ? कारण कि कवन्ध की वाहें बडी२थीं जो कोई उन में फंसजाता फिर इसका छुटकारा कठन था. पर तुम्हारे हाथों से भी तो किसी का निस्तार नही दिखाता. स्त्री, पुरुष, धनी, दरिद्री, साधु, ब्राह्मण, राजा, प्रजा, सब को ही वश में करके तुम अपने पेट में गडप किये चले जाते हो. सबकी ही कीर्ती मर्यादा और प्रतिष्ठा को तुम शुष्क करते चले जाते हो तोभी तुम्हारी आशा नही मिटती.

(शेष फिर)

प्रेरित पत्र.

प्रेरित पत्रों के सम्पादक उत्तर दाता नही होंगे

आकोला निवासी श्रीयुत बावा कृष्णदास गुरु सेवक दास वैरागी रचित.

खियाल रंगत खडो धर्म के विषयमें ॥

धर्म अर्थ गये भूल अधर्म को मानें धर्म भारत वाशी ॥ गो, कन्याकी विसार रक्षा जा जा नहोत हैं काशी ॥ धर्म नाम धारण करना है सदा चारका मन माही। मनो मता नहि कथी यदर्थ ही वेदों में श्रिश्रुति गाई ॥ ध है धारणिय धातु शास्त्रमें लक्ष देव आर्यो भाई । धर्म अर्थ नाहि छिया छाई का ये पोपालिला[१] फैलाई ॥ दोहा ॥ प्रथम धर्म है आर्यों का गउवों के कष्ट निवारना। जीव हिंसा ना थडे निश दिवस येही विचारना ॥ चौपाई ॥

दुजे धर्म भजे जगदीशा ॥ जो है तिहूपूरके प्रभु ईशा ॥ तन मन से तिनीवावे सीसा ॥ जो दायक फल चारु अहिशा ॥ शेर ॥ त्याग दि कुल कान कन्यन की न ओर नेहारते॥ येभी नही सोंचों कि लाखों गौको हिंसक मारते ॥ धर्म हमरो श्रेष्ठ है हम हिंदु ऐसे पुकारते॥ त्याग दि संध्या हवन मुर्दों के नाम उचारते ॥ चाल ॥

१ पोप लीलका तात्पर्य हठ धर्मीयों से है.

येहि मान रहें हैं धर्म ये अपना भारी ॥
छुनें नहि पाने को हि डोंम पर वारी ॥
नहि देवें तुकडा द्वार पे रोय भिखारी ॥
ऐसे आचरण पर आश मुक्ति कि धारी ॥
॥ मिलान ॥ लाखों अवला विधवा होकर रोवत ग्रहमें जैं दाशी ॥ गोकन्या कि करें न रक्षा ॥ १ ॥

किये दूर अतिमहा शुद्रको नीच मानकर अति भारी ॥ कीना कौंन अपराध आपको करते वो तावेदारी ॥ मनूजीके अनुसार वाक्य वो अपनि पदवि स्विकारी ॥ ढोवें वोझ रस्ता बतलावे कहलाते हैं वेगारी ॥ दोहा ॥
गरहै उनको दुपण गौके मांस आदि खानसे ॥
तों क्युं रखतेहो मुहब्बत भाई मुसलमानसें ॥
नीच खाय काहिं पायेता नहि जीव बधते जानसे॥
मुसलमाँ काटें सरासर बिसमिल्ला कहेके जबानेसे ॥ चौपाई ॥
शुद्र तुम्हारि कीरिया सब माने ॥ गोवध हेत कबहु नहि आने ॥ देव तरहे द्वीज को सनमाने ॥ पूजत गौरि हर ईशाने ॥ शेर ॥
विरुद्ध रहे ते जो सदा आर्यों से मुझे टेवके ॥
तोडे जो देवालय कई शंकरादि देवके ॥
करते हैं निंदा पठन वो ईश श्री स्वयमेवके ॥
मार कई किने मुसलमां पोपजी इस पेवके ॥
सो विप्रन संग हरतहैं से मजे उडावें ॥
ताहे शुद्र लखि लखि मन में अति पछतावें ॥
जो गोमांश का नितप्रति भोग लगावें ॥
सो वैठ बराबर पान सुपारि खावें ॥ मिलान ॥
प्रती पक्षी का मेल चहे और स्वपक्ष को देवें फांसी ॥ गो. कन्याकि बिसार रक्षा ॥ २

इनहिं मेंसें से कोहि बने मुसलमां धेड माड याहो भंगी ॥ दीन द्वार फैलावे वोभि हो जाता है फिरसंगी ॥ निंद करे वेश्या संग गर वो होवे वो मातंगी ॥ मुंहसे मुहको मिलावे उस्के कहे तु मेरि अर्धंगी ॥ दोहा ॥
धर्म इसमें कहां रहा बतलाईये गुणवानजी ॥
यद्वत सांप्रत धर्म के मैं कहांलो करहुं बखानजी ॥ अति निंद कर्म स्विकार के बननें चहे सुजानजी ॥ छुने न देवें नीचको निजें शौच्य के अस्थानजी ॥ चौपाई ॥
मूल धर्म यह आर्य नखाना । गोहित अपनो अर्थ लुटाना ॥ सदाचार नित मनहि वसाना । बाल व्याह किरिती छुडना ॥ शेर ॥
जीव हिंसा ना धडे निज हेत या निज हाथसे ।
औगऊ कि करना पालन योग्य निज औकातसे ॥ छुने छिलाने का नहिं है ऐब कोहि जातसे ॥ विद्वता रखना गुणि श्रृष्टि कि हर एक बातसे ॥ चाल ॥ करो वेद पठन और हुई को दिलसे बिसारो ॥ कामादिक अपने आत्मिक शत्रु मारो ॥ निज प्रेम सहित श्री ईश के नाम उचारो ॥ यज्ञादि हवन से वायु जल को सुधारो ॥ मिलान ॥
कथा धर्म उपरोक्त वेद में फक्त हैं जिस्के सुखराशी ॥ गो. कन्या कि विसाररक्षा ॥३॥

और धर्म का ऐके अंग कन्या के दुःख पर राखियो ध्यान ॥ बालब्याह से लाखन अबला अति उठाती हैं नुकसान॥ब्रह्मचर्य छुटे-लडकन के औंर कै पाते मौत निधान ॥ हानि इसमे विधवा कन्या और निर्बल होति है संतान ॥ चाहिये इन्सान कोंके ब्रह्मचर्य को धारना॥ सोला बरस या बीस तक निज विर्ये बल कों संभारना ॥ विर्ये हो परिपक्क और संतति की सुधारना ॥ पाते वो आयुष्य पूरि होते वो जल दिखारना ॥ चौपाई ॥

याको नाम है धर्म वेव्हारा॥ मनुजीने यह बचन उचारा ॥ जासे तेरे सकल सबसारा॥ धर्म सनातन ये हि हमारा ॥ शेर ॥

अबतो माने धर्म ये हि छुवा छाई से वचे ॥ मनमता के कर्म करना अपने मनमें जो जचे ॥ ये हि अर्थ पे पोपजीनें सैंकडों परचे रचे॥ कर दिया भारत को गारत दईके दैव तनचे॥ हो विद्या हीन ये ऐसी दशा चलाई ॥ लै अपजस सिर पर त्याग न करे भलाई ॥ करो कुसंग त्याग न जिस्में हो सौदाई ॥ पढो वेदकि विद्या सारे लोग लुगाई ।मिलान॥ कृष्णदास विन हुई तजके चुके न जानो चौरासी ॥ गोकन्याकि विसार रक्षा ॥ ४ ॥

इस उपरोक्त लेखानुसार अंतरीय कुकर्म काग्रहण आज हमारे भारत भाई सैकडों करते हैं और दर्शनिय आचार जैसे छूत परहाह इसको हि अपना मूल धर्म मान रखा है. परंतु यह सनात नही और शास्वत भी नही इस निमित हमारे स्वधर्म्मावलंबि भाइयो की सेवामें यह दास सविनय प्रार्थना कर्ता है की सत्य का ग्रहण और असत्यका त्याग करे अविनाशि जो शान्ति सुख है तिस को पाकर सानंद कालक्रमणा करें ये विषय में ही उपरोक्त लावनी निर्मित कि गई, ये वि.

॥ खियाल रंगत छोटि ॥

कलिको प्रसार प्रभु छाय रहो जग सारो ॥
ताहे टारन शिघ्रहि रुप कल्कि धारो ॥
अबला अनाथ के क्लेशन कोहि नेहारे ॥
वेह बाल ब्याहसे कष्ट ये इन पे सारे ॥
उपवर कन्यनके स्वयंवर सबने विसारे ॥
अब अष्ट वर्ष के भितर ब्याह उर धारे ॥
स्व कपोल कल्पित पदर्थ श्रुति उचारे ॥
जो अनर्थ इसमें ताकों नहि बिचारे ॥मिलान॥
निज हस्त पुत्र पुत्रिन पर संकट डारो॥ताहेटारन

१० प्रथमो अनर्थ कई लडके रोग से मराहिं ॥
फिर बाकि ब्याहता कन्या जन्म दुःख भराहिं॥
नहि पुनर्व्याह कई जाति हिंदु के कर हि ॥
फिर वोह कन्या अति निंद्य कर्म अनुसरहि॥
कारण वो अज्ञ अबला किमी मन को पकर हि॥
नही होत ईंद्रियके निग्रह झुर झुर मराहि ॥
॥ मिलान ॥ ठानन मनमें पर पुरुष के गमन बिचारो ॥ ताहे टारन ॥ २ ॥

गर करे रति पर पुरुषसे कोहि बेचारी ॥
तौ वही जगत में सब प्रकार कि ख्वारि ॥
ताहे दूषण देवे जग कि सब नर नारी ॥
पर वाके ह्रदय कि पीर न कोहि बिचारी ॥
कदाचित हो संतति ताहें देत सब गारी ॥
वर्ण शंकर गोलक कृष्ण पक्षी उच्चारी ॥
मिलान ॥ नहि काहिं मिले फिर उन्को जगमें धारो ॥ ताहे टारन ॥ ३ ॥

इतने अनर्थ से डर को हि जन्म बितावे ॥
पीसत कूटत सब जन्म सिराने जावे ॥
उर मध्य निशी दिन पतिको विरह जरावे ॥
पर कलत्र लख लख सीस धुने पछतावे
इतनो अनर्थ एक बाल ब्याह करवावे ॥
ताहे लक्ष देय कोहि गुणीन दूर हटावे॥मिलान॥
कथे कृष्णदास अब ईश हि करो संहारो ॥
ताहे टारन शिघ्रहि रुप कलंकि धारो ॥ ४ ॥

भारत भाईयों शुभ चिंत्क

कृष्णदास गुरु शेवकदास वैरागी

मूल्य प्राप्त स्वीकार.

श्रीमान महाराज कुमार श्री जंगी राजा साहेब बहादुरजी देव १॥)
श्रीयुत बा० मखन लाल जी मं, आ. स. भीलवाडा १)
श्रीयुत बा० केशोदत्त जी सनवाल से. पो. मा. भमिताल १॥)
श्रीयुत, पं. जगत राम शर्मा मं. ब्रा. स. क्षवाल १)
श्रीयुत बा. गिरधारीलाल जी, सी. हो. ऐं. मैं. ई. पे. म्यु, हा. नागपूर १॥)
श्रीयुत पं. लीलानन्द जी जोशी सुप्रीन्टेन्डन्ट दाराऊ १॥)
श्रीयुत बा. झंडूलाल जी, अग्रवाला. कागरोल १॥)
श्रीयुत कुं. करतसिंह जी नम्बरदार सुजानपूर १॥)
श्रीयुत मिश्र, हरसरणदास जी स्कूल रोतक १॥)
श्रीयुत बाबा महावीर दास जी सीता मठी ... १॥)
श्रीयुत पं. धनी रामजी काशीपूर ... ... १॥)
श्रीयुत बा. बलदेव सिंह जी सवार बरेली ... १)
श्रीयुत बा. जगत सिंह जी रईस जेहटा ... १॥)
श्रीमान राओ बहादुर बा. महावीर प्रसार जी-बराओं ... ... १॥)
श्रीयुत पं. सरदार सिंहजी मं. ब्रा. स. हिसार १)
श्रीयुत पांडे चन्द्रदत्त जी चम्पानौला ... १॥)
श्रीयुत पं. बलदेव सहायजी वैद्य दुधली ... १॥)
श्रीयुत से. दयाराम बालकृष्ण हे. मा. सीवनी १॥)
श्रीयुत बा. बोधन राओजी कदम दारोगा, रायगढ़ ... ... १॥)
श्रीयुत बा. झुमक लाल जी, बी, एन, मि, राजनादगाम ... ... १॥)
श्रीयुत पं. भगवान दासजी से. मा. छत्तरपूर १॥)
श्रीयुत बा. सिंह जोशी काली म्यूंग ... ... १॥)
श्रीयुत पं. मदनेश्वरशर्माजी मि. स्कूल. डी. टी खान ... ... १॥)
श्रीयुत बा. भागीरथ लाल जी का. गो. गि.दा. त. सी. हाथरस ... ... १॥)
श्रीयुत महंत रघवर दास जी स. प. ध. स. हाजीपूर ... ... १)
श्रीयुत बा. देवराम जी हे. क्लार्क. मे. आ. बडवानी ... ... १॥)
श्रीयुत पं. गोरीशंकर जी अवस्थी गो. स. जगन्नाथपूरी ... ... १॥)
श्रीयुत बा. गौरी शंकरजी नम्बरदार—जराखर १॥)
श्रीमान बा. ठाकुर दास जी रईस बनारस ... १॥)
श्रीयुत मुंशी रामदयाल जी वर्मा ऐक्रोन्ड. आ. नाहन ... ... १॥)
श्रीयुत बा. कर्म चंद जी कलेसी वर्मा रावलपिंडी १॥)
श्रीयुत मुंशी, मंगली रामजी रईस कमला ... १॥)
श्रीमान डाक्टर ठाकुर दास जी शिमला ... १॥)
श्रीयुत चतुर्वेदी तारादत्त जी डि. री. को. ना. हलद्वानी ... ... १॥)
श्रीयुत से. दसरथ शाह जी. राम गंज ... १॥)
श्रीयुत पं. राम कृष्णजी पटवारी एच. सी. पी, डि. री. कमाऊ ... ... १॥)

श्रीयुत बा. वेनी सिंहजी रईस सरमेरा ... १॥)
श्री पी. आर. जे, के.कैंडी हेडमाष्टर अमर वाडा १॥)
श्री पी. पी, चालत्री ऐन्ड कम्पनी यु.से.प.स. बनारस... ... ... १॥)
श्रीयुत कुं. खूब सिंह जी रईस. जराखर ... १॥)
श्रीयुत लाला. वृज लाल जी मं. स. ध. कलत्र, बटाला ... ... १॥)
श्रीयुत पं. सहजरामजी म्यूनिस्पाल कमिश्नर करांची ... ... १॥)
श्रीयुत पं. तारादत्तजी पांडे डि. रि. कुलेक्टर अलमोडा ... ... १॥)
श्रीयुत गोस्वामी रामजी दास—अकालगड ... १॥)
श्रीयुत वा. तुलसीलाल जी रईस ताजपूर ... १॥
श्रीयुत वा. दमडिया साहू जी मुखतार, मांडवी १॥)
श्रीयुत चतुर्वेदी ईश्वरी प्रसाद जी सरमोर ... १॥)
श्रीयुत पं. भोजराज जी शर्मा अटरावल ... १॥)
श्रीयुत वा. छेदालाल जी महता कायमगंज ... १॥)
श्रीयुत वा. लक्ष्मी प्रसाद जी अग्रवाल मैनेजर एग्लोहिन्दी लाग्नेरी कलकत्ता... ... १)
श्रीमान वा. ज्वाहर लालजी जैन वैद्य—जैपूर १)
श्रीयुत वा. गुरू वख्श सिंहजी मं. आ. स. मुलतान ... ... १)
श्रीयुत वा. वंसीधरजी ट्रेजरे धर्मसभा सीतलगंज ... ... १)
श्रीमान परम हंस शिव गण येगी जी गुजरात १)
श्रीयुत पं. राजा रामजी पांडे माष्टर—वनारस १)
श्रीयुत पं कीमत राम परमानन्द जी, करांची १॥)
श्रीयुत वा. विन्द्रा प्रसाद जी रईस रामदासपूर १॥)
श्रीयुत वा. चरंजी लाल जी जैन आगरा ... १॥)
श्रीयुत लाला.काली चरण जी पैशकार कुची... १॥)
श्रीयुत वा. राम प्रकाश लाल जी इन्स्पेक्टर मुजफ्फरपूर ... ... १॥)
श्रीयुत वा. शम्भू लाल जी गुप्त अनूपशहर ... १॥)
श्रीमान एस. रंगीया साह नाईडू बेंगलोर ... १॥)
श्रीयुत पं. रामेश्वर वाजपेई जी कलकत्ता ... १॥)
श्रीयुत पं. महादेव दत्त जी शुक्ल अहियागंज १॥)
श्रीयुत वा. नानक प्रसाद प्लीटर—पुरलिया... १॥)
श्रीयुत से. वंसीधर वसन्त लाल जी ताजपूर १॥)
श्रीयुत मैनेजर संतराम पुस्तकाले अमृतसर... १॥)
श्रीयुत वा. मुरलीधर दास जी सीतावर्डी ... १॥)
श्रीमान कवीरदास आनन्द स्वरुप जी हुवली २॥)
श्रीयुत से. ठाकुरदास ओंकारदासजी सीवनी ... १॥)
रा. रा. से. तिलकचंद ताराचंदजी सूरत ... १)
श्रीयुत पांडे. आनन्तरामजी रायगड ... ... १॥)
श्रीयुत सेठ जगन्नाथ सदाशिव नायकजी धुलिया १॥)
श्रीयुत वा. चरंजी लालाजी हिसार ... ... १॥)
श्रीयुत वा. रामप्रसादजी मातापूरा ... ... १॥)
श्रीयुत चौधरी घासीराम कस्तूरचंदजी रतलाम १॥)
श्री० वावू केदार नाथ द्वारकानाथजी मिर्जापूर १॥)
श्री० वा० गिरधारी लालजी वर्मा रतन पूरा ... १॥)
श्री० हेडमाष्टर चरंजी लालजी. त. सी. स्कूल. अलीगढ ... ... — ... १॥)
रा. रा. पं. दामोदर दास नागर क्लर्क लो. स्मो. आ. अजमेर ... ... १॥)
श्री० वा. रघवर हलवाईजी सीतावर्डी ... १॥)
रा. रा. पं लक्ष्मी शंकर नाथुरामजी पांड्या वीरमगाम ... ... १॥)
श्री० वा. वलदेव सिंह वर्माजी चौहान पेन्शनर इन्स्पेक्टर अमरावती ... ... १॥)
श्री० पं. मुरारी लाल शास्त्रीजी मुरार ... १॥)
श्री० पं. सूर्य्य नारायण शर्माजी. मं. ना. सा. स. जव्वलपूर ... ... १)
रा. रा. से. तूकाराम गोविन्दजी मं. ध. स. हुशंगावाद ... ... १)
श्री० वावा कृष्णदास गुरू सेवक दासजी वैरागी आकोला ... १॥)
श्री० वा. तेज प्रताप सिंहजी रइस अतरौलिया. १॥)
श्री० वा. गोकुल चंदजी वर्मा—मुरार ... १॥)
श्री० वा. राम स्वरूप सिंहजी विद्यार्थि मझौल .. २॥)
श्री० से. मदन गोपाल जी सराफ कानपूर ... १॥)
श्री० सेठ लालजी सुन्दर जी चैनमचैंट कामठी ... १॥)
श्री० वा. चरंजीलाल जी आटोया—... ... १॥)
श्री० पं. छेदीलालजी शुक्ल मित्र. मंडल अजमेर १)
श्री० पं. ज्योति स्वरूपजी. मं. ध. स. अतरोली १)

(शेषफिर)

धर्म्मामृतपत्र
धर्मसार
गो. पं. जगत नारायण शर्म्मा द्वारा
बम्बई धर्म्मामृत यन्त्रालय में
मुद्रित व प्रकाशित होता है

श्रीधर्म्मामृत की संक्षेप नियमावली।

(१) इस पत्रका मूल्य, यहां और बाहर सर्वत्र डाकव्यय सहत अग्रिम वार्षिक केवल १॥ रु. है। गवर्मेन्ट, तथा राजा महाराजाओंसे उनके आदरार्थ ५ रु. है

(२) पांच श्रीधर्म्मामृत एक साथ खरीदने वालों को एक प्रति मुफ्त अर्थात जो पांच ग्राहक हो कर ७॥ रु. दाम भेज देंगे उनको एक पाकिट में ६ श्रीधर्म्मामृत की पुस्तकें हर मास की पहिली ता० को मिला करेंगी.

(३) पत्रके उत्तर चाहने वाले महाशय, जवाबी कार्ड अथवा टिकट भेजें अन्यथा पत्रोत्तर न दिया जायगा.

(४) नमूने की प्रथम प्रति पहुंचने पर यदि ग्राहक होना स्वीकार हो, तो मूल्य ता० १ तक भेज देना चाहिये, यदि ग्राहक होने की इच्छा न हो तो कार्ड द्वारा सूचित करना पड़ेगा, और नमूने की पुस्तक पर आध आनेका टिकट लगा वापसकर देनी चाहिये, नहीं तो ग्राहक श्रेणी में समझे जा येंगे. (५) विज्ञापनकी छपवाई एक मासके लिये प्रति पंक्ति दो आना तीन मासके लिये एक आना, और छ मास या इस्से अधिक समय के लिये आध आना है. और छपे हुये विज्ञापनों की वितरण कराई ५ रु. लिया जायेगा

श्रीधर्म्मामृत सम्बन्धी सब चिट्ठी, पत्र, व मनीआर्डर और समाचार पत्र निचे पतेपर आने चाहिये

गो. पं. जगत नारायण शर्म्मा
पोष्ट गिरगाम—मुम्बई.

श्रीधर्म्मामृत पुस्तकालय की पुस्तकें

(१) गोरक्षाप्रकाश—गऊ मातके बारेमें विदेशियोंके एक सहस्त्र प्रश्नोका उत्तर, सर्वगोभक्तों को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये. मूल्य ८ आना (२) अकबर गोरक्षा न्यायनाटक इसमें अकबर बादशाहने किस रीतिसे गोरक्षा कीथी, यह नाटकी चालसें कथन किया गया है. इसमें बहुत, करुणामय नाना प्रकारके राग भी हैं. मूल्य १२ आना (३) अकबर बीरबल का समागम. इसमें बीरबलकी चतुराई के दोहे भरे हैं. देखने के योग्य पुस्तक है. मूल्य १२ आना. (४) ईसू परीक्षा. इसमें ईसामसीह की परीक्षा की बाते हैं. प्रश्न करते ही ईसाई दांत दबाते भाग जाते हैं मूल्य १ आना. (५) ईसाई मतपरीक्षा. इसमें ईसाई धर्म के ढोलकी पोल खोली गई हैं. पढकर देखलो मूल्य १ आना. (६) हिंदुओंकावर्तमानीन धर्म अर्थात् भोलेभाले हिन्दु भाई किस रीतिसे विधर्मियों के फंदे में फंस जाते हैं. मूल्य १ आना) (७) गाजीमियांकी पूजा. हिंदु कबर पूजियों को यह क्या सूझा ? पढकर देखलो मूल्य आधा आना (८) गऊकी नालिश. मूल्य आध आना. (९) गोपुकार. मूल्य आध आना. (१०) गोपुकारचालीसी मूल्य आध आना. (११) गोविलाप ? मूल्य आध आना. (१२) गोदान व्यवस्था. मूल्य आध आना. (१३) गोगोहार. मू० आध आना. (१४) काउपोटेक्सन. अर्थात् एक अंगरेज की गोभक्ति मू० आध आना. (१५) गोरक्षा पर बादशाहाके फतवे (व्यवस्था) मू० आध आना. (१) गोहितकारी भजन. मू० आधा आना. (१७) भारत डिमडिमा नाटक. एकवार पढोगे तो भारतकी क्या दशा है जान लोगे ० चार आना.

अमृतं शिशिरे वन्हिरऽमृतं बाल भाषणम् ।
अमृतं राजसंमानो, धर्म्मोहि परमामृतम् ॥

वर्ष २.] बम्बई कार्तिक से माघ तक सं० १९५६ स० ८९-९०० फेब्रवारी [अंक १२

हर्ष ! हर्ष ! हर्ष !!

यह तो आप जानते ही हैं कि उत्तम कार्य्यों में नाना विघ्न आ पड़ते हैं. परन्तु यदि मनुष्य विघ्नों से न घबरा, दृढता से अपने कार्य में लगा रहे, तो ईश्वर कृपा से आवश्य ही वह अपने कार्य को पूर्ण कर सकता है. यह कौन कह सकता था ? कि श्री धर्म्मामृत इस वर्ष को समाप्त कर सके गा. पर गो० पं० जगतनारायणजी की दृढता ने यह फल दिखलाया कि इस वर्ष को समाप्त कर इस पत्र के लिये निजका प्रेस (*धर्म्मामृत यंत्रालय*) स्थापन भी कर दिखलाया. आशा है कि अब आगे को यह पत्र नियमानुसार आप महाशयों की सेवा में पहुंचता रहेगा.

भारत भाईयोंका हितेच्छुक,

धर्म्मामृत का एक सहायक. ना. य. द. श.

इस वर्षकी समाप्तके लिये ४ अंक एक संग ४ फारम में निकाले गये हैं इस की कसर आगे के अंकोमें पूर्ण कर दी जावेगी. स, पा,

भारतौन्नती का साधन सद्धर्मही है.

(गतांक से आगे)

यह तो सबी मानते हैं कि वेद सब से पुरानी पुस्तकें हैं. और आर्य्य लोग इन्ही को अपने धर्म की जड़ जानते हैं. कारण मनु भगवान् कहते हैं कि:—

" वेदोऽखलो धर्म मूलं "

अर्थात्—वेद धर्मके मूल (जड़) हैं.

यद्यपि—और पुस्तकें भी आर्य्य धर्म में मानी जाती हैं परन्तु वह वेदों के अनुकूल होने से ही मानने में आती हैं, कारण कि ऋषि मुनी कह गये हैं कि.

श्रुति स्मृति विरोधे तु श्रुति रे व गरीयसी ।
धर्म जिज्ञा समानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः ॥

अर्थात्—यदि मन्वादि स्मृति, श्रुति (वेद) के प्रतिकूल न हों तो वह त्याग देने के योग्य हैं.

इस श्लोक से सिद्ध हो गया कि वेदों के अनुकूल होने से ही अन्य ग्रंथों के वाक्य मानने के योग्य हैं, वेद विरुद्ध होने से नही,

वेदों में ऋग्वेद प्रधान्य है, कारण कि उसमें सर्व विषयों के मूल तत्व होने से अन्य वेद भागमें अर्थात् यजु स्साम में उनका विस्तार किया हुआ है. अब यह देखना चाहिये कि वेद में किस विषय का प्रतिपादन किया है. वेद अर्थात् ज्ञान, विद्या, इस नाम पद से स्पष्ट विदित होता है कि, मनुष्य को जो धर्म विषय विचार करने के योग्य हैं, उनको धर्मोपदेश विषय में.

"मा हिंस्यात्सर्वा भूतानि"
"न कलंजं भक्षयेत्"
"अहिंसा परमो धर्मः"

अर्थात्—हिंसा और मांस भक्षण नही करना. अर्थात् हिंसा, व मांस भक्षण न करना यह श्रेष्ठ धर्म, मनुष्यों को ग्रहण करना के लिया प्रथम ही यह धर्मोपदेश किया है. स्मृति कार इसकी पुष्टीके लिये लिखते हैं कि:—

अहिंसा सत्य मस्तयं शौच मिंद्रिय निग्रहः। एत समासिकन्धर्म्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः॥ ॥६३॥ (मनु अ० १०)

इज्याचार दमाहिंसा दान स्वध्याय कर्मणाम्। अयंतु परमोयधोगे नात्म दर्शनम् ॥८॥
(याज्ञवल्क्य स्मृति० प्र०)

अहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्य्या परिग्रहायमाः ॥ ३०॥ (पतञ्जलि योग दर्शन दूसरा पाद)

यो बन्धन वध क्लेशाने प्राणिनां न चिकीर्षति। स सर्वस्य हित प्रेप्सुः सुखमत्यन्तमश्नुते॥ मनु (छां० ख० १५ प्र० ८ वां १)

अहिंसान्त्सर्वभुतान्यन्यत्र तीर्थेभ्यः ॥

इन सर्व वाक्यों का तात्पर्य्य "हिंसा त्याग" के बारेमें ही है. अर्थात् वेदोंसे लेकर पुराणों तक सर्व ग्रंथों मे हिंसा नही* करना यह परम धर्म लिखा है. इन ऋषि वाक्यों को देख कर यह शंका खडी हो जाती है, कि जिन ऋषि मुनियों के ग्रंथों में "अहिंसा को परम धर्म लिखा है. फिर उन्हीं के ग्रंथों में "हिंसा" भी मिलती है इसका क्या कारण है ?

*यदि यह विषय देखने की रुचि होय तो हमारी बनाई गौरक्षा प्रकाश पुस्तक को देखें.

यह विषय महात्माओं के सतसंग से ऐसा विदित हुआ है कि "हिंसा" के बारे में जो वाक्य ऋषि मुनियों के ग्रंथों में मिलते हैं, वह वाक्य दस्यु लोगों के मिलाये हुये हैं. इस कथन की सत्यता हम आगे चलकर दिखलायें गे.

यह तो सबी मानते हैं कि मनुष्य मात्र एक प्रकार से भाई ही हैं, कारण कि एक तो सर्व की उत्पत्ति जगनियन्ता परमेश्वर से है, और दूसरे सर्व की आदि जन्म भूमि यह आर्य्य भूमि ही है. इन संबन्धों से सर्व मनुष्य अपने भाई ही हैं. पर इन सर्व भाईयों में न तो परस्पर प्रीति ही देखने में आती है, और ना ही सर्वका रंग ढंग, रीति नीति ही मिलती है. इसका क्या कारण है ? इसका कारण ऐसा मिलता है, कि जब इस देश में मनुष्यों की विशेष वृद्धि होने लगी, तब कुछ लोग अन्य भूमियों में जिसको जो ठीक लगी जा वसे. और कालान्तरमें वहांके जल वायुके प्रभावसे यहांके निवासियों से उनके रंग रूप में भेद पड गया, और उनके आचारण भी वेद विरुद्ध हो गये. वेद विरुद्ध आचारण होने से उनको "मा हिंस्यात्सर्वा भूतानि, व आत्मवत्सर्व भूतेषु" यह ज्ञान जाता रहा. और वह हिंसा में लग गये, यहां तक के मनुष्य हिंसा कोभी पाप न समझने लगे, तब इनका नाम "दस्यु" और यहां के निवासीयों का नाम यहां की भूमिके नाम से आर्य्य पड गया. तथा यहां पर भी जो लोग वेदोक्त कर्म से हीन हो जाते थे, उनका नामभी दस्यु पड जाता था, और वह यहां से निकाल दिये जाते थे. देखो मनु में लिखा है कि:—

मुखबाहु रूपज्जानां या लोके जातयो वहिः। म्लेच्छवाचश्चार्यवाचः सर्वेते दस्यवः स्मृताः॥

अर्थात्—जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, इन के क्रिया लोपसे जो अधम जाती उत्पन्न हुई, चाहे वह म्लेच्छ भाषा करके युक्त हों, चाहे आर्य्य भाषा बोलते होंवे सर्व दस्यु हैं. अर्थात् जो वेद क्रिया से विहिन हैं वह सर्व दस्यु हैं. चाहे किसी देश में निवास क्यों न करते हों. मनु

योवमन्ये तते मूले हेन्तु शास्त्राश्रयाद्द्विजः ॥
स साधुभिर्बहिष्कार्यो नास्तिको वेद निंदकः ॥

अर्थात्–जो वेद और आप्त पुरुषों के किये शास्त्रों का अपमान करता है, उस वेद निन्दक नास्तक को जाती, पंक्ति, और देश से बाहर निकाल देना चाहिये.

इस मनु वाक्यानुसार वेद क्रिया से हीन मनुष्यों को यहां से निकाल देते थे. जैसे कि पूर्व समय में विश्वामित्र ऋषि ने जब किसी अन्यके बालक को उत्तम जान कर अपने पुत्रों में से उसे जेष्ठ पुत्र बनाया था, और इनके सौ पुत्रों में से पचास पुत्रोंने उसका ज्येष्ठपन स्वीकार नहीं किया था, तब विश्वामित्रजी ने उन पचास पुत्रों को आज्ञा भंग करनेके अपराधमें जाती भ्रष्ट कर दक्षिण देशस्थ आरण्य में निकाल दिया था, और यह जाति भ्रष्ट विश्वामित्र के पचास पुत्र आगे चल कर अपने पुत्र पौत्र सहित दक्षिण देशस्थ द्राविड, पुंड्र, शवर, ऐसे सेमेटीक अर्थात राक्षस, म्लेच्छ जाती में जा मिले थे.* तथा राजा हरिश्चंद्रकी सातवीं पीडी में जो बाहु नामक राजा हो गया है, जब वह तालजंघा और हैहा असुरों से पराभव (हार) खाकर अपनी रानियों सहित आरण्य में भाग गया था. उस समय बाहु की एक रानी गर्भवन्ती थी, परन्तु उसकी शौकन ने द्वेष बुद्धि से उस पर विष प्रयोग गया, जिस के कारण उसके पेट में सात वर्ष तक छो करा रहा, इतने में राजा के वृद्धावस्था होने से एक दिवस और्व ऋषिके आश्रम में मृत्यु हो गया, और उस की यह गर्भवंती राणी जब राजाके साथ सती होने लगी तब ऋषियों ने उसे गर्भवंती जान कर कहा कि, हे रानी तेरे उदर में महापराक्रमी सार्वभौम राजा है, इस लिये तू प्राण मत त्याग. ऋषियों के यह बचन सुनकर यह राणी सती होना त्याग, ऋषि आश्रममें रही कुछ दिवसके उपरान्त उसे पुत्र प्रसव हुआ, और ऋषियोंने उसका नाम सगर–(स–सहित–गर–विष) रक्खा. और उसे उत्तम प्रकार से शस्त्रास्त्र विद्या सिखला कर अपने पिताका बदला लेने की आज्ञा दी. सगर ऋषियों की आज्ञा पाकर केरल. शक, कांबोज हैहा, जंघताल, यवन इत्यादि. अपने पिता शत्रुओं को जीत पिताकी गादी पर बैठा, और कुछ दिवस के उपरान्त पुनः उनको समूल नाश करने में प्रवृत हुआ. तब कुल गुरु वशिष्ठजी की आज्ञा से प्राण दंड न दे, उन सब को वेद भ्रष्ट और सक्षौर (सिर मुंडवा) कर, दक्षिण देश में निकाल दिया.* ऐसे ही नहुश के पुत्र ययाति की कथा है. ययाति राजाके पांच पुत्र थे. इन पुत्रों में से तुर्वसु ने अपनी तरुणावस्था जो पिता ने मांगी थी देने से इनकार किया, इस अपराध में महाराजा ययाति ने उसे परिवार सहित ज्ञाति भ्रष्ट कर के अगम्यगामी, मांस हारी और पशुत्व प्रवृति के अनुसार चलने वाली जो म्लेच्छ जांती दक्षिण में रहती थी वहां पर निकाल दिया.×

*यह कथा ऋग्वेद के ऐतरेय ब्राह्मण, तथा पुराणों में भी है.—तस्य विश्वामित्रस्यैकशतं पुत्रा आसुः पंचाशदेवज्यायांसोमधुछंदसः पंचाशत्कनीयांसस्तद्ये ज्यायांसो न ते कुशलं मेनिरे ता ननु व्याजहारांतान्वः प्रजा भक्षीष्टेति त एतेऽध्राः पुंड्राः शबराः पुलिंदा मुतिबा इत्युदंत्या बाहवो भवन्ति. इसी प्रकार वेद संस्कार भ्रष्ट क्षत्रियों की जो संतति पीछे से उत्पन्न हुई वह द्रावडादि म्लेच्छ हैं ऐसा मनु स्मृति में भी लिखा है कि:—

झल्लोमल्लश्चराजन्याद् व्रात्याभिच्छिविरेवच।
नटश्च करणश्चैवखसो द्रविड एवचा ॥

* द्राविडाश्च कलिंदाश्च पुलिंदाश्चाप्युशीनराः ।
कौलिसर्पामाहिषकास्तास्ताः क्षत्रियजातयः ।
वृषलत्वं परिगता ब्राह्मणानाम दर्शनात् ॰
(महाभारत; अनुशासन पर्व २१०५–६)

अर्धं शकानांशिरसो मुंडयित्वा व्यसर्जयत ।
यवनानां शिरःसर्वे कांबोजानां तथैवच ॥ १ ॥
पारदाःमुक्तकेशाश्च पल्हवाःश्मश्रुधारिणः ।
निःस्वाध्यायवषट्काराः कृतास्तेन महात्मना ॥२॥
शकायवनकांबोजाः पारदाः पल्हवास्तथा ।
कौलिसर्पाःसमहिषा दार्वाश्चोलाःसकेरलाः ॥ ३ ॥
सर्वेतेक्षत्रियास्तात धर्मस्तेषांनिराकृतः ।
वसिष्ठवचनाद्राजन् सगरेण महात्मना ॥ ४ ॥
महाभारत, हरिवंश पर्व ७८०–७८३.

इसी प्रकार बेई २ राज्य पुत्र, तथा ऋषि पुत्र जाती भ्रष्ट और कल्प बना कर निकाले गये, और वह द्राविड़, तेलंग, करेल, कंबोज, इत्यादि मांस हारी और अगम्य गामी सेमिटीके (अनार्य्य) म्लेच्छ जो पहले तामील प्रांत, तथा मलवार के किनारें रहतेथे. उनमें जा मिले. और उनके संसर्ग से मांसहारी बन गये,* इनमें जो लिखे पढे थे, वह केवल द्वेष बुद्धि से वेद धर्म के नाश हेतु, हिंसा व परस्त्री गमनादि नाना प्रकार के ग्रंथ बनाने* में लग गये. और बाकी के लूट मार में प्रवृत हो गये.

जब यह अनार्य्य कभी २ आर्य्य बनकर ऋषि, मुनियों, तथा चारों वर्णो को धोका देने लगे. तब मनु भगवान ने आर्य्यों और अनार्य्य के पहचानने के लिये यह श्लोक स्मृति में लिख दिया:—

वर्णयेत मविज्ञातं वरं कलुष यो निजम् ।
आर्य्य रूपमिवानार्यं कर्म्मभिःस्वैर्विभावयेत् ।

अर्थात्—चारों वर्णो में भिन्न जातीका यदि कोई पुरुष अविज्ञान (छिपा हुआ) आनार्य्य (नीच) आर्य्य बन (यज्ञोपवीतादि धारण) करके रहे तो उसकी परीक्षा उसके कर्म्मोंसे करनी चाहिये. वह कर्म यह हैं.

अनार्य्यता निष्ठुरताक्रूरता निष्क्रियात्मता ।
पुरुष व्यंजयन्तीह लोके कलुष योनिजम्॥ मु०

अर्थात्—अनार्य्यता (नीचता) कठोर वचन बोलना तथा जीव हिंसा करना, वेदोक्त कर्मोको न करना इत्यादि लक्षणों से वर्णसंकर (अनार्य्य) पुरुष की परीक्षा होती है.

विष्णुपुराण; अंश ४ अ० ३-१८-२१.

* यत्वं महदयाज्जातो वयः स्वं नप्रयच्छसि ।
तस्मात्प्रजा समुच्छेदं तूर्दसो तव यास्यति ॥
संकीर्णाचार धर्मेषु प्रतिलोमचरेषु च ।
पिशिताशिषु चान्येषु मूढ़ाराजा भविष्यसि ॥
गुरुदारप्रसक्तेषु तिर्यग्योनिगतेषु च ।
पशुधर्मिषु पापेषु म्लेच्छेषु त्वं भविष्यसि ॥
महाभारत, आदिपर्व. ३४७८-८०,

*इनके बनाये ग्रंथों का आगे वर्णन करेंगे.

और सायही यह भी आज्ञा दी कि इनके जो भक्ष्य पदार्थ हैं उनको आर्य्य लोग कभी भी ग्रहण न करें.—

यक्ष रक्षः पिशाचान्नं मद्यं मांसं सुरासवम् ।
तद्ब्राह्मणेन नात्तव्यं देवानामश्नता हविः ॥

अर्थात्—राक्षस पिशाचोंका जो भोजन मद्य मांस है उसको देवता, ब्राह्मण यज्ञादि कर्म करने वाले कभी ग्रहण न करें.

(शेष फिर)

भारत पे आरत.

(गतांकसे आगे)

प्रकरण ५ वां.

महाराणा समरसिंहके योगेन्द्र नाम पडने का कारण.

कुमार करण सिंह कहां है ? दिवानी बिन्दु किस प्रकार राज महेल में प्रवेश कर कुमार को लेकर भाग गई, वह तो उसी दिवस से, कि जिस दिवस राज कुमार की रक्षक परिचारिका से झगडा हुआ था राज भवन को त्याग कर चली गई थी, और इधर उधर नगर में भटका करती थी, तथा भिक्षा मांग कर अपना उदर पोषण किया करती थी. फिर वह राजभवन से कुमार को कैसे लेगई ! यद्यपि दिवानी राजभवन का परित्याग कर चली गई थी किन्तु उसके हृदय में बैठे हुये करणसिंह का एक क्षत्रभी त्याग नहीं हुआ था, वह स्वास २ में कुमार का ही स्मरण किया करती थी, कुछ काल इधर उधर भटकने के उपरांत एक दिवस अकस्मात उसके हृदय में पुनः कुमार से मिलने की उत्कंट इच्छा स्फुर आई, परन्तु सौकन के वश हुये २ स्वामी के महेल में पग रक्खना उसके मन में महा अपमान जनक लगा. फिर मन में विचार किया कि भवन में न जाकर बाहर से ही कुमार देख हृदय को संतोष दे लूंगी. ऐसा मन में निश्चय कर के महेल की

ओर गई, और महल के बाहर इधर उधर फरने लगी. तीसरे पहर का समय हो गया था, करणकुमार उद्यान में दासी की ऊंगली पकड़ कर इधर उधर घूम २ कर खेल रहा था. और दिवानी दूर से ही कुमार को देख २ कर मनको संतोष दे रही थी. पर उसका मन इस संतोष से सन्तुष्ट न हो, समीप जा कर मिलने को तड़फ रहा था. जब कुमार दासी का हाथ छुड़ा कर तालाव की ओर भागा, तब तो दिवानी सेठजन के घड़ी स्वामी के महल का ध्यान भूल, एकदम अंदर की ओर भागी. ज्यों ही भवन के फाटक पर अंदर जाने के लिये पग धरा, कि त्यों ही फाटक के दरवान ने रोक कर कहा. क्यों दिवानी इतने दिन तक कहां भटकती रही और आज कहां से भागती हुई यहां आई है? दरवानके यह वचन सुन कर, दिवानी बड़े क्रोध से गालियां देती हुई अंदर चली गई. और सामने एक मंच पर बैठ कर बोली "देखो तो यही यह मोया नाकर भी हंसी करता है? चाकर हो कर रानी की चेष्टा करते मोया तनी लजाता भी नहीं? सत्यानाश धर्मा तो सेठजन के वश में हो चाहे कुछ कहे, पर यह मोरे चाकर भी रानी को दिवानी कहते लजाते नहीं! कुछ देर ऐसा बकर २ कर, फिर मंच पर से उठ कर इधर उधर दृष्टि कर कुमारको देखने लगी, जब कुमार को जहां प्रथम उसने देखा था, ना पाया तो फिर ढूंढने लगी. थोडी दूर गई थी कि पश्चिमकी ओर से किसी के चिल्लाने की ध्वनी इसके कान में पड़ी, और वह उधर को चली. पर सन्मुख से पश्चिम फाटक के दरवान को चिल्लाने के शब्दकी ओर भागते देख कर यह भी शीघ्र २ पग उठाने लगी, और ज्योंही फाटक के पास पहुंची तो क्या देखती है कि बन्धन से मुक्त जैसे अश्व कूद फांद करता है वैसे ही दरवानके चले जाने पर कुमार कूद फांद कर रहा है. कुमारको अकेले कूद फांद करते देख कर दिवानी झट कुमार के पास गई, और उसे गोद में उठा, कंठ से लगा, मुख चूमन करने लगी. ऐसे करने के उपरांत तत्क्षण ही इस के हृदय में एक नया तरंग उत्पन्न हो आया, अर्थात् इस का मन बहुत दिनोंकी अभिलाषा पूर्ण करने के लिये ललचा गया. और यह कुमार के दोनो हाथ पकड़ कर कभी दाईं और कभी बाईं गालका चुमन कर २ तथा छाती से लगा २ मन ही मन में कहती "सुंदर राज कुमार मेरा बालक! इसे मुझे मिलने नहीं

देते." फिर चुमन कर कुमार से बोली "कुमार तू मेरा पुत्र है मेरा लाल है, मेरा धन है, मेरा रत्न है, मेरा तू सर्वस्व है. मेरे से अधिक तुझ को प्यारा करे ऐसा और कोई नहीं है. चल तू मेरे साथ में तुझे सुन्दर २ फूलों से भरपूर एक बाड़ी दिखलाऊं, मेरे लाल वहां पर पुष्कल सुन्दर २ फूल हैं. भाई चल देख कर शीघ्र ही फिर पीछे लौट आवें." कुमार दिवानी के प्रेम मय वचन सुनकर बोला "दरवान और दासी मेरे लिये फूल लेने गये हैं, यह ले आवें तो फिर मैं तेरे संग चलूंगा. दिवानी कुमारकी ये तुतली वाणी सुन कर गदर हो गई और चुमन कर बडे प्रेम से फिर बोली!" लाल वहां तो यहां से भी अति सुन्दर २ विशेष फूल हैं, चल कर देख तो सही, वहां कैसे२ अच्छे फूल फूल रहे हैं, और कैसे २ वृक्ष हैं. व उन पर कैसे२ उत्तम फलों के गुच्छे लटक रहे हैं, और उन पर कैसे २ नाना प्रकार के पक्षी बोल रहे हैं. व उस बाड़ी में कैसा मनोहर सरोवर है उस में बड़ी छोटी नाओ, बेडे चल रहे है और उस का जल कैसी २ लहरें मार रहा है. और कई स्त्री पुरुष उसकी बहार देख रहे हैं, जब तू उस बाड़ी को देखेगा तो खुश हो जाये गा. कुमार दिवानी की यह बातें वहां सुन कर बड़ी प्रसन्नता से कूदता नाचता बोला तो चल मुझे जल्दी से चल कर दिखला, दिवानी झट कुमार को गोद में उठा कर दरवाजे के बाहार ले आई, और फिर कुमार से बोली "देख भाई तूने रोना नहीं? जो तू रोयगा तो दरवान वा और कोई तुझ को मेरे साथ फूलबाड़ी देखने नहीं जाने देगा." कुमार यह तो जानता ही था कि मुझे लोग दिवानी की कोद में नहीं जाने देते हैं. इस्से दिवानी की बात सुन माथा हिला कर बोला "नहीं २ मैं नहीं रोऊंगा." दिवानी ने कहा "तो चल मैं तुझे दौड कर फूलबाड़ी दिखला लाती हुं. ऐसा कह कुमार को बड़े प्रेम से छाती से लगा कपडे से ढांप, बड़े वेग से दौडी दौडते समय राज मार्ग का त्याग कर निर्जन मार्ग को ले लिया, और हांफती २ नदी के किनारे जा पहुंची. नदी पर उस समय हजारों मनुष्य कोई उस पार से इस पार और कोई इस पार से उस पार की ओर नाओ पर बैठ कर आ जा रहे थे, उन को आते जाते देख कर इस ने भी एक नावक को पुकार कर कहा "क्यों रे चलता है?" नावक ने उत्तर दिया कहां जाये गी. दिवानी ने पूछा "नाओ कहां जायगी." नावक ने उत्तर दिया

"नाओ तो आगरे जायगी." दिवानी ने कहा "ठीक मुझे भी वहीं जाना है, चल नाओ को जल्दी किनारे पर ला मैं बैठ जाऊं" इतने में कुमार ने पूछा "फूलबाड़ी कहां है" दिवानी ने प्यार से कहा "लाल इस नाओ पर बैठ कर फुलवाडी में ही न चलते हैं" कुमार दिवानी के यह बचन सुन कर चुप हो गया, और इतने में नावक भी नाओ को लेकर किनारे पर आ गया, और दिवानी कुमार को लेकर नाओ में बैठ गई, और नावक से बोली भाई जल्दी नाओ को चला दे, कारणकि मेरी सौकन मेरे इस बालक को छीनना चाहती है इस का मुझे बडा ही भय है इस्से थोडी दूर तक तू शीघ्र चला, फिर चाहे कैसे ही चलायो. क्यों कि फिर मुझे उस का भय नहीं रहेगा. मैं तुझ इस के बदले में खुश करूंगी. नावक खुश करूंगी यह वचन दिवानी के सुन कर नाओ को बेग से चलाने लगा. जब नाओ थोडी दूर तक गई, तब दिवानी ने अपनी कमर में से एक थेली निकाली और उस में से नावक को कुछ देकर बोली, "आगरे चल कर और भी देउंगी." नावक दिवानी का कुछ दिया हुआ लेकर खुश हो गया, और उसे बडी खातर से एक अच्छे स्थान में ले जा कर बैठा दिया नाओ बडे बेग से नदी में चली जा रही थी, और सूर्य्य भगवान भी अपने स्थान को जा रहे थे. यहां तककि थोडी ही देर में अपने स्थान में पहुंच गये, और सर्वत्र मार्ग में तिमर छाय गया. इतने में कुमार ने फिर पूछा "फुलबाडी कहां है." उस समय दिवानी ने नदी के तरंग और दोनों किनारों पर के वृक्ष दिखला कर बाडी की बात फुलवादी...

अब रात्री पड गई और पश्चिम से पूर्व, तथा दक्षिण से उत्तर चारों ओर तारे गण चमकने लग गये हैं, और मन्द २शीतल पवन भी चलने लगी. पवने के चलने से नदी के तरंग नाओ को नीचे से ऊंचे और ऊंचे से नीचे लेजाने लगे नाओ के एसहोने से नीचे ऊंचे नीचे से भूप २ शब्द निकलने लगा इस्से नावक बडे आनन्द से राग अलाप करने लगे. थोडे ही समय में नाओ चिडोद से बहुत दूर निकल गई और कुमार फुलबाडी कहता २ थककर भूखा पियासाही दिवानी की में सो गया.

आज कृष्ण प्रतिपदा की रात्री थी इस्से चन्द्रमा अभी उदय नही हुआ था, इसे चांदनी भी अपनी रेपायें बताने अटक हुई थी. इस्से ऐसा विदित होता था कि आकाश में से आज शशी भी अपने शीतल किरणों के फैलाने की इच्छा नही रखता ? ज्योंहि चंद्रमा उदय हुआ कि त्यों ही पूर्व दिशा में से मेघ राज के बादल ने उसे ग्रस लिया, और देखते के देखते ही चारों ओर से आकाश को घन घोर बादलों ने छाय लिया, और पवनने भी बडे बेगसे संनानाते हुये चलना आरंभ किया. इस्से नदी के तरंग बडे जोर से उछलने लगे: पवन की गती क्षण में रूक जाती और क्षण में कभी पूर्व और कभी पश्चिम, कभी दक्षिण और कभी उत्तर में अपना नृत्य दिखलाने लग जाती. इस के नृत्य के साथ आकाश में मेघ राज अपनी गरजन का नाद बजाने लग जाता. इस नृत्य का भयंकर रूप दिखलाने के लिये बीच २बिजली अपना प्रकाश कर देती इस्से नावक इस नृत्य को देख कर बे सुध हो गये, यहां तक कि बिचारों को दिशा तथा एक दूसरे की पहचान व वाणी का ज्ञान भी जाता रहा. नाओ की ऐसी दशा थी कि अब डूबा ही चाहती है. और वर्षा ने भी ऐसा झड बांधा कि मानो आज ही सारे संसार को प्रलय कर देगी. ऐसी दशा में जब कभी बिजली का प्रकाश होता तब बिचारे नावक नाओ को किनारे पर लाने का यत्न करते, पर सब यत्न व्यर्थ जाता. कारण किज्योहि नाओ को किनारे के निकट ले जाते, त्योंही एक भारी तरंक आता और नाओ को पुनः पीछे हटा देता. एक बार तो पूरे मध्य में ही फैंक दी. इस्से यात्री त्राहे २ करने लग गये: इस गड बड में कुमार जाग उठा, और अपनी जननी को पास में न देख, तथा भूख के बेग से रोने लगा: उस समय दिवानी ने फिर फुलवाडी की बात छेड दी, और कुमार पुनः सो गया. इस तूफान से यद्यपि नावक बहुत घबरा गये थे परन्तु तो भी पुनः किनारे पर ले जाने का साहसन छोडते. थे किन्तु अंत में बारंबार प्रयत्न निष्फल जाने से निराश हो ऊंचे हाथ कर ईश्वर से प्रार्थना करने लगे: उस समय नाओ दो ×नदीयों के संगम में आ गई थी: अब सिवाय ईश्वर प्रार्थना के और कुछ नहीं बन सकता था. परंतु ईश्वर के कोप ने इन की प्रार्थना को स्वीकार

× बनास और चम्बल नदी.

नहीं किया अर्थात् इतने में दो, तीन ऐसे भारी तरंग आये कि नाओ एक बारी ही उलट कर पानी में डूब गई. नाओ के डूबते समय कुमार दिवानों के हाथ से छूट कर अलग हो गया. नावक तो तारू होते ही हैं वह तर कर थोडी देर में नदी के किनारे जा लगे, परन्तु उन से उस समय किसी यात्रु का प्राण रक्षण न हो सको और विचारे सर्व यात्रु डूब कर मर गये.

इधर कुमार के खो जाने से राजभवन में हा हा कार मच गया. चारों ओर नौकर चाकर यहां तक कि स्वयं महाराणा समरसिंहजी भी कुमार की खोज में राजभव से निकले. कुमार की खोज के लिये राजभन से बाहर निकलेते के साथ ही वायु बडे वेगसें चलने लगी. व इस्से बडी धूर उडने लगी. यह कितनों की आंख, नाक, कान में घुस गई. तथा इस धूर के गुब्बारो के उडने से दूर की वस्तु को देखना तो जुदा रहा पास की वस्तु को देखना भी कठन पड गया. पवन चले. की थोडी देरके उपरान्त निर्मल आकाश घोर बादलो से छाय गया. और खूब जोर से वर्षा होने लगी. वर्षा और वायु के वेग से नगर के मकान तथा मार्गोंके वृक्ष गिरने लगे. ऐसी दशा में कुमार की खोज तो दूर रही अपने ही शरीर की सम्भाल भी अशक्त हो गई. इस तूफान के कारण अनेक प्राणी मकानो तथा वृक्षों के गिरने से दबकर मर गये. मकानो वृक्षो के गिरने से जो शब्द होता था, उस्से घबरा कर लोग इधर उधर भागते फिरते थे. उस समय कोई किसी की सहायता न कर अपने प्राण बचाने का यत्न करता था. मार्गो में गिर हुये घरों तथा वृक्षों की ठोकरो से अनेक मनुष्य गिर कर चिल्लाते, और कोई मार्ग भूल जाने से पुकार करते थे. उस समय कोई किसी की सहायता में आना तो दूर रहा कुछ उत्तर भी न देता था. फिर ऐसी दशा में किस की समर्थ थी कि जो कुमार की शोध निकाल सके. प्रधानजी सहत सर्व नौकर चाकर जो शोध के लिये निकले थे, बडी कठता से लौटकर राजभवन में चले आये.

राजभवन में राणियां यह समझ कर झरोखों से देख २ मनमें कह रही थीं कि कुमार आवश्य ही किसीको मिल गया होगा, और वह लेकर अब ही आता होगा. किन्तु जब सब नौकर खाली हाथ आये तो फिर रोने चिल्लाने लगी.

बाहर महाराणाजी के मन में यह आया कि यदि कुमार हम को नहीं मिला तो किसी दुसरे को आवश्य ही मिला होगा, और वह कुमार को भवन में ले गया. होगा. इस विचार से वह भी मेहल में चले आये. परन्तु जब भवन में कुमार को न पाया तो उस समय जैसे घनघोर मेघ छाय होने से आस पास की कोई वस्तु दिखलाई नहीं पडती थी. तथा जैसे आकाश की निर्मल शांती जाती रही थी, ऐसे ही कुमार को भवन में न देख कर महाराणा के हृदय की शांति जाती रही. जैसे भरपूर समुद्र में पडी हुई नाओ वर्षा और पवन के सपाटे से डग मगाती है, वैसे ही राणाजी का हृदय कुमार को न देख कर डगमगाने लगा.

पवन और वर्षा का झपाटा अभी जारी ही था. ज्यों २ इस झपाटे का शब्द राणाजी के कान में पडता त्यों २ पुत्र वियोग का परिताप विशेष बडता जाता था. अंत में घर में न रहा गया, और पुनः अकेले ही शोध के लिये निकल पडे. और ज्यों२ नगर से बाहर चले जा रहे थे त्यों अंधेर में दूर के वृक्षों में कुमार की भ्रांति का आकार देख कर, भ्रांति से कुमार को जान कर उन के निकट जाते, और कुमार को वहां न पाकर अधिक उन्मत्त हो जाते. फिर अंत में निराश हो कपाल पर हाथ रक्ख, बालको की भांति विलाप करने लगे "अरे विधाता ! आज तेरी मनोकामना परिपूर्ण हो गई ? हे देव ! यह अदृष्ट ! राज की चढती पर तुमने ईर्षा से किया ? ले अब तो तेरी कठोरता का लेख सार्थक हो न गया ? हायरे ! तूने इस दुर्भागी समर सिंह की संतान छीन कर, हत भाग्य की वर्तमान भविष्य आशा का नाश कर दिया ?

इस प्रकार विलाप करते २ नदी के तट पर चले गये. इस समय शांती के मृदु शब्द करने वाली नदी संहारक मूर्ति का स्वरूप धारी हुई नृत कर रही थी. इस भयानक मूर्ति को देख कर किस की सामर्थ थी कि जो निकट आ सकें, यहां तक कि नावक भी अपनी २ नाओं को लंगर छोड, झोंपडीयों में जा घुसे थे. केवल आठ दस बडी २ नाओ (बडे) व्योपारियों के माल से लदी हुई खडी थे जिन के उपर कुछ मनुष्य उनके बचाने का यत्न कर रहे थे. राणाजी उन बडों में से एक बेडे के निकट गये २...

पुकार कर नावक से पूछने लगे. "क्यों भाई आज तुमने कोई स्त्री, छोटी व्ययका एक सुन्दर बालक लिये पार जाती को देखा था?" अंदरे में किसी नावक ने राणाजी को नही पहचाना, इस कारण उन्मत्ता से उत्तर दिया "अरे तू कोन है? अरे क्या कुछ दिवाना तो नही हो गया जो तू ऐसा पूछता है. अरे, यहां से तो सेकडो स्त्री बालकों को लिये उत्तरती चढती हैं हम किसी को क्या देखते थोडे ही रहते हैं कि कोन कैसी है और कैसे छोडे बडे सुन्दर करूप को गोद में लिये हुई है. राणाजी ने तीन चार और भी प्रश्न किये परन्तु उसने लह मार ही उत्तर दिये, इस्से राणाजीने दूसरे बडे के पास जा उस के नावक से पूछा. उन में से एक ने क्रोद्ध से उत्तर दिया "अरे चल २ दिवाने हम तेरा उत्तर दें या अपने बेडे को बचावें." उस्से कुछ उत्तर न पाने से फिर तीसरे बेडे के निकट जा कर पूछा. उन में से एक ने उत्तर दिया "हम किसी के आने जाने के लिये थोडेही बैठे रहते हैं. फिर महाराज चौथे के पास गये, उन में से एक बोला "बाबा हम तो परदेसी हैं हमें कुछ खबर नही है, किसी और से पूछीये. इस प्रकार उत्तर पाने से महाराणाजी निराश हो गये. इन्हे तो केवल इतनी ही जिज्ञासा थी कि दिवानी कुमार को लेकर कहीं नदी के पार तो नही चली गई है. पर जब इस बात का कुछ पत्ता नही मिला, तब इन्हे यह बिचार हुआ कि कहीं दिवानी कुमार को लेकर डूब तो नही गई? नही तो चित्तौड से और कहां चली गई? इस भांति नाना प्रकार की शंका ये उत्पन्न होती और शोध करने पर मिठ जातीं,

जब किसी प्रकार से कुमार का कुछ पता ना लगा तब लाचार हो कर महल की ओ चल पडे. मार्ग में मायावी आशाओं ने पुनः अपनी तरंग हृदय में उत्पन्न कीं. अरे! व्यर्थ यहां क्यों भटकता है, घर में जा तेरा हृदय मणी दूसरे मार्ग से महल में जा पहुंचा है और अपनी जननी की गोद में खेल रहा है. अरे! इस समय राजभवन में तो आनन्द छाय रहा है और तू तूफान में व्यर्थ दुख पाय रहा है. अरे! शीघ्र जा भवन में सब लोग तेरी बाट देख रहे हैं. इस प्रकार मन की कल्पित आशाओं में बंधे हुये समरसिंह राजभवन की ओर चले जा रहे थे. उस समय इन की एसी दशा थी कि जैसे स्थिर सागर प्रबल वायु के बेग से भय कर हो जाता है. निदान! वैसे ही समरसिंह की शांत, गंभीर मनोहर मूर्ति शोकोन्मत्त हो रही थी. उस समय इस मूर्ति को देख कर वज्र मनुष्य के नेत्रों से भी एक-दो बूंद पाणी निकले विना नही रहता! मार्ग राणाजी कुमार २ पुकारते जला रहे थे, पर कुमार कहीं होता तो सुन कर उत्तर देता? अंत को लाचार हो महलमें प्रवेश किया, तो क्या देखते हैं कि महल में तो वह ही शोक छाया हुआ है. महराज के महल में आते ही राणी कमला देवी ने निकट जा कर कंपित हृदय से पूछा "कहां है मेरा लाल? प्राण नाथ! मुझे तो ऐसी आशा था कि अब के आप आवश्य ही कुमार को खोज कर ले आयेंगे. पर मेरी आशा व्यर्थ ही गई, इतना कह चरणो में गिर पडी, और रोती २ बेभान हो गई. समय अधी रात से विशेष बीत गया था. राणाजी के पुनः अकले ही महल में आने से हाः हाः कार मच रहा था, दास दासी एक दूसरे से विचार कर रहे थे. कोई कहता, हायरे! कुमार का कैसे पता लगे? कहां से लगे? कोन लगावे? नही मालूम चंडालनी डाकन कहां लेकर चली गई है. एक वार मिल जावे तो रांड के सिर में जली २ राख डाल दूं. कोई कहती चाहे मुझे राणीजी निकाल ही दें, पर मैं तो अपने दांतों से रांड के नाक कान काट लूंगी. सेवकों में से एक ने कहा कहीं दिवानी पर्वत पर तो न जा कर छिप रही होय. दूसरे ने उत्तर दिया नही रे नहीं! वह तो पर्वत पर कभी जावे ही नही, क्यों कि हम न जानते हैं कि वह बडी डर पोक है. तीसरा बोला कहीं शहर में ही छिपी होगी, चौथे ने कहा अरे भाई नगर में होती तो पता लग जाता, कहीं अन्य स्थान में भाग गई होगी. ऐसी२ नाना प्रकार की बातें करते रहे. किन्तु किसी को यह ना सूझा कि कहीं नाओ में बैठ कर ओ पार न चली गई हो. निदान! इन्ही बातों में किसी को नींद न आई और प्रभात हो गया. प्रभात के होते ही पुनः सर्व कोई कुमार को ढूंडने के लिये चल पडे,

दूसरे दिन न तो वर्षा ही थी और न अंधी थी सूर्य्य भगवन ने, उदय हो कर सारे संसार का तिमर नाश कर दिया, था इस्से सर्व प्राणी अपने२ कार्य्य में लग गये थे.

परन्तु राजभवन में अभी वैसा ही तिमर छाय हुआ था. राजा, राणी, दासी दास सर्व कुमार का शोक विलाप कर रह थे. ऐसा ही विलाप करते २ दो दिवस बीत गये पर कुमार का कहीं कुछ पता ना लगा. तीसरे दिवस चौथे पहर के समय, एक दरवान राजाजी के निकट आ, नमन करके बोला, " महाराजाधिराज कुछ लोग कहीं से **दिवानी** का शव लाये हैं. " **दिवानी** का **शव** लाये हैं, इस बात के सुनते ही मानो राणाजी के हृदय पर वज्र गिर पड़ा? ऐसी दशा में हो गये. कारण कि उन्होंने यह समझा कि दिवानी के साथ ही कुमार भी मर गया होगा. कुछ देर के उपरांत फिर उठ कर बाहर गये और दिवानी का शव देख कर बोले " भाईयों यह शव तुम्हें कहां से मिला ? **शव** लाने वालों ने उत्तर दिया " महाराजाधिराज यह **शव** दोनो नदीयों के संगम से कुछ ही दूर पर हमे मिला है, **राजाजी** ने पूछा " क्या वहां कुमार नही था ?" **सेवकों** ने उत्तर दिया " ना, महाराज कुमार तो वहां नही था. " **राणाजी** ने, कहा " यह कैसे मरी? इस का भी कुछ पता लाय हो." **सेवकों** ने विन्ती से कहा " महाराज इस की मृत्यु का तो हमे वहां कुछ पता नही मिला, परंतु हमे ऐसा अनुमान होता है, कि श्यात् तूफानवाले दिवस यह कुमार को लेकर नाओ पर सवार हो कहीं जाती होगी. और मार्ग में तूफान के कारण नाओ के डूब जाने से यह भी डूब कर मृत्यु को प्राप्त हुई होगी ?"

सेवकों की यह बात सुन, राजाजी को पूर्ण विश्वास हो गया कि " कुमार भी इस्के साथ ही डूब कर मर गया ?" इस शंका पर से, बहुत सी सेवकों को कुमार के शव खोज लाने के लिये आज्ञा दी. **सेवक** आज्ञा के पाते ही नदी के दोनों किनारों पर खोज करने के लिये गये, परन्तु उन्हें सिवाय एक टूटी हुई नाओ के, कुमार के शव का कहीं कुछ भी पता ना लगा. इस्से वह लाचार हो कर पीछे फिर आये. और राणाजी को उस टूटी हुई नाओ का पता दिया. राणाजी ने टूटी हुई नाओ के पता पाने से, सर्व नावकों को बुला कर उन से उस नाओ के टूटने का समाचार पूछा. नावकों के सरदार ने निवेदन किया " अन्न दाता, दयालु ! महाराज तूफान वाली रात्री को एक नाओ संगम में डूब गई थी, ऐसा मुझ पता लगा था. और यह भी पता लगा कि, उसी दिन सूर्य अस्त के समय एक स्त्री लगभग तीन वर्ष के एक सुन्दर बालक को गोद में उठाय हुये नदी पर आई थी, और वह नाओ पर भी सवार हुई थी, पर प्रभु । नाओ आगरे की थी, इस्से मुझे यह मालुम नही कि वह नाओ पर सवार हो कहां को गई । नावक सरदार के यह वचन सुन कर, **राणाजी** को खातरी हो गई कि, कुमार भी **दिवानी** के साथ ही डूब कर मर गया है. किन्तु फिर मन में यह विचार उठा, कि, यदि कुमार डूब जाता तो उस का भी शव तो मिल जाता, इस संदेह के मिटाने के लिये पुनः सेवकों से पूछा " क्यों भाई ? यदि **कुमार** डूब गया होता तो उस का भी शव मिल न जाता, फिर उस का शव क्यों नही मिला ? **सेवकों** ने उत्तर दिया **महाराजा** श्यात् कुमार का श्री शव हलका होने के कारण दूर बहे कर चला गया होगा. **शोधकों** की यह बात सुन कर अब तो **राणाजी** को पूर्ण विश्वास हो गया कि कुमार आवश्य ही दिवानी के संग डूब कर मर गया है, और अब उस का पुनः मिलाप होये, यह आशा रखनी व्यर्थ है. परन्तु आशा ! तो मनुष्य का प्रधान जीवन उपाय है, कारण कि यह संसार आशा के आधार से ही चल रहा है. यदि यह आशा न होती तो ? माता पिता, बच्चों का, और बच्चे माता पिता का पालन पोषण ही न करते. जब हम लोग ऐसा कहते हैं कि " अब तो आशा लेश मात्र भी नही रही, उस समय भी आशा का पुरातन बिन्दु हृदय स्थल में खलबली मचाया ही करता है. यह तो सभी लोग जानते और मानते ही हैं कि जब सर्व श्रम निश्फल जाता है तब भी प्राणी आशा से जीता रहता है. परन्तु जब मनुष्य आशा को त्याग देता है, तब मृत्यु को प्राप्त हो जाता है. यद्यपि महराजा **समरसिंहजी** को यह पूर्ण विश्वास हो गया था, कि कुमार डूब कर मर गया है, और वह इस्से पुनः मिलने की आशा भी छोड बैठे थे. परन्तु तो भी आशा के पुरातन बिन्दु के आधार का परित्याग उन से नहीं हुआ था.

आज आश्विन शुक्ल पक्ष अष्टमी का दिवस था, इस्से नगर के सर्व नर नारी चित्तौड की अधिष्ठात चतुर्भुजी देवी के दर्शनार्थ जा रहे थे. और मन्दर में पुजारी यात्रुओं से भेट ले २ कर माताजी के चरण कमल का चरणामृत, व बताशे तथा रोली इत्यादि प्रसादी दे रहे थे. और लोग माताजी के दर्शन करके वृक्षों के नीचे बैठ कर, कोई तो घर से बना कर लाये हुये पकवान, तथा कोई हलवाईयों से ले२ कर भोजन खा रहे थे, तथा कोई खा पी कर इधर उधर घूम रहे थे, और कोई भजन गाय रहे थे. व कोई मल्लयुद्ध, और कोई पट्टा इत्यादि नाना प्रकार की खेलें खेल रह थी. ऐसे करते २ ही दिन बीत, सांयकाल का समय हो गया. और दक्षिण दिशा की ओर से मेघराज अपना घंघोर दलबादल लेकर चढ आया. इस कारण से पूजारियों सहत लोग अपने २ घर को भाग गये. और मंदर शून्य सान सा हो गया.

पुजारी और यात्रुओं के चले जाने के उपरांत मंदर के आस पास बादलों से अंधेरे छाय रहा था, इस अंधेरे में कोई भी अपने व पराय को नही चीन सकता था. केवल मंदर के अंदर एक घृत का दीपक जगमग रहा था, और उस के प्रकाश से मंदर के अंदर एक मनुष्य हाथ में खड्ग लिये देवी के सन्मुख सिर झुकाये खड़ा देखने में आ रहा था. इस मनुष्य के सिवाय और किसी भी पशु, पक्षि प्राण के स्वर का शब्द सुने में नही आता था. केवल कभी २ जम्बूओं (गीदडों) के बोलने का शब्द सुनाई पड़ता था, किन्तु इस मनुष्य के देखने से तो ऐसा विदित होता था कि, इस के कानो में जम्बूओं के बोलने का भी शब्द नही पडता था, कारण कि यह प्रार्थना में एसा निमग्न हो रहा था. कि मानो सर्व इन्द्रियों को दमन किये हो, केवल कभी२ इस के होठ हिलते प्रतित होते थे इस के होठ के हिलने से ही एसा विदित होता था, कि यह मनुष्य किसी गूठ प्रार्थना में मग्न हो रहा है. यहां तक कि इस मनुष्य की प्राप्रार्थना के शब्द ऐसे धीमे से निकलते थे कि, पास में खडे मनुष्य के कानो में भी नही जा सकते थे. हां! केवल कभी २ उस के स्वास लेने से, शब्द का गंभीर प्रत्याघात होने से मन्दर गूंज उठता था. इस मनुष्य का सर्वांग तो निर्मल था, परन्तु केवल इस के मुख की कांति हीन हो रही थी. इस्से ऐसा विदित होता था कि इस के मुख की कांति किसी अतिकष्ट व निराशा होने से हो रही है. बहुत देर के उपरांत जब इस ने अपने नैत्र खोले तो यह एक अति तेजस्वी वीर पुरुष दिखलाई पडा!

भला! यह मनुष्य कौन था? अहा! यह तो अपना चितौडाधि पति महाराणा **समरसिंह**जी था. इस समय इन के मस्तक पर न तो राज्य मुकट ही था, और ना ही शरीर पर कोई राज्यकिये चिन्ह ही धारण थे. उस समय यह केवल साधारण वेष में भगवती के सन्मुख खडे थे. उस समय इन की म्लान मुद्रा पर से एसा विदित नहीं होता था, कि यह चितौडाधि पति हैं. इन्होने नैत्र खोल कर पुनः भगवती का बडी श्रद्धा से पूजन किया, और फिर बडी भक्ति भाव से देवी को साष्टांग नमस्कार करके, पास में धरे हुये राज्य मुकट को हाथ में ले कर, भगवती से संबोध करके बोले. "हे **देवी चतुर्भुजा**! आज आप के चरण कमल समीप यह राज्य मुकट का परित्याग करता हुं. हे **मातेश्वरी**! आज से जीवत प्रयन्त इसे धारण न करूंगा, और ना ही आज से किसी प्रकार का सिवाय क्षत्रिय योग शास्त्रों के, अन्य राज्य चिन्ह, बस्त्रालंकार ही धारण करूं गा. **जगदम्ब**! केवल आज से **मुकट** के स्थान मस्तक पर, **जटा** धारण करूं गा, और **भूषणो** के स्थान **रुद्राक्ष**, तथा उत्तम **वस्त्रों** के स्थान में, एक साधरण क्षत्रियों की भांति वस्त्र पहरूं गा. और ना ही मैं आज से अपने ताईं महाराजा कह लाऊं गा. और हे **अम्बे**! आज तक जो मैंने मन में वृथा अहंकार को धारण किया हुआ था, उस का भी आज से परि त्याग करूं गा. परन्तु हे **भगवती**! जिस के योग (संबंध) से यह मेरा अहंकार शांत हुआ है; तथा जिस ने मेरी बहुत दिवस की वडे यत्न से संचित की हुई आशा को निराश किया है; उस तो कदापि न विसरूं गा. हे **देवी**! मेरी यह इच्छा पूर्ण करनी? मैं सदा से तुम्हारा दासनु दास हुं. इतना कह कर फिर मुकट को देवी के चरणों पर धर, पुनः नमन करके राज्य

भवन को चले गये. निदान उसी दिवस से इन का नाम योगेंद्र पड़ गया. और अब आगे को इस वार्ता में यह योगेन्द्र के ही नाम से लिखे जायेंगे.

(शेष फिर)

मित्र—सज्जन कौवे (अमित्र.)

(गतांकसे आगे)

कैसे छूटे, तुम तो अद्भुत जीव न हो?

पाठक गण! हम आप लोगों को एक सज्जन कौवे की कुटिल कर्म कहानी सुनाते हैं—

" रस्सी जलगई पर पेंठ नहीं गई "

यह तो आप जानते ही हैं? कि जगत में दरिद्री का कोई न दोस्त, न कोई उस का सगा, और न कोई स्नेही है. एक समय की बात है कि एक मनुष्य दरिद्री हो गया. इस्से उस के हित मित्रोंने उस्से हित करना छोड़ दिया, यहां तक कि उस के कुटुम्बियों ने भी उस को अपने घर से निकाल बाहिर किया. अपने कुटुम्ब-वालों की ओर से आपमानित हो कर वह दरिद्री भूमंडल पर निराश्रय भटकने लगा.

एक समय वह फिरता २ उज्जयन नगरी की ओर चला गया. जब नगरी के निकट गया तो मार्ग का श्रम निवारण करने के लिये उसने स्नान किया, और धोये हुए स्वच्छ वस्त्र धारण कर नगरी में प्रवेश किया. जब वह इधर उधर फिर रहा था, तो एकान्त स्थान में एक शंकर का मंदिर दृष्टि पड़ा. इस देवालय में शंकर की मूर्ति* थीं, उस दरिद्री को कुछ काम—धंधा तो था ही नहीं, इस कारण अव-काश पाकर वह फल फूल तथा नैवेद्य से शंकर की सेवा करने लगा. नित्य मंदिर के आंगन में झाड़ बुहारी करता, तथा छनी हुई मिट्टी से चहुं ओर लीप कर नाना प्रकार के सुंदर मंडल पूरता, दिन भर उस को यही काम रहता था. इस लिये उसने उस श्मशान भूमि को रंग भूमि बना दिया, कि जिस की शोभा निरख कर सब मोहित होते थे. अपने पापों को निवृत्त करने के लिये उसने वर्षों तक निरन्तर दिनरात जागरण कर के, स्तोत्र पाठ, जप तप, गीत वाद्य से शंकर की श्रद्धा पूर्वक भक्ति की, " अगड़बम् अगड़बम् नाचे सदाशिव ओंकार " इत्यादिक अ-नेक भजन, वह प्रेम पूर्वक गाया करता था. इस प्रकार सेवा करते २ अनेक दिवस व्यतीत होने के उपरांत, भक्ति और श्रद्धा से की हुई उस की चिर कालीन सेवा की ओर दृष्टिपात कर एक दिन महादेव इस प्रकार कहने लगे " हे वत्स! जो कुछ तुझे मांगना हो सो निःसंकोच मांग, मैं तेरी अटल भक्ति देख कर तुझ से प्रसन्न हुआ हूं." शंकर के मुखारविन्द से ऐसे अन्तिम शब्द ज्योंहि निकले कि त्योंहि महादेव के कंठ में शोभित रुंडमाला में के एक सज्जनकौवे के कपालने झटपट शंकर के मुख को दबा कर संकेत (इशारा) किया, कि मानो उस मंद भागी दरीद्री के कर्म के आगे पान सा आ गया. भोळे शंकर बोलते २ रह गये, और आगे जो कुछ कहने वाले थे उस को होठों में से ही मुख में ले कर पेट में उ-तार गये, थोड़े समय पीछे जब वह दरीद्री स्नान ध्यान करने को चला गया, तो शंकर ने इधर उधर दृष्टि फैलाई कर देखा कि कोई अब भी नहीं है. ऐसे एकान्त में गंगा की तरंगों की नाईं अपने नेत्रों की आभा फैलाते हुए महादेवजी बोले:—" अरे रुंड-माल में के कपाल! यह दरिद्री बहुत काल से यहां रह कर निरन्तर मेरी सेवा करता है, उस की नि-ष्कपट भक्ति और पूर्ण प्रेमभाव देख कर जो उस्से वर देने को सन्नद्ध हुआ, तो उस समय तूने मेरा कंठ दबा कर मुझे वर देने से क्यों रोका, इस का क्या कारण है? सो तू कह?" यह सुन कर शंकर के तृतीय नेत्राग्नि की ज्वाला के विद्यमान होते हुए भी, मुकुट में विराजने वाले चंद्रमा से झरते हुए अमृत

* सर्वत्र शंकर के लिंग की पूजा कीजाती है परन्तु कहीं २ मूर्ति होती है तैसे ही यहां थी.

का पान कर सजीव हुआ २ वह कपाल ईषत् हास्य करता हुआ इस प्रकार कहने लगा:—

"महाराज! आप स्वभाव से ही अत्यन्त भोळे हो इसी से लोग आप को भोळा शंभू कहते हैं, इस कारण आप से मेरी विनती थी; और इसी लिये मैंने आप को बोलते हुए रोका था, कि जो अपने ऊपरवाला अपने आधीन भी हो, पर तो भी कौन मनुष्य है जो स्वतंत्र रीति से अपने ऊपरवाले को बोध दे सक्ता है? यह दरीद्री अत्यन्त दुःखी है; दरीद्रता के कारण अपना सब कामकाज छोड़ बैठा है; और आप के देवालय में धूपदीप से आप की पूजा करता है; परन्तु आप उस को जानते हो? पहचानते हो? महाराज! ऐसे दरिद्री मनुष्य अपने शिर पर का संकट जैसे बने तैसे दूर करने के लिये किन २ लक्षणों से युक्त होते हैं, सो जानने के लिये आप को दरीद्री की बारह प्रकार की कला कहता हूं."

दरिद्री की द्वादस कला।

"(१) जो मनुष्य दुःखी होता है सो तपस्वी होता है. (२) दरिद्री होता है सो सब को मान देता है, आदर सत्कार करता है, अत्यन्त नम्रता प्रगट करता है. (३) जो मनुष्य अपने अधिकार से च्युत अथवा निर्धन हो जाता है, वह सब को पहले प्रणाम करता है (४) मीठा बोलता है, (५) देव और ब्राह्मण की पूजा करता है; और (६) गुरुको नमस्कार करता है, (७) निर्धन मनुष्य अपने साधारण मित्र वा परिचित जन को देखते ही लम्बा हो नमस्कार कर प्रेम से मिलता है. अग्नि की प्रज्वलित ज्वाला में पड़ी हुई लोहशलाका की नाई सन्ताप से तप्त अन्तःकरण वाले (८) दुर्बल लोगों को अपनी इच्छानुसार चाहें जैसे रख सकते हैं, (९) वे सब के साथ नम्र स्वभाव वाले और मृदु रहते हैं. (१०) सदा सदाचार पालन करते हैं. (११) कार्य के लिये बहुत लालसा दर्शाते हैं, और (१२) लद्दूपन भी करते हैं."

इस वार्ता को एक ओर रख कर, निज वैभव-मदोन्मत्त जनों की ओर आप दृष्टिपात करें गे तो आप तद्न इस के विरुद्ध देखे गें, क्यों कि वे किसी की ओर दृष्टि प्रसाद नहीं करते—प्रेम भाव से किसी को नहीं देखते, तो पूजन अर्चन की कथा ही क्या? दया दान का तो नाम ही नहीं जानते, नम्रता के साथ जन्म वैर है, और ईश्वर को पहचानना तो ब्रह्माण्ड को पहचानने की बात है."

"महाराज! इस मनुष्य को भी श्रीमानों की श्रेणी में बैठाने वालों के वैभव की बड़ी आशा है. यह उसी आशा फांस का अवलम्बन कर आप की सेवा श्रद्धा पूर्वक करता हैं, ज्योंहि आपने प्रसन्न हो कर जो उसे वैभव दिया, त्योंहीं वह ऐसे पलायन कर जायगा कि मानो यहां कभी था ही नहीं, जिन को केवल अपने ही स्वार्थ की चिन्ता होती है वे सेवक सदा अपना अर्थ साधने में तत्पर रहते हैं, और जब उन का धन मिल जाता है और उन की इच्छा पूरी हो जाती है तब वे फलदायक नहीं होते; अपना स्वार्थ सिद्ध होने पर ऐसे सेवकों को अपने कर्त्तव्य कर्म का ध्यान नहीं रहता, इस लिये ऐसे सेवकों से सुख प्राप्ति की आशा करना निरर्थक है, वे अपने ऊपर किये उपकार को उपकार समझ सेवा नहीं करते, क्योंकि इस जगत में सफल मनोरथ मनुष्य अन्य की स्पृहा नहीं करता किन्तु स्वयम् स्वतंत्र हो कर रहता है; कारण यह है कि पराधीनता अति विषम है; ऐसे ही आप की प्रदत्त लक्ष्मी को प्राप्त कर यह दरीद्री भी आप की सेवा को त्याग स्वाधीन हो अपने घर चला जावेगा, जब यह अपने घर को चला जायगा तब इस निर्जन एकान्त वन में आप के मंदिर में कोई भी धूप ध्यान नहीं करेगा; न कोई भोग-सामग्री लावे गा, और न इस देवालय को दिव्यस्थान बना रक्खे गा, इस कारण आप इस दरीद्रि को ऐसी ही दशा में रहने दीजिये कि जिस से सुख सम्पत्ति की आशा फांस में बंधा हुवा यह आप की सेवा करता रहे; यदि आप प्रसन्न हो कर इस को वर प्रदान करते हैं; इस को आनन्दित करते हैं, तो भविष्यत् में आप की ही पूजा बंद होने का यह एक बड़ा कारण होगा, समझ बूझ कर अपने पैर में कुल्हाड़ी मारना बुद्धिमानी नहीं.

इस रुंडमालस्थित कपाल का बहुत वक्र भाषण सुन कर शंकर आश्चर्य से हंसने लगे, और उस को पूछा. अरे तू " कौन है ? सो सच २ कह. " यह सुनकर सद्‌भ्रात्र प्रदर्शक सज्जनकाक कपाल कुछ विचार करके बोला कि " मे मगध देशका रहने वाला हूं, और वर्ण संकर कुलमें मेरा जन्म हुवा था, पर मैं महात्माओं के सत संग से उपर से तो अपने कुल-कर्म के विरुद्ध आचरणं दिखता किन्तु भीतर से वह ही करता इस्से लोग मुझे सज्जन समझ के प्रीति करने लगे. प्रभु ! केवल मैंने लोग के दिखा देख अपने जीवन के अन्त में श्रीगंगाजी के पवित्र तटपर अपनी देह त्यागी तब आपकी सेवा में प्रविष्ट हुआ, अब मैं आप के पास अत्यन्त आनन्द में रहता हूं. भगवान् आशुतोष यह सुन कर बोले कि " अरे तू सच-मुच वर्ण संकर कुल में उत्पन्न हुआ है और तू सच्चा वर्ण संकर बचा है; क्यों कि तेरी अप्राप्य देह का सारे अवयवों सहित नाश होने पर, अब कपाल मात्र शेप रहा है, तो भी तैंने अपनी और अपने कुल की कपट कला को नहीं छोड़ा, यही मुझ को अचंभित करता है, " ऐसे कह कर शंकर ने हास्य की श्वेत किरणावलि के कारण से उस दरिद्री की आशालता के सफल करने को उद्यंत हुए. और जब यह आया तब कपटी कपाल के समक्ष में उस को सर्व सुख वैभव प्रधान किया, और अपनी कपालमाला में से उस कुटीचर* कपाल को निकाल बाहर किया; क्यों कि यह ईर्षा से भरा हुवा और दूसरे का अभ्युदय देखने में असमर्थ, तथा कपटकला में धुरंधर था, निदान ! उस दिवस से इस कपाल का नाम सज्जन-काक शंकरजी ने रक्खा और उसे वारंवार जन्म लेने का श्राप दिया.

पाठण गण ! इस विषय को भली प्रकार ध्यान में रखना कि सज्जनकौवों के केवल अस्थिमात्र भी शेप रहे हों, तौभी वे मनुष्यों को क्षय करने वाली यमराज की दृढा की नाई अपनी मलीन और मनुष्य मर्दनी कपट कला को नहीं छोड़ते अर्थात मर जाने पर भी कुटिल कार्य करने से हाथ नहीं खेंचते मरते २ भी दूसरों को कठिन कष्ट में डाल जाते हैं. अर्थात् वह मरे हुए भी कुटिलता को नहीं छोडते इस विषय की एक गाथा है, सो वह चित्त लगा कर सुनो.

मरे हुए सज्जन कौवे ने जीवते ब्राह्मण को खाया.

बहुत वर्षो पहले उज्जयनी नामक नगरी में देव-दत्त नाम का एक ब्राह्मण रहता था, वह राज-काजा में अति निपुण और दरबार की कपटकलाओं में कुशल था, वर्ण संकर कुलोद्भव रदुहालाल नामक मनुष्य उस ब्राह्मण का एक परम मित्र था, इस सनज्जकौवे रदुने अपनी संपूर्ण कलाओं का अध्य-यन देवदत्त को कराया था, एक प्रसंग पर वहां के राजाने रदु को कोई संदेशा देकर काश्मीर के राजा के पास भेजा, तब वह अपने मित्र देवदत्त को भी अपने साथ ले गया. काश्मीर मोहिनी से भरा हुआ कामरू देश है जहां अनेक प्रकार के लालच बसते हैं. जिस कार्य के लिये ये वहां गये थे. उस को करने के पीछे दोनो वहां ही रहे; और राज्यद्वारी व कपटकला में कामिल होने से रदुने अल्प काल ही में पुष्कल द्रव्य संग्रह किया; तैसे ही देवदत्तने भी थोडासा धन संचय किया, कुछेक मास व्यतीत होने पर यमराज के यहां से रदु की आवश्यकता हुई, मृत्यु के प्रेरण किये ज्वरने उस पर आक्रमण किया, और वह शीघ्र ही अन्त समय की अणी× पर आ पहुंचा. देवदत्त अपने जाति स्वभाव से दयालु और निष्कपट था; ऐसे कठिन समय में वह अपने मित्र की पुरी २ टहल करने लगा; और किसी प्रकार से भी उस की सेवा में कसर नहीं रक्खता था. निदान ! रदु संनिपात से संतप्त हो मृत्यु समय के दुःख का अनुभव करने लगा, अर्थात् बहुतेरे हाथ पांव पीटे परन्तु उस का जीव नहीं निकला, तब देवदत्तने कहा कि " भाई ! तेरा सब द्रव्य निःसंदेह तेरे

*ईर्ष्यालु ×जैसे कौवे का स्वभाव विष्टा खाने का है वैसे ही सज्जनकाक का स्वभाव पर निन्दा रूपी विष्टा खाने का है.

×नोक

कुटुम्ब वालों को मैं पहुंचा दूं गा, इस बात का तू तनिक भी संशय मत कर; और इस के सिवाय तेरे पुत्र पत्नी आदि का पालन भी मैं भली प्रकार करूं गा." परन्तु उसने कुछ उत्तर नहीं दिया, क्यों कि उस के मन में एक मात्र यही संशय रहा कि मेरे इस द्रव्य की क्या दशा होगी ? यह सब का सब मेरे पुत्र और कलत्र को मिले गा, कि नहीं ! इसी एक बात में उस्का जीव अटक रहा था, देवदत्त के धीरज बंधाने से वह कुछ शांत हुआ पर तो भी उस का शरीर नहीं छूटा, अन्त में उस ने आधे २ और टूटेफूटे शब्दों से कहा "भाई ! जो तू मेरी एक इच्छा पूर्ण करे तो सुख से मेरा प्राण निकल जाय. मेरे मरने के पीछे जो तू मेरी गुदा में एक मेख ठोंकने का वचन दे, तो अभी मेरी मृत्यु हो जाय," अपने मित्र की अन्त समय की कामना पूरी करना अपना धर्म समभ, भोले ब्राह्मणने तैसा ही करना स्वीकार किया, और ज्यों ही देवदत्तने कहा कि "जो तेरे कहने के अनुसार नहीं करूं तो मैं तेरा दामनगीर होऊं" त्यों ही उस का देहान्त हो गया. अपने मित्र के साथ की हुई प्रतिज्ञा के अनुसार देवदत्तने मृत मित्र के मलद्वार में एक खूंटी ठोक अपना वचन पूरा किया, तदनन्तर देवदत्तने उस के शव की दाहक्रिया करने की तयारी की, और देश परिपाटी के अनुसार मृत रंडु को स्मशान भूमि की यात्रा कराई. वहां जब दाह से पहले शब को स्नान कराया तो उस समय के मलद्वार में एक मेख फंसी हुई दृष्टि पडी. उसे देख के खांदियों को यह संशय हुआ कि यह मौत से नहीं मरा किन्तु धन के लालच से देवदत्तने उस की हत्या की है. स्मशान भूमि से लौट कर उन्होंने अपने मन में उत्पन्न हुई. २आशङ्का को राजदरबार में प्रगट किया पुरपतिन इस बात का अन्वेषण करना आरंभ किया और देवदत्त का कारागार में डेरा कराया. बिचारे ब्राह्मण देवदत्तने अपने बचाव में जो कुछ घटना हुई थी, सो सब सत्य २ कह सुनाई; परन्तु जो कुछ उसने कहा वह सर्वथा अमान्य रहा; क्यों कि इस प्रकार का कार्य करने को कोई कहै, ऐसा सम्भव नहीं. देवदत्त के वचनों पर से अनुमान किया गया कि उस ने द्रव्य के लिये अपने मित्र के प्राण लिये; और अब अपनी रक्षा के लिये यह बात फेरता है. इस कारण यह दंडनीय समझा गया और शूली पर चढा कर मित्र के पीछे २ भेजा गया.

इस प्रकार से मृत सज्जनकौवे ने जीवित ब्राह्मण को भक्षण कर लिया.

वाचकवृन्द ! निरन्तर अपवित्रता से कलाओं को कलङ्कित करने वाले, अधर्माचरण करने वाले, और नरक की घोर यातना का यहीं अनुभव कराने वाले **सज्जनकौवों** की चालाकी से कौन मनुष्य बच सक्ता है ? जो मनुष्य मयादि दानवों की माया और कुटिल कलाओं का भेद जान कर, इन के छंदों को पहचानता है. वह बुद्धिमान् पुरुष सर्व सुखों को अपने आधीन करता है ऐसा सत्य समझना चाहिये.

सज्जनकौवों की चौसठ कला का वर्णन !

१ मनोरंजन के लिये गप्पें मारने की कला, २ सदा सर्वदा हँसमुख रहने की कला; ३ समय साधने की कला ४ संकेतस्थल रखने की कला (अभिसारिका की प्राप्ति के लिये.) ५ मेला यात्रा में जाने की कला ६ नये २ वस्त्र धारण करने की कला ७ अकड और स्वच्छता करने की कला ८ प्रेमकटाक्ष से निहारने की कला ९ नेत्र और करपल्लवी× जानने की कला १० गान करने की कला ११ पद्मिनी

× नेत्र से अथवा हाथ के संकेत से वार्तालाप करना यथा—अहिफण कमल चक्र टंकार, तरु पव्वै यौवन शृंगार ॥ अंगुली अक्षर चुटकी मात । राम करे सीता से बात ॥ अर्थ—सर्प की फण के समान हाथ की आकृति से १६ स्वर समझना; इसी प्रकार कमलाकृति से कवर्ग, चक्र की नाई अंगुली घुमाने से चवर्ग, टंकार से टवर्ग, वृक्षाकृति से तवर्ग, पव्वै से पवर्ग, यौवन शब्द से यवर्ग, और शृंगार से श ष स ह क्ष त्र ज्ञ समझना चाहिये. पहले वर्ग बताकर तिस पीछे एक तीन अंगुलियां खडी कर वर्ग का अक्षर बताना और तब चुटकी बजा कर मात्रा प्रगट कर शब्द बनाकर वार्तालाप करना.

आदिक स्त्री जाति का भेद जानने और परखने की कला १२ काव्य कला १३ स्त्री के अंग में के काम के निवास को जानने की कला १४ भांति २ के पक्षी पालने की कला १५ कुटनी को साधने की कला १६ इत्र और पुष्पादिक परीक्षण १७ कौतुक कौशल्य १८ शृंगारने की कला १९ देखते हुए अंधा होने की कला २० ईर्ष्या रखने की कला २१ वैद्यक कला २२ साधु, संन्यासी और योगी फक्कड़ बनने की कला २३ जादू (मंत्र यंत्र) जानने वाला बनने की कला २४ घर पति को ललचाने की कला २५ देशान्तर करने की कला–चोरी (गुप्त रीति) से रहने की कला २६ मिष (बहाने) से मिलने की कला २७ सौगंध लेने और खिलाने की कला २८ अपने प्रति प्रेम उपजाने की कला २९ योगासन से बैठने की कला ३० विष पचाने (हज़म करने की कला इस से कामोत्पत्ति होती है.) ३१ वृक्ष पर चढ़ने की कला ३२ तैरने की कला ३३ भाग जाने की कला ३४ दूर के संबंध को निकट का बताने की कला (नजदीक का संबंध बता कर अपने प्रति दाक्षिण्य और अपना पन उत्पन्न करने की कला ३५ बड़ी २ आशाएँ बंधा कर उन में विघ्न करने की कला ३६ द्विअर्थी वाक्य बोलने की कला ३७ लेखन कला (नाना प्रकार की चिट्ठियां लिखता है कि जिन को उस की नायिका व मित्र ही पढ़ सकते हैं. पुनः ऐसा भी पत्र लिखते हैं कि जिस में कुछ नहीं दिखाई दे; परन्तु आग पर तपाने, खाक (भस्म) लगाने वा अन्य प्रकार से उस पर के अक्षर प्रगट हो आवें)* ३८ प्रेम से उत्पन्न दुःख को सहन करने की कला ३९ अन्य जन की निन्दा करने और अवगुण दर्शाने की कला (जिस से नायिका व मित्र अन्य की इच्छा न करे.) ४० वचन भंग हो तो ग्लानि न लाकर निर्भयता से विनती करने की कला ४१ पान (ताम्बूल) खाने और खिलाने की कला ४२ अभिसार (नायिका व मित्र के संकेत स्थान में जाने) होने की कला ४३ प्रीति का स्मरण कराने के लिये अन्तिम चिन्हानी (निशानी) करने की कला ४४ कुपित प्रिया व मित्र को शान्त करने की कला ४५ ' मैं मर जाऊंगा ' ऐसा भय दिखाने की कला ४६ सत्य कह कर शंकाशील करने अथवा विशेष चर्चा को रोकने की कला ४७ कंकर फेंकने की कला* ४८ मान रहित होने की कला (आधीन हुई नायिका व मित्र के पास) ४९ बहुमानी होने की कला (रति कलह में) ५० कोमल हृदय वाला होने की कला ५१ कठिन हृदय वाला होने की कला ५२ दयालु होने की कला (नायिका, मित्र कुपित हो तो दया लाने के लिये पाखंड करे और दया दर्शावे.) ५३ उदार होने की कला (नायिका, मित्र की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिये.) ५४ शठशिरोमणि होने की कला (नायिका, मित्र द्रव्यवती हो तो उस से धन लेने के लिये) ५५ नव रस जानने की कला ५६ साहसी होने की कला ५७ हृदय हरण करने की कला (क्रिया से) ५८ फुसलाने की कला ५९ फुसलाते समय फंस जावे तो तर्क होने की कला ६० रुचिकर संभाषण करने की कला ६१ वैपरीत्य पूर्ण कार्य करने की कला ६२ उड़ाने की कला (नायिका को, किसी पीछा करने वाले को अथवा विक्षेप करने वाले को,) ६३ अधिक बातें बनाने की कला (जिस से नायिका, मित्र प्रसन्न हो कर वशीभूत होते हैं. ६४ लोगों को अपने पक्ष में लाने की कला.

ऊपर कही हुई यह ६४ कलायें सज्जनकौवे में निवास करती है. **निदान!** ऐसे मनुष्यों से अधिक सावधान रहने की आवश्यकता है. ये मित्र बन कर घर में प्रवेश करते हैं, परन्तु पीछे से शत्रु का काम करते है, अर्थात् यह घर वाली (स्त्री) बालक के साथ संकेत

---

* इस प्रकार की चतुराई और चालाकी से भरी हुई अनेक कौतुक करने की कला.

* चोर अथवा कामीजन किसी के घर में जाने से पहले कंकर फेंकते हैं इस लिये कि यदि घर में रहने वाली स्त्री चुप रहे तो कार्य सिद्ध हुआ जान कर भीतर प्रवेश करें.

कर के प्राण व वित्तहरण कर भाग जाते हैं. जिस से प्राण, कनक, कान्ता और कीर्ति इन चारों का समूल नाश होता है. संसार मंडल में इन क्रूर राक्षसों का संसर्ग अत्यन्त ही दुःखदाई है; उस को बहुत संभालना चाहिये. बहुदा घर के नोकर चाकर भी ऐसे होते हैं कि जिन के कपट भरे काले कर्मों का भास विधाता को भी नहीं होता; तो फिर अल्प प्राणी, किस गिनती में हैं? निदान! जो इन से विशेष सावधान रहने वाला पुरुष है वह सदा सुखी रहता है.

वर्तमान समय में यह सज्जनकौवे घर २ में, कहीं मित्र बन कर और कहीं नोकर बनकर अर्थात् नाना भेष धारण करके ऐसे घुसे हैं; कि कोई भी घर इन से बचा हुआ देखने में नहीं आता है, इसी से ही भारत दिन २ अधोगति को प्राप्त होता चला जा रहा है.

यद्यपि प्राचीन समय में भी यह सज्जनकौवे थे. परन्तु उस समय में लोग शीघ्र इनके जाल में नहीं आते थे. कारण कि उस समय के लोग निचे लिखे श्लोक द्वारा झट परीक्षा कर इन्हे धत्ता कर दिया करते थे. देखो लिखा है कि:—

पाप वृत्तवचः सत्वाः सूचकाः कलह प्रियाः।
मर्मोपहासिनो लुब्धाः परवृद्धि द्विषः शठाः॥१॥

परापवादरतय पर नारी प्रवेशिनः।
निर्घृणास्त्यक्त धर्माणाः परिवर्ज्यानराधमाः॥२॥

चर० सू० अ० ७

अर्थात्—जो पाप की बातें करने वाले, चुगली करने वाले, लडाई (कहला) आदि उपद्रव ही जिन को प्रिय हैं, तथा मर्म छेदन करने वाली बातों के कहने वाले, वा ऐसी हंसी के करने वाले, तथा लोभी अन्य पुरुष की उन्नति को देख कर उस से द्वेष करने वाले, मूर्ख व दूसरों की निन्दा करने वाले, पर स्त्री गमन करने वाले, निर्दय, और अधर्मी, ऐसे दुष्ट पुरुषों का संग कभी नहीं करना चाहिये. कारण कि इन से मैत्री करने से कभी न कभी प्राणों की आवश्य ही हानी हो जायगी. देखो महाभारत में लिखा है:—

दुर्बुद्धि मकृत प्रज्ञं छन्नं कूपं तृणैरिव।
विवर्जयीत मेधावी तस्मिन् मैत्री प्रणश्यति।

अश्लिलेषु कुशैषु रौद्र साहसिकेषुच॥
तथैवापेतधर्मेषु न मैत्री माचरेद्बुधः॥४८॥

चर० सू० अ० ७

अर्थात्—ऐसे कुमित्रों का सर्वथा परित्याग करो, जो दुर्बुद्धि हो, और जो बुद्धि रहत (अर्थात् जिस को आत्म ज्ञान न) हो, ऐसे पुरुषों से मैत्री न करो. क्यों कि यह पुरुष घास से छुपे हुये कूप के समान हैं. अर्थात् जैसे घास से ढके हुये कुये को मनुष्य नहीं देख सकाता है. और उस में गिर कर मर जाता है, ऐसे ही पूर्वोक्त पुरुषों की मैत्री से मनुष्य अपने प्राणों को नाश कर बैठता है. इस लिये उपर के श्लोक के अनुसार परीक्षा करके अर्थात् जो पुरुष अभिमानी, मूर्ख, क्रोधी, अविचारी, हिंसक तथा अधर्मी विदित हो तो उस का कदापि संग न करना. और जिस पुरुष में निचे लिखे श्लोक द्वारा गुण मिलें:

धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च तुष्ट प्रकृति मेवच।
अनुरक्तं स्थिरारम्भं लघु मित्रं प्रशस्यते॥२०९॥

मनु० अ० ७

अर्थात्—जो धर्मज्ञ, कृतज्ञ, प्रसन्न प्रकृति, सन्तोषी, मित्र में प्रीति रखने वाला, उद्योगी अर्थात जिस कार्य्य का प्रारम्भ करे उस को समाप्त करने वाला, ऐसे मनोहर मित्र ही उत्तम होते हैं, ऐसे मित्रों से ही पुरुष को सुख होता है. इसी हेतु से महाभारत में वर्णन किया है कि:—

मत्यापरिक्ष्यमेधावीबुद्ध्यासम्पाद्यचासकृत॥
श्रुत्वा दृष्ट्वाऽथ विज्ञाय प्राज्ञैमैत्री समाचरेत॥८॥

भा० उद्यो० प० अ० ३९

अर्थात्—मनुष्य बुद्धि से बारंबार परीक्षा करके और उसके गुणावगुणों को सुन के व उसके आचरणों को देख कर बुद्धिमान् पुरुष से मित्रता करे एवं:

कृतज्ञं धार्मिकं सत्यमक्षुद्रं दृढ भक्तिकम्।
जितेन्द्रियं स्थितं स्थित्यां मित्र मत्यागिचेष्यते॥
॥५०॥ भा० उ० प० अ० ६९

---

* आत्मज्ञानी सर्व प्राणियों को अपने समान जान के उन की कभी भी किसी प्रकार से बुराई न करेगा. परन्तु जहां तक बन सकेगा भलाई ही करेगा.

अर्थात्-मित्र ऐसा होना चाहिये कि जो किये हुये उपकार को जानता हो. धार्मिक हो सत्य प्रिय हो, क्षुद्र अंतःकारण का न हो, अर्थात् नीच प्रकृति का न हो, जितेन्द्रिय हो, यथा योग्य वर्त्ताव करने वाला हो, और अति दरिद्र न हो, इन लक्षणों युक्त ही मित्र मैत्री के योग्य होता है. महात्मा भर्तृ हरि जी कहते हैं कि:—

पापान्निवारयति योजयते हिताय, गुह्यञ्च गूहति गुणान् प्रकटी करोति। आपद्गतं च न जहाति ददाति काले, सन्मित्र लक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः॥७३॥

भर्तृ० नी० अर्थात् जो पापों से बचावे तथा हित की ओर लगावे, और जो गुप्त बात छुपाने के योग्य हो उसको गुप्त रक्खे, तथा गुणों को प्रकट करे, और आपत्काल में मित्र को त्याग न देवे, किन्तु तन, मन, धन से सहायता करे, जिसमें ये लक्षण हों, उसको महात्मा पुरुष सन्मित्र कहते हैं. अतः उसी से मैत्री करनी चाहिये, और जो इन गुणो से विपरीत हों उनको कुमित्र (सज्जनकौवे) कहते हैं. उनसे कदापि मित्रता न करे. **हे सज्जन कौवो!** अब तुम विचार करो कि तुम में उपर लिखे मित्रता करने योग्य गुण हैं. क्या तुम उपरी गुणों के विपरीत नही चलते हो! याद रक्खो! पंजाबी में यह कहावत है कि **'मित्रां नाल जो करते ठग्गीयां होते जन्म कस्साई'** अर्थात् जो मित्रों के संग ठगीयां करते हैं वह जन्मके कस्साई होते हैं. इस को तो आप भी जानते हैं कि यदि कोई किसी से दुःखी होता है तो वह उसे कस्साई कहता है अरे तू तो कस्साई है. **निदान,** इन बातों से सिद्ध होता है कि संसार में कस्साई सब से बुरा है. **बस!** अब तुम भी यह पदवी मत पाओ किन्तु उत्तम नाम धारण करके उत्तम पदवी को पाओ! देखो?

सामने परीक्षा का समय आ पहुंचा है वाक्य संयम करो चित्तको शुद्ध करो, जो अब तक पराई बुराई की है उसके लिये पश्चाताप करो और आगे को महात्माओं के गुण गाओ इस्से धीरे २ हृदय पवित्र हो जाय गा और मुखके दोषसे रसानाका दोष संशोधित हो तुम्हारा जीवन जन्म भी सफल और सार्थक हो जाय गा, फिर चाहो जहां रहो, चाहे जो कुछ करो, पर स्मरण रक्खो कि बिना वाक्य संयम किये के जीव का उद्धार नही होता और नाही मनुष्यपन मिलता है. इसी कारण से योगी ऋषिगण मौनव्रत धारण किया करते थे महात्मा तैलङ्ग स्वामी सदा ही मौन रहे. केवल वागेंद्रिय * की सहायता से ही मनुष्य अपने जीवन का फल पा सकता है. इस्से वागेंद्रि से परमेश्वर का नाम लो ऐसे करने से फिर अंत समय भगवद् कथा या नारायण का नाम उच्चारण करने से फिर संसार में जन्म नहीं लेना पडता. नेत्रादि इन्द्रियों के नष्ट हो जाने से परलोक ही बिगडता है, परंतु रसना के नष्ट होने से जीवन और परलोक सब ही नष्ट हो जाता है अत एव अवसर रहते २ वागेंद्रिय को दमन करना उचित है. इति

नागरी पर अक्षेप,

आर्य्य सनतानो की बहुत दिवस की अभीलाषा पूर्ण करने के लिये, ज्योंहि श्रीमान लेफ्टनेण्ट गवर्नर **एंटोनी मैकडानेल** महोदय ने पश्चिमोत्तर और अवध देश के न्यायालयों में **देव नागरी लीपि** के प्रवेश करने का आज्ञा पत्र प्रकाशित किया, कि त्योंहि देव नागरी लीपि के गुणो से अज्ञान कुछ हठी पक्षपाती मुसलमान अपने उर्दू, अंग्रेजी, गुजराती अदि पत्रों

***यस्त्विन्द्रियाणिमनसा नियम्यारभतेऽर्जुन॥ कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते॥७॥**

हे अर्जुन! जो इंद्रियों को मन से रोक के विषयों में आसक्त हुए बिना वागिंद्रियों करके कर्मयोग करता है वह श्रेष्ठ है.

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना॥ न चाभावयतःशान्तिरशान्तस्यकुतः सुखम्॥

जो इंद्रियों को वश में करके मेरे विषैं मन को नहीं लगाता है. उस के शास्त्र आचार्य से कही हुई आत्म संबंधी बुद्धि उत्पन्न नहीं होती, ईश्वर का ध्यान भी नहीं होता. शांति भी नहीं होती, तो मोक्ष सुख कहां से होवे.

में वर्षा ऋतु के मेंढकों समान टर्र २ करने लग गये. और इनकी तान में तान कुछ खुशामदी स्वार्थी नाम धारी हिन्दु भी मिला रहे हैं. यह देव नागरी लीपि पर दोष क्या लगाते हैं कि आज कल यह "मृत भाषा है" कारण कि इसके साहित्य में थोड़े उपन्यासों तथा धर्म सम्बन्धी पुस्तकों के अतिरिक्त और कुछ नही है. (२) उर्दू की अपेक्षा नागरी का लिखना कठिन और विलम्ब साध्य है, (३) उर्दू में थोड़ा लिखा जाने के लिये पांच २ छे २ अक्षरों का एक शब्द बनता है. किन्तु नागरी में अक्षर परस्पर अटंग हैं और उनके लिखने के लिये ऊपर नीचे बहुतसी जोड मोड करनी पड़ती है इस में बहुत समय व्यर्थ जाता है और कभी २ इसका लिखना सरलता से पढ़ा नही जाता है, कारण कि नागरी में „ रे, अलिफ और नून„ सम्बन्धी अक्षर न होने से उनपर संकेत लगाने पड़ते हैं, और शीघ्र लिखने में वे छूट जाते हैं, (४) यदि एक मनुष्य ने नागरी में अर्जी दी और उसका प्रत्यर्थी नागरी नही जानता तो उसे बहुत कष्ट होगा और न्यायालयों में तो आपत्त सहते से बढी २ मुश्किलें उपस्थित होंगी. (५) भिन्न प्रान्तों के निवासियों से मेल उत्पन्न करने के लिये एक ही लीपि के प्रचार की अवश्यकता है. परन्तु हिन्दी द्वारा य. प्र० वालों से पंजाब का मेल उठ जाय गा (६) फारसी के उठ जाने से इस कार्य का आरम्भ हो चुका है, धीरे २ फारसी और उर्दू का भारत वर्ष भर से देश निकाल करके हिन्दी आदि भाषाओं को उनका स्थानापन्न माना जायगा. (७) मुसल्मान लोग उस लीपि से जो ईरान, अफगानिस्तान, अरब, और सिंध आदि देशो में है वंचित रक्खे गये तो इन प्रान्तों के मुसल्मानो से उनका सम्बंध टूट जाय गा. उनकी अरबी फारसी और उर्दू के धर्म पुस्तकें व्यर्थ होंगी और कुरान शरीफ के अक्षर पहचानने वाला भारतवर्ष में कठिन से मिले गा. इत्यादि नाना अक्षेप लगाय हैं. यद्यपि इनका उत्तर हमारे सहयोगी हिन्दी पत्र सम्पादकों ने उत्तमता से दे दिया है. तिस पर भी हम कुछ थोडासा और उत्तर देते हैं (१) उत्तर क्यों साहब आपने "मृत भाषा" संस्कृत को लिखा है या हिन्दी को अथवा इन दोनो भाषाओं की लीपि को, यदि आपका अक्षेप संस्कृत भाषा पर होय तो भाई साहब संस्कृत तो न्यायालयों में नहीं जारी हुई है और यदि हिन्दी भाषा पर होय तो ठेट हिन्दी भी नही हुई है. परन्तु खास उर्दू भाषा ही है. हां ! केवल लीपि मात्र इन भाषाओं की हुई है. और यदि कहो कि लीपि पर अक्षेप हैं, तो यह लीपि करोडों वर्ष से जीती जागती चली आ रही है और चली ही जाय गी. पर आप यह तो कहिये कि आप की अरबी लीपि किस २ मुसल्मानी देशों में जारी है.

(दूसरे) आपने यह जो कहा कि " इसके साहित्य में थोड़े उपन्यासों तथा धर्म सम्बंधी पुस्तकों के अतिरिक्त और कुछ नही है. " पर यह तो आपके बड़ों की कृपा है कि जिन्होंने इस लीपि में लिखे हुये प्रत्येक विषयों के करोडों ग्रंथ फूंक कर भारतका सत्या नाश करदिया, किन्तु तिस पर भी अभी सहस्रों ग्रंथ प्रत्येक विषय के इस लीपि में मिलें गे. भला कहिये तो सही आपकी अरबी. फारसी, उर्दू लीपि में सिवाय आपके धर्म सम्बंधी ग्रंथो के और कौन २ विषय के ग्रंथ हैं. और आपने जो " उर्दू की अपेक्षा नागरी का लिखना कठिन." इत्यादि मिथ्या दोष लगाय हैं. कृपा करके पक्षपात त्याग तनिक अपनी फारसी लीपी के गुणों की ओर दृष्टि दीजिये. "

प्रथम हम को विद्यार्थियों को उस श्रम पर जो फारसी के शब्दों की शुद्धता के लिये, और अंग्रेजी के स्पेलिंग के वास्ते रात दिवस मस्तिष्क की हानी करनी पड़ती हैं, उन्हे देखकर बड़ा ही कष्ट और शोक उत्पन्न होता है. भारत निवासियों को यह स्वपन में भी विचार न था कि शब्दों की शुद्धता के लिये भी कुछ श्रम करना चाहिये. अब विद्यार्थियों को उच्चारण के सिवा लिखने की शुद्धता के ओर में भी दुगना समय लगाना पड़ता है. (१) इसका कारण सिवा इसके और कुछ नहीं कि इन दोनों विदेशी भाषाओं के अक्षर बोलने के अनुसार नहीं लिखे जाते हैं यदि यह भाषायें नागरी अक्षरों में लिखी हों तो भारत वर्ष से यह कष्ट एक पल में दूर होसक्ता है,

और जो विद्या इस समय चार वर्ष में प्राप्त होती है वह दो वर्ष में प्राप्त होगी. इसलिये हम कुछ पंक्तियां यहां लिखनी उचित समझते हैं.

लिखावट का वर्णन

यह विषय तो प्रसिद्ध ही है कि प्रत्येक मनुष्य परस्पर की भाषा से दूसरे मनुष्य को अपने हृदय का विषय बतला सकता है. तथा जो कार्य्य किसी से लेना होय वह ले सकता है. और जो कहना होय कह सकता है. किन्तु उसके सन्मुख उपस्थित न होने पर, अपने हृदय के विषय प्रगट करने के लिये लिखने की अवश्यक्ता पडती है. कारण कि लिखने का तात्पर्य्य यह ही है कि लिखने वाले की अनुपस्थिति में उसके हृदय का विचार विदित हो जाय.

शब्दों का वर्णन (२)

नाभी के ऊपर जो वायु के निकलने का स्थान है जिस समय मनुष्य कोई बात कहने लगता है तब वहां से वायु निकलने आरम्भ होती है, और वह ठेहर२ कर विचार के अनुसार मुख में आन कर जिव्हा को हरकत देती है, तब जिव्हा प्रत्येक शब्द के निकलने पर चोट करती है और इस चोट के संयोग से शब्द बन कर प्रकट होता है, और फिर वह शब्द बतौर सिलसले वार दूसरे के कान में पहुंचता है. और कान पर चोट करता है. और फिर कान के संग जो कर्ण नाडी मिली हुई है उसके द्वारा मनुष्य के अंतःकरण पर चोट लगती है उस समय सुनने वाले को दूसरे मनुष्य के हृदय का विचार प्रकट होता है.

लीपि लिखने की कला (हुनर) प्रथम ये कला एक ही मनुष्य ने प्रगट होगी; उसके उपरांत न्यूनाधिक करके कई लीपियां स्थापन हो गई हैं. ये तो वर्णन प्रथम हो चुका है कि प्रत्येक अक्षर के निकलने का खास२ स्थान है. इसलिये प्रत्येक स्थान के वास्ते खास चिन्ह स्थापन किये गये हैं. और उन चिन्हों को अकिठा करके एक शब्द बनाया गया है. परन्तु जिसकी लीपि में तमाम शब्द इच्छानुसार आय जावें वह ही लीपि पूरी होसक्ती है. इस समय संसार भर में जो लीपी पाई जाती हैं, उनमें से तीन लीपि भारत में प्रसिद्ध हो रही हैं: (१) **देवनागरी** (२) **अंग्रेजी** (३) **फारसी**. **देवनागरी** लीपि की वंशज सारे भारत में बंगाली, गुजराती, कैथी, मरहठी, गुरुमुखी, करनाटकी, महाजनी, इत्यादि समझी जाती हैं. और **अंग्रेजी** में, फरासिस, और जरमनी आदि लीपियें आसकती हैं. और **फारसी** में अरबी, पश्तो इत्यादि हैं इन सर्व लीपियों में सर्व से विशेष शब्द उपयोग में लाने के लिये **देवनागरी** अक्षर ही समझे जाते हैं, कारण कि इसके अक्षरों की गणिना ५२ है. और इसके प्रत्येक अक्षर के साथ बारां लग मात्रा हैं; अर्थात प्रत्येक अक्षर बारां प्रकार से बोलने में आ सकते हैं. जब जिव्हा किसी अक्षर के स्थान पर चोट करती है तब उससे वह अक्षर उत्पन्न होता है. परन्तु जब जिव्हा ऊपर, निचे, दायें बायें, आगे पीछे इत्यादि स्थानों की ओर चोट करती है तब इससे प्रत्येक अक्षर के बारां प्रकार के शब्द होजाते हैं **देवनागरी** में चिन्ह इस प्रकार के नियत किये गये हैं कि जिनसे यह कदापि नहीं हो सक्ता है कि एक चिन्ह दूसरे के स्थान को ठीक कर दे. और सिवाये इसके जो बारां अलग मात्रा हैं वह भी कभी अदल बद नहीं हो सकती. वह बराबर अक्षर के साथ ही मिली रहती हैं, ताकि एक अक्षर की लग दूसरे पर न समझी जाये. इस लिये इस लीपि को स्वभाविक (ईश्वरी शक्ति कुदरति) बनी हुई समझाना उचित है. कारण इस लीपि में यह कदापि नहीं होसक्ता कि जो लिखा हो वह दूसरे प्रकार से पढा जाये. मानों कि एक भांति इस ५२×१२=६२४ चिन्हों में संसार भर की लीपियें मिल गई हैं. अब विचार करना चाहिये कि जो शब्द ५२ चिन्हों और १२ लग मात्रा, सर्व ६४ चिन्हों से पूर्ण होसक्ता है. वह शब्द ३१ अक्षर फारसी, और २६ अक्षर अंग्रेजी से कब पूर्ण हो सकते हैं. सिवाय इसके देवनागरी में (१) सब स्वर, दीर्घ, प्लुत, तीन प्राप्त हैं.

---

(१) इतना कष्ट सहन करने पर भी बडे २ मोलवी और मास्टर इमेलिया (शब्द) की अशुद्धि में ही पाये जाते हैं.

(२) व्याकर्ण में वर्णोच्चारण पढो. यहां हम केवल समझाने के लिये ऐसा लिखते हैं.

फारसी का वर्णन

पारसी में यद्यपि ३१ अक्षर हैं, परन्तु जब हम अक्षरों के उच्चारण याने **(अलिफ-ऐन) (ते-तोय) (से-सीन-स्वाद) (छोटी हे-बड़ी हे) (जीम-ज़ाल-ज़े-ज़वाद-ज़ोय) (ग़ेन-गाफ) छोटा (काफ बड़ा काफ)** इत्यादि को एक २ अक्षर गिना (समझा) जायें, तो **फारसी** अक्षर केवल १७ही रह जाते हैं. अब विचार करो कि जो शब्द ६४ चिन्हों से पूर्ण हों, वह क्या १७ चिन्हों से कभी पूर्ण हो सकते हैं? इस्से **फारसी** सर्वथा निरर्थक है, कारणकि **(बे, पे, ते, से)(जीम, चे, हे, खे)(दाल, ज़ाल)(रे ज़े) (स्वाद ज्वाद) (तोय, ज़ोय) (ऐन, ग़ेन) (फे, गाफ)** इन १७ अक्षरों में कुछ अक्षर परस्पर सूरत के हैं. जिन को केवल नुक्ता (बिन्दु) के चिन्ह से जुदा समझा हुआ है. **निदान।** यदि परस्पर सूरत के अक्षरों को एक जगह किया जाये तो फिर **फारसी** के अक्षर केवल दस ही रह जाते हैं. इसके सिवा अब इन चिन्हो के न्यूनता की हानी पूरी करने के लिये दो २ अक्षर मिलाकर उनका एक २ अक्षर बनाया गया है. जैसे बे, हे, को मिला कर **भे.** और **पे, हे से फे, ते, हे से थे.** जीम हे, से **झे.** चे, हे, से **छे.** दाल, हे, से **धे.** और काफ, हे, से **खे.** इत्यादि. दूसरी बात यह है कि जैसे **देवनागरी** अक्षर स्वभाविक बने हुये हैं ऐसे फारसी के नही हैं, कारण कि जैसे देवनागरी के प्रत्येक अक्षर के उच्चारण और लिखने में वह ही एक अक्षर आता है, ऐसे फ़ारसी का अक्षर नही आता है. देखो यदि हम **अलिफ** का उच्चारण करेंगे तो उस के उच्चारण में तीन अक्षरों का उच्चारण होगा अर्थात अ, लि, और फ, तथा बे के लिये ब और ऐ. **पे,** के लिये पे और ऐ. ऐसे ही सर्व अक्षर में किसी में दो किसी में तीन आवेंगे. **(३)फारसी** में बिन्दु के कारण से अक्षरों का अनुमान किया गया है. और, बिन्दु अक्षरों से अलग रक्खे गये हैं जिनका ठीक २अक्षर के उपर आना कठन होता है, इसी कारण से **फारसी** लीपि यथावत ठीक २ पढी नही जाती है. (४) **फारसी** लीपि में सब से बडी हानी यह है कि इस्के अक्षरों पर जो ज़ेर ज़बरआदि चिन्ह लिखें जाते हैं उनके उपर बिन्दु लगाना बडी कला (हुनर) का काम है, और दो२ अक्षर मिला कर जो एक अक्षर बनाया जाता है उसमें और भी कठनाई बढ गई है. मनुष्य किस प्रकार विचार करेगा कि यह दो अक्षर मिला कर एक पढना चाहिये या अलग २ पढना चाहिये. (५) एक और बडी कठनाई यह है कि लग मात्र के स्थान पर निकम्मे अक्षर लगाये जाते हैं. अब पढने वाला, अक्षर के ज़ेर ज़बरादि लग मात्रा को ठीक जगह पर हैं या नहीं? जैसे अनुमान करो कि फारसी में **नवी** एक शब्द लिखना है, अब इसके लिखने में कैसे कठनाई है. याने पहले तो नून का बिन्दु (नुक्तह) ठीक नन् के अक्षर उपर हो, और **ये** का बिन्दु ठीक ये के नीचे हो. अब ये अक्षर पूरा है उसको ये ठीक पढें अथवा ये अधूरा है.अब बिचार किजिये कि चिन्हों का बेढंग नियम कितना कष्ट दायक है. फारसी लीपि में के **नवी** शब्द तब तक कोई मनुष्य नहीं पढ स्केगा, कि जब तक उस्को प्रथम से यह शब्द विदित नहोगा. जैसे अनुमान करो कि एक मनुष्य हिन्दी भाषासे अनजान है, उसके पढने के लिये उर्दु में **बेनी** शब्द लिखा जाय. तो अशा नही कि वह इस शब्द को पढ स्के यद्यपि यह शब्द बहुत ही स्पष्ट है. ऐसे ही **छल** शब्द लिखना है. आशा नही कि कोई मनुष्य उसको **छल** पढेगा. किन्तु हर एक छहल पढेगा. अब किस प्रकार विदित हो कि **चे-हे,** मिलाकर छ बनाना चाहिये या कि चे, हे, अलग २ पढना चाहिये इस्से बढ कर अक्षरों के साथ जो **ज़ेर-ज़बर** लगाये जाते हैं, उनके लगाने से भी कुछ लाभ नहीं है. जैसे अनुमान करो कि **जौ** शब्द लिखना है. तो जीम, वाओ और पेश इन तीन चिन्हों से जौ लिखेंगे इसके उपर जो पेश है इस्से यह शब्द दो प्रकार से याने **जो-जू**-पढने वाला पढा जायेगा, क्यों कि किस तरहा ख्याल करेगा कि वाओ मजहुल या मारूफ के साथ पढना चाहिये. **पस** इसके वास्ते लोग़ात (कोष) तहरीर करनी होगी जैसे **जौ** जीम फारसी वाओ मजहुल से मिलकर शब्द जौ बना. अब इस लुगत, के आगे लुगत, और उसके आगे लुगत. गर्ज़ कि दूर सिलस्ला पहुचे गा. **निदान।** जिस अमर में दूर सिलस्ला पहुचे वह कभी सिद्ध नही हो सकता. पस यह **लीपि** कदापि कार्य्य योग्य नही हो स्कती. इस्के

उपरान्त यही मुश्किलता यह है कि जीम के साथ वाओ लगाया जाय, जबकि जीम के ऊपर पेश बोल कर शब्द जौ बनजाता है तो फिर वाओ की क्यों जरूरत है, वाओ तो व्यर्थ निकम्मा है; पर इस शब्द को जीम के ऊपर पेश लगा कर जौ इस तरहा क्यों न लिखा जाय, व्यर्थ वाओ क्यों लगाया जाय. निदान ! यदि आप विचार कर देखो गे तो यह बनावटी अक्षर सर्वथा निकम्मे, किसी प्रकार भी कार्य्य के योग्य नही हो सकते हैं. यद्यपि इन कष्टों के निवारण के लिये बहुत सी विद्वानोंने कई एक चिन्ह, और लग मात्रा नियत की हैं, परन्तु फिर भी पूर्णता को प्राप्त होना कठन ही रहा. कारण कि यह तो सभी जानते हैं. कि फारसी लीपि संशे और संदेहों से भर पूर है. जिस की कहावत यह प्रसिद्ध है कि "लिखे मूसा पढे ख़ुदा" कारण कि जब फारसी लीपि शिकस्ताः अक्षरों में लिखी जाती है, (अर्थात जो वर्तमान पश्चिमोत्तर तथा पंजाब के न्यायालयों में परचलित हो रही है जिसकी कृपा कटाक्ष से धूर्त कर्मचारी मालामाल बन रहे है. देवनागरी के होने से उनका हाथ कैसे गरम होगा, क्योंकि देवनागरी में तो जो लिखा जायगा सो ही ठीक पढ़ा जावेगा, न के फारसी की तरहा जैसे मान लो कि फारसी में स्वर एक शब्द बिना बिन्दु तथा जेर जबर के लिखा होवे तो उसका उच्चारण कई प्रकार से होसके गा, अर्थात यदि प्रथम अक्षरको बे मानें तो ११ प्रकार से उच्चारण होवे गा. जैसे कि बबर, बपर, बतर, बटर, बसर, बनर बहर, बेर, बैर, बोर इत्यादि. और यदि उस पहले अक्षर को पे-सीन- ते-टे, और नून, हे, वा, ये" माने तो उस शब्द का उच्चारण ७७ प्रकार से हो सकता है. और यदि हम कथित शब्दों में से प्रथम अठ शब्दों के स्वर बदल दें तो ६० शब्द और बन जायें गे. जैसे बुनर-बिनर, हुनर, सियर आदि. फिर यदि हम अंतिम अक्षर को, जे, वा रे" मानें तो ३०४ शब्द बन जाते हैं. और यदि हम मान लें कि अन्तिम अक्षर दाल है तो १५२ शब्द और बन जाते हैं. इस प्रकार से यह स्पष्ट है, कि एक शब्द जो तीन अक्षरों का है और जिस के अन्तिम अक्षर के तीन ही भिन्न रूप हो सकते हैं, तो वह ६०६ प्रकार से पढा जा सक्ता है. यदि हम उसी शब्द के अन्तिम अक्षर को बे बदल दें तो हम एक हजार और नये शब्द बना सकें गे. बलिहारी है ऐसे अक्षरों की.

अब आप महाशयों को विदित होगया होगा कि, फारसी की लीपि संशय और संदेहों से भर पूर है. जिसका दृष्टान्त हम ऊपर लिख आये हैं कि "लिखे मूसा पढे खुदा" (अर्थात् यदि लखनऊ से पत्र आये तो जब तक उसकी पढाई के लिये लिखने वाले को काशी में न बुलाया जाये तो ठीक २ पढना ही कठन है. इसके सिवाय यदि अन्य भाषाओं को फारसी लीपि में लिखना हो तो उसका पढना और भी कठन है, जैसे कि यदि हम संस्कृत- अंग्रेजो नैपाली, कश्मीरी, बंगाली, इत्यादि भाषाओं को फारसी अक्षरों में लिखें तो इनका पढना ही कठन है. इन सब अवगुणों के होने पर भी, फारसी के दास, फारसी की यह उत्तमता कथन करते हैं, कि यह बहुत जल्द तहरी (लिखी जाती) होती है. किन्तु यह कथन भी इनका झूठा रहता है. कारण इसका यह है कि यदि फारसी की लिखावट ठीक २ तौर पर लिखी जावे तो इसके लिखने में देवनागरी से भी दो गुना समय लगे गा. हां यदि व्यर्थ लकीरें खेंचनी हों, तो नागरी से भी तिगुनी खेंच लो. अस्तु अब यह देखना चाहिये कि एक शब्द पुख़्त पनाह लिखना है, तो इसके लिये इतनी बार लेखनी (कलम) तोडी जाय गी. (१) पुख़्त (२) पैश (३) तीन नुक्ते (बिन्दू) पे के तीन बार (३) तीन बिन्दु शीन के (बिन्दू) दो बिन्दु ते के दो बार (११) तीन बार (९) दो बिन्दु ते के दो बार (११) पना एक बार (१२) तीन बिन्दु पे के तीन बार (१५) एक बिन्दु नून का एक बार (१६) एक बार (हे) के लिये (१७) निदान! यदि इस शब्द को बिना हरकात (लगमात्रा) के लिखें, तो (१७) बार कलम को तोडना पडा, और कोई हरकत शीन-पे-नून- अलिफ पर नही लगाई है, नहीं तो पचीस बार

कलम तोड़नी पड़ेगी. अब यदि इसके लम्बाई चौड़ाई का वर्णन करें, अर्थात नानोकि यदि यह शब्द इञ्च के दसवें भाग के बराबर मोटा लिखना है. तो इसकी लम्बाई चौड़ाई यह होगी. अर्थात पौन इञ्च पे, के लिये, डेढ इञ्च शीन के लिये दो इंच ते के लिये. ¼ इंच पेश के लिये, अठ बिन्दु (नुक्ता) पुश्त के लिये ¼, कुल सवापांच इंच और पनाह के लिये. ½ इंच. पे के लिये ½ इंच. नून के लिये ऐक इंच. अलिफ के लिये आधा इंच. हे के लिये आधा इंच. पे व नून के बिन्दुओं के लिये कुल इसकी लम्बाई तीन इंच हुई. निदान! कुल लम्बाई चौड़ाई ½8 इंच हुई. अब यदि येही शब्द इसी मोटी कलम से नागरी लीपि में लिखा जावे तो उसका हिसाब यह बना. पुश्त पनाह प्रथम एक लकीर उपर खेंची (१) पु के लिये एकवार (२) श्त के लिये तीन बार (५) प के लिये एक बार (६) ना के लिये दो बार (८) ह के लिये दो बार (१०) कुल दस बार हुआ. अब देखो कि कहां १७ बार और कहां १० बार कलम तोडनी पड़ी. अब लंबाई चौडाई का हिसाब देखो: डढ इंच पु. दो इंच श्त. एक इंच प,½1 इंच नाह कुल ६ इंच हुये. निदान! इस हिसाब से लम्बाई चौडाई में किस कदर फर्क है अर्थात ½1 ÷ २ × १ +21 = ६ कुल ६ इंच हुये. अब विचार किया जावे तो बनिस्बत नागरी लीपि के डेवढी देर हुई. इस्से वह उपरी कथन भी उनका व्यर्थ है इसके सिवाय और भी कोई उत्तमता फारसी अक्षरों में नहीं है. कारण कि इस लीपि से हर प्रकार की हानियां प्रति दिन उत्पन्न होती हैं. फिर हानी करने वाली लीपि का प्रचार रखना सिवाय हट के और कोई कारण नही है.

हठ का वर्णन

हठ (तअस्सुब) धर्म सम्बन्धी बातों में हो सकता है, परन्तु जो बातें लाभ के तौर पर काम में लाई जाती हैं उनमें हठ की क्या अवश्यक्ता है? मानो कि हिन्दु कहते हैं कि हम कपडे को धूप में सुकाते हैं तो क्या? मुसल्मानो को व्यर्थ ही ऐसा कहना चाहिये कि नही साहब हम तो दो पैसे की लकडी जला कर पकडे खुश्क करेंगे. क्या स्वभाविक तपश सूर्य्य और आग में कुछ फर्क नही है? इसी तरहा यदि नागरी लीपि से अपना ठीक २ कार्य्य निकल सक्ता है तो फिर व्यर्थ कष्टदायक फारसी अक्षरों में कार्य्य लेने से क्या प्रयोजन है.

नागरी का वर्णन

नागरी की लीपि कुदरती (स्वाभाविक) तौर पर है इसमें जो कुछ लिखा होवे गा. वह ही पढा जावे गा पढने वाले की क्या समर्थ है कि शब्द को अन्य प्रकार से पढ देवे. हां! यह अवश्य ही है कि लिखा हुआ ठीक २ से हो. कुछ लोगों की ऐसी समझ है कि फारसी और अंग्रेजी भाषा के कुछ अक्षरों का उच्चारण पूर्णता से इसमें नही होसक्ता, इस नुक्स के दूर करने के लिये अब नागरी के कुछक अक्षरों के निचे बिन्दु लगा, पहचान कर लेते हैं. यद्यपि यह कार्य केवल फारसी, अंग्रेजी बोल चाल के लिये किया जाता है, परन्तु इसका नतीजा बहुत ही बुरा है. कारण कि नागरी में जिस कदर शब्दों की अवश्यक्ता थी उसी कदर चिन्ह नियत किये हैं और जो शब्द कंठ व तालू के हानी करने वाले हैं वह अलग रखे गये हैं. कारण कि उनसे (मस्तक) मगज़ और निकलने के स्थान को बडी हानी और हलाकानी होती है. इसलिये नागरी में व्यर्थ हानी कार्क शब्द अलग रक्खे गये हैं जैसे कि नागरी में काफ का चिन्ह ठीक २ रक्खा गया है परन्तु क़ाफ के लिये कोई चिन्ह नियत नही किया. इसका कारण यह है कि अक्षर क़ाफ से मगज़ (मस्तक) तालू और जिव्हा को बडी कठनाई और हानी होती है. ऐसेही गाफ के लिये (ग) अक्षर नियुक्त किया गया है परन्तु (गैन) का कोई भी चिन्ह स्थापन नही कया. कारण कि इस्से भी मगज़ और तालू को बडी कठनाई और हानी होती है. दूसरी यह बातहै कि एक समान अवाज़ वाले हरूफ़ (अक्षर) निकम्मे तथा केवल नाम मात्र के हैं. कारण कि इनसे कुछ भी लाभ

नहीं है. तथा न कोई मनुष्य इन शब्दों को प्रकट करके दूसरे को लाभ बतला सकता है. जैसे मानो कि एक मौलवी साहिब को कहें कि तुम एक शब्दको अपने ख्याल के तौर पर चार तरहा ज़ाल–ज़े–ज़ोए–ज़ुवाद से बोलो. और दूसरा इन्ही शब्दों को ठीक २ शब्द ब शब्द लिखे, कदापि नही हो सक्ता, कि बोल व लिख सके. ऐसे ही अनुमान करोकि एक शब्द "बज़" है इसको जुदा २. जैसे बे ज़े से (बज़) और बे–ज़ाल से (बज़) तथा बे ज़ोय से 'बज़' व बे ज़ुवाद से "बज़" एक मनुष्य कथन करे, और दूसरे मनुष्य को कहिये कि तुम इसको ठीक २ से लिखो. आशा नही है, कि जिस प्रकार से बोलने वाला बोले, उस प्रकारक्र से लिखने वाला कदापि लिख स्के. मानो कि यदि वह अपने विचार से बे तोए बोले गा तो लिखने वाला इसको या तो बे ज़ाल अथवा बे ज़वाद समझे गा. निदान! यह सर्व कृत्य निरर्थक हैं. केवल बिचारे विद्यार्थियों को बिना कारण, ही यादगिरी और मगज़ खर्च करने के हेन्तु हैं. और बहुधा मनुष्य यह भी संदेह आगे धरते हैं. कि यदि एक शब्द ज़े से लिखा होगा तो उसका और अर्थ होगा, और यदि ज़ोये से लिखा होगा तो उसका दूसरा अर्थ होगा. इस लिये एक आवाज के विशेष अक्षर नियत किये गयें हैं. परन्तु यह भी कथन उनका ठीक और लाभ दायक नही है. कारण कि यदि फारसी में एक २ शब्द के दो २ तीन अर्थ न होते तो यह कथन कुछ ठीक भी होता. किन्तु जब के फारसी में एक शब्द के दो २ तीन अर्थ होते हैं. और जिस स्थान पर जो अर्थ चाहें लगाय जाते हैं. तो फिर इस विषय के विचार से कि यदि थोड़े अक्षर हों गे तो जुदा २ अर्थ समझ में न आवें गे. इसलिय एक अवाज के विशेष शब्द रखे गये हैं यह सर्वथा व्यर्थ है. निदान! जहां तक हम विचार करते हैं सिवाय हानी के कुछ भी लाभ इन अक्षरों के विदित नही होते हैं. कुछ लोगों का यह भी विचार है कि बड़े २ मौलवी इसकी हानियों को दूर कर सकते हैं. इस प्रश्न का उत्तर यह है कि प्रथम तो हमारी राय में ऐसा होना ही कठन है. दूसरे यदि बड़े २ विद्वानो ने बड़ी कठता से इसकी हानियां दूर भी कीं तो भी उस्से कुछ लाभ नही है. कारण कि जिस कार्य्य में कठता विशेष होय और लाभ कौडी का भी न होये तो फिर उस कार्य्यका करना ही व्यर्थ है. क्योंकि यह तो कदापि नही हो सकता है कि फारसी लीपि देवनागरी लीपि की भांती शुद्ध लिखी पढी जा सके. देखो जैसे देवनागरी लीपि में अन्य भाषायें शुद्ध लिखी जाती हैं, ऐसी शुद्ध यदि कोई फारसी का दास फारसी लीपि में लिख दे तो हम उसको सत्यवादी पुरुष जाने गे. लीजिये हम देवनागरी लीपि में अन्य भाषाओं को लिखते हैं; फारसी के दासों को उचित्त हैं कि परीक्षा के लिये एक बालक को जो देव नागरी जानता हो उस्से पढवा लें, देखो कैसा शुद्ध पढ सुनाता है. और फिर कृपा करके इन्ही भाषाओं को फारसी में लिख कर एक पूर्ण फारसी के विद्वान से पढवाइये. इस्से आप ही फारसी और देवनागरी के गुणावगुण भली भांति विदित हो जायें गे.

बेत (दोहा) फारसी

व नुक़तह आदमी बेहतर अस्त अज़ दुवाब,
दुवाब अज़ तु बेह गर नगुई सवाब.

नसर गंध फारसी

हर यक इन्सान रा तालीमे अदब आमोख़तन वाजब व लाज़मस्त, ख़ासा इन्सान ईनस्त की इलम हासिल कुन॥

अरबी, आयत कुरान. की

अल हमदो लिल्लाहे रब्बिल आल्यमीन अर्रहमाने निर्रहीमे मालकेयौमिद्दीन ईय्याका नाबुदो व ईय्याका नस्तईन इहदे नस्सेरातल मुस्तकीम;

"वइनलकुम फीहा मनाफ़ेओ"

हदीस

" कलील मिनल शफ़कतु
खैरे मिन कसर तुल ईबादत "

अंग्रेजी बाईबिल

फोर आइ डिजायर मर्सि, ऐण्ड नाट सेक्रिफाईस, ऐण्ड दि नालेज आफ गाड़ मोर देन बर्न्ट आफरिङ्गस.

पशतो

* तडे मोशे तासो कुमजा जई, तासो कोर कुमजा, खार लार कुमदे, दालार्दे तासो डूडई खुरी.

पंजाबी

किथे तेरे मापडे ज़िने तूं जणियो, ओ तेरे पासों लद गये तूं अजे न पतीणियों,
सुन्नत किये तुर्क जे होई, औरत का क्या करिये, अर्ध शरीरी नार न छोडे ताते हिन्दू ही रहिये.

कशमारी

पखसै कचैरी मक तथ छीं मेयुन मुमदमा से छी में वकील कमेत सुछका बोशसमन तत गसामियुन कोम खराव सपदे.

नैपाली

भारत वर्ष का उत्तरीय प्रान्त मा हिमालय पहाड़ का श्रेणी मध्ये एक स्वतन्त्र राज्य नेपाल नाम गरया को जहां गोरखा को निवास आर्य्य सन्तति को राज्य गर्दछन्.

मराठी भाषा

हे विद्वज्जन हो उसया शब्दांची माफी असावी वरा की ठेवावी व नागरीच्या दुर्दशे कडे लक्ष्य ध्यावे हें प्रार्थना आहे..

* यह भाषा पैशावर और काबुल के बीच में बोली जाती है..

बंगली पद

एक वार चेये देखो यत शब आर्य्य गण।
कत काल आर घुमाई वे मय अचे तण॥

प्रय पाठकगण! ऊपर लिखी फासी भाषा को छोड और भाषाओं में से एक भी भाषा फारसी का पूर्ण विद्वान स्पष्ट रीति से नहीं लिख सकेगा, कारण कि फारसी लीपि पूर्ण अक्षरों की भाषा नहीं है. और दूसरे जो इसमें ज़ेर, ज़बर पेश आदि मात्रा के स्थान पर समझे जाते हैं वह भी प्रायः लिखे नहीं जाते हैं. केवल अनुमान से ही समझे जाते हैं. ऐसी अवस्था में दूसरी भाषा के शब्द इन अक्षरों में कैसे ठीक २ पढे लिखे जा सकते हैं. यहां तक कि लिखने वाला स्वयंभी नहीं पढ सकता है. एक समय की बात है कि श्री काशी जी में एक पंजाबी मौलवी साहब कोतवाली के नीचे चौक में हिन्दी की निन्दा और फारसी अक्षरों की बडी तारीफ कर रहे थे. निन्दा सुन कर हमसे न रहा गया.. हम झुंड के अन्दर गये और बडी नम्रता से मौलवी साहब से जा निवेदन किया कि जनाब आप जो हिन्दी की निन्दा करते हैं इसका क्या कारण है. उन्होंने उत्तर दिया कि एक तो यह जल्दी लिखी नहीं जाती दूसरे पढी भी ठीक २ नहीं जाती है. हमने उत्तर दिया कि आप कृपा करके जो कुछ चाहे सो बोलें वह हम लिखते हैं, आप चाहे किसी से भी पढ़वा लीजिये, यदि वह स्पष्ट न पढ़ा जाय तो हम आज से इसका त्याग कर देंगे, मौलवी साहब ने ऊपर लिखी कुरॉन की एक आयत लिखवाई, और फिर हमीं से पढ़वाई जो हमने ठीक २ पढ दी . फिर हमने देरी के वारे में उत्तर दिया कि आप शकदर्तह की बात तो जाने दीजिये परन्तु आप यदि सही फारसी लिपि में एक श्लोक जो हम बोलते हैं लिखदें और आप ही कृपा करके पढ दें मौलवी साहब ने कहा बोलो तब हमने नीचे * लिखा श्लोक मौलवी साहब से फारसी लीपि में लिखवाया जब उसके पढने को कहा तब तो मौलवी जी ने "लिखे मूसा पढ़े खुदा" वाली कहावत सत्य कर दिखलाई

* दरिद्रानसन्तापः शान्तसन्तोष वारिण ।
दीनाशा भङ्गजन्मा तु केनायमुपशाम्यभतु ॥

भला! वह लिखते ही कैसे जब के स्पष्ट हिन्दी शब्द ही नहीं लिखे पढ़े जा सकते तो संस्कृत के कहां से लिख पढ़ सकते हैं.

एक समय की बात है कि एक मनुष्य ने अपने घर पर फारसी लीपि मे एक चिट्ठी लिखवा कर भेजी, उस चिठ्ठी में यह लिखा था कि गैया ने मुझे मारा है इस कारण मेरे से कुछ काम नही होता, तुम इन्दर को भेज दो. पढ़ने वाले ने पढ़ा कि गया * ने मुझे मारा है अन्दर को भेज दो.

एक समय एक रागी ने जोधपूर से अपने घर में ऐसा खत भेज वाया कि ज्योती ने एक स्वर का ऐसा तान लगाया कि सब दरबार के लोग खुश हो गये इस बहुत इनाम पाया.

खत पढ़ने वाले ने ऐसा पढ़ा कि "खोती ने * एक सूर का ऐसा बान लगाया".

एक समय एक कलेक्टर साहब नें अपने सरिश्ते दार से फारसी लीपि में तहसील दार के नाम यह आज्ञा पत्र भेज वाया कि एक उमदा साज़ बग्गी तैयार रखना हम दौरे पर आते हैं. बिचारा तहसील दार था जात का मरासी (कथक) वह आज्ञा पत्र के पाते ही प्रथम तो लग गया, परन्तु फिर झट पट एक उमदा सारंगी बनवा कर साहब बहादुर की मेज़ पर जा धरी. जब साहब बहादुर तशरीफ लाये और मेज़ पर सारंगी को देखा तो उन्होंने पूछा बेल यह क्या है. तहसील दार ने उत्तर दिया हजुर ने जिस का हुमक भेजा था वह ही है. साहब बहादुर ने झुंझलाकर कहा कि हम ने तो साज़ बग्गी का हुक्म भेजा था. तहसील दार ने उत्तर दिया खुदावन्द मेरा इसमें कुछ कसूर नही है, फारसी लीपि में साज़ बग्गी और सारंगी एकसां ही पढ़ी जाती है; कारण कि करता तो अटकल से ही पढ़ा जाता है. मैने ज़े के नुक्ते को नून का नुक्त समझा; और बे के नुक्ते का ख्याल नही रहा, इस्से सारंगी पढ़ी गई हजुर

यह लीपि केवल अटकल से ही पढ़ी जाती है इसे ही ऐसी २ कई प्रकार की खराबीयां इस में पाइ जाति हैं

प्रिय वाचक वृन्द! साधारण बाज़ारों के चिठि लिखने पढ़ने वालों की बातों को तो जाने दीजिये, और कलेक्टर जज और वकीलो को भी छोड़ दीजिए, परंतु बिचारे मुहर्रों, जिन्हे रात दिन इसी लिपि में लिखे अदालती कागज़ों के पढ़ने के अतिरिक्त और कुछ काम ही नहीं रहता; वे भी पहरों एक २ शब्द पर रुक जाते हैं. और उसे हल नहीं कर सतक्ते. हिन्दुओं की तो कुछ बात ही नहीं है; किंतु वे मुसल्मान जो बी० ए० तक अर्बी, फारसी पढ़ते हैं, वे भी वकालत की परीक्षा में साधारण अदालती लिखावट नहीं पढ़ सकते; अभी थोड़े दिन हुए कि इलाहाबाद के हाईकोर्ट में एक बड़ा भारी मुक़द्दमा पेश हुआ था, उसमें मनुष्य का नाम ऐसा लिखा था जो जगुरी राय तथा चखुरी राय, दोनो तरहा से पढ़ा जा सकता था बहुत दिनो की छान बीन पर भी यह मुक़द्दमा तैह न हुआ, और अन्त में प्रीवीकौंसिल तक गया; वहां यह निर्णय हुआ कि जगुरी राय और चखुरी राय एकही मनुष्य का नाम था (See Indian Law Reports 13 All P. 67.) नरोह तालुका के २९ मुक़द्मे जिन का फैसला ग़ाज़ीपुर के जज साहब ने किया था, हाईकोर्ट में पेश है; इन मुक़द्मों का फैसला, नामों के ठीक २ पढ़े जाने पर निर्भर है. एक मुक़द्मे में एक नाम कागज़ों पर कई जगह लिखा मिला जो कहीं सहज कुंवर, कहीं सजन कुंअर और कहीं बात कुंअर पढ़ा गया. दूसरे मुक़द्में में उदितनारायण का नाम उदय नाराय और बैजनाथ का नाम जयनाथ पढ़ा गया. पुनः हरदयाल राय के मुक़द्में में भी यही गड़बड़ हुई. एक बेर किश्तियों के स्थान पर कसबियां इकट्ठी की गई. और छुड़ी से मारा पढ़ कर एक महा मारा के बदले में छुरी से मारा पढ़ कर एक मद्य शय ने अपराधी को फांसी दिला दी, यह दो तीन दृष्टान्त साधाण रीति से यहां दिए गए हैं, विद्वान इतने में ही फारसी लिपि के महत्व को जान गए होंगे?

* गया नामक एक पुरुष इसका शत्रु था उसके घर वाले गया के घर वालों से लड़ने लग गये.

* पंजाजी में खोती कहते हैं गधों को.

प्रिय पाठक गण ! कोई यह न समझे कि हम अपने पूर्वजों की लीपि के पक्ष करने के लिये फारसी लीपि की हंसी उड़ाते हैं, सो ऐसा नहीं है. परन्तु इस लीपि के दोषों को तो बड़े २ देशी और परदेशी विद्वानों ने भी सिद्ध किये हैं. देखो

" प्रोफेसर मोनियर **विलियम्स** ने ३० दिसम्बर सन् १८५८ के **टाईम्स** नामक पत्र में **फारसी** अक्षरों के दोष पूर्णरूप से दिखलाए हैं. उनका कथन है कि " इन अक्षरों को सुगमता से पढ़ने के लिये वर्षो का अभ्यास आवश्यक है " वे कहते हैं कि इन अक्षरों में चार 'जे' होते हैं; तथा प्रत्येक अक्षर के उसके प्रारम्भिक, मध्यस्थ, अन्तिम वा भिन्न होने के कारण चार भिन्न २ रूप होते हैं. अन्त में प्रोफेसर साहिब कहते हैं कि" चाहे यह अक्षर देखने में कितने ही सुन्दर क्यों न हों, पर न कभी पढ़े जाने योग्य हैं, न छापने योग्य हैं; और पूर्व में विद्या और सभ्यता की उन्नति में सहायक होने के तो सर्वथा अयोग्य हैं;

पायनियर पत्र का इस विषय में यह मत है कि " आवश्यक कागज़ात लिखने के लिये तो इनसे बुरे अक्षरों की मन में कल्पना भी नहीं की जा सकती "

गो लोकवासी भारतेन्दु बाबू **हरिश्चन्द्र** लिखते हैं कि " फारसी अक्षर और विशेष कर शिकस्ता: जिस में अदालतों का काम चलता है, मुखतार वकीलों और धूर्तो गे लिए आय का एक अच्छा मार्ग है; बाबू जी के इसे विषय का प्रमाण हम पीछे देआये हैं.

डाक्टर **राजेन्द्रलाल**, प्रोफेसर **डासन** और मिस्ट **ब्लाक मान**, तथा राजा **शिवप्रसाद** अदि बड़े २ विद्वानों ने दृढ़ता पूर्वक प्रोफेसर मोनियर विलियम्स के मत का समर्थन किया है.

कितने ही सुयोग्य निष्पक्ष मुलसमान सज्जनों ने भी इस विषय में पूरी सहानुभूति प्रगट की है; हैरादबाद के सुप्रतिष्ठित अमात्य प्रसिद्ध विद्वान शमशुलउल्मा, मौलवी **सैयदअली** बिलग्रामी साहब ने स्पष्ट वाक्यों में स्वीकार किया है, कि मुसलमानों में शिक्षा के कम प्रचार के मुख्य कारण केवल फारसी के अड़विड़ंग अक्षर ही हैं; उर्दू पढ़ने के लिये कम से कम दो वर्ष चाहिऐ जब कि हिन्दी के लिये महीने दो बहुत हैं". इत्यादि अब देवनागरी को देखीये

देवनागरी लीपि का महत्व

प्रियवाचकवृन्दु ! यह लीपि सर्व भाषाओं की आदि माता **संस्कृत** की है, जिस्का महत्व हम इसी पत्रके ५ से १० तक के अंको में दे आये हैं. यहां पर केवल देवनागरी भाषा की लिखावठ का महत्व दरसाते हैं.

पानियर पत्र ने १० जुलाई सन् १८७३ ई० के पत्र में लिखा है कि " नागरी अक्षर धीरे में लिखे जाते हैं, परन्तु जब एक वेर लिखे गए, तो छपे हुए के समान हो जाते हैं; यहां तक कि उनमें लिखे हुए पद को एक ऐसा पुरुष जिसे उस अर्थ का आभासमात्र भी नही ज्ञात हुआ है, उन्हें शुद्धता पूर्वक पढ़ लेगा "

प्रोफेसर मोनियर विलियम्स साहब कहते हैं कि " स्थूल रूप से यह कहा जा सकता है कि देवनागरी अक्षरों से बढ़ कर पूर्ण और उत्तम अक्षर दूसरे नहीं हैं " प्रोफेसर साहेब ने तो इन को देव-निर्मित कह दिया है

सर आईज़ेक **पिटम्यान** ने कहा है कि "संसार में सर्वांगपूर्ण यदि कोई अक्षर हैं तो वे हिन्दी हैं "

बम्बई सुप्रीम कोर्ट के चीफ़ जस्टिस सर अर्सकिन पेरा ने (Notes to Oriental Cases) की भूमिका में लिखा है कि "एक लिखित लिपिकी सर्वांगपूर्णता यही जान पड़ती है कि प्रत्येक शब्दका उच्चारण उसके देखने से ही ज्ञाता हो जाय और यह गुण देवनागरी अक्षरों में जिनमे संस्कृत लिखी जाती है. दूसरे भारत बर्षीय अक्षरों की अपेक्षा अधिक पाया जाता है.........; इस गुण से लाभ यह है कि हिन्दू बालकों ने जहां अक्षर पहिचान लिए, कि वे सुगमता से और बिना रुकावट के पढ़ने लग जाते हैं. इससे जिस विद्या के सीखने में योरप में बहुधा कई वर्ष लग जाते हैं. वह भारत बर्ष में केवल एक मास में आ जाती है "

प्रिय पाठक गण ! फारसी दासों के १ + २ + ३ × ४ प्रश्नों का उत्तर उपर के लेख में दे आये हैं; जो आप लोगों को भली भांति विदित हो गये होंगे अब हम उन के पांचवें प्रश्न का उत्तर देते हैं. और साथ ही **फारसी** लीपि के दासों से यह निवेदन करते हैं कि पक्षपात छोड कर कहिये कि उपरी लेख से आप लोगों को **देवनागरी** और **फारसी** लीपि के गुणावगुण विदित हुये हैं या नही ? अब हम आपके पांचमे प्रश्न का उत्तर दे ते हैं; आप जो पांचवें प्रश्न मे ऐसा लिखते हैं कि "भिन्न प्रान्तों के निवासियो में मेल उत्पन्न करने के लिये एक ही लीपि के प्रचार की अवश्यक्ता है. परन्तु हिन्दी द्वारा **प: प्र ०** वालो से **पंजाब** का मेल उठ जाय गा०"

क्यो साहब भिन्न प्रान्तों से आप का तात्पर्य्य **भारतवर्ष** के प्रान्तों से है, अथवा अन्य योरूपादि देशों से? यदि **भारतवर्ष** के प्रान्तों से है. तो भाई मेरे पंजाब और प- प्र- छोड, भारत वर्ष के और सर्व प्रांतों में फारसी लीपिके १०० में से एक दो जानने वाले मिलें गे. परन्तु नागरी लीपि के जानने वाले १००में से ९९ मिलें गे. फिर यदि देवनागरी लीपि का ही पंजाब और पश्चमोत्तर प्रान्त में प्रचार होजाय; तो सारे भरत निवासियों के मेल होने में क्या संदेह है:

और ये जो आपने लिखा है कि "हिन्दी द्वारा प- प्र० वालों" से पंजाब का मेल उठ जाय गा. इस में आपने यह नही लिखा कि हिन्दुओं का या मुसल्मानों का यदि आपका तात्पर्य यहां पर मुसल्मानों से है, तो क्यों साहब गुजरात, बंगाल, कि जहां फारसी लीपि का कुछ भी प्रचार नही है क्या वहां के मुसल्मानों से आपका मेल उठ गया है क्या वहां के मुसल्मान आपकी दृष्टि में मुसल्मन नही हैं? यदि हैं तो फिर मेल बना ही रहा, इस्से आपका उपरी कथन मिथ्या ठहरा. (६) प्रश्न में जो आपने लिखा है कि ". फारसी के उठ जाने से इस कार्य का आरम्भ हो चुका है." धीरे २ फारसी और उर्दु का भारत वर्ष भरें से देश निकास कर के हिन्दी आदि भाषाओं को उनका स्थानापन्न माना जायगा"

क्यों भाई ! फारसी के उठ जाने से किस कार्य का आरंभ हो चुका है. अर्थात् देवनागरी लीपि से यहां पर आपका तात्पर्य होगा- तो भाई साहब फारसी के उठाने और उर्दू के प्रचार करने वाले तो आपके कट्टर मुसल्मान बादशा ही थे, फिर इसमें दोष किसका. भला! उन्हो ने पक्के मुसल्मान होने पर भी फिर अरबी का प्रचार तो दूर रहा किन्तु फारसी के स्थान पर उर्दु का प्रचार क्यों किया? यदि यह कहो कि सर्व प्रान्तों (सर्व भारत निवासियों) के मेल के लिये उर्दू भाषा का उन्हो ने प्रचार किया था, तो फिर एसा शोक करना कि "फारसी के उठ जाने से इस कार्य का आरंभ होचा है" यह व्यर्थ है. क्यों कि वह जानते थे, कि हामारी भाषा रहने से प्रजा का कष्ट दूर नही हो सकता है इस लिये उन्होने सर्व साधारण के उपकार के लिये उर्दू भाषा का प्रचार किया था. यदि वह कुछ दिन और रहते तो इस फारसी लीपि को भी उठा देते; और यह जो आपने लिखा है कि " धीरे २ फारसी और उर्दू का भारत वर्ष से देश निकास करके हिन्दी आदि भाषाओं को उनका स्थानापन्न माना जायगा." यद्यपि बंगाल गुजरात, मदरास इत्यादि देशों में से फारसी, उर्दू का निकास हो गया हुआ है, और इसके स्थान पर देनागरी वंशज विराज मान हैं. पर हम तो भारतवर्ष का तभी कल्यान समझें गे, कि जब के सारे भारत देश में नागरी लीपि का प्रचार हो जाये गा. कारण कि देवनागरी के प्रचार हो जाने से सर्वत्र सत्यका प्रचार हो जाये गा. और ऐसे होने से सर्व की परस्पर प्रीति हो जायेगी. प्रत्यक्ष देखलो कि जिन प्रान्तों में फारसी लीपि का प्रचार नही है वहां, याने बनिस्वत पंजाब और पश्चमोतर देश से सुख शांती पाई जाति है. और यह तो आप जानते ही होंगे कि बनिस्वत अन्य लिपियों से देवनागरी लिपि के

जानने वाले भारत वर्ष में विशेष हैं; फिर यदि केवल नागरी लिपि का ही सारे भारत में प्रचार हो जाय, तो इस लीपि के होने से; एक तो न्यायालयों तथा व्यापरादि में जो कभी २ फ़ारसी आदि लिपियों की कृपा से गढबढ होजाता है; यह दूर हो जाये गा, और दुसरे परस्पर सब का मेल हो जाये गा. और ऐसे होने से सर्वत्र ही सुख शांती फैल जाये गी; अब यदि आप सर्व हितेषी हैं तो इस लीपि के प्रचार होने का यत्न करो और शोक को त्याग दो;

(७)प्रश्न में जो आपने लिखा है कि " मुसल्मान लोग उस लीपि से जो ईरान, अफगानिस्थान, अरब, और सिंध आदि देशों में है, वंचित रक्खे गये तो इन प्रान्तों के मुसल्मानों से उनका सम्बंध टूट जाय गा."

वाहरे तुम्हारी? समझ जब के बंगाल और गुंजरातादि प्रान्तों के मुसल्मानों से जो कि फारसी लीपि को कार्य में न लाकर बंगाली गुजराती इत्यादि भाषों से कार्य लेते हैं, इन से सम्बंध नही टूटा तो, अरब ईरान, अफगा निस्तानादि के मुसल्मानो से क्यों कर टूट सकता है. क्या कोई हज्ज रोकने के लिये यत्न कर रहा है, जो अरब से सम्बंध टूट जाय गा, और बाकी रहे ईरान और अफगान निस्तान इन से यदि सम्बंध टूट भी गया तो कुछ हानी लाभ भी नहीं है जिस का आप शोक करते हैं; शोक तो उनका करना चाहिये कि जिन से कुछ लाभ होता हो, क्या! इन्हो ने इस महा दुष्काल में पीड़त गरीब मुसल्मानो को कुछ सहायता दी है. क्योंकि सम्बंधी होने का तो यह ही लाभ है. न कि, विपत्ति के समय काम में आवें. जो विपत्ति के समय काम ही नही आवें तो उन से सम्बध ही क्या रहा. यदि सत्य पूछो तो इस समय सम्बंधी तो हमारे तुम्हारे अमरीका और योरुप वाले हो सकते हैं; जिन्हो ने घोर विपत्त में सहायता दी है.

और आपने जो यह लिखा है कि " उनकी अरबी फारसी, और उर्दू के धर्म पुस्तकें व्यर्थ होंगी, और क़ुरान शरीफ के अक्षर पहचानने वाला भारत वर्ष में कठिनता से मिले गा"

क्यों साहब बंगाल, गुंजरातादि देशों के न्यायालयों में तो फारसी लीपि का प्रचार नही है तो क्या इन देशों में अरबी, फारसी, उर्दू के जानने वाले नहीं रहे हैं? देखो सहस्त्रों वर्षों से संस्कृत का प्रचार न्यायालयों से उठ गया है, " तो क्या कोई हिन्दु ऐसा कह सकता है कि हमारी धर्म्म पुस्तकें व्यर्थ हो गई? क्योंकि न्यायालेयों में से संस्कृत के उठ जाने से अब कोई वेदों के अक्षर पहचानने वाला ही नहीं मिलता है. अरे भाई? जिनकी धर्म्म में प्रीति है वह तो धर्म पुस्तकों को प्राणो से भी प्रिय समझ कर उन की रक्षा करते हैं, देखो मुसल्मानो के समय में सहस्त्रों पुस्तकें जलाई गई? तो क्या संसकृत लीपि का नाश हो गया - क्या उस समय संस्कृत का कोई विद्वान नही था?; कुदशा होन पर भी संस्कृत लिपि के जानने वाले सहस्त्रों मोजुद थे; कारण कि? जिन को धर्म में प्रिती होती वह तो हजारों कष्ट सहन कर के भी सीखते हैं. हां? जिन की धर्म में प्रीती नही है ; उन की तो बात ही जुदा है , क्या? पञ्जाब और पश्चिमोत्तर व सिंधादि देश में सभी मुसल्मान फ़ारसी लीपि के जानने वाले हैं? यदी कहिये कि सभी फारसी लीपि के जानने वाले नही है तो क्या उनसे आपका सम्बंध टूट गया? दुसरी बात यह है कि जो मुसल्मान अरबी, फारसी, उर्दू नही जानते किन्तु अन्य भाषाओं को जानते हैं और वह जिन भाषाओं को जानते हैं उन में छपी हुई धर्म पुस्तकें पढ कर अपना धर्म पालते हैं तो क्या वह आपकी दृष्टि में मुसल्मान नहीं हैं? अथवा जो हिन्दु ईसा अरबी फारसी उर्दू को जानते हैं क्या आप उन को मुसल्मान समझते हैं? यदि ऐसा नही समझते तो फिर शोक किस बात का है," तीसरे पुस्तकों से तात्पर्य्य तो धर्म जानने से न है, फीर चाहे किसी भाषा में हो उन से धर्म जान लेना चाहिये ? और यदि यह कहिये कि यह हमारी धर्म लीपि है तो सत्य पूछो तो यह लीपि असली पारसी जाती की है और अज तक यह उन्ही के नाम से प्रसिद्ध है. देखा उन की धर्म पुस्तक **जिन्दावेस्था** इसी लीपि में है चौथ यदि यह कहिये की पारसी लीपि अरबी से निकली

है; तो इस विषय को आप पुस्तक पहलवी* सं१९७७ की छपी हुई को देखीये, इस के दखने से भली भांति विदित हो जाय गा, कि अरबी से फारसी निकली है या फारसी से अरबी निकली है?

(४) बात य है कि पारसी लोग जो भारत वर्ष में निवास करते हैं, यह कुछ यहां के निवासी नहीं हैं; परन्तु यहां पर निवास करने से यहां की गुजराती भाषा में सर्व कार्य्य करते हैं; यहां तक कि अपनी धर्म पुस्तकें भी गुजराती भाषा में करली हैं. तो क्या यह अपने धर्म पर नहीं चलते हैं? देखो कई वर्षों से आज तक यह अपने धर्म पर आरूढ देखने में आते हैं; और आप तो इसी हिन्द के असली रहने वाले हैं फिर आप को आपनी असली लीपि से द्वेष करना और विदेशी लीपि से प्रेम रखना? मानो अपनी हंसी करानी है, कारण कि चाहे आप किसी भी देश मे जाओ आप को उस देश के लोग न तो अरबी और न ईरानी, न अफगानस्तानी केहें गे, परन्तु हिंदोस्तानी ही कहेंगे ? फिर जिस देश के नामजद हो उस देश की भाषा से बुरा मानना और अन्य देश की भाषा से प्रेम रखना मानो अपने पेर में कुल्हाडी मारना है.

(५) बात यह है कि ऐसी कमजोरी तो आप तब दिखलाते कि जब कोई मुसल्मानो को बलात कार से अरबी फारसी के पढने पढाने को मना करता? अथवा अपनी सरकार इसे न्यायालयों से उठा देती ? या उठा देने की आज्ञा देती ? या उठा देने की कुछ चरचा होती तो आप को उपरी बातें दिख लानी कुछ उचित्त भी होतीं? परन्तु न तो उठाइ ही गई है और ना ही उठा देने की कहीं कुछ चर्चा ही है, व्यर्थ आयें बायें सायें लिखने लग गये? क्या माता पिता यदि अपने बच्चोंको कुछ वस्तु बराबर बांट लेने का हक्क दे, तो बच्चों को परस्पर अप्रसन्न हो कर लडना झगडना चाहिये? हां ! यदि किसी को हक न दें? अथवा छीन ले तो उन्हें कमजोरी दिखलानी वाजिब है परन्तु जब कि माता पिता दोनों को सम समझते हैं और दोनो को बराबर हक्क देना चाहते हैं तो फिर बिना कारण ही एक दूसरे की निन्दा करना मानो अपनी भी निन्दा कराना है? जब के न्याय शील श्रीमान ऐन्टोनी मकडानल साहब बहादुर ने जो माता पिता के समान अपने हिन्दु मुसल्मान दोनों बच्चों को बराबर हक देते का न्याय किया है अर्थात जैसे फारसी लीपि न्यायालयों में जारी है वैसे ही नागरी के भी जारी होने की आज्ञा दी है; तो उन्होंने क्या अन्याय किया है? क्या आप की दृष्टी में हिन्दु उनके बच्चों के समान प्रजा नही हैं? क्या उन्होंने जो इन को हक्क दिया है, यह बुरा किया है? हां! यदि वह मुसल्मानो का हक छीन कर हिन्दुओं को दे देते अर्थात यदि फारसी को उठा कर न्यायालेयों में देवनागरी लीपि को बैठा देते तो आप महाशयों का उपरी चिल्लाना, और देव नागरी पर अक्षेप लगाना उचित भी होता? पर आपने तो यह बात सत्य कर दिखलाई कि „चोर की दाढी में तिनका" अर्थात आपको ये फिकर लग गया कि कहीं ऐसा न हो कि जैसे अन्य प्रांतों से यह उठगई है कहीं यहां से भी न उठ जावे, यदि इस फिकर (सोच) से उपरी कथन किये हैं, तो इस में दोष किस का? कारण कि यदि फारसी लीपि में उत्तम गुण हों गे, तो इस के उठाने वाला ही कोई नहीं है. और यदि इस में दोष भरे हैं तो इसके उठ जाने में कुछ संदेह ही नहीं है? फिर इसके लिये फिकर करना ही आप का व्यर्थ है.

प्यारे मुसल्मान भाईयो ! उपरी विचार त्याग दो, और परस्पर दोनो भाई मिल कर देवनागरी लीपि का जैसे प्रचार हो वह यत्न करो. कारण कि आप के निर्धन हिन्दु मुसल्मान भाई जो निर्धनता के कारण पारसी लीपि नही पढे, और न पढ सकते हैं. वह झट नागरी लीपि पढ कर अपना दुःख सुख न्यायधीश से प्रकट कर सकेंगे,

प्यारे मुसल्मान भाईयो ! इस समय अविद्या रुपी आग लगी हुई है; क्या यह आग बुझाना उचित नहीं है? क्या आप नहीं जानते हैं कि अपना देश विद्या हीन होने से कुदशा को प्राप्त हो रहा है? तो क्या इस समय आपस में प्रीति न बढा कर अविद्या नाश करने के बदले परस्पर द्वेष करने का है

* संस्कृत से पहलवी, पहलवी से फारसी और फारसी से अरबी, पाओ जिन्द, और दरी इत्यादि लीपि निकली हैं,

क्या आप नहीं जानते हैं कि बनिस्बत फारसी लीपि के देवनागरी लीपि शीघ्र आजाती है? क्या अपने देश के निरधन लोगों में यह ताकत (समर्थ) है कि वह कम से कम एक वर्ष तक चार आठ आने महीना फीस का देकर अपने बचों को फारसी लीपि सिखला सकें मानो कि एक कहार (माशकी) है जिस को ६ रु० मासिक आमदनी है; वह अपने बच्चे को केवल चिठी पत्र पढ लिख लेना मात्र ही सिख लाना चाहता है, तो उसका उस बच्चे के पढाने में यदि चार आना भी मासिक फीस का रक्खें, तो एक वर्ष की बारां चवनी अर्थात ३) रु० हुये. और एक वर्ष की कितावें यदि चार भी रक्खें. तो कम से कम आठ आने की हुई. और पढाने वाले को दिन तहवार (होली, दिवाली, दसहरा) अर्थात ईद, बक़रीद, और रमजान (ताजीया) ईत्यादि में यदि दो २ आना भी देवें तो छे आने हुये. और कलम, श्याही, तखती (कागज) का यदि कम से कम एक आना भी रक्खें तो बारां आने हुये. और बालक के स्कूल में नित्य खाने के लिये यदि एक अधी भी रखें तो नित्य की अधी का एक रुपया चौदा आना हुआ; अब कुल एक वर्ष की पढाई में उसका ६॥, रु० खर्च हुआ; अब देखना चाहिये की देवनागरी के पढने लिखने में उसका क्या खर्च होता है. अब यदि देवनागरी के केवल पढ लिखलेना सीख लेने के बारे में यदि चार महीना भी रक्खो तो १, रु० फीस का हुआ, और चार पुस्तकों का आठ आना मानलो और ऐक दिन तहवार का गुरू की भेंट में दो आना रखलो और कलम स्याई, काग़ज का चार आना जानलो, और स्कूल में नित्य बालक के खर्चने की एक अधी का हिसाब चार मास में दस आना विचार लो? तो कुल खर्च २॥, रु० हुआ. अब विचार कर देखो कि कहां तो ६॥, रु० और कहां २॥, रु०? अब कहिये कि विचारे ५×६ रुपया मासिक तनखा पाने वाले की कभी यह इच्छा हो सकती है, की मैं ६॥, रुपया खर्च कर के अपने बच्चे को फारसी सिख लाऊं? दुसरी बात यह है, कि फारसी के पढे हुये बहुधा करके गणित विद्या (हिसाब) में कच्चे ही पाये जाते हैं; पर देव नागरी के जानने वाले हिसाब में बडे हुश्यार होते हैं. कारण कि हमारे बडों ने विद्या सिखलाने की ऐसी उमत्त पद्यती रखी है कि विद्यार्थीयों को इस रीति से पढने में कुछ भी कठिनता नहीं पडती है. प्रत्यक्ष देखना हो तो एक मिडल पास या फारसी के पढे हुये विद्यार्थी, और एक केवल गुरु के यहां से पडे हुये विद्यर्थी को हिसब में परीक्षा करके देखलो, विचारे मिडल पास को सेलट कागज की अवश्यक्ता पडे गी, और गुरु का पढा हुआ मुख से ही पाई२ का हिसाब कर देगा–कहिये फिर ऐसी शीघ्र आने वाली भाषा (लीपि) के प्रचार होने से आप को बुरा मानना उचित्त नहीं था, परन्तु खुश होना मुनासब था. कारण कि देव नागरी लीपी के प्रचार होने से सर्व साधारण को लाभ प्राप्त हो सक्ता है; अन्य भाषाओं से नहीं; इस लिये सविनय प्रार्थना है, कि परमेश्वर के लिये इस सर्व उपकारी देवनागरी के प्रचार में विघ्न मत करो यह ही हमारी प्रार्थना है.

अब रहे वे हिन्दु जो इनकी तान में गलतान हो, इनके साथी बन, फारसी लीपि का पक्ष कर रहे हैं. या तो वे लोग देवनागरी के महत्त्व से अनजान हैं, अथवा स्वार्थ वश हो इनकी तान में तान मिलाने लग गये हैं? इन दोनो बातों के सिवाय और कोई कारण तान में तान मिलाने का नहीं है. अब रहा यह कि यदि वे देवनागरी के महत्व को जान कर उनका संग देते तो ऐसा समझा जाता कि देवनागरी में अवश्य ही कुछ खोट होगी, नहीं तो वे क्यों यवनो का संग देते? परन्तु जहां तक हमने खोज की है, इनसे ऐसा ही विदित हुआ है, कि वह देवनागरी को नहा जानते हैं. केवल! अपने स्वार्थ के लिये उनकी तान में तान मिला, देवनागरी पर बाण चलाते हैं. सत्य है– "**स्वार्थी दोषो न पश्यति**" स्वार्थी अपने स्वार्थ के लिये क्या नहीं कर दिखाते? **शूर्पणखा** ने अपने स्वार्थ के लिये रावण के

कुटुम्ब का बध करा दिया, दुर्योधन ने स्वार्थ वश हो, सारे भारत का महा भारत करा नाश किया. विजय सिंह ने अपने स्वार्थ के लिये वीर शिरोमणी पृथ्वी राज, और महा राणा समर सिंह जी का शहाबुद्दीन से नाश करवाया. जैचंद ने स्वार्थ के वश में होकर, यवनो का भारतमें विजय डंका बज वाया. फिर ऐसे हिन्दुओं ने यदि देवे नागरी से विरोध किया तो नई बात नहीं की है? देखो एक फारसी के विद्वान ने हिन्द की दशा का नम्न कवितां में वर्ण किया है,

(गजल)

देखो जहां न देख स्को जो जहान में ।
मेवा है फूट गुलशने हिन्दोस्तान में ॥
बोया गया है बीज यहां पर निफाक का ।
इस बाग में दरख्त नहीं है ईतफाक का ॥
आय भारत अब तेरी वह हिम्मत कहां गई ।
वह सन्त नत वह शानो शौकत अब कहां गई ॥
आय कौम आर्य्य तेरी ईज्ज़त को क्या हुआ ।
उस जोश खून चश्म मुरव्वत को क्या हुआ ॥
आय कौम आर्य्य तेरे अरमा क्या हुये ।
इस इत्तफाक कौम के सब सामान क्या हुये ॥
आय कौम आर्य्य तेरे कामिल कहां हैं अब ।
वह ज्ञानी न्याई पण्डित कहां गये हैं अब ॥
श्री कृष्ण व्यांस मनु हाय! अब कहां गये ।
वह वालमीक जैसे कवि सब कहां गये ॥
अर्जुन दलीप लक्ष्मण गये कहां हैं राम ।
भीष्म पितामा गुरु द्रोण कहां हैं परशुराम ॥
वह सूरमा सिपाहि जो मरते थे नाम पर ।
वह ऐहल राय लिखते थे जो वेद शास्तर ॥
वह फलस्फा रियाज़ी मन्तक के राज़ दान ।
वह कीमीया वह हिक्मत हरफ़ के कामिलांन ॥
हा ! हा ! कहां गये वह श्री काली दास जी ।
है जिन के आगे सेक्स पीयर तिफ्ल मकतबी ॥
वह फन कहां गये वह कमालात क्या हुये ।
वह इल्म अब कहां है वह आलात क्या हुये ॥
आखर उठे थे आर्य्य वर्त की खाक से ।
आखर खमीर था तो इसी खाक पाक से ॥
क्या अब वह कीफ हिन्द की मट्टी में नहीं रहा ।
क्या अब वह खून इन रगों में शरफ नहीं रहा ॥
क्या हम में वह कमाल का जौहर नहीं है अब ।
क्या वह वतन वह नस्ल गौहर नहीं है अब ॥
सब कुछ वोही नस्ल वोही और वोही है घर ।
सब कुछ वोही है हम में इत्तफाक नहीं मगर ॥
बरबाद किया हिन्द को हमरे न फाक ने ।
खोया जहां से हम को है हमरे निफ़ाक ने ॥

आय! देव नागरी के विरोधी हिन्दु भाईयो ? उपरी कविता से आप लोगों को विदित हुआ होगा, कि भारत के नाश का कारण आपस की फूट से है: फिर आप लोग विद्वान होकर छोटी २ बातों में फूट दिखला, अन्य लोगों से हंसी क्यों करवाते हो? क्या आप की, और देव नागरी के चाहने वालों की उत्पत्ति हिन्द की मट्टी से नहीं है? क्या आपके ऋषि, मुनि देवी देवता, कोई दूसरे है? क्या आप आर्य्य वंश के नहीं हैं,? क्या आप की नाडी २ (नस नस) में वह पवित्र आर्य्य रूधिर नहीं है ? क्या आप इस आर्य्य देश (हिन्द) के नाम से पुकारे नहीं जाते हैं? क्या आप इस आर्य्य भूमि के अन्न जल से शरीर पोषण नहीं करते हैं, अर्थात एक ही भारत माता की गोदके सहोदर भाई नहीं कहलाते हैं. क्या तुम्हारे पूर्व पुरुषाओं की देवनागरी लीपि नहीं थी. यदि उपर लिखी सभी बातों को आप लोग मानते हैं? तो फिर अपनी मात्री लीपि से विरोद्ध क्यों करते हैं? क्या देवनागरी लीपि, फारसी लीपि की अपेक्षा। आप लोगों की दृष्टि में कुछ निकम्मी जान पडीतो है? यदि इस बात से इसके विरोद्धी बने हो तो इसका कुछ सबूत दीजिये; जैसे कि फारसी लीपि के निकम्मे होने का सबूत देशी और विदेशी विद्वानो के हमने दीये हैं? और यदि कुछ सबूत नहीं रखते हो, तो इस विरोद्ध को त्याग अपने भाईयों से मिल कर देवनागरी की वृद्धि के प्रचार में लग जाओ, और जगत में यश पाओ?

प्यारे ! देवनागरी के प्रेमी गण, स्वार्थीयों के विरोद्ध करने से देवनागरी को कुछ भी हानी नहीं पहुंच सकती, परन्तु दिन प्रति दिन लाभ ही पहुंचे गा- इस बात का

दृष्टान्त प्रत्यक्ष आप लोगों के सन्मुख नैशनल कांग्रस मौजूद है कि ज्यों २ इस के विरोधी अपनी विरुद्धता दिखलाते गये, त्यो २ इसकी वृद्धी होती गई. ऐसे हीं जैसे २ देवनागरी के विरोधी आपनी विरोध दिखलाते जायें गे वैसे २ ही यह वृद्धि को प्राप्त होती जाये गी, और एक दिन देव नागरी का बोल बाला हो जाये गा. पर याद रक्खो कि यह कार्य्य आप प्रेमियों की हिम्मत पर निर्भर है?

अब हम इस विषय को विशेष न बढा कर केवल इतना ही और निवेदन करते हैं कि यह विषय हिन्दु मात्र पर प्रकट कर देना चाहिये कि कोई हिन्दु अपनी सन्तान को प्रथम अपनी देव नागरी लीपि के सिखलाये बिना अन्य लीपि को न सिखलावे? ऐसा प्रचार करने से एक तो देव नागरी का प्रचार हो जाये गा. और दूसरा लाभ यह हो गा कि आगे होनहार सन्तान देव नागरी लीपि के पढने से धर्म ग्रंथो को देखने लग जाये गे, जिसका फल यह होगा कि अपने धर्म के जान कार होने से उन पर फिर अन्य धर्मीयों का असर न पडे गा और यह ही मुख साधन उन्नति के हैं. देखो मुल्समानों ने जो उन्नति प्राप्त की थी, वह एक लीपि को ही होने से की थी. वर्तमान समय में जो अंग्रेज लोग उन्नति कर रहे हैं, यह एक लीपि के ही होने से कर रहे हैं. और प्राचीन समय में जो अपने पूर्व पुरुपा उन्नति के शिखर पर चडे हुये थे, वह एक लीपि के ही होने का कारण था. **निदान** ! यदि तुम भी अपनी उन्नति चाहते हो; तो सारे भारत वर्ष में पूर्व पुरुषों की लीपि देव नागरी के प्रचार का यत्न करो ?

भजन

पडे क्यों भूल में प्यारो, यह क्या तुमने विचार है।
जरा तुम सोच कर देखो, कहां पर दिल तुम्हारा है॥
वे सुख हो मात्री भाषा से, जो चाहो निज अपारा है।
नही सुख पावो गे प्यारो, कथन यह सत्य हमारा है॥
जगत में मात्री भाषा ही, सबी सुख का सहारा है।
यदि कुछ शक हो दिल में, तो यह दृष्टान्त भारा है॥
देखो अमरीका इंग्लैंड को, जहां सुख का न पार है।
है कारण मात्री भाषा ही, इन्हो ने यह पुकारा है॥
जो चाहो वैसी तुम उन्नति, क्यों भाषा को विसारा है।
यह ही गफलत का है कारण, जो पावो दुःख अपारा है॥
जो तज कर मात्री भाषा को, लिया अन्य का सहारा है।
मणी को कांच के बदले, वृथा ही तुमने हारा है॥
तजो अब उर्दु लिपि को, नहीं इसका सहारा है।
फैला कर जाल और झगडे, किया हिन्द नाश सारा है॥
जो इसके दास हैंगे हैं, करो उनसे किनारा है।
पढो अब मात्री भाषा को, नहीं इस बिन गुजारा है॥
जगत में नागरी अक्षर, सबी लीपि से प्यारा है।
पढने लिखने में सुखदाई, नही कोई विकारा है॥
तजो स्वार्थ आर्य्य भाईयो, करो मिल कर प्रचारा है।
यह सेवक विन्ती करता है, उस्से भारत उद्धारा है॥

धन्यवाद

हम कोटशः धन्यवाद जय पुर निवासी **मिष्टर जैन** वैद्य महाशय को देते हैं कि जिन्होने अपने निज व्यय से; "**हिन्दी क्या है**" तथा **देवनागरी**, यह पुस्तकें छपवा कर नागरी देवी का महत्त्व दरसा, देश की सेवा बजाई है यदि मि. जै. वैद्य महाशय की भांति अन्य धन वान भी ऐसी २ पुस्तकें छपवा कर नागरी उर्दु के गुण दोष दरसायें; तो आशा है कि शीघ्र ही सर्व की रुचि नागरी देवी की ओर हो जाय ? यह दोनो पुस्तकें नागरी के विषय की अति उत्तम हैं. जिन महाशयों को इन पुस्तकों के देखने की रुचि हो वह मिष्टर जैन वैद्य जय पुर से मंगा लें.

श्री पं. वनमाली मिश्र रचित

लावणी

श्री एन्टोनी मक डानल लाट हमारे।
हिन्दी प्रचार कर हुये प्रजा के प्यारे॥
भारत वासी नहीं फुले अंग समावें।
नगरी २ कर सभा सु गुण गण गावें॥
सब हिन्दु जन मन से आशीष सुनावें।
भगवान करें कभी बडे लाट हो जावें॥

आरत भारत के कष्ट नष्ट हों सारे॥ हिं० ।
जब तक अकाश और काश में हैं बादल
जब तक बादल दल से बरसे सुन्दर जल॥
जब तक वहें भरित सारित गहै तट सगराचल।
जब तक सागर से भाफ जायें नभ रवि बल॥
तब तक मेन्टो नील लाट न होवें न्यारे॥ हिं०
जब लौं गिन्ती वर्ष मास दिन पलकी ।
जब लौं संख्या पट ऋतु के अदल बदलकी ॥
जब लौं सीमा उदया चल अस्ताचल की।
तब लौं हों राज्य वर्धे सर मक डानल की॥
रहें लाट हमारे रवि शशी तारे॥ हिन्दी०
हिन्दी की महिमा तुम से छिपि नाहीं है
हिन्दी से उत्तम कोई लिपि नहीं है॥
लिपि अन्य की शोभा ऐसी छिपी नहीं है।
उर्दू की त्रुटि, बातों से खिपी नहीं है॥
गुण आगरी नागरी के तुम जानन हारे॥ हिं०
महा भाग लाटनें हिंदी बाग लगाया ॥
सुन्दर सुगन्धि छाई चारों दिशि छाया ०
पर हा उर्दु पक्षी के मन नहीं भाय ॥
जैसें उलूक रवि रेख देख घबराया
गुजराती बंगाली तैलंगी सुखारे हिं॥
चल रही विरोधिनि यवन पवन दुःखदाई॥
विष भरी हरी शाखा को देत सुखाई ।
हे लाट इन्द्र ! प्रेमामृत दो बरसाई ॥
सींचहु सुख कन्दी हिंदी लता सुहाई ॥
हिंदी चकोर तुव मुख शशि ओर निहारे। हिं
सुस्थान दान दो निज कर हिंदी पाली
हो अचल अटल सो कीजै युक्ति निराली ॥
क्या घाट तुम्हें तुम लाट महाबल शाली ।
आशीर्वाद देता है मिश्र वनमाली ॥
चिर जीव हु साहब सहित कुटुम परिवारे।
हिन्दी प्रचार कर हये प्रजाके प्यारे ॥

श्री धर्म्मामृत छापा खाना.

प्रकट हो कि हमने सर्व साधारण के सुभीतेके लिये श्री धर्म्मामृत छापा खाना खोल है जिस में हिन्दी, अंग्रजी, मरहठी और गुजराती अक्षरों की छपाई का काम बहुत सुथरा और शुद्धता पूर्वक होता है जो लोग अपनी वा दूसरे की पुस्तक बम्बई के सुघड़ छापे में अच्छा और उत्तमता पूर्वक शुद्ध छपवाकर उन की शोभा बढ़ाना चाहते हों वह हमारे यहाँ एकबार अपना काम, पुस्तक चेक बिल, कार्ड, लिफाफा आदि छपाकर देखलें किस मनमोहनी सजावट से हमारे यहाँ काम होता है हमारे यहाँ एकबार काम छपाने पर सब बातें खुल जायेंगी और आप को और जगह छापने का मन नहीं करेगा. ऐसी हमको दृढ़ आशा है.

गोपाल नारायण शर्मा मैनेजर

परीक्षित औषधियां.

गठिया बुखार, नबलाई, नपुंसकता, धातुपुष्टी वीर्यसुद्धि चांदी, प्रेमह, रक्त, पित, कोढ़, क्षय, जलंधर, स्त्रीयों के गर्भाशयके दरद, बांझा पन, दीवानापन, हैजा, दमा, हरस, फोला, मोतिया, पेट का दरद, गांठ सीर दुखने, भूख न लगने, नज़ला, छाती का दर्द, हथ्यार का जखम, कंठमाला, और भी सर्व प्रकार के फोडे फुंसी (गुमडा) सुजन, सांप, बिछु हडकाये कुत्ते इत्यादि के डसने कडते के विष, उलटी शरदी गरमी, जुलाब, हिस्टीरिया, मुख तथा दांत का दर्द, खांसी नाक कान का दर्द लोहु विकार तथा चमडा का दर्द, ईत्यादि सर्व प्रकार के दर्द शीघ्रता से थोडे खर्चे से आराम करने में आते हैं यह औषधियां बडे श्रम से हिमाले पर्वत के महात्माओं से प्राप्त की हुई हैं, इन असर कार्क चमत्कार औषधियां से सहस्त्रों मनुष्य आराम पाचुके हैं; इनका सबुती के लिये हमारे पास बहुत सर्टीफिकट मौजुद हैं यह औषधियां शुद्ध वनस्पति आर्थात जडीबुटी की बनी हुई हैं एक बार अनुभव कर के देख लिजाये सत्यासत आप ही विदित हो जायगा.

गोपाल नारायण शर्म्मा मैनेजर

श्री धर्म्मामृत औषधायल गिरगाम बम्बई.

एकबार इसे अवश्य पढ़िये

क्या आप नहीं जानते ?

कि हमने सर्व साधारण के सुभीते के लिये एजन्सी खोल रक्खी है कि यदि जिसको जो वस्तु मंगना हो वह उस वस्तुका नाम और अपना पूरा पता एक कार्डपर लिखकर नीचेके पतेपर प्रेरित करें तो घरबैठे बिना तरद्दुद निम्न लिखित देशी और विलायती नयी चुहचुहाती हुई चीजें अर्थात नये डाकका ताजा माल जो विलायत आदि अन्य २ देशों से विक्रयार्थ बम्बई में आते हैं उचित मूल्यसे प्राप्त कर सक्ते हैं. कुछ वस्तुओंका नाम संक्षेपसे नीचे लिखते हैं कि जो हमारी एजन्सी से मिल सक्ती हैं. ऊनी रेशमी तथा सूती कपड़े हररंग और भिन्न २ चौड़ाई की साड़ियाँ खास बम्बई और चीन की बनीहुई जिनके किनारों पर सुन्दर मनहरण रेशमी बेलबूटे बने हुए हैं. बाजा अंगरेजी और हिंदुस्थानी जैसे कि हारमोनियम, डलसेटना, बीन, सितार, इत्यादि. घड़ियां हरएक प्रकार की जैसे टायमपीस, जेबीघडी, और क्लाक आदि; हरएक रोगोंकी परीक्षित औषधियां जो अच्छे २ आयुर्वेज्ञ वैद्योंकी परीक्षामें अच्छी उत्री हैं; हिंदी, गुजराती, मरहठी, संस्कृत तथा अङ्ग्रेजी भाषाकी पुस्तकें जो अंगरेजी स्कूलों और संस्कृत शालाओं तथा कालिजों में जारी हे, इंजिनियरी, फोटोग्राफी तथा नकशा निगारी की सब सामग्री एवं कमख्वाब बाफ्ता शाल दुशाले सादे और कामदार हर रंग के और भिन्न २ प्रकारके गोटे पट्ठे सलमा सितारा, मोजा बनियाइनें सूती और ऊनी, टोपियां चौगसिया किश्तीनुमा मखमली ऊनी और कामदार प्रत्येक भांतिकी इसके अतिरिक्त राजा रविवर्म्मा के बनाये हुए अनेक देवी देवताओं के मनोहर चित्र—रम्भा, तिलोत्तमा, मेनका, शकुन्तलादि अप्सराओं की मन हरण अद्भुत तसबीरें जिसे देखकर टकटकी बंधजाय, रक्तशुद्ध करनेवाली बलप्रदायनी विद्युतीय मुद्रिकायें अर्थात बिजली की शक्ति डालीहुई अंगुठियां तथा चांदी सोनेके आभूषण जड़ाऊ और सादे जनाने मर्दाने हरएक प्रकारके, लिखने के कागज, कलम स्याही, चाकू, कैंची, स्तुरे और प्रेस सम्बंधी सर्व सामग्री, दर्शनार्थ मंदिरों में जाने के लिये सूती उपानह (जूते) इत्यादि वस्तुयें उचित कमीशन पर पत्र पातेही वेल्युपेबिल से भेजी जाती हैं. दश रुपये से अधिकका सामान मंगाने वालोंको उचित है कि आध मूल्य निम्न लिखित पतेपर प्रथम भेजें.

गोपाल नारायण शर्म्मा श्रीधर्मामृत प्रेस गिरगांव मुम्बई